जुलैखां

सामाजिक उपन्यास

मूल लेखक

अस्कद मुख्तार

अनुवादक

यशपाल

विप्लव कार्यालय, २१ शिवाजी मार्ग, लखनऊ

विप्लव प्रकाशन सं० ३७

प्रथम संस्करण
अक्तूबर १९६०

तीसरा संस्करण
नवम्बर १९७१

संशोधित मूल्य··
[redacted]·······
मूल्य [redacted] रुपये

साथी प्रेस, लखनऊ में मुद्रित

[illegible]

पहला परिच्छेद

पुराने नगर के अन्त की बस्ती, निमांचा भी, बहुत पुरानी बस्ती थी। जाने कब से वहां बुनकरो के परिवार बसे हुये थे।

बुनकरो का धन्धा खानदानी था। बाप-दादा का धन्धा निबाहते चले आ रहे थे। स्त्रिया सूत कातती थी और मर्द करघो पर मोटा गाढा बुनते थे। यदि पिता बेटे के लिये करघा न छोड जाता तो समझो लडके का भाग्य डूब गया। बच्चे तुतलाना आरम्भ करते तो सबसे पहले 'ढिकली' और 'नरिया' कहना सीखते। बचपन मे ही जान लेते थे कि बुनकर का धन्धा ही उन के जीवन का आधार था।

निमाचा के बहुत से परिवारों को गर्व था कि उनके यहां सात-आठ पीढ़ियो से कपडा बुना जा रहा था परन्तु ऐसा तो एक भी परिवार नहीं था, जिसे कमर ढकने लायक दो हाथ कपड़ा भी सदा सुविधा से मिलता रहा हो। अपने धन्धे के सहारे वे लोग जैसे-तैसे रूखी रोटी का टुकड़ा भर पा जाते थे। सदा पेट भर भोजन और आवश्यक कपडा पा सकने की तो वे आशा भी नही कर सकते थे।

छोटे-छोटे बच्चों को भी छड़िया देकर पुरानी रुई झाड़ने के लिये बैठा दिया जाता था। रुई की गर्द से उन के फेफड़े चलनी हो जाते। चालीस की उमर तक आते-आते वे लोग कब्र मे भी पहुच जाते। सभी जानते थे, बुनकरो के भाग्य में यही बदा था फिर भी बाप बेटे को अपना अभागा धन्धा सिखाता चला आ रहा था।

गर्मी के दिनों में निमांचा की गलियो मे खूब धूल भर जाती थी। बस्ती के कच्चे मकानों की छतों, मिट्टी की दीवालो और धूप से मुरझाये दो-चार उदास पेड़ों पर भी धूल की परत जम जाती थी। पुरानी रुई, छड़ियो से पिट-पिट कर सुथरी होकर फूल जाती, ताजा बन जाती और उसकी गर्द कोहरे की तरह हवा मे भर जाती। आंगन गर्द से भरे रहते। लोगों के हाथ, मुह और कपड़ों पर भी गर्द जमी रहती। आंगनों मे था ही क्या! कच्ची गिरती दीवालों में हो गये छेदों में से कोई भी भीतर झांक लेता तो वीरानी ही वीरानी दिखायी देती।

निमांचा की पूरी बस्ती वीरान, उदास और गन्दी थी। केवल नीली मस्जिद के

पीछे एक आलीशान हवेली थी। हवेली खूब हरे-भरे बाग-बगीचो से घिरी हुयी थी। ऐसा लगता था कि निर्जन रेगिस्तान मे, पूरे प्रदेश की हरियाली और जल एक ही जगह सिमिट आया हो। हवेली कुदरतुल्ला खोजा की थी। कुदरतुल्ला निमाचा की बुनकर बस्ती के मालिको का अन्तिम उत्तराधिकारी था। निमाचा के यह मालिक पीढियो से बस्ती के जीवन का रक्त चूस-चूस कर पुष्ट होते रहे थे।

बस्ती के बूढ़े-बुजर्गो को अब भी उस ज़माने के रईसो, साहूकारो, सेठों और दुकानदारो के नाम याद है। वे अमीर लोग बुनकरों को कर्ज देते थे और कर्ज मे उन का सब कपड़ा ले लेते थे।

सात वर्ष से निमाचा की पुरानी अवस्था मे परिवर्तन आ गया था। वीरान बस्ती मे आर्द्रता लिये प्राण-पोपक वायु के झोंके आने लगे थे। कड़ी मेहनत से पिसते बुनकर कमर सीधी कर सांस लेने का साहस करने लगे थे। नयी सरकार बन गयी थी और बुनकरों ने नयी बात सुनी कि बुनकरो का धन्धा आदर के योग्य था और साहूकारो-सूदखोरों का धन्धा कमीना और जलील धन्धा था।

बुनकर बस्ती के मर्दों ने मिल कर एक 'सहकारी संस्था' बना ली थी और उसका नाम रख लिया था—'लाल बुनकर कामगार।'

निमांचा की स्थिति तो जरूर बदली थी परन्तु उस से कुदरतुल्ला के पांव नही उखड़ गये थे। उस के यहा परम्परा से साहूकार और लेन-देन का काम चला आ रहा था। वह नयी सरकार के अमल मे 'नेप' (नयी आर्थिक योजना) मे सम्मिलित हो गया था। नयी आर्थिक योजना के अन्तर्गत अपना निजी कपड़े का कारखाना चला रहा था। उस ने ताशकन्द शहर के शेखान्तोर मुहल्ले के व्यापारी सैयद बख्श का कपडा-बुनाई का धन्धा खरीद लिया था। ताशकन्द से सब करघे और दूसरी मशीनें निमाचा मे लाकर, अपनी सराय में खूब बड़ा, अच्छा कारखाना बना लिया था। निमांचा के बुनकर मर्दों ने तो सहकारी-बुनकर-उद्योग मे काम आरम्भ कर दिया था। स्त्रियां वहां जा नही सकती थी। बुनकरो की स्त्रियां, खास कर विधवायें कुदरतुल्ला के कारखाने मे मजदूरी करने लगीं।

कुदरतुल्ला की सराय के सामने की सडक और आस-पास की जगह किसी ज़माने मे खूब आबाद और गुजान थी। वहा दो पनचक्किया भी थीं। पनचक्किया चालू थी तो सड़क पर गल्ले से भरी, धक्के खाती गाड़ियो की भीड़ के कारण राह न मिल पाती थी। धूल के बादल छाये रहते थे। गाड़ी के घोडे पर सवारी कसे गाड़ीवान, कच्ची दीवालो के पर्दे से घिरे बस्ती के आंगनो और कोठरियों के भीतर सब व्यापार पर नज़र दौड़ा सकते थे। कभी कोई 'बाका' दीवाल के पर्दे के पीछे आंगन या कोठरी मे करघे पर बैठी या रुई धुनती लड़की को लक्ष्य कर ऊंचे स्वर मे कोई बिरहा या

टप्पा छेड़ देता। नहर कई वर्ष पहले सूख गयी थी और पनचक्कियां उजड़ गयी थी। अब किसी को उन की याद भी नही रही थी। अब उस जगह का नाम 'नेप' (नयी आर्थिक योजना) वाले कुदरतुल्ला का कारखाना ही पड़ गया था।

सराय की लम्बी दीवाल सड़क के साथ-साथ थी। पतावर की छत की ढाल भीतर आगन की ओर थी। छत पर गोबरी फिरी हुयी थी। चूना पुती दीवाल में, सड़क की ओर कोई खिड़की-झरोखा नहीं था। बस्ती मे सराय के बराबर लम्बा-चौड़ा कोई दूसरा मकान नही था।

कारखाने के फाटक के पल्ले सदा चौपट खुले पड़े रहते थे। फाटक के सामने कारखाने का गन्दा पानी सड़-सड़ कर तलैया सी बन गयी थी। तलैया पर काई की तह जमी रहती थी। जून की प्रचंड घाम भी इस तलैया को कभी सुखा नहीं सकी। काई छाये हुये सड़ते जल मे धंसा हुआ गाड़ी का एक पहिया आधा दिखायी देता रहता था। पहिये के साथ अड़ा एक पटरा तिरछा खड़ा था। पहिया और पटरा भी काई और कीचड़ से ढके हुये थे। तलैया पर, किनारे खड़े शहतूत के बहुत पुराने पेड़ की छाया पड़ती रहती थी। पेड़ के तने की सब छाल आती-जाती गाड़ियो की रगड़ से छिल गयी थी। शहतूत की पुरानी टहनिया सूखे ईंधन सी लगती थी। उन पर कारखाने से उड़ी रुई चिपकी रहती थी।

कारखाने के आंगन मे लम्बा सा छप्पर था। छप्पर के नीचे गाड़ी खड़ी थी। गाड़ी में रुई से भरी टोकरिया लदी हुयी थी पहिये से कत्थई रंग का टट्टू फुंकार-फुकार कर हरियाली में मुह मारता जा रहा था।

आगन मे तनी लम्बी रस्सियों पर रंग-बिरगे सूत की लच्छिया लटकी रहती थीं। दरवाजे से आते-जाते मुह को लच्छियों से बचाने के लिये, खूब झुक जाना पड़ता था। कारखाने की अंधेरी ड्योढ़ी में दायें-बायें दो दरवाजे थे। बायी कोठरी मे सदा मैदे जैसी सफेद गर्द भरी रहती थी। दायीं ओर की लम्बी कोठरी, निरन्तर खटर-पटर से गूंजती रहती थी।

दायीं ओर की कोठरी के किवाड़ हिलते ही भीतर खटर-पटर की गूज इतनी बढ जाती थी कि कान बहरे हो जाते। यहां कपड़ा बुनने के करघे लगे हुये थे, यही कारखाना था।

कारखाने का फर्श मैली भूरी ईंटों का था। हवा और रोशनी के लिये सिर्फ छप्पर मे ही छोटे-छोटे झरोखे थे। उन पर भी महीन मोमी कागज चिपका रहता था। लम्बी कोठरी में नौ करघे थे। हर करघे के ऊपर झरोखे से आता झिलमिल प्रकाश तानी में बाना भरते बुनकर के हाथो पर ही सिमटा रहता था।

कारखाने मे एक ही मर्द था, राव का कारिन्दा। कारिन्दा करघों की बुनाई पर

नजर रखे रहता था। करघों के बीच तंग जगह में टूटी हुई ढिगलियां और बाने की नलियां कारिन्दे के पांव की ठोकरों से आगे पीछे उड़ती रहती थीं। कारिन्दा कभी किसी करघे पर झुक जाता और धुंधले प्रकाश में झिलमिलाती तानी को सूखी-सूखी उंगलियों से टटौल कर देख लेता। कभी तानी को खींचे रहने वाले बोझ को सम्भालने में, बुननेवालियों को सहायता भी दे देता।

कारिन्दा मखुनिया था। बुनने वाली स्त्रियां उस बिना दाढ़ी-मूंछ वाले मर्द से पर्दे की परवाह नहीं करती थीं, अपने बुरके एक ओर पड़े रहने देतीं। आपस में स्त्रियां कारिन्दे को मखुनिया मखसूम कहती थीं। मखसूम का चेहरा लाश जैसा पीला था और आंखें चूहे जैसी लाल-लाल। ठण्डी हवा का स्पर्श पाते ही उस की आँखों से पानी झरने लगता था। भौवों पर दो-चार लाल-लाल रोयें कांटे की तरह खड़े थे।

राव कुदरतुल्ला के यहां नौकरी पाने से पहले मखसूम शोदे (लाश को नहलाने) का पेशा करता था। उज़बेक भाषा में शोदे को 'यूगूची' कहते हैं। मखसूम को यह शब्द पसन्द नहीं था। ताजिक भाषा में शोदे को 'मुर्दा मुई' कहते हैं। मखसूम को वह शब्द भी पसन्द नहीं था। अरबी भाषा में शोदे को 'हस्सोल' कहते हैं। मखसूम अपने आप को हस्सोल कहता था और इस शब्द से कुछ बड़प्पन भी अनुभव कर लेता था।

बूढ़ा अब्दुर्रजब बड़ा जालिम था। लोग-बाग में उस का उपनाम कसाई ही अधिक प्रचलित था। अब्दुर्रजब की मृत्यु हुयी तो उसे नहला कर कफन पहनाने का गौरव मखसूम को मिला। मखसूम ने शहर के सब से बड़े इमाम के सामने अब्दुर्रजब के गुनाह अपने सिर ले लिये थे। मखसूम ने ज़ालिम अब्दुर्रजब के गुनाह अपने सिर ले लिये तो उस की जो कुछ जायदाद थी, वह भी मखुनिया को मिल गयी। घर-बार पाकर भले आदमियों में उस का आना-जाना होने लगा। राव कुदरतुल्ला तक भी उस की पहुंच हो गयी। मखसूम ने कुदरतुल्ला की नौकरी कर ली और उस का मुंह लगा पेशकार और कारिंदा बन गया।

मखसूम अपनी नौकरी बहुत उत्साह और वफादारी से निबाह रहा था। मालिक के सामने बहुत आदर से बोलता। मालिक को देखते ही आदर से कमर झुकाकर सेवा के लिये प्रस्तुत हो जाता—"हुक्म सरकार।"

कारखाने की जिम्मेवारी पाकर मखसूम का मिज़ाज बढ़ गया था। गुमसुम सा बना रहने लगा। बुननेवालियों पर अपना रोब जमाने के लिये बात-बात में उन पर चिल्ला उठता। उन के सामने क्रोध से पांव पटकने लगता कि वे भय से सहम जायें, वे उस के सामने गिड़गिड़ायें। स्त्रियां चुप रह जातीं पर उन के थके पीले चेहरों पर कोई भाव या संकेत न आ पाता। मखसूम खीझ कर रह जाता। वह बुननेवालियों का कुछ बिगाड़ नहीं सकता था। सोवियत सरकार ने कानून बना दिया था कि आठ

घन्टे से अधिक मज़दूरी नहीं ली जा सकती और मज़दूरी समय पर दे देने की मजबूरी थी। कारखानों में कारिंदों के लिये अब काम ही क्या था पर राव कुदरतुल्ला के कारखाने में मखसूम के लिये काफी काम था। वह करघों के बीच घूम-घूम कर बुनने-वालियों के काम पर नज़र रखता था। अनाखां के करघे पर झुक कर प्रायः ही उस की बुनाई पर नज़र डाल लेता। स्त्रियों की आपस की बातचीत की ओर भी उस के कान सतर्क रहते थे।

उस दिन मखसूम सुबह से दो बार अनाखां के करघे पर झुक कर, तानी के बीच में फंसी लठिया का सहारा लेकर, उस की बिनती पर नज़र डाल चुका था। अनाखां ने आंखें ऊपर उठायीं तो मखुनिया परे हट कर उंगलियों में नाक सिड़कता हुआ आगे बढ़ जाता। दूसरी स्त्रियां समझ गयीं, मखुनिया अनाखां पर रोब डालना चाहता है परन्तु उस की नाक तो सदा ही बहती रहती थी।

दोपहर में मखसूम सूत कातनेवालियों के काम पर नज़र डालने के लिये दूसरी ओर गया तो करघों की खटर-पटर प्रायः बन्द ही हो गयी। बुननेवालियों में खोजिया सब से कम उम्र थी, बड़ी हंसमुख भी थी। खोजिया अपने करघे से उठी और उस ने पुकार लिया—"गुइयां, सुनो तो!" कारखाने में बड़ी और नयी उम्र की सभी स्त्रियां गुइयां ही थीं, "आज मखुनिया बड़ा तेज हो रहा है।"

"तेज क्यों नहीं होगा!" कुमरी बोल उठी—कुमरी की उम्र काफी थी। गालों की हड्डियां खूब उभरी हुई थीं। लम्बे-लम्बे दांत निकले हुये थे। ज़बान भी कम लम्बी नहीं थी—"उस की तेजी कहां जायेगी गुइयां? लोग कहते हैं, कुदरतुल्ला ने इसे बधिया करा दिया है।" सब स्त्रियां कहकहा लगा कर हंस पड़ीं। रज़िया मुंह सिये रहती थी पर उस के ओठों पर भी हल्की मुस्कान आ गयी।

"तू बड़ी चुड़ैल है। अल्लाह रखे, उम्र दराज़ हो। तूने तो बेचारे को मिट्टी में मिला दिया, अल्लाह उसे गारत करे।"

रज़िया कभी ईद-बकरीद पर ही मुस्करा देती थी। उस के मन में मखुनिया और उस के मालिक दोनों के लिये ही बहुत क्रोध और घृणा थी। बुढ़िया ने उन दोनों के हाथों क्या-क्या नहीं सहा था। उस सब को कैसे भूल जाती!

कुदरतुल्ला का साहूकारे का काम चल रहा था तो मखुनिया मखसूम खुद आकर रज़िया के मर्द को उधार दे जाता था। तब मखुनिया कैसा मीठा बोलता था। ऐसी बातें बनाता कि सांप का भी दिल मोह ले। उस के विश्वास पर सांप भी बिल से निकल आये परन्तु जुम्मे के रोज़ जब उगाही में कपड़ा लेने आता, ढंग दूसरा हो जाता। उगाही में कपड़ा लिये बिना नहीं लौट सकता था। कपड़ा उसे चाहिये ही था, बुनकर मरे या जिये।

रज़िया मौसी विधवा थी। उसका बुनकर अस्सी वर्ष का हो गया था तब भी करघा चला रहा था। बहुत ही कपड़ा बुनता था। निमांचा में लोगों के लिये धारीदार अलाचा बुनने वाला उस के बराबर दूसरा नहीं था। कुदरतुल्ला अच्छे कारीगरों को सदा नज़र में रखता था। अपने कारिन्दे को उन के यहां जरूर भेजता रहता था।

मखुनिया मखसूम सुलातान के दरवाज़े पर आकर बहुत आदर से पुकारता जैसे किसी रईस के यहां आया हो, चेहरे पर मुस्कान बनी रहती। बताता, उस का मालिक कारीगरों की कितनी इज्ज़त और कदर करता था। मखुनिया को बात करने का सलीका खूब था। बातचीत में बता देता, बढ़िया सूत सस्ता कहां मिल सकता है। बातों-बातों में कारीगर को फंसा लेता। सुलतान भी निमांचा के दूसरे बुनकरों की तरह, राव के कर्ज़ के जाल में फंस गया।

मखुनिया सुलतान के यहां जुम्मे के जुम्मे आने लगा। अलाचा का थान लेकर लौटता परन्तु सुलतान के सिर कर्ज़े का बोझ जुम्मे के जुम्मे बढ़ता ही गया। सुलतान की आयु ढल चुकी थी। शरीर में उतनी शक्ति नहीं रही थी। बेचारा सामर्थ्य भर करघा चलाता रहता। ज्यों-ज्यों सुलतान का शरीर हार रहा था, उगाही में मखुनिया की कड़ाई बढ़ती जा रही थी। उस ने बिलकुल बाघ का रूप ले लिया था।

मखुनिया सुलतान के दरवाज़े पर आते ही गरज उठता—"तेरा करघा उठा कर ले जाऊं या तेरी कुठरिया कुड़क करवा लूं। तभी तुझे होश आयेगा...।"

अगले जुम्मे क्या होगा? सोच कर सुलतान का दिल डूबने लगता था।

सुलतान के सीने में दर्द रहने लगा था। खांसी उठती तो दम रुकने लगता। बेचारे की नज़र भी साथ नहीं दे रही थी फिर भी बूढ़ा, सीली कुठरिया में टिमटिमाता दिया जलाये, रात-रात भर कपड़ा बुनता रहता। बूढ़े के शरीर में तानी बनाने की ताकत नहीं थी। तानी को खींचे रखने के लिये बोझ को ऊंचा-नीचा कर सकना भी उस के बस का नहीं रहा था। करघे पर बैठे-बैठे हाथ-पांव थक जाते तो अपना धौला सिर करघे पर टिकाकर कितनी ही देर निश्चल रह जाता।

सांझ का अंधेरा हो आया था। रज़िया एक डलिया में नड़ियां लेकर भीतर आयी। देखा, सुलतान करघे पर झुका था। माथा तानी पर टिका हुआ था। चेहरा दिखायी नहीं दे रहा था। रज़िया ने उस का माथा उठा कर पूछा—"हाय, क्या हुआ!" सुलतान को हंफनी आ रही थी। सांस में खरखराहट थी जैसे बहुत थका हुआ टट्टू हांफ रहा हो।

"उठो, रहने दो बुनाई को! कितने थक गये हो। जरा खटिया पर लेट जाओ।" रज़िया का गला भर आया।

"कैसे लेट जाऊं, कल जुम्मा है।" बूढ़ा बोला और उस ने करघे का खट

पकड़ लिया।

"मर जायें, अल्ला इन का बेड़ा गारत करे! क्या छीन लेंगे हम से!"

"करघा ही उठा ले गये तो? तू जानती नहीं, करघा उठा ले जाने की धमकी दे गया है?"

बुनकर का करघा छिन जाता तो हाथ फैला कर भीख मांगने के सिवा चारा ही क्या था। सुलतान की तो हालत ऐसी हो चुकी थी कि उसका करघा और झोपड़ी दोनों ही बिक जाते तो भी उस का कर्ज़ चुक नहीं सकता था। सोच-सोच कर बूढ़े-बुढ़िया का दिल डूबा जाता था। उन का कर्ज़ा चुक सकने की कोई आशा नहीं थी। कर्ज़ सिर पर लेकर मर जायेंगे तो उन के इकलौते बेटे अरगाश पर क्या बीतेगी? बेचारा उम्र भर के लिये सेठ के हाथ बिक जायेगा। बूढ़े को कहां आराम था। हिम्मत बांध करघा चलाने लगा। रज़िया ने प्रकाश बढ़ाने के लिये दिये की बत्ती उकसा दी।

रज़िया रात भर सो नहीं सकी। अपनी किस्मत को कोसती रही। अपने बूढ़े गरीब मर्द की चिन्ता में घुलती रही पर कर क्या सकती थी, उसे क्या सहारा दे सकती थी! सोच रही थी, करघे से उठे तो जरा आराम देने के लिये उस का बदन दबा देगी। उस का कुर्ता फट गया है, उस में बखिया कर देगी।

× × ×

सुलतान का बेटा अरगाश पड़ोस के कस्बे में एक राज-मिस्त्री की शागिर्दी में काम सीख रहा था। कच्ची दीवारें बनाने की मजदूरी करता था। हफ्ते अठवारे में मां-बाप से मिलने आता तो अन्टी में दो-चार चांदी के रूबल भी होते। बेटा घर आता तो बूढ़े-बुढ़िया आनन्द से पुलक उठते थे। उस दिन रज़िया अरगाश के आने की आशा में थी—बेटा शायद आज आये।

रज़िया के कान करघे की धीमी-धीमी खटर-पटर की ओर लगे हुये थे। बूढ़ा करघा चलाता जा रहा था, रात भर चलाता रहा। रज़िया सोचती रही, भाग में यही बदा है। जाने, बेटा भी रात में मजदूरी पर लगा हो। रज़िया के आंसू बह आये।

शोर सुन कर रज़िया की आंख खुल गई। बहुत गुस्साभरी, पहचानी हुई आवाज़ थी—"तेरा छप्पर और करघा आज ही कुर्क करा लूं तभी होश आयेगा! राव दया करके चुप हैं तो तू हमें उल्लू बनाये जा रहा है। ऐसा बंदरिया का नाच-नचाऊंगा कि याद करेगा। दमड़ी-दमड़ी वसूल करके छोड़ूंगा।..."

रज़िया झपट कर आंगन में आ गयी।

मखुनिया मखसूम करघे की कोठरी की दहलीज पर खड़ा बाहें चला-चला कर धमका रहा था। पिछली रात से करघे पर बैठा बूढ़ा सुलतान करघे की गद्दी पर ही

था। उस की गरदन झुक कर माथा तानी पर टिका हुआ था। छप्पर के झरोखे से तानी पर दिन का प्रकाश आने लगा था। दिये की बत्ती रात भर जल कर तेल समाप्त कर चुकी थी। बत्ती का शेष तेल खूब ऊंची लौ से जल रहा था।

रज़िया सुलतान की हालत देख कर उस की ओर लपकी। उस के दामन की हवा के झोंके से दिया गुल हो गया। रज़िया ने सुलतान का सिर ऊपर उठाया। बूढ़े का चेहरा चटाक सफेद निश्चल था। खुली घबराई आंखें पूरे हो चुके थान की ओर लगी थीं। बूढ़े ने अपने एकलौते बेटे को बचाने के लिये जान दे दी थी।

रज़िया के घुटने लड़खड़ा गये। वह गिर पड़ी। भगवान से उस ने कभी दया और न्याय नहीं पाया था फिर भी दहाड़-दहाड़ कर, छाती पीट-पीट कर रक्षा और त्राण के लिये भगवान को ही गुहारने लगी।

मखुनिया ने परिस्थिति समझी तो चुपचाप सुलतान के दरवाज़े से लौट गया। रज़िया के अथाह शोक के हृदय-द्रावक विलाप की चीखें उस का पीछा किये जा रही थीं—"…अल्लाह मैं मर गयी, मेरी किस्मत फूट गयी, हाय मेरा सहारा लुट गया। हाय अल्लाह, मुझे ही क्यों नहीं ले गया…।"

अरगाश दोपहर में घर आया। लड़के का कद खूद ऊंचा बढ़ गया था। गठे हुये मजबूत हाथ-पैरों और चेहरे का रंग घाम से पक गया था। अरगाश ने घर की स्थिति देखी तो स्वप्न में खोया सा खड़ा रह गया। रज़िया अपने बूढ़े पति के लिये, अपनी उजड़ी दुनिया के लिये छाती पीट-पीट कर बिलख रही थी, परन्तु उस का बेटा सुन्न खड़ा था, जैसे उसे काठ मार गया हो।

सुल्तान की मैयत उठायी गयी। उसे कब्र में रख दिया गया। अरगाश चुप देखता रहा—होठों से एक भी शब्द नहीं फूटा, आंखों से आंसू नहीं गिरा।

सुलतान की कब्र पर मिट्टी चढ़ा दी गई। मैयत में आये लोग फातिहा पढ़ कर चले गये। कब्र पर रज़िया और उस का बेटा ही रह गये थे। अरगाश का मौन टूटा—"अम्मां, जुल्म की हद हो गयी। अब नहीं सहा जाता, अब्बा की कसम ले रहा हूं, इन आदमखोरों से बदला लूंगा। इन लोगों ने मेरे बाप को खा लिया है, इन से बदला लूंगा।"

रज़िया ने घबड़ा कर बेटे को सीने से लगा लिया।

अरगाश मां से बिदा लेकर चला तो रज़िया को क्या मालूम था कि बेटा कहां जा रहा है। उस के मन में आशंका जरूर थी कि बेटा कहीं दूर जा रहा था, जल्दी नहीं लौटेगा।

बेटे का बाप दुनिया से जा चुका था। बेटा भी छोड़ कर चला गया था। रज़िया अभागिन अकेली रह गयी थी।

नज़ाकत सुन्दर थी, उठती जवानी थी। कारखाने के दरवाज़े के साथ पहले ही करघे पर बैठती थी। कारखाने में वही अकेली साटिन बुनने वाली थी। चलती थी तो उस की चुटिया के बंधे चांदी के घुंघरू झनक-झनक बजते रहते थे। बूटी पीस कर बनाया, कलौंस लिये हरा उस्मा भौवों पर लगाये रहती। नाक के ऊपर उस्मा से ईद के चांद की कोर बना कर दोनों भौवों को मिला लेती। सदैव उस्मा लिये रहती। करघे की गद्दी के नीचे भी गर्दन टूटी छोटी-सी शीशी में उस्मा रखे रहती।

नज़ाकत, नरमत बुन कर की बीवी थी। नरमत उसे नमागां से ब्याह कर लाया था। उस के घर की हालत अच्छी थी। अपने घर में भी करघा था पर नज़ाकत भी राव कुदरतुल्ला के कारखाने में काम करती थी। निमांचा की बस्ती में बस वही साटिन बुनना जानती थी। सेठ ने नरमत से नज़ाकत को अपने कारखाने में भेजने के लिये कह दिया था। निमांचा में सेठ की बात कौन दुलख सकता था। नरमत पर सेठ की कृपा भी थी। नरमत उस से बिगाड़ नहीं करना चाहता था।

नज़ाकत हंसमुख थी, उस के जीवन में उमंग थी। सहेलियों से सदा हंसने बोलने और चुहल के लिये उत्सुक रहती। मज़ाक में कई बार उल्टी-पुल्टी बात भी बक जाती। दूसरी बुननेवालियों की अवस्था और व्यथा से परिचित नहीं थी इसलिये कभी-कभी उस की तो दिल्लगी होती और दूसरी स्त्रियों के दिल दुख जाते।

नज़ाकत कह बैठी—"मखुनिया तो ढिगली की तरह फुदक रहा है, बिलकुल ढरकी बना है। उसे होश थोड़े ही है। ढरकी की तरह अनाखां के आगे-पीछे हो रहा है। मेरी कसम, अनाखां ने मखुनिया का दिल छीन लिया है।"

बुननेवालियों की हंसी थम गयी, वे गुम-सुम हो गयीं। उन के माथे पर तेवर पड़ गये।

रज़िया की ढरकी में बाना उलझ गया था। सूत को दांत से खोंट कर बोली—"बिटिया नज़ाकत, मखुनिया के दिल है भी ?" और उस ने अनाखां की ओर देख लिया कि बुरा तो नहीं मान गयी।

अनाखां को दूसरी बुननेवालियों से अलग बैठाने का एक और भी कारण था। कुछ दिन से राव कुदरतुल्ला को अनाखां से आशंका हो रही थी। कारखाने की दूसरी स्त्रियां अनाखां को बहुत मानती थीं। बुननेवालियों में उस की बात का मोल था।

मखुनिया सांझ को हवेली में लौटता तो सब से पहले मालिक को अनाखां के बारे में खबर देता, उस की खुशी या नाराज़ी की बात बताता, अनाखां दूसरी औरतों से क्या कह रही थी।

पुराने शहर में एक 'जनाना क्लब' बन गया था। कुदरतुल्ला ने जब से सुना था कि अनाखां नित्य जनाना क्लब में जाती थी, वह बहुत घबरा गया था…क्लब में जाने

लगी है तो कल सहकारी कारखाने में भी जा सकती है । जुलाहे सहकारी कारखाने में भर्ती हो गये हैं । अपने मर्दों की देखा-देखी उन की औरतें भी सहकारी में चली जायें तो ?…अनाखां को अपने कारखाने से निकाल दे तो भी उसे कारखाने की दूसरी औरतों को बहकाने से कैसे रोक लेगा ?…अनाखां को कारखाने से निकाल देना भी आसान नहीं रहा था । अब तो अनाखां और उस जैसे लोग ही कानून वाले होगये थे ।

सेठ कुदरतुल्ला घुट कर रह जाता । खीझ कर मखुनिया को चेतावनी देता रहता—"…अबे ज़रा आंखें खोल कर रहा कर ! उस चुड़ैल पर निगाह रखे रहना…!"

अनाखां अपने बड़े करघे पर बैठी अढ़ाई हाथ बर की तानो में सींग की ढरकी को, दायें-बायें अचूक फेंके जा रही थी । दूसरी बुननेवालियां अनाखां के हाथ की सफाई देख कर विस्मित रह जाती थीं । उस के करघे के पास खड़ी मौन, उस का चमत्कार देखती रहतीं ।

कुमरी ने गर्दन हिला कर विस्मय प्रकट किया—"औरत है पर क्या चमत्कार ! हाथ सधा हुआ है ।"

अनाखां दम लेने के लिये पल भर को भी अपना करघा रोकती तो दूसरी स्त्रियां दो बातें करने के लिये उसे घेर लेतीं ।

स्त्रियां हैरान थीं—मखुनिया दूसरी ओर गया है तो उल्टे पैरों थोड़े ही लौट आयेगा । अनाखां को क्या हो गया है, पल भर दो बात भी नहीं करेगी ! करघा चलाये जा रही है ।

कुमरी और खोजिया आपस में फुस-फुस करने लगी थीं । कुमरी ने लड़की की पसली पर कोहनी से टुहंका देकर कुछ कहा परन्तु खोजिया ने उस की बात नहीं मानी और झुंझला उठी, फिर सोचती रही ।

खोजिया अपने करघे से उठी । अपनी बंडी की जेब से एक कोरा कागज़ और पेंसिल का टुकड़ा निकाला और अनाखां के करघे की ओर चली गयी ।

रज़िया मौसी मुस्कराहट दबाये खोजिया की ओर देख रही थी लड़कियों की बातें ! रज़िया समझ गयी थी—खोजिया, रज़िया के बेटे अरगाश को पत्र लिखाना चाहती थी । अरगाश चार बरस से घर नहीं लौटा था ।

मां-बाप बुढ़ाते जाते हैं और बच्चों पर जवानी आती जाती है । खोजिया छोकरी थी तो गलियों में नंगे पांव, सिर खोले दौड़ती-फिरती थी । अब उस की आयु ब्याह के लायक थी और अरगाश लाल सेना का बहादुर जवान था । अरगाश बड़ी भारी सेना में भरती हो गया था । लोग कहते थे, अरगाश सेनापति मिखाइल फ्रुंज़ की सेना में सिपाही बन गया था ।

कारखाने में अनाखां ही थोड़ा-बहुत लिखना-पढ़ना जानती थी । उस ने जनाना

क्लब में पढ़ना-लिखना सीख लिया था। खोजिया अनाखां के पास चुप खड़ी रही, चेहरा सेव की तरह लाल हो रहा था, आंखें झुकी हुयी थीं।

"एक बहुत अच्छा सा पत्र लिख दो न, बिलकुल किताब जैसा बढ़िया-बढ़िया लिखना! हाय, मैं क्या बताऊं, तुम तो सब जानती हो!"

खोजिया ने कागज और पेंसिल अनाखां के हाथ में दे दिये और दौड़ कर अपने करघे पर जा बैठी।

रज़िया मौसी रह नहीं सकी। खोजिया के पास जाकर उसे बांह में ले लिया—"मेरी नन्हीं बिटिया···! अल्लाह तुझे हर मुसीबत से बचाये! तू खुश रह!"

कारखाने में फिर सन्नाटा छा गया। आंगन से तानी मांझने और बड़े चरखों के तकलों की घूं-घूं भीतर सुनायी देने लगी। छप्पर के नीचे गर्द का बादल खूब गहरा हो गया, अंधेरा हो गया था जैसे सूरज डूब रहा हो।

रज़िया ने अनाखां की ओर देखा—"अनाखां क्या हो गया है तुझे, क्या दम ही नहीं लेगी? राव के खजाने में कितनी दौलत भर देगी?"

अनाखां बोली—"रज़िया मौसी, काम से मैं नहीं थकती पर मेरे दिल से पूछो, खुशी मुझे किस किस बात से हो सकती है? यहां की हालत तुम सब देख रही हो। दिल किस बात से खुश हो?"

"बिटिया, सच कहा तूने। वही हाल अपना है। काम में बूढ़ी हो गयी। काम से नहीं डरती पर यहां कोई क्या करे! यह भी कोई काम है?"

"क्यों?" नज़ाकत के माथे पर तेवर पड़ गये। उस ने अपने करघे पर लगी साटिन की ओर संकेत किया, "यह काम नहीं है?·· इस में कोई ऐब बता दे!"

नज़ाकत के करघे की ओर किसी ने भी नहीं देखा। सब बुननेवालियां अनाखां के चारों ओर घिर आयीं। अनाखां ने उन के चेहरों पर नज़र डाली और बोली—"जनाना क्लब में कई जानकार लोगों को कहते सुना है कि अब मज़दूरों की हालत पहले जैसी नहीं रह सकती। पुराने समय में तो लोग मज़दूरी से पेट भी नहीं भर पाते थे। पशुओं जैसी हालत थी। अब समय बदल गया है। अब मज़दूरों को खुशी और आराम से काम कर सकने का अवसर होना चाहिये।"

नज़ाकत अपने हाथ में थमे रूबल खनखना कर बोली—"क्या कहना, बहुत खुशी और आराम मिल रहा है! कब्र में घसीटे ले रहे हैं!"

अनाखां ने उस की ओर देखा—"तुम कारखाने में आती क्यों हो, तुम्हें मज़दूरी करने की ज़रूरत ही क्या है?"

"तुम्हें जैसे नहीं मालूम? अपने आदमी का हुक्म है तो क्या करूं? राव रूबल नहीं देते?"

"क्या दे देता है राव ? हमें-तुम्हें कौड़ियों-टकों में टरकाता है । उस की तिजोरी में कितनी दौलत जाती है ! तुम साटिन की छींट बुनती हो, मैं गबरून बुनती हूं, यह लोग गाढ़ा बुनती हैं, यह सब कहां जाता है ? सब उस नेप वाले राव कुदरतुल्ला की दुकानों में ही तो जाता है न ! सब मुनाफा तो वही खा जाता है । हमें भी तो कुछ मिलना चाहिये । हम उस के फेंके टुकड़ों के लिये ही इतनी मुसीबत झेलती हैं ? हम काम से नहीं डरतीं पर हमें भी तो भर पेट रोटी, कुछ आराम, कुछ खुशी जिन्दगी में मिलनी चाहिये !"

बुढ़िया अंजीरत एक तरफ दीवार से पीठ लगाये धरती पर बैठी अपनी ढरकी की नरिया का सूत सुलझा रही थी । बुढ़िया प्रायः अलग ही रहती थी । दूसरी बुनने-वालियों की बातचीत में बहुत कम भाग लेती-देती । वहीं से कराहते, रेंगते से स्वर में बोली :

"जवानी में खून ताज़ा रहता है तो सब तरफ चमन ही चमन दिखायी देता है । बिटिया, हम बुढ़ा गयीं । हमारे लिये तो अब चमन भी कब्र ही है । तुम ने अभी दुनिया में देखा क्या है ? नयी उमर है, इसीलिये तुम्हारी एड़ी धरती पर नहीं टिकती । हवा में रहती हो ।"

खोजिया ने अपनी काली-काली आंखें चमका कर पूछ लिया—"क्यों अंजीरत दादी, तुम्हें बहुत आराम है ?"

"हमारा क्या है ? हमारी तो पूरी हो गयी । सड़ी कथरी में कोई क्या मगज़ी लगायेगा । बिटिया, हमारा क्या है, शुक्र है अल्लाह का ।"

बुढ़िया अंजीरत सांस-सांस में 'शुक्र है अल्लाह का' कहती रहती थी । उस का नाम ही 'दादी शुक्र अल्लाह' पड़ गया था ।

खोजिया बोल पड़ी—"दादी शुक्र अल्लाह 'सतर' के महीने में पैदा हुयी होंगी तभी ऐसी बैरागिन हैं । सतर के महीने वालों को दीन-दुनिया से कोई मतलब नहीं होता । वह तो फकीर होते हैं ।"

"हमारा क्या है । हम तो कब्र में पांव लटकाये बैठी हैं । अरे आज नहीं तो कल तुम लोग हमें मिट्टी दे दोगी । हम ने तो, शुक्र अल्लाह का, जो अल्लाह ने दिया, उस से तसकीन रखी, कभी हविश नहीं रखी, शुक्र अल्लाह का !"

रज़िया चिढ़ गयी—"बकने दो इन्हें ! गुइयां, तुम भी किस की सुनती हो ! हम क्या जीते जी कब्र में जा बैठें ?"

कुमरी ने उस की ओर कनखी से देखा । तम्बाकू की चुटकी फांक कर बोली—"हम औरत जात, बेवा, हम क्या कर लेंगी ?"

अनाखां अपने करघे से उठी और तन कर खड़ी हो गयी । अनाखां कद की लम्बी

और मज़बूत थी। खोजिया उत्सुकता से मुंह उठाये उस की ओर आंखें लगाये थी। उस ने प्यार से मुस्कराकर कहा—"गुइयां, हम तो सहकारी कारखाने में ही काम करेंगी।"

"हाय अल्लाह!" आतंक से नज़ाकत की चीख निकल गयी। उस ने लजा कर दोनों हाथों से मुंह ढक लिया, "क्या मर्दों में जाकर काम करेगी?"

रज़िया ने कह दिया—"जहां भी काम मिलेगा, करेगी! अल्लाह इस मुये मखुनिया को गारत करे, मैं इस का मुंह नहीं देखूंगी!"

बुननेवालियां विस्मय और आतंक से चुप अनाखां को देखती रहीं।

अनाखां हंस पड़ी—"गुइयां, घबरा क्यों गयी तुम? हम अपनी सहकारी बना लेंगी।"

सब स्त्रियां एक साथ बोल उठीं।

खोजिया किलक कर अनाखां से लिपट गई।

कुमरी ने तम्बाकू की पीक नज़ाकत के पांव के पास डाल कर कहा—"तेरा छैला नरमत तुझे वहां जाने दे तो मेरा नाम नहीं! चाहे तू रो-रो कर जान दे दे! ऐसी-ऐसी गाली देगा कि याद करेगी! तू उस से कह कर तो देख, क्या मज़ा आता है!"

नज़ाकत को गुस्सा आ गया, दांत पीस कर चीख उठी—"तू रांड कौन होती है, मज़ा आयेगा तुझे; तेरे ..।"

रज़िया ने लड़नेवालियों की ओर पीठ कर ली। अनाखां के कन्धे पर हाथ रख कर पूछा—"गुइयां, हम गरीब बेवाओं का भी कुछ भला हो सकेगा?"

"जनाना सहकारी तो सभी स्त्रियों के लिये होगी।" अनाखां ने भरोसा दिलाया, "यहां हम हैं कितनी? सहकारी में हम निमांचा की सभी औरतों को क्यों नहीं लेंगे, लेना ही चाहिये?"

"बिटिया, कोई कह रहा था, जनाना सहकारी है? सरकारी है तो फिर सभी औरतें आयेंगी ही। ऐसी बेवकूफ कौन है जो सरकारी-सहकारी में नहीं आयेगी?"

ज़ुलैखां बहन कहती हैं...।"

"ज़ुलैखां? अरे वही जो जज साहब बनायी गयी हैं?"

अनाखां अपनी बात कह ही नहीं पायी। स्त्रियां सहसा दौड़ पड़ीं और अपने-अपने करघों पर जा बैठीं। खोजिया ने किवाड़ों की आड़ से मखुनिया को आते देख लिया था।

मखुनिया गर्दन झुकाये रहा। अपनी लाल आंखें नहीं उठायीं। हाथ सिर पर उठा कर उस ने किर्रा बजा दिया। कारखाने में छुट्टी हो गई।

बुननेवालियां और कातनेवालियां काम छोड़ कर आ गयीं। एक कोने में बुरकों का ढेर लगा था। सब अपने-अपने बुरके छांटने लगीं।

"दादी शुक्र अल्लाह देखो, यह तुम्हारा है ?"

"देख ले बिटिया, नीचे के किनारे पर पेवन्द लगा है तो मेरा ही है। शुक्र अल्लाह का।"

"अनीसा तेरा भला हो, मेरी नकाब भी पकड़ा दे।"

"अरी देख, कहां सिर पर चढ़ी आ रही है ? पड़िया कहीं की !" कुमारी ने भारी सी आवाज़ में धमकाया, "आंखों पर चर्बी चढ़ गयी है। झोंटा-पकड़ कर मिजाज़ ठीक कर दूंगी !"

नज़ाकत उत्तर में चीखी—"चल खांखर कहीं की, मुंह है कि भिड़ों का छत्ता !"

सब औरतें अपने-अपने बुरकों के लिये उतावली में एक दूसरी के ऊपर गिरी पड़ रही थीं। खोजिया भीड़ में घुस कर अनाखां और रज़िया मौसी के बुरके निकाल लायी।

× × ×

दूसरा परिच्छेद

उन दिनों स्त्री की ऐसी स्थिति कहां थी कि उन्हें कोई उन के नाम से जानता या पुकारता। अनाखां को सब लोग 'साबिर मज़दूर' की बेवा ही कहते थे परन्तु दो-तीन बरस से निमांचा में अनाखां को बहुत लोग जान गये थे, उस का आदर था, लोग उस का नाम लेने लगे थे।

अनाखां का मकान दो गलियों के जोड़ पर था। मकान मामूली, कच्चा ही था परन्तु बस्ती की सब स्त्रियां मकान को पहचान गयी थीं। कुछ स्त्रियां उस का आदर करती थीं, उस से आस लगाये थीं, कुछ उस से आशंकित थीं। अनाखां के यहां आने वाली कई स्त्रियों ने बुरका छोड़ दिया था। कुछ ने तो अपने केश भी छोटे करवा लिये थे और सिर पर लाल रूमाल बांधने लगी थीं। जज जुलैखां को तो शहर भर के लोग जानते थे। वह भी अनाखां के यहां आती-जाती थी।

अनाखां की दो बेटियां थीं। बेचारी गरीबी में जैसे-तैसे निबाह रही थी परन्तु घर उस का बहुत साफ-सुथरा रहता था। लोग उस की सुघराई की सराहना करते थे।

अनाखां सेठ के कारखाने से लौटती तो बहुत थकी रहती थी। मस्तिष्क में दूसरी समस्यायें भी रहतीं परन्तु आंगन में कदम रखते ही बेटियों की पुकार सुनायी देती—

"अम्मां आ गयी । अम्मां आ गयी ।"

"अम्मी जान, खाना लगा दें !"

अनाखां का मन उमग उठता । वह लोटा भर खूब ठंढा पानी लेकर मुंह-हाथ धोने लगती तो तरकारी डाल कर रांधे हुये भात और छाछ की सुगंध आने लगती । दौड़-भाग करती बेटियों के छोटे-छोटे कदमों को आहट पाकर सोचने लगती—"हाय मेरी नन्हीं-नन्हीं घरवालियां । बेचारी कितना काम करती हैं ।"

अनाखां की दोनों बेटियां, खास कर बड़ी लड़की बशारत सब कुछ सम्भाल लेती, मां को कुछ नहीं करने देती थी । मां पालथी मार कर खाने के लिये बैठ गयी । बशारत ने छोटी चौकी मां के सामने रख दी और उस पर सफेद गाढ़े का टुकड़ा बिछा दिया । चौकी के नीचे कच्चे फर्श में छोटा-सा कुण्ड बना था । जाड़ों में कोयला दहका कर कुण्ड में रख दिया जाता था । उन दिनों गरीबों के लिये जाड़ों में और उपाय ही क्या था ? उन के यहां कमरे गरम करने के लिये दीवालों में अंगीठियां थोड़े ही होती थीं !

उस साल बसन्त में खुरमानियों में फूल आया तो बशारत पन्द्रह की हो गयी थी । लड़की का चेहरा-मोहरा बिलकुल बाप पर था, जरा मोटी सी नाक, फूली-फूली गुलाबी गालें और खूब घनी भौवें । केश चटक काले और घने परन्तु वह उन्हें गर्दन तक छांट लेती थी । छोटी सी मोटी चुटिया उठी रहती थी । शरीर की उठान अच्छी थी । मां की बंडी उसे पूरी आने लगी थी ।

छोटी बेटी तुरसाना बशारत से ढाई बरस छोटी थी । उस की कमर तक लटकती दो चोटियां मखमली बंडी पर बहुत भली लगती थीं । तुरसाना का जरा लम्बा, पीलापन लिये चेहरा और नुकीली ठुड्डी मां पर थी । लड़की को चूड़ियां और बालियां पहनने का बहुत चाव था परन्तु उस की पतली गर्दन और दुबली कलाइयों पर नीली-नीली नसें झलकती रहती थीं इसलिये गहना उसे फबता नहीं था ।

बशारत खूब चुस्त, हंसोड़ और जरा बेपरवाह भी थी । घर के काम में भी खेलती रहती । घर में कोई बर्तन-भांड़ा टूट जाता तो निश्चय ही बशारत की करतूत होती । तुरसाना छोटी थी पर खोई-खोई सी, बड़ों की तरह गंभीर रहती । जरा सी भी बात उसे लग जाती थी ।

बशारत छोटी बहन को डराने के लिये कभी चुपचाप छत पर चढ़ जाती और चीख मार कर धम्म से नीचे कूद पड़ती । तुरसाना डर कर आंखें मूंद लेती । डर के मारे बहुत देर तक उस का बोल ही न फूट पाता ।

बशारत लड़कों की तरह चटपट खा डालती थी । मां और बहन खा ही रही होतीं कि वह टाट के नीचे से पुराना अखबार निकाल कर चौकी पर फैला लेती । उस ने देखा था कि याकीम ताऊ खाने के बाद अखबार पढ़ते थे । अखबार के पूरे

पन्नों का एक ही लेख रहता और अन्तिम पन्ने पर विज्ञापन होते थे। मां प्रति सप्ताह जनाना क्लब से अखबार ले आती थी। बशारत बहुत ध्यान और मेहनत से अक्षर और मात्रायें जोड़-जोड़ कर अखबार के मुख्य शीर्षक से लेकर, अंतिम पृष्ठ के अन्त में प्रेस का नाम तक पढ़ लेती।

"का–र–खा–ने—कारखाने–का–ना–म" लड़की ने जोड़-जोड़ कर पढ़ा और फिर सुविधा से पढ़ लिया—कारखाने का नाम 'लेनिन' के नाम पर रखा गया है। बशारत ने वाक्य पूरा करके मां और बहिन की ओर देखा। उस की आंखें चमक उठीं। बशारत इस नाम से परिचित थी। यह वाक्य उसे याद हो गया था। यह नाम लेने में बहुत अच्छा लगता था।

बशारत अखबार पढ़ती तो तुरसाना बहिन के पास बैठी देखती रहती थी। बहिन का अखबार पढ़ लेना छोटी को बहुत चमत्कार लगता था। बशारत अन्तिम पृष्ठ पर विज्ञापन पढ़ने लगती तो तुरसाना ऊब जाती। अपनी ठुड्डी नन्हीं सी मुट्ठी पर टिकाये पूछ लेती—"जीजी, इस में गीत नहीं है?"

"गीत? धत्त पागल!" यह तो अखबार है। तुझे गीतों की ही पड़ी रहती है।"

"कोई गीत बताओ तो हम गायें।"

तुरसाना को गाने का शौक था। कोई भी गीत सुनती, उसे तुरन्त याद हो जाता। सदा ही गाती रहती थी। चौके, आंगन में बुहारी देती भी गाती रहती। उस का गला मीठा था, गाती तो पड़ोसियों को अच्छा लगता था। निमांचा में किसी भी घर में ब्याह के समय गाना होता तो तुरसाना वहां ही बनी रहती। उसे गाने में से उठा लाना असम्भव था। 'छोटा सेव' और 'बदफ्शाँ का लाल' के गीत बहुत अच्छे लगते थे

निमांचा में कारखाने के लिये कपास की गाड़ियां आती थीं तो गाड़ी वाले गीत गाते रहते थे। तुरसाना ने उन से सुने कई गीत याद कर लिये थे परन्तु कभी अकेली होती तो एक बड़ा दर्द भरा गीत गुनगुनाती रहती। गीत का भाव था—

"लम्बी-लम्बी रस्सी
गांठें-फन्दे।
सांप सी रस्सी चौके में लटकी।
बता री गुइयां, बता! मेरे बाबुल कहां गये?
धरती तले क्यों सोये बाबुल मेरे!

अनाखां ने बेटी को यह गीत गाते सुना तो आंखों में आंसू आ गये। बोली—"नन्हीं, तेरा गला तो बहुत मीठा है। सच तू बहुत अच्छा गाती है।"

तुरसाना अपने गीत की कल्पना में डूबी हुयी थी। उस ने पूछ लिया—"अम्मा, गीत कौन बनाता है, कैसे बना लेते हैं?"

बशारत ने गम्भीरता से छोटी बहिन को समझाया—"...गीत बनाना होता है तो आकाश की तरफ देख-देख कर सोचते रहते हैं। खूब सोचते हैं, खूब सोचते हैं। फिर गीत बना लेते हैं। कहानी भी ऐसे ही लिखते हैं। सब बातें बिलकुल सच्ची-सच्ची लगती हैं।"

छोटी लड़की ने माँ की तरफ देखा—"अम्मा, सोफिया तायी बता रही थी, एक बड़ी अच्छी किताब है। उस में मजदूरों का सब सच्चा हाल लिखा है। सब बातें, जैसे अब्बा करते थे।"

अनाखां एक गोल टोपी काढ़ रही थी। बेटी की बात सुन कर उदास हो गयी। लड़कियां जब भी पिता को याद करती थीं, उस का मन उदास हो जाता था।

अनाखां के मन में पति की स्मृति चिरन्तन दुःख बन कर समायी हुयी थी। वह मुस्कराती थी तो भी उस की आंखों में उदासी की छाया बनी ही रहती थी। बेपरवाह बशारत ने वह छाया कभी नहीं देखी परन्तु नाजुक स्वभाव तुरसाना से मां की आंखों की सीलन छुप नहीं पाती थी। कभी-कभी सहम कर पूछ लेती—"अम्मी, तुम रोयी क्यों थीं ?"

"अम्मा, बिलकुल सच कह रही हूं।" बशारत अपनी बात कहती गयी, "कल मैं याफीम ताऊ के यहां से पुस्तक ले आऊंगी। तुम्हें अपने आप पढ़ कर सुना दूंगी।"

"अच्छा बेटी, ले आना !"

याफीम ताऊ का नाम सुन कर अनाखां को भरोसा और साहस अनुभव होता था। उसे विश्वास था, याफीम ताऊ और सोफिया ताई हैं तो दुनिया में उस का और उस की बेटियों का भी कोई है।

बशारत तुरसाना को खींच ले गयी। दोनों हंसती-कूदतीं बिस्तर लगाने लगीं। लड़कियों ने दीवार में बने ताक में से रजाई और तकिया खींच लिया। हंसते-हंसते रजाई और तकिये पर कलाबाजियां लगायीं। एक दूसरे की चुटिया खींची और फिर नींद से बिस्तर में मौन हो गयीं।

अनाखां भी सोने के लिये उठी। कुप्पी को हाथ की आड़ देकर उठाया कि सोई हुयी बेटियों की आंखों पर प्रकाश न पड़े। कुप्पी को कोने में रख कर बुझा दिया। उस की आंखें झरोखे से दीवार पर पड़ती चांदनी की ओर चली गयीं। चांदनी, छोटी सी पुरानी फोटो पर पड़ रही थी। फोटो साबिर की जवानी की थी। वह रुई भरा कोट पहने था। अंधेरी कोठरी में केवल साबिर का चित्र ही दिखायी दे रहा था।

× × ×

साबिर बुनकर का बेटा था। बाप-दादा की तरह साबिर का भी जीवन गरीबी

में ही बीता था। छोटे से परिवार का पेट भर पाना भी कठिन था। कभी सिपाही तम्बाकू का कर वसूल करने आ जाता और कभी मखुनिया मखसूम पौ फटते-फटते उगाही के लिये किवाड़ खटखटा देता। साबिर का दिल डूबने लगता। वह इतना खिन्न हो जाता कि दिन भर करघे पर बैठ नहीं पाता।

अपने हाथ-पांव और करघे के अतिरिक्त साबिर की और कोई सम्पत्ति नहीं थी। आये दिन फाके लगते रहते थे। अनाखां को भी कोई काम मिल जाता तो दो-चार आने बना लेने का यत्न करती रहती। कभी किसी के यहां सूत कातती, कभी कसीदे-कढ़ाई का काम कर लेती। साबिर अपनी परेशानियों से झल्ला कर उसे घुड़कता रहता। कभी खाना बनने में ही देर हो जाती तो अनाखां पर बरस पड़ता। साबिर अपना असमर्थ क्रोध बीवी और बच्चियों के अतिरिक्त और किसे दिखा सकता था!

एक दिन साबिर घर लौटा तो नशे में धुत्त था। किवाड़ों को बहुत धक्के से खोल कर भीतर आया। नरिया की टोकरी को लात मार कर कोठरी में फैला दिया। अनाखां को गाली देकर उस की ओर झपटा। बीवी को मारने के लिये हाथ रुक गया। दोनों बच्चियां डर से मां के पीछे कोने में दुबक गयीं।

साबिर ने अपना सीना पीट लिया। पीछे हटा तो करघे से टकराकर गिर पड़ा। वह टुटहा करघा ही उस ने पिता से विरासत में पाया था। पुराना, अंजर-पंजर शिथिल बूढ़ा करघा यह चोट न सह सका, चरचरा कर पलट गया। साबिर ने करघे को क्रोध और घृणा से गाली दी, उस पर थूक दिया। उसे लातों और ठोकरों से टुकड़े-टुकड़े कर दिया।

दूसरे दिन साबिर बहुत दिन चढ़े तक खाट पर पड़ा रहा। सिर-मुंह रजाई में लपेटे दम घोंटे था। शरम के मारे किसी को मुंह दिखाने का साहस नहीं था।

सहमी और डरी हुयी बच्चियों की कातर आंखों में आंसू थे। अनाखां ने पति को कुछ नहीं कहा। आह भर कर बोली—"ऐसी गरीबी और परेशानी में दिमाग कैसे ठिकाने रहे?"

अनाखां की सहनशीलता से साबिर पानी-पानी हो गया। उस का सिर आत्म-ग्लानि से झुक गया।

साबिर का करघा टूट गया था। अब कपड़ा कैसे बुनता। वह सुबह ही घर से निकल जाता और रात बीते लौटता। न जाने कहां-कहां फिरता रहता था। घर लौट कर कम्बल या रजाई तान कर पड़ जाता, किसी से कुछ न बोलता। कई दिन बीत गये। अनाखां रात-रात भर धुआं छोड़ती कुप्पी के धुंधले प्रकाश में टोपियों पर कसीदा काढ़ती रहती। दिन में बशारत भी मां की सहायता करती। लड़की छः बरस की हो गयी थी। कसीदे के लिये लच्छियां सुलझा देती थी।

साबिर के घर में चूल्हा प्रायः ही ठण्डा रह जाता पर अनाखां कुछ न बोलती। एक दिन साबिर सुबह घर से जा रहा था तो अनाखां ने पुकार लिया—

"नन्ही के अब्बा !"

साबिर ने उत्तर नहीं दिया। तुरसाना बहुत दुबली हो गयी थी। मां के पास ही खड़ी थी। साबिर ने बच्ची के सिर पर हाथ फेरा और चुपचाप बाहर चला गया।

साबिर संध्या घर लौटा तो उस ने दिन भर की कमाई का सवा रूबल चुपचाप ताक में रख दिया। किसी को नहीं बताया कि उस दिन मजदूरी पर गया था। बुनकर का बेटा मजदूर बन जाने का अपमान कैसे स्वीकार कर लेता।

कई दिन और बीत गये।

साबिर ने अनाखां से कहा—"रेल के कारखाने में नौकरी कर ली है।"

अनाखां ने सांत्वना का गहरा सांस लिया। आखिर पति बोलने तो लगा, जैसे उस से सलाह ले रहा हो। बोलता ही नहीं था। अनाखां को सब से बड़ा यही दुःख था।

साबिर रेल के कारखाने में नौकरी कर रहा था। महीने गुजरे, साल बीत गया। वह अपनी नौकरी से सन्तुष्ट था। बुनकर का खानदानी पेशा हाथ से जाता रहा परन्तु सेठ के कर्ज़ के फन्दे से तो छूट गया था।

साबिर के दिन अब भी गरीबी में बीत रहे थे परन्तु अनाखां को लगता था कि पति का स्वभाव बदल रहा था। बेटियों से बहुत दुलार से बात करता था। उन से हंसने-खेलने लगा था। संध्या समय बेटियों को बैठा कर इंजिन की बातें सुनाता तो इंजिन की तरह सीटी बजा कर हंसा देता। अनाखां टोपियों के कसीदे में उलझी रह रह जाती और खाना बनने में देर हो जाती तो साबिर काम से लौट कर चौके में भी हाथ बटाने लगता। अनाखां रात के बाद फिर कसीदा ले बैठती तो साबिर उस का हाथ पकड़ लेता।

"बस रहने दो ! छोड़ो ! आंखें फोड़ लोगी ?"

साबिर को मजदूरी अधिक नहीं मिल रही थी। घर की हालत पहले जैसी ही थी परन्तु अनाखां को अब चैन था। कारखाने में साबिर के कपड़े तेल और कालिख से चीकट हो जाते। अनाखां उस के कपड़े धो देती थी। संध्या समय मां और बेटियां बाप के लौटने की प्रतीक्षा में रहती थीं इसलिये साबिर को घर लौटने में देर हो जाती तो मां और बेटियां घबराने लगतीं।

साबिर कभी-कभी रात भर न लौटता और छुट्टी के दिन उसी घर से गायब रहता। अनाखां को यह आशंका नहीं हुई कि पति आवारा हो रहा था। ऐसी बात सोच कर वह पति का अपमान नहीं कर सकती थी। उस ने कुछ न कहा परन्तु साबिर ने बेटियों की मां की आंखों में चिन्ता भांप ली। एक दिन उस ने कह ही दिया—

"साथियों के साथ बातचीत में देर हो जाती है ।...बहुत भले लोग हैं ।"

अनाखां ने सुना तो चौंकी । उन दिनों कुछ ऐसी ही हवा थी । अफवाह थी कि नये शहर में लोगों ने किसी बड़े सरकारी दफ्तर पर हमला कर दिया था, दरवाजे-खिड़कियां तोड़ डाली थीं । पुलिस ने बहुत से लोगों को गिरफ्तार कर लिया था । यह भी सुना कि गवर्नर जनरल के बाग में मजदूरों ने एक पुलिस वाले को मार डाला था । अनाखां घबरा गयी, कहीं उस का पति किसी झगड़े में न फंस जाये ।

अनाखां ने सहमते-सहमते पूछ लिया—"कहां जाते हो, कौन हैं तुम्हारे साथी ?"

"कौन होंगे मेरे साथी ? मैं मजदूर हूं, मजदूर ही मेरे साथी होंगे ।"

"सुनो," अनाखां का गला रुंध आया था, "मैं कहती हूं, तुम पुलिस से, लड़ाई-झगड़े से दूर ही रहना ।"

साबिर अनाखां की बात का क्या बुरा मानता, उस पर क्या क्रोध करता ? उस ने बीवी का हाथ अपने कड़े, मशीन के तेल से गंधाते और खुरदरे हाथों में ले लिया और समझाया—

"हम लोग ऐसे काम नहीं करते । पुलिस से झगड़ा करने से हमें क्या मतलब ? पर हम डरते भी नहीं हैं । डर कर हम जायं भी कहां ? जब मौका आयगा, देखा जायगा । हम लोग क्या यों ही अपनी जान दे दें ? तू ही बता, हम लोगों की ज़िन्दगी में है ही क्या ? तेरे बाप ने ही मेरे साथ क्या तेरी उमर थी तभी बेच डाला । मैं तेरे बाप को बुरा नहीं कहता । बेचारा जहालत और गरीबी में और क्या करता ? मैंने ही तुझे क्या सुख दिया ? दिल में मेरे चाहे जो हो परन्तु तू सदा भूखी ही रही, अब भी वही हाल है । क्या तेरी उमर और तू टोपियां काढ़-काढ़ कर आंखें फोड़े डाल रही है पर खुद तुझे तो कसीदेदार टोपी कभी नसीब नहीं हुई ।"

पति की बातें सुन कर अनाखां को रोमांच हो आया, उमंग और आतंक की विचित्र सी सिहरन भी हुई । पति कैसी बातें कर रहा था ! स्त्रियां से ऐसे कौन बात करता है ? मर्द क्या स्त्रियों से ऐसे सहानुभूति से बोलते हैं । उस ने अपने पति को इस प्रकार भरोसे और दृढ़ता से बात करते कभी नहीं देखा था । पहले तो वह ऐसा मजबूत और भला नहीं लगता था । अनाखां ने अपने सुख-संतोष की चिंता कभी नही की थी । जानती थी, स्त्री का तो जन्म ही सेवा करने, दुख सहने और रोने के लिये होता है । स्त्रियों के भाग्य में सदा यही रहा है, उस की मां, नानी, दादी, परदादी सब ऐसे ही सहती आयी थीं ।

साबिर ने अनाखां के मन की बात भांप ली । धैर्य से गम्भीर स्वर में समझाने लगा—"दुनिया में बेचारी स्त्रियों और हम जैसे गरीबों की चिन्ता करने वाले लोग भी हैं । मैंने खुद उन्हें देखा है । उन की बातें सुनी हैं । वे पुलिस को क्यों मारते

फिरेंगे ? पुलिस के सिपाही हैं ही क्या ? ज़ाहिल गुलाम हैं। ये तो ज़ालिमों के हाथ की लकड़ी हैं। ज़ालिम ज़ार के हाथ की लकड़ी हैं। जरूरत तो उन ज़ालिमों के हाथ काटने की है। अवसर आयेगा तो हम लोग पीछे नहीं रहेंगे !"

अनाखां को आतंक का ठण्डा पसीना आ गया। सहम कर धीमे से बोली—"हाय क्या कह रहे हो, ज़ार के लिये ऐसी बात कहते हो ? अपनी बच्चियों का तो ख्याल करो !"

पति ने अनाखां को बाहों में ले लिया। खुरदरे कड़े हाथों से उस के आँसू पोंछ दिये। दोनों बच्चियाँ गाढ़ी नींद में शांत, निश्चिन्त बेसुध थीं।

"अनाखां, बच्चियों के लिये ही कह रहा हूं। धत्त, तुझे शर्म नहीं आती, डरती है ? हमारे साथ बहुत लोग हैं। मेरा एक बहुत ही दाना और सच्चा मित्र है। वह जेल, कालेपानी से भी नहीं डरता। बरसों साइबेरिया की बर्फों में कालापानी भुगत आया है पर अब भी उस के दिल में हौंसला है।"

साइबेरिया की बर्फ, जेल, कालापानी—अनाखां कांप उठी। अपना आतंक छिपाने के लिये उस ने पति की ओर देख कर मुस्कराना चाहा परन्तु मुस्करा न सकी। वह अपने साबिर की खरखरी दाढ़ी के बाल-बाल पर न्योछावर थी, पति के लिये आतंक कैसे अनुभव न करती ?

"मुझे ठीक से बात करना नही आता," साबिर ने कहा, "मेरा मित्र तुझे अच्छी तरह से समझा देगा। एक दिन उसे यहां ले आऊंगा। तू भी उसे देख लेगी। उस का नाम याफिम दानिल है।"

"खुदा रहम करे, रूसी !"

साबिर मुस्करा दिया—"बहुत भला आदमी है, मजदूर ही है। सेंटपीटर्सबर्ग* से आया है।"

अनाखां चिन्ता में थी। बस्ती की स्त्रियां क्या कहेंगी—अनाखां के यहां रूसी आते हैं। उस का मर्द अपने पियक्कड़ साथियों को घर में भी लाने लगा। बस्ती के लोग हम लोगों को छेंक देंगे। मुझे कसीदे का काम भी कोई नहीं देगा। अनाखां डर रही थी परन्तु उस आदमी को देख पाने की उत्सुकता थी। साबिर उसे अपना गुरू कहता था।

निमांचा में सन्नाटा था। आधी रात बीत चुकी थी। बस्ती के लोग सो गये थे। याफिम दानिल साबिर के घर आया।

याफिम ने दहलीज में कदम रखते ही सिर से टोपी उतार ली। भूरी मुलायम

---

* अक्टूबर क्रान्ति से पहले लेनिनग्राद नगर का नाम सेन्टपीटर्सबर्ग था।

चमकीली लट उस के माथे पर लटक आयी, लाल-लाल मूछें ! चेहरे से अनाखां को साधारण भला आदमी लगा, जैसे परिचित हो। उमर साबिर से ज्यादा थी परन्तु खूब जवान लग रहा था।

अनाखां को कुछ विस्मय भी हुआ। उस के मन में दूसरी ही कल्पना थी—रूसी बहुत भयानक, साइबेरिया की बर्फ जैसा खूंखार, जेलखाने जैसा विरूप आदमी होगा। माथे पर गहरे तेवर और आंखों में क्रोध की ज्वाला होगी।

याफिम ने दहलीज में पांव रखने से पहले अपने जूतों से कीचड़ हटाया और भीतर आकर अनाखां को मुस्कराकर सलाम किया। उस ने उज़बेक भाषा में बात की तो अनाखां हैरान ही रह गयी।

याफिम अचानक ही आ गया था। अनाखां के हाथ बशारत की बंडी आ गयी तो वही सिर पर रख ली और उस के एक पल्ले से मुंह ढक लिया था। अनाखां मेहमान पर सशंक दृष्टि लगाये उसे भांपने का यत्न कर रही थी—तमंचा और छुरा कहां छिपाये होगा ?

साबिर ने पत्नी की ओर संकेत कर परिचय कराया—"अनाखां मेरी घरवाली।"

अनाखां लजा कर पति की आड़ में हो गयी।

"बहुत अच्छा नाम है, अनाखां !" याफिम उज़बेकी में बोला। उच्चारण में रूसी ध्वनि थी, "अनाखां, हमारे यहां भी लड़कियों का नाम 'अन्ना' रखते हैं। मेरी बीवी का नाम सोफिया है। तुम्हारे यहां सूफी कहते हैं न ? वह 'इवानोवो-बोज़नेसेंस्क' में है। यहा से बहुत दूर है। वहां भी बुनकरों की बहुत बड़ी बस्ती है।"

बशारत और तुरसाना खाट पर सोई हुयी थीं। साबिर ने उन की ओर संकेत किया—"यह हमारी बेटियां हैं।"

"बेटियां ! बहुत खूब !" याफिम का चेहरा खिल गया।

याफिम उजबेकी में अटक-अटक कर बोल रहा था—"हमारा कोई बच्चा नहीं है। मैं यहां हूं, सोफिया वहां दूर रहती है। क्या किया जाय, काम ही ऐसा है। दिल तो हमारा भी करता है, बच्चे होते !"

याफिम की बातें सुन कर अनाखां हैरान थी—यह तो बिलकुल हम-तुम जैसी बातें करता है, बिलकुल हमारे जैसा ही है। हमारे जैसे ऐसे ही लोग ज़ार को मार डालने और उस की सरकार को पलट देने की कोशिश कर रहे हैं। यह आदमी तो बड़ा सीधा और भला लगता है, तभी तो साबिर की इस से दोस्ती है। ऐसे आदमी से कोई डर नहीं। इस के दिल में हम गरीबों का दरद है। साबिर सच कहता है—दुनिया में हम जैसे गरीबों, बेचारी बेबस औरतों की फिक्र करने वाले भी हैं।

साबिर ने याफिम को बैठने के लिये कहा तो वह उज़बेक लोगों की तरह पालथी

मार कर बैठ गया ।

अनाखां मेहमान और पति को किवाड़ की आड़ से खाना दे रही थी तो बहुत सावधानी से उन की बातों की ओर कान लगाये थी । बातचीत बिलकुल साधारण थी । अनाखां को भय या रहस्य की कोई बात नहीं लगी ।

याफिम ने बातचीत में ज़ुलैखां का भी ज़िक्र किया । उस का नाम बहुत आदर से लेता था जैसे मसजिद के बड़े इमाम का ज़िक्र कर रहा हो । अनाखां सोच रही थी—ज़ुलैखां कौन है ? किस की घर वाली है ? फिर समझ लिया कि इन्हीं लोगों में से, इन्हीं की साथी होगी ।

अनाखां के पति और मेहमान ने भी चाय पी ली तो याफिम ने एक पुरानी सी बिना जिल्द की पुस्तक निकाली और दोनों पुस्तक पर झुक कर धीमे-धीमे बात करने लगे । अनाखां तब भी कान लगाये थी । याफिम कह रहा था : मजदूरों और किसानों में एका होना चाहिये, दोनों को आपस में साथ देना चाहिये ।···रूस के ज़ार की दूसरे बादशाह, कैसर से लड़ाई हो रही है । दोनों ही ज़ालिम और बेईमान हैं । अनाखां ने रूस के ज़ार के बारे में याफिम को और कुछ कहते नहीं सुना ।

अनाखां किवाड़ की ओट से अपने पति के चेहरे पर टकटकी लगाये थी । साबिर याफिम की बातें बहुत ध्यान से सुन रहा था । उस का ध्यान में डूबा चेहरा बहुत गम्भीर और प्यारा लग रहा था । अनाखां के मन का भय मिट गया । सन्तोष हुआ, उसे अपना पति अधिक भला और प्यारा लग रहा था ।

याफिम लौटने के लिये उठ कर खड़ा हो गया तो उस ने अनाखां को खाने और चाय के लिये धन्यवाद दिया । साबिर की ओर देख कर बोला—"तुम बैठो, तुम परेशान न हो ।"

साबिर याफिम की बात अनसुनी कर उसे छोड़ने जाने के लिये कपड़े पहनने लगा ।

याफिम ने उस की ओर देख, मुस्कराकर कह दिया—"नहीं, मेरे साथ चलना ठीक नहीं है ।"

अनाखां को लगा जैसे याफिम ने हुक्म दे दिया और उस के मस्तिष्क में बिजली सी कौंध गयी—यह इतना भला, दयालु आदमी, हाय बेचारा कितने खतरे में है ।

रात का तीसरा पहर बीत रहा था । चारों ओर सन्नाटा और घना अंधेरा था । याफिम जैसे चुपचाप साबिर के घर आया था, वैसे ही अकेला लौट गया ।

अनाखां चिन्ता में पड़ गयी—हाय कितना सज्जन, कितना बड़ा आदमी है । इसे तो ऐसी रात में बन्द बग्गी में बैठा कर भेजना चाहिये था । बेचारा अकेला छिप-छिप कर जा रहा है, जैसे चोर हो ।

अनाखां ने साबिर से पूछ लिया—"फिर आयेगा या नहीं ?"

साबिर की गर्दन उठ गयी। आंखों में चमक आ गयी—"ज़रूरत होगी तो आने से रुकेगा नहीं। उसे दिन-रात, नज़दीक-दूर की परवाह नहीं है। वह डरता नहीं है।"

अनाखां ने याफिम दानिल को दूसरी बार छः मास बाद देखा था। वह दो दिन और दो रात उस के ही घर में रहा था। तब अनाखां ने सुना था कि प्रजा ने ज़ार को गद्दी से उतार दिया था। बेईमान लोग किसी दूसरे ज़ार को गद्दी पर बैठा देना चाहते थे परन्तु लोगों ने निश्चय कर लिया था कि अब ज़ार की सल्तनत नहीं चलने देंगे।

साबिर और याफिम बहुत उत्तेजना से बात करते थे : सभी जगह—रेलवे में, कारखानों में, बाज़ारों में, सभी जगह अंधेरगर्दी मची हुयी थी। सभी जगह चोर, बेईमान भरे हुये थे। कहीं न्याय नहीं था। लोगों की इज्ज़त का ख्याल नहीं था। अनाखां को लगता—यह लोग तो ऐसे बात कर रहे हैं कि स्वयं किसी दूसरी दुनियां से, स्वर्ग से आये हों, जहां कोई भी बुराई न हो; इस दुनियां में इन्हें कुछ भी पसन्द नहीं, सभी कुछ बदल देना चाहते हैं।

याफिम बहुत क्रोध में जान पड़ता था। साबिर की आंखें भी क्रोध में लाल रहती थीं। दोनों बन्दूकों और मशीनगनों की भी बातें करते थे। अब अनाखां का भाव भी बदल गया था। भय अनुभव करती तो भी भय प्रकट करते लज्जा अनुभव होती थी।

उन दिनों महमूद नगर-म्यूनिसिपल-कमेटी का प्रधान बन गया था। महमूद निमांचा की मसजिद के इमाम का बेटा था और नगर के मदरसे का अध्यापक भी था। याफिम अपने सीने पर हाथ रख कर कहता था—"इन लोगों की हुकूमत नहीं चलेगी, हुकूमत हम लोगों को संभालनी होगी।"

याफिम ने अपने कोट के भीतर की जेब से चमचमाती काली-काली माउज़र पिस्तौल निकाल ली। अनाखां तमंचा देख कर डर गयी। बेचारी ने जीवन में पहली बार डरावनी चीज़ देखी थी।

एक दिन याफिम ने साबिर और अनाखां को एक पत्र पढ़ कर सुनाया। पत्र सोफिया का था। पत्र रूसी में था। याफिम पत्र पाकर बहुत खुश था। उस ने बताया कि रूस में नागरिक, कारखानों और मिलों में मज़दूर लोग चुपचाप शस्त्र इकट्ठे करके विप्लव की तैयारी कर रहे थे।

तीसरे दिन पौ फटते-फटते याफिम दानिल अनाखां के यहां से चला गया। बच्चियां अभी सो रहीं थीं। याफिम ने दोनों को प्यार से चूम लिया। साबिर भी याफिम के साथ गया।

अनाखां के वे दिन युगों की तरह बीते थे। बहुत आतंकित और सहमी-सहमी रहती थी। रात पड़ने पर बच्चियों को सुला कर भी अनाख़ां आधी-आधी रात तक प्रतीक्षा में बैठी रहती, शायद पति आये या उस की कोई खबर ही आये, खबर कैसी

भी हो सकती थी। साबिर कभी चौथे-पांचवें या हफ्ते में आ पाता था। अनाखां के हाथ में कुछ दाम या अनाज दे जाता और तुरन्त ही लौट जाता। उस का चेहरा चिन्ता से कठोर और भारी हो गया था। अनाखां कुछ कह न पाती पर मन में आता कि पति कुछ बोले। बेटियों को गोद में लेकर प्यार कर ले तो उस के दिल को कुछ सहारा मिले।

अनाखां पति को द्वार तक छोड़ने गयी तो असगुन न करने के लिये उमड़ते आंसुओं को रोक कर मुस्कान से पूछ लिया—"इस बार अपनी बेटियों के लिये क्या लाओगे?"

"तारा! लाला तारा लाऊंगा।" साबिर ने उत्तर दिया।

साबिर के मन में आशंका थी कि बेटियों और उन की मां को बांहों में लेकर प्यार कर ले परन्तु मन मार लिया कि अनाखां डर न जाये। विदा के संकेत में हाथ हिलाता हुआ चला गया, 'खुदा हाफिज' भी नहीं कहा।

साबिर फिर नहीं लौटा। वह रेल के कारखाने में था। उस की ड्यूटी कारखाने में ही थी परन्तु काम दूसरा था। पहले जैसा काम नहीं, जिस की बातें घर लौट कर सुनाया करता था। साबिर उस समय एक ऐतिहासिक काम में लगा हुआ था। लाखों ही लोग उस की तरह वैसे कामों में लगे हुये थे।

चारों ओर बहुत आतंक फैल गया था। बहुत भयंकर अफवाहें फैली हुई थीं, शहर के गलियों बाजारों में घुड़सवार सेना तैनात हो गयी थी। लोग घर से बाहर नहीं निकल सकते थे।...लोग कहते थे कि निमांचा में पुलिस वालों ने वर्दियां उतार दी थीं। बुनकरों की तरह रुई भरे अंगरखे पहन कर रिश्ते-नाते के लोगों के यहां जा छिपे थे। कोई कहता कि ताशकंद में बड़े-बड़े फौजी अफसर खून में सनी तलवारें हाथ में लिये घूम रहे थे।

अनाखां रात भर सो न पाती। एक बार तो रात भर गोलियां चलती रहीं। गोलियों के धमाके कभी तो बिलकुल पड़ोस में जान पड़ते और कभी दूर चले जाते। अनाखां दोनों बेटियों को सीने से चिपकाये रात भर बैठी रही।

अनाखां बहुत घबरा गयी थी। साबिर दस दिन से घर नहीं आया था। सुबह उस ने तुरसाना को पड़ोसिन के यहां छोड़ दिया और बशारत को साथ लेकर पति की खबर लेने चली। निमांचा की गलियां सूनी थीं। अनाखां घर से तो चल दी परन्तु बाजार में आकर ठिठक गयी, किधर जाय?...नये शहर की ओर?...कारखाने की ओर या घर लौट जाय? अनाखां घर न लौट सकी। पति को आये दस दिन हो चुके थे। अनाखां का दिल दहल रहा था।

अनाखां के कदम जिस ओर उठे चल दी। वह नन्हीं बशारत को हाथ से खींचती चली जा रही थी। बच्ची मां के साथ चल पाने के लिये दौड़ती बार-बार ठोकर खा

जाती थी। बच्ची का दम फूल गया था। नंगे पैरों में कई कांटे-कंकड़ गड़ गये थे मां के चेहरे की ओर नज़र उठा कर देखती तो मां की घबराहट देख कर डर के मा उस के मुंह से बोल न फूट पाता।

कारखाने के फाटक पर अनाखां को एक लड़के ने रोक लिया। लड़के के चेह पर चेचक के दाग थे। उस की बांह पर लाल पट्टा था। पेटी से एक बम लटका था। स्त्री को आया देख कर बड़ी उमर का रूसी मज़दूर भी बढ़ आया। रूसी के बांह पर भी लाल पट्टा था। कन्धे से रायफिल लटकी हुई थी।

लड़के ने रूसी को बताया—"साबिर मज़दूर की घरवाली है।"

रूसी ने उज़बेकी में कहा—"साबिर यहां नहीं है, किले में है। तुम जल्दी घ लौट जाओ, घर में बैठो। किले में कोई नहीं जा सकता।"

अनाखां तुरन्त लौट पड़ी और लड़की को लिये नये शहर की ओर चल दी। शह में भी सड़क-बाजार, गलियां निमांचा की तरह ही सूने और वीरान थे परन्तु अनाख ज्यों-ज्यों किले की ओर बढ़ती गयी, लोग दिखाई देने लगे। फिर अधिक लोग दिखा दिये। सभी लोग कारखाने के दरवाज़े पर दिखाई दिये। लड़के और रूसी की तर लोग बाहों पर लाल पट्टे बांधे और सशस्त्र थे।

एक गली में मोरचा बना हुआ था। गाड़ियों के पहिये, शहतीर, तख्ते और कंक भरी बोरियां रख कर राह रोकने के लिये बनाया मोरचा गिरा हुआ था। अनाख बेटी की बांह पकड़े मोरचे की बगल से निकल कर आगे बढ़ी तो पीठ पीछे से सरप दौड़े आते घोड़ों की टाप सुनायी दी। घुड़सवार तीर की तरह आगे निकल गये जैसे भागते शिकार का पीछा कर रहे हों। अनाखां आगे बढ़ी तो एक बहुत बड़ा मका दिखायी दिया। मकान के दरवाज़े, खिड़कियां सब टूटे हुये थे। गली में एक घोड़ मरा पड़ा था। मरे हुये घोड़े पर जीन भी कसी हुई थी।

अनाखां नये शहर में बहुत कम गयी थी परन्तु इमारत को देख कर पहचान गयी बड़ा डाकखाना था। जली हुई दीवारें नीचे से ऊपर तक काली हो गयी थीं। मका के सामने तारों के खम्भे झुक गये थे, कुछ टेढ़े खड़े थे, कुछ धरती पर लेट गये थे तारें टूट कर धरती पर बल खाये बिखरी हुई थीं। सब और टूटा हुआ कांच, ईंटे लकड़ी के टुकड़े, टीन की चादरें बिखरी हुई थीं।

डाकखाने पर हथियारबन्द लोगों का पहरा था। देखने से सब लोग मज़दूर जा पड़ते थे। बुरका ओढ़े, बच्ची साथ लिये औरत को आई देख कर मज़दूरों को कु विस्मय हुआ। एक मज़दूर ने अनाखां को हाथ के इशारे से अपनी ओर बुलाया मज़दूर के चेहरे पर बड़ी-बड़ी काली मूंछें थीं। कमर में फटी-फटी-सी कारतूसों क पेटी थी। मजदूर अनाखां को डाकखाने के साथ के मकान में ले गया। अनाखां अप

बुरके में से मजदूर की ओर देखती रही। मज़दूर ने उसे चेतावनी दी—"खबरदार, बाहर गली में नहीं जाना।" वह उसे और बशारत को खड़ा कर स्वयं चला गया।

मकान सूना-सूना जान पड़ता था। पल्ले उखड़ी हुई बड़ी-बड़ी खिड़कियां थीं। कोई बड़ी दूकान रही होगी। बड़ी खिड़कियों के कांच टूट गये थे और तख्ते जड़ दिये गये थे। दुकान में अब कुछ रगड़ खाई हुई कुर्सियां दीवाल के साथ-साथ लगी हुई थीं। साथ के कमरे से बहुत से लोगों के बोलने की गूंज आ रही थी।

अनाखां ने कदमों की आहट सुन कर घूम कर देखा तो याफिम दानिल। याफिम के सिर पर टोपी नहीं थी। भूरे बाल उलझे और बिखरे हुये थे। चमड़े की बंडी के बटन खुले थे। पेटी से माउज़र पिस्तौल लटका था। दांतों में दबे हाथ के बने खूब मोटे सिगरेट से धुआं उड़ रहा था।

अनाखां और बच्ची बिना कुछ बोले याफिम के पास चली गयीं।

"हैं, तुम यहां कैसे आ गयीं?" याफिम के मुख से निकला। फिर अपनी घबराहट छिपा कर बोला, "तो आओ, इधर ही आ जाओ!"

याफिम, अनाखां और बशारत को अपने साथ दूसरे कमरे में ले गया। कमरे में बहुत से लोग बड़ी सी मेज़ को घेरे हुये बैठे थे। मेज पर नक्शा बिछा हुआ था। अनाखां ने समझा कि मेज़ पर फूलदार कपड़ा बिछा है। उसे बहुत हैरानी हुई। कमरे के कोने में एक दुबली सी लड़की भी थी। लड़की भी याफिम की तरह चमड़े की बंडी पहने थी। उस के सामने मेज़ पर तार देने का यंत्र रखा था। अनाखां ने सोचा, यह बेचारी भी किसी को ढूंढ़ने आयी होगी।

याफिम व्यस्त और परेशान सा लग रहा था। उस ने अनाखां को बैठने का संकेत किया—"ज़रा बैठो, दम तो लो!"

टेलीफोन की घण्टी बजी। याफिम टेलीफोन सुनने लगा। याफिम का चेहरा और आंखें चमक गयीं। अनाखां को लगा जैसे बहुत प्रतीक्षा के बाद कोई समाचार आया हो। कमरे में बिलकुल सन्नाटा छा गया था। तार के यंत्र के पास बैठी हुई लड़की प्रसन्नता से उछल कर खड़ी हो गयी। मुच्छड़ मज़दूर कमरे में दौड़ा आया। उस ने फौजी ढंग से सलाम दिया परन्तु अपना उल्टे कदमों दौड़ गया। पल भर बाद सब ओर इन्कलाब ज़िन्दाबाद के नारे गूंजने लगे।

याफिम ने लड़की की ओर संकेत किया। वह तुरन्त कोने में तार के यंत्र के सामने बैठ गयी। याफिम गर्दन झुकाये कमरे में घूम-घूम कर रूसी में बोलता जा रहा था। लड़की उंगलियों से तार के यंत्र पर गिटगिट-गिटगिट करती जा रही थी। याफिम के शब्दों को सब लोग बहुत ध्यान से सुन रहे थे। अनाखां भी समझ रही थी—बहुत उत्साह और प्रसन्नता की बात थी।

याफिम रूसी में बोल रहा था। अनाखां दो ही शब्द समझ पाई थी—'ताशकंद' और 'चारदीवारी'। उस ने अनुमान कर लिया कि किले की बात थी। अनाखां जैसे गरीब लोग शहर जाते थे तो किले की ओर जाने का साहस नहीं होता था। किला ऊंची-ऊंची चारदीवारी से घिरा था। दीवारों के सामने कांटेदार तार लगे थे। दीवारों पर सिपाही बन्दूकों में संगीनें लगाये पहरा देते रहते थे।

अनाखां बुरका ओढ़े थी। उस का हृदय बहुत ज़ोर से धड़क रहा था। दोनों हाथों से सीने को दबा लिया। कारखाने के फाटक पर रूसी मज़दूर ने बताया था कि साबिर क़िले में था। साबिर ने क्या किया होगा ? सुन कर यहां सब लोग इतने उत्साहित और प्रसन्न हो गये हैं।

कमरे में एक लड़की झपटती हुई आयी। लड़की के सिर पर सफेद रूमाल बंधा था। रूमाल पर लाल सलीब बनी हुई थी। लड़की ने याफिम के कान से मुंह लगा कर कुछ कहा।

याफिम के माथे पर तेवर पड़ गये। पल भर सोचा और उठ कर लड़की के साथ चल दिया। अनाखां और बशारत भी उस के पीछे-पीछे चल दी। अनाखां और बशारत यहां और किसी को भी जानती नहीं थीं। याफिम ने घूम कर बशारत का हाथ अपने हाथ में ले लिया और अनाखां को पीछे आने का संकेत कर दिया।

याफिम दरवाज़े में लड़खड़ा गया। उस ने बशारत का हाथ छोड़ दिया। आस-पास खड़े लोगों ने उसे सम्भाल कर एक कुर्सी पर बैठा दिया। सफेद रूमाल वाली लड़की ने याफिम की चमड़े की बंडी के नीचे हाथ डाल कर उस के कन्धे को टटोला। लड़की ने हाथ बाहर निकाला तो उस के हाथ पर खून था।

"याफिम, यह क्या कर रहे हो ?"

"हाय याफिम ताऊ !" अनाखां और बशारत की भी चीख निकल गयी।

याफिम ने मुस्कराकर ऊंगली उठा दी—"चुप।"

लड़की ने अपने बेग में से एक पट्टी निकाली और याफिम के कन्धे पर बांध दी।

याफिम ने कुर्सी से उठ कर बशारत का हाथ फिर अपने हाथ में ले लिया और अनाखां की ओर देख कर कहा—"आओ ! आओ ! जल्दी आओ !"

याफिम अनाखां के आगे-आगे गली में बढ़ता गया। एक टूटी हुई बाढ़ के साथ-साथ घूम कर वे लोग खुरमानी का छोटा सा बाग लांघ कर, छोटी सी कोठरी में चले गये।

कोठरी में खिड़की के साथ तख्त लगा हुआ था। खिड़की खुली थी।

"अब्बा ! अब्बा !" बशारत चिल्ला उठी। तख्त पर साबिर लेटा हुआ था। लड़की ने देखते ही पिता को पहचान लिया।

अनाखां तख्त की ओर झपट गयी । तख्त के साथ धरती पर घुटने टेक कर बैठ गयी । अपने बुरके का नकाब सिर पर फेंका तो नकाब धरती पर जा गिरा ।

अनाखां सुन्न रह गयी । साबिर का चेहरा सूखे पत्ते की तरह पीला, रक्तहीन था । दाढ़ी बढ़ी हुई, गाल धंसे हुये, ओंठ खुश्क, आंखें पथराई हुई थीं । अनाखां का दिल डूबा जा रहा था । शंका हुई—हमें पहचान भी रहा है ?

"अनाखां !...बशारत !" साबिर के होठों से फुसफुसाहट सुनाई दी ।

"अब्बा !" बशारत ने फिर पुकारा । लड़की बहुत घबरा गयी थी ।

साबिर के होंठ फिर जरा हिले—"याफिम दानिल !"

"हां कहो, मैं तुम्हारे पास हूं ।"

"किले पर......"

याफिम ने झुक कर साबिर के कान में कहा—"किला हमने ले लिया । नगर पर हमारा कब्ज़ा हो गया ।"

साबिर की गर्दन उठ गयी । पूरी शक्ति से कुहनियों की टेक लेकर उठना चाहा । याफिम और अनाखां ने उस की पीठ को सहारा दिया ।

साबिर ने खिड़की से बाहर देखा ।

डाकखाने की छत पर लाल झंडा फहरा रहा था ।

"अब्बा, लाल झंडा !"

"कहां बेटी, मेरी आंखों को क्या हो गया है ?"

याफिम और अनाखां ने साबिर को फिर लिटा कर उस का सिर तकिये पर रख दिया । साबिर ने आंखें मूंद लीं और टटोलकर अनाखां का हाथ पकड़ लिया ।

"साबिर जान !" अनाखां की चीख निकल गयी । वह अपने आप को सम्भाल नहीं पा रही थी । बेसुध हो गयी ।

अनाखां को दूसरे दिन सुध आयी । साबिर इस संसार में नहीं था । अनाखां ने आंखें खोलीं तो याफिम उस के पैताने बैठा था । अनाखां की नज़र उस के कन्धे पर बंधी सफेद पट्टी पर पड़ी । याफिम की गोद में बशारत उस के गले में बांह डाले चिपकी हुई थी । बशारत की लाल आंखों में आंसू भरे हुये थे । खाट के समीप फर्श पर तुरसाना बैठी अपने पिता की टोपी पर टंके हुये लाल तारे को नन्हीं-नन्हीं उंगलियों से खींच रही थी ।

मां की आंख खुली देख छोटी बच्ची बोल पड़ी—"अम्मा देखो, तारा ! लाल तारा !"

तीसरा परिच्छेद

राव कुदरतुल्ला नेपवाले के कारखाने के पड़ोस में ही पुराना कब्रिस्तान था।

कब्रिस्तान में छोटी-छोटी कबरें, रात में विश्राम के लिये बैठ गये ऊंटों के काफिले के कोहानों की तरह लगती थीं। उन कबरों के बीच में खिजर शेख की बड़ी और पक्की कब्र थी। पुरानी कब्र की जगह-जगह धसक गयी दीवारों में बेरी की झाड़ियां उग आयी थीं। बेरी के झाड़ों में दब गया कब्र का गुम्बद बीच से झांकता दिखायी देता था।

लोगों ने रास्ता बचाने के लिये कब्रिस्तान के बीच से एक पगडंडी बना ली थी परन्तु बशारत और तुरसाना कब्रिस्तान का चक्कर लगा कर ही गयीं। लड़कियां बसंत की सुहावनी धूप में उमंग से चहक रही थीं। चाहती थीं—खूब चलें, दौड़ें और भागें, कूल के घास से ढके किनारों को फांदें और फूलों से लदी चेरी (ग्लास) की टहनियां तोड़ लें। गाड़ियों की लीकों से बन गये दड़े के दोनों ओर दूर-दूर तक झरबेरी, आक, बासा और दूसरी झाड़ियां फूल रही थीं। ज्यों-ज्यों सूरज उठता गया, सरदी नहीं रही। हवा में शहद की मक्खियों, भौंरों और दूसरे भुनगों की गूंज भर गई थी। जिधर नज़र जाती, हवा में असंख्य तितलियां डगमगा रही थीं।

बशारत ने घर से चलते समय पुरानी बंडी सिर पर ओढ़ ली थी। अब गरमी के कारण वह असह्य हो गयी। उस का गोल चेहरा धूप से तमतमा गया था। सुबह उस ने न्याज़बो का हार गूंध कर पहन लिया था। पसीने से फूल गर्दन पर चिपकने लगे तो उस ने हार उतार कर कूल में फेंक दिया। हार ने कूल की भंवरियों में चक्कर काटे, अटका, रुका और फिर छूट कर तेजी से बह गया।

तुरसाना ने चांदनी के छोटे-छोटे फूलों का गजरा सिर पर बांध रखा था। फूलों की पंखुड़ियां पसीने से उस की गर्दन पर चिपक गयी थीं। बशारत ने देखा तो कहा—"गजरे को फेंक दे। गर्दन पर चिपक रहा है। धूप से सिर में दर्द हो जायगा, सिर ढक ले।"

गजरा तुरसाना के सिर पर बहुत खिल रहा था। वह उसे फेंकना नहीं चाहती थी—"नहीं, मैं नहीं फेंकूंगी। सोफिया तायी को दिखाऊंगी। तायी मुझे पहचान नहीं पायेगी।"

तुरसाना बहुत संभल-संभल कर, पांव बचा-बचा कर चल रही थी कि सलवार पर धूल न पड़े। बशारत को कोई परवाह नहीं थी। वह लड़कों की तरह उछलती-कूदती, कीचड़ में पांव डालती, धूल उड़ाती चली जा रही थी।

गांव के रास्ते पर दोनों ओर कच्ची दीवारों के पीछे से खुरमानी के पेड़ों की

टहनियां बढ़ आयी थीं। खुरमानियों में फूल झड़ कर दाना पड़ने लगा था। रास्ता पंखुड़ियों और दानों से बिछा गया था। उस पर लड़कियों के पांव के चिन्ह बनते जा रहे थे।

लड़कियां सड़क पर पहुंच गयीं तो सड़क के दोनों ओर न झरबेरियां और न बनफ्शे की हरियाली रही न कीट-पतंगों की गूंज। पक्की सड़क पर बड़े-बड़े पीपों से लदी गाड़ियां धचके खाती चली जा रही थीं। आने-जाने वाले व्यस्त भाव से लपकते हुये निकल जाते थे। रेल के इंजिन की सीटी सुनायी दे जाती थी। सांस में कोयले के धुयें की गंध थी। मालगाड़ियों के शंटिंग में टकराने की गर्जन सुनायी दे रही थी। लाइनों में कोई आदमी ऊंचे नक्की स्वर में गीत गा रहा था। तुरसाना इधर आती तो धूप में चमचमाती लाल-हरी छतों को विस्मय से मुंह खोले देखती रह जाती थी।

बशारत अपने जूते हाथ में लिये थी। शहर में आकर उस ने जूते पहन लिये। बंडी से सिर ढक लिया। तुरसाना को भी अपना धूप से मुरझा गया गजरा सड़क के किनारे फेंक देना पड़ा। बेचारी का मुंह लटक गया।

बशारत और तुरसाना रेलवे के क्वार्टरों की लम्बी पांतों में से चली जा रही थीं। क्वार्टरों के सामने जगह-जगह तख्तों के छप्पर पड़े थे, कहीं कूड़ा डालने के पीपे रखे हुये थे। कुछ मास पहले लगाये गये पेड़ अभी बढ़ नहीं पाये थे। पेड़ों में रस्सियां बांध कर रस्सियों पर धोये हुये कपड़े सूख रहे थे।

बशारत और तुरसाना कारखाने में चली गयीं। बहुत खुश थीं—सब देख लें कि अकेली आयी थीं, बड़ी हो गयी हैं, डरती नहीं हैं। याफिम ताऊ कहेंगे—शाबास!

सब ओर रेल की लाइनों का जाल सा बिछा था। जगह-जगह कई पुराने इंजिन खड़े हुये थे। चारों ओर लोहे की कतरों, टुकड़ों और जंग खाये पहियों के ढेर लगे हुये थे। लड़कियों ने एक-दूसरे के हाथ पकड़ लिये और खुले फाटक में चली गयीं।

कारखाने के फाटक के भीतर जाते ही लड़कियों के चेहरे पर भट्ठियों से आती गरम हवा लगी। लोहे पर पड़ती भारी घनों और हथौड़ों की चोटों से लड़कियों के कान बहरे हो गये। ऊपर धुएं से काले, बड़े-बड़े चौरस शीशों की छत थी। सब ओर विराट शक्ति, भट्ठियां, घन और मजदूर थे।

कमर के ऊपर से नंगे, पसीने से लथपथ दो मज़दूर बड़ी-बड़ी सड़सियों में लोहे का बहुत बड़ा, तपा हुआ भाप छोड़ता लाल-सफेद कुंदा लिये चले आ रहे थे। तुरसाना डर कर पीछे भागी। दोनों हाथों से चेहरा ढक लिया परन्तु बशारत निडर कौतूहल और उत्सुकता से देखती रही।

एक बड़ी भट्ठी के लाल मुंह में से आग की लपटें खूब लम्बी जीभों की तरह लपलपा रही थीं। भट्ठी के पास खड़े मज़दूर ने लोहे का एक लम्बा सब्बल भट्ठी के

मुंह में खोंस दिया जैसे भट्ठी के दांत तोड़ देगा। भट्ठी ने क्रोध में फुंकार छोड़ी, खूब ऊंचे तक फुलझड़ियों की तरह चिनगारियां उड़ गयीं। बशारत प्रसन्नता से किलक उठी।

एक मज़दूर की नज़र लड़कियों पर पड़ी। खूब लम्बे लड़के से मज़दूर के सिर पर गोल टोपी थी। चेहरा और शरीर काले तेल से पुता हुआ था। मज़दूर मुस्कराया तो उस के सफेद दांत चमक उठे—"याफिम दानिल की मेहमान आयी हैं। आओ बहिनो!" मज़दूर ने घूम कर आवाज़ दी, "फोरमैन! साथी नादेज़दिन!"

बशारत का सीना धक-धक करने लगा—यहां सभी लोग एक दूसरे को साथी कहते हैं और साथ मिल कर काम कर रहे हैं। ख्याल आया—लड़का होती तो यहां आकर काम करती।

याफिम ने लड़कियों को देखा तो बांह उठा कर लम्बे-लम्बे कदम बढ़ाता उन की ओर चला आया।

साबिर की मृत्यु के बाद से याफिम में काफी परिवर्तन आ गया था। शरीर काफी भर गया था। अब उमर ज्यादा लगती थी। सिर पर भूरे बाल उतने घने नहीं रहे थे। कनपटियों पर सफेदी आ गयी थी परन्तु मूंछें अब भी मक्का के भुट्टे के बालों जैसी लाल-लाल थीं। याफिम ने दूर से ही पुकार लिया—"आ जाओ! आ जाओ मेरी छोटी-छोटी बिटिया, तुम तो बड़ी अच्छी लग रही हो।"

तुरसाना शरमा गयी थी। याफिम ने उसे गोद में उठा कर प्यार किया और कन्धे पर बैठा लिया। बशारत के सिर में लगा रह गया एक फूल उठा कर सूंघा और आंखें ऐसे चढ़ा लीं कि सुगंध से मस्त हो गया हो। लड़कियां खिलखिला उठीं।

"अम्मा का क्या हाल है?" याफिम ने पूछा।

"ताऊ जी, हम किताब लेने आई हैं।" तुरसाना बोली, "अब्बा की कहानी वाली किताब है। जीजी पढ़ के सुनायेंगी। जीजी पढ़ लेती हैं।"

"तुम नहीं पढ़ोगी?"

"मैं तो गीत गाऊंगी, अब्बा का गीत गाऊंगी।"

याफिम ने अपनी मूंछें सहलाकर पल भर सोचा—"अच्छा, तो तुम घर चलो। एकदम दौड़ जाओ। ताई घर पर हैं। मैं अभी आता हूं।"

कारखाने का भोंपू हो गया। याफिम फाटक से भीतर आते एक आदमी की ओर बढ़ गया।

बशारत तुरसाना का हाथ पकड़ कर एक ओर हो गयी। आगन्तुक का कद छोटा, कन्धे झुके हुये, बाहें लम्बी-लम्बी थीं। हाथ में किरमिच का बेग लिये था। कागज़ों से भरा बेग तकिये की तरह फूला हुआ था। बेग के बोझ से आगन्तुक का कंधा झुका जा रहा था।

आगन्तुक गर्दन झुकाये याफिम की बात सुन रहा था। वह याफिम की ओर नज़र उठा कर देखता तो चेहरे पर झुर्रियों का जाल-सा दिखाई दे जाता।

"...वह बहुत मेहनती है।" याफिम का स्वर उत्तेजित हो गया था, "बेचारा बीमार है। उस के पास खर्चा नहीं है।"

"बीमार है तो डाक्टर मौजूद है, इलाज कराये। रही खर्चे की बात...यहां सभी मज़दूर हैं, सेठ कौन है ?"

आगन्तुक ने हाथ उठा कर बात समाप्त कर दी—"अच्छा, अच्छा, उस की दरख्वास्त फिर देख लेंगे।"

आस-पास खड़े मज़दूर बोल पड़े—"आप हमेशा यही कह जाते हैं, कितनी बार वायदा किया है ? आप को कारखाना कमेटी का प्रधान किस ने बना दिया है ?"

दूसरा मज़दूर बोला—"फोरमैन बिलकुल ठीक कह रहे हैं। उसे मदद मिलनी चाहिये।"

बशारत को लगा आगन्तुक मज़दूरों से नाराज़ था। मज़दूर भी उस से प्रसन्न नहीं थे।

आगन्तुक ने गर्दन झुकाये याफिम से पूछा—"मुझे बुलाया किस लिये है, क्या बात है ?"

"आज मज़दूरों की मीटिंग होगी। हम लोग कारखाने को बढ़ाना चाहते हैं। सामान की जरूरत है। आप मीटिंग में हमारी बात सुनिये !"

काले तेल से पुते लम्बे लड़के ने आंख दबा कर कहा—"उस पर गौर किया जायेगा। पहले हम गौर करेंगे, फिर वे उस पर गौर करेंगे।"

प्रधान के माथे पर तेवर पड़ गये—"सामान के लिये, काम फैलाने के लिये रकम चाहिये। इतनी रकम कहां से आयेगी ? सरकार इतनी रकम कहां से दे देगी ? तुम क्या समझते हो, हमारी सरकार क्या उपनिवेशों से सोना उठा लायेगी ? हमारी सरकार गरीब मज़दूरों की सरकार है। हमारे तुम्हारे जैसे लोगों की सरकार है। हम सरकार से मांगते ही चले जायं तो सरकार कहां से देगी ? हमें मज़दूरों की सरकार की मदद करनी चाहिये। यह बड़े शरम की बात है कि हम सरकार से मांगते ही चले जायं।"

मज़दूरों में शोर मच गया। एक बूढ़ा मज़दूर चिढ़ गया। दाढ़ी उठाये आगे बढ़ कर बोला—"सुनो, ऐ प्रधान साहब सुनो ! आप हमेशा कह जाते हैं कि मज़दूरों की सरकार है, मज़दूरों को सब कुछ करना है, अपने आप को भी मज़दूर कहते हो लेकिन आप मज़दूरों की बात ही नहीं समझते ! आप हमेशा कह देते हैं कि मज़दूरों की सरकार गरीब है ! यह कैसे हो सकता है ? कौन कहता है, हमारी मज़दूरों की सरकार गरीब है ? हम अपनी सरकार से मांगते हैं, काम बढ़ेगा तो इस से सरकार का, मुल्क का

फायदा नहीं होगा ?"

"काम तो बढ़ाओगे, मशीनों और इमारत के लिये रकम कहां से आयेगी ! तुम दे दोगे ?" प्रधान ने तेवर चढ़ा कर बूढ़े से पूछा ।

प्रधान ने अपने ख्याल में बूढ़े को सब के सामने मुंहतोड़ जवाब दे दिया ताकि दूसरे लोग भी न बोलें । फिर भर्राई सी आवाज़ में बोला :

"आप लोग क्या समझते हैं ! ऐसी महत्वपूर्ण बातों के फैसले खड़े पैरों नहीं हो सकते ! आप बाकायदा लिख कर सुझाव दीजिये । कमेटी उस पर रिपोर्ट देगी, उस पर गौर किया जायगा ।"

"फिर गौर शुरू हो गया, फिर गौर होने लगा !" कई मज़दूर बोल पड़े ।

"तुम गौर करते रहो, फैसला तो हमें करना है ।"

"याफिम भाई, आप मीटिंग शुरू कराइये !"

प्रधान मुंह खोले देखता रह गया । याफिम कूद कर एक बड़े ड्रम पर खड़ा हो गया, जैसे अभी जवान छोकरा ही हो । बांह ऊंची करके बोला :

"साथियो, लेनिनग्राद के मज़दूर साथियों ने हमें रास्ता बता दिया है । हमें भी उसी रास्ते पर चलना होगा ।"

"मीटिंग, मीटिंग, रोज़ मीटिंग !" प्रधान ने बहुत क्रोध से धमकाया, "कोई नियम, कायदा या अनुशासन भी है ?"

पाखोमिच ने अपनी दाढ़ी पकड़ बहुत शांति से प्रधान को उत्तर दिया—"कायदा और अनुशासन नहीं है तो इतनी बड़ी क्रान्ति कैसे हो गयी ? आखिर यह क्रान्ति किस लिये है ?"

मज़दूर प्रधान की परवाह न कर आपस में बातचीत करने लगे ।

तुरसाना मजदूरों की गरमा-गर्मी से बहुत डर रही थी । बहिन की आस्तीन खींच-खींच कर कहे जा रही थी—"...चलो न ताई के घर चलो । ताऊ ने कहा था घर जाओ ।"

बशारत को मज़दूरों का जोश अच्छा लग रहा था । उन की बातें समझने का यत्न कर रही थी । अनुमान था, सब मज़दूर याफिम ताऊ का समर्थन कर रहे थे कि बीमार मज़दूर साथी को मदद दी जाये । वह लड़ाई के मोरचे पर बीमार हुआ था । उस के छोटे-छोटे बच्चे थे । मज़दूरों को आपस में मदद करनी ही चाहिये ।

याफिम ताऊ, मां, उस का और तुरसाना का हमेशा ही ख्याल रखते थे । तभी तो सब लोग ताऊ को इतना मानते थे । बशारत ने सभा देख ली और समझ गयी कि सभा कैसे होती है ।

बशारत को याद आया—मां के कारखाने में स्त्रियां दूसरी तरह की बात करती

थीं, अपनी-अपनी ही बात करती रहती थीं। कोई बताने लगती कि कैसे मुश्किल से चिद्दियां जोड़-जोड़ कर कथरी बनायी है, कोई बताने लगती कि अमुक के यहां दसवें में गयी थी तो भोज में क्या मिला था। कोई बताने लगती कि तम्बाकू वाला कैसे डंडी मार कर ठगता है।

बशारत ने सिर्फ एक ही स्त्री को याफिम ताऊ की तरह बोलते सुना था। जुलैखां भी ऐसी बातें करती थी, बुरका भी नहीं ओढ़ती थी। जुलैखां एक बार उन के घर आयी थी। बशारत ने उसे पढ़ कर दिखाया था तो उस ने बहुत-बहुत शाबाशी दी थी। तुरसाना ने एक गीत सुनाया था तो उसे भी प्यार किया था। जुलैखां ने बशारत की मां को जनाना क्लब की बातें भी बतायी थीं। जनाना क्लब में स्त्रियों की भी सभा होती थी। वहां सब सहेलियां बन जाती थीं। तुरसाना बहिन को बार-बार कहे जा रही थी—"चलो न, ताई के यहां चलो, अब चलो भी!"

तुरसाना रुआंसी हो गई तो बशारत को चलना ही पड़ा। लड़कियां कारखाने के फाटक से निकल रही थीं तो बशारत ने फिर घूम कर देख लिया कि मज़दूर बहुत जोर से तालियां बजा रहे थे और नारे लगा रहे थे।

बशारत कारखाने से लौट कर मजदूरों के क्वार्टरों में से जा रही थी तो उसे वह जगह कुछ दूसरी ही लग रही थी। उस के मन में था कि उन मैली छोटी-छोटी कोठरियों में बहुत भले, खूब तगड़े, जबर्दस्त लोग रहते थे। वे सब लोग साथी थे इसीलिये खूब हंसमुख और प्रसन्न थे। बशारत कौतूहल से सभी खिड़कियों में झांकती जा रही थी। उसे याद आ रहा था कि अम्मा के कारखाने में तो बुननेवालियां सदा चिड़चिड़ाती ही रहती थीं। अपनी किस्मत को रोती रहती थीं, अपनी बेबसी में यों ही ऐंठी रहती थीं।

बशारत अपने खयाल में डूब गयी। उसे पता ही नहीं लगा कि तुरसाना पीछे रह गयी थी। उस ने घूम कर देखा तो तुरसाना एक कोठरी की खिड़की के कांच पर मुंह दबाये भीतर झांक रही थी। बशारत को विस्मय हुआ, तुरसाना क्या देख रही होगी? वह तुरसाना को लेने के लिये लौट गयी।

कोठरी में कोई गा रहा था। तुरसाना बिलकुल मस्त खड़ी गाना सुन रही थी। चेहरा खिल उठा।

गीत खत्म हो गया। बशारत ने कहा—"अब तो चल!" तुरसाना खिड़की से हिलना नहीं चाहती थी। उसे आशा थी कि अभी गाना होगा। बशारत उसे खींच ले जाना चाहती थी। तुरसाना बहिन की खुशामद कर रही थी, "जरा ठहरो, जरा सुन लेने दो" उस का सब संकोच और झेंप दूर हो गयी थी। पीछे से याफिम आ गया।

तुरसाना ने उस से पूछ लिया—"यहां कौन रहता है?"

"क्या, तुम्हें क्या चाहिये ? यह तो क्लब है। लड़के-लड़कियां जलसे के लिये गाना तैयार कर रहे हैं।"

"नाटक वाले हैं ? एक्टर हैं ?"

"नहीं क्लब की टोली के लड़के हैं।"

"कैसी टोली ? ताऊ, जरा खिड़की खोल कर देख लें, कोई लड़ेगा तो नहीं ?"

"लड़ेंगे क्यों ?" याफिम ने कहा, "टोली में तुम्हारा भी नाम लिख लेंगे। फिर घर नहीं जाने देंगे।"

तुरसाना को याफिम की बात पर विश्वास हो गया परन्तु उसे डर नहीं लगा।

याफिम को हंसी आ गयी। कोठरी का दरवाज़ा खोल कर लड़कियों को भीतर ले गया।

"तुम तो कहती थीं अन्दर नहीं आने देंगे !" तुरसाना ने बहिन की ओर आंखें चढ़ा कर कहा, "बड़ी आयी !"

बड़ा सा कमरा था। कमरे के अन्त में मंच था। मंच पर मेज़ थी, मेज़ पर लाल कपड़ा बिछा हुआ था। एक कोने में दो लाल झंडे रखे हुये थे। दीवार पर तने हुये लाल कपड़े पर कुछ लिखा हुआ था। बेंचों को हटा कर दीवारों के साथ कर दिया गया था। बीच में बहुत से लड़के-लड़कियां खड़े हुये थे।

एक लड़का बशारत और तुरसाना को देख कर आगे बढ़ आया। बशारत ने पहचाना, वही लम्बा लड़का है जो कारखाने में था पर अब हाथ-मुंह धोकर, कपड़े बदल कर साफ-सुथरा बन गया था। उम्र अधिक नही थी। बशारत से तीन-चार बरस ही बड़ा होगा।

लड़के ने पुकार लिया—"आओ, आप का नाम क्या है ? मेरा नाम अब्दुस्समद है। आप से मिल कर बहुत खुशी हुई।"

अब्दुस्समद ने याफिम और लड़कियों के लिये एक बेंच खींच दी और याफिम से कहा—"बहुत अच्छा हुआ आप आ गये। हम लोग अब अपनी पक्की प्रैक्टिस करके देख रहे थे। जाने कैसा बन पायेगा !"

अब्दुस्समद ने अपने साथियों को पुकार लिया—"सब लोग तैयार हो जाओ !"

अब्दुस्समद लड़के-लड़कियों का मुखिया जान पड़ता था।

सब लड़के अधगोले में खड़े हो गये। लड़कियों ने उन के सामने वैसी ही पंक्ति बना ली। ढोलची ने अपनी छड़ियां सम्भाल लीं, बांसुरी वाले ने बांसुरी होठों पर रख ली और बाजे वाली लड़की ने बाजा मुंह से लगा लिया।

अब्दुस्समद सबके सामने खड़ा था। उस ने बाहें उठा कर अपने मुंह खोले जूते से फर्श पर ताल दी। सब लोग समवेत स्वर में गाने लगे।

तुरसाना मुग्ध अवस्था में बेंच से उठ गयी। कुछ ही देर पहले उस ने खिड़की से यही गाना सुना था। गाने के शब्द जैसे उसे याद हो गये थे। मन ही मन, गाने वालों के साथ-साथ उज़बेक सोवियत के पहले कवि हम्ज़ा का लिखा गीत गाने लगी।

ऐ मज़दूर, ओ जुल्म के शिकार,
आया समय हो होशियार !
सम्भल, सब तेरा है अधिकार,
लूट न लें तुझे सेठ-साहूकार !

तुरसाना बिलकुल मुग्ध होकर गाने में रम गयी थी। याफिम उस की ओर ध्यान से देख रहा था। गाने वाले भी लड़की की उत्तेजना देख रहे थे। गीत खत्म हुआ तो गाने वाली लड़कियों ने तुरसाना को घेर लिया।

"गाना अच्छा लगा ? पहले यहां कभी नहीं आयी ?"

"तुम्हारा क्या नाम है ?"

तुरसाना शरमा कर बहन के पीछे हो गयी।

"हाय कैसी पागल है। अपना नाम क्यों नहीं बताती ?" बशारत ने बहिन को समझाया, "बता दे दीदी—मेरा नाम तुरसाना है। बता न, तुझे तो कई गीत याद हैं।"

तुरसाना बहिन से बिल्कुल चिपट गयी और अपना मुंह उसकी बंडी में छिपा लिया।

तुरसाना को पुचकारने के लिये एक लड़की उस की चुटिया खोल कर फिर बांधने लगी। तुरसाना ने प्यार पाकर अपनी आंखें लड़की की ओर उठा दीं।"

"वाह, शरमाती क्यों है, यह तो सब तेरी बहिनें हैं।" याफिम ने तुरसाना को बांह में लेकर समझाया, "एक गीत हमें भी सुना दे !"

"मुझे नहीं आता।" तुरसाना ने बहुत धीमे से कह दिया।

याफिम ने अब्दुस्समद की ओर आंख से इशारा किया—"आओ भाई, हम सब लोग गायेंगे।"

सब लड़के-लड़कियां याफिम के चारों ओर घिर आये। याफिम कन्धे झकोर कर सीधा हो गया। खूब गहरा सांस भरा और दबे स्वर में बड़ी मस्ती से गाने लगा—

"लहराता है सागर, दीखे न किनारा।
मेरी नैया है छोटी, गहरी है धारा
कैसे मिले किनारा।"

सब लड़के-लड़कियां उत्साह से याफिम का साथ देने लगे।

याफिम पुरानी मधुर स्मृति में खो गया था। कल्पना में अपना सुदूर प्यारा देश देख रहा था—हरे-हरे खेतों पर प्रभात का कोहरा। संघर्ष के दिनों का साहस और उत्साह……।

याफिम की उमंग और उल्लास से सभी गाने वाले अभिभूत हो गये थे। याफिम जैसा स्वयं था वैसा ही गम्भीर और साहस भरा उस का गाना था। तुरसाना बिल्कुल मुग्ध, दम रोके विस्मय से आंखें फाड़े गाना सुन रही थी। याफिम ने उसे बांह में भींच लिया। लड़की को बांह में लिया तो उसे कन्धे में दर्द की टीस सी अनुभव हुई। दर्द का कोई कारण नहीं था। कन्धे का घाव बहुत पहले ही भर चुका था। दर्द कन्धे में नहीं मन में था।

याफिम ने मन में उठ आयी स्मृति की पीड़ा को दबा कर कहा—"आओ बेटियो, अब घर चलें!"

"नहीं, नहीं!" तुरसाना ने स्वप्न से जाग कर इन्कार में सिर हिलाया, "मैं भी गाऊंगी" लड़की याफिम की गर्दन में बाहें डाल कर चिपट गयी। अपना सिर ताऊ की ठुड्डी में लगा दिया। उसे याफिम से अब भी लोहे-कोयले की गन्ध आ रही थी।

सब लोग चुप हो गये।

याफिम ने तुरसाना को एक कुर्सी पर खड़ा कर दिया। लड़की ने इतने आदमियों के सामने कभी नहीं गाया था परन्तु डरी नहीं। मन में उठ आयी गाने की उमंग को बस में नहीं कर पा रही थी। उस समय गा न पाती तो रो देती।

तुरसाना के गले की महीन कोमल लय बुलबुल की मीठी बोली की तरह कमरे में गूंज गयी। वह निस्संकोच, उन्मुक्त उल्लास से, शिशु की सरल उमंग से गा रही थी। उस के मुख से निकले शब्द सुनने वालों के हृदय में बैठते जा रहे थे—

मन में आयी बहार!
सुन्दर-सुन्दर फूल खिले, हवा गंध से मदमाती।
सब ओर फैला जीवन उद्‌गार, देख अंखियां सरसातीं......।

तुरसाना का गीत सुन कर सब हैरान रह गये। गाने लगी थी तो उन्हें कौतूहल था कि बारह-तेरह बरस की लड़की—मेरे मन में आयी बहार गायेगी! गीत सुन कर कौतूहल नहीं, विस्मय हो रहा था। सब लोग तुरसाना को गोद में ले-लेकर चूमने और प्यार करने लगे।

तुरसाना ने साहस से पूछ लिया—"गीत अच्छा है न!"

अब्दुस्समद ने—"सुनो-सुनो," कह कर सब को चुप करा दिया, "तुरसाना भी हमारी टोली में रहेगी। यह भी जलसे में गायेगी।" उसने तुरसाना से पूछा, "तुम्हारा पूरा नाम क्या है?"

याफिम ने लड़की के सिर पर हाथ फेर कर बताया—"तुरसाना साबिरा!"

अब्दुस्समद ने पेंसिल ज़बान पर लगा कर लिख लिया—"कामरेड तुरसाना साबिरा—गीत। फिर तुरसाना से कहा, तुम यही गीत जलसे में सुना देना। समझ गयी!"

बशारत ने बहिन को कोहनी से संकेत किया—"शुक्रिया कर।"

"शुक्रिया" तुरसाना ने धीमे से कह दिया और आंखें फाड़े अब्दुस्समद की ओर देखती रही। उसे विश्वास नहीं हो रहा था।

बशारत सड़क पर आयी तो बड़े गर्व से तुरसाना का हाथ पकड़, गर्दन उठाये चल रही थी। गर्व के साथ लड़की के मन में ईर्ष्या की दबी हुई टीस भी थी—इसे सब लोग कामरेड साबिरा कह रहे थे, इस ने गाकर सुना दिया।

बशारत ने ज़रा झिझक कर याफिम से पूछ लिया—"ताऊ, क्या हम भी कामरेड हैं?"

"कौन है कामरेड?"

"मैं और तुरसाना भी कामरेड हैं?"

याफिम ने बशारत को प्यार से थापी दी—"क्यों नहीं? जरूर! जो लोग समाज की, अपने साथियों की सहायता करते हैं, उन सब को कामरेड कहते हैं। तुम्हारे पिता मज़दूर थे, उन्हों ने मज़दूरों के लिये अपनी जान निछावर कर दी। तुम्हें इस बात का गर्व होना चाहिये। तुम्हें भी उन की तरह बनना चाहिये। समझीं! तुम कामरेड साबिरा हो। नन्हीं भी कामरेड साबिरा है।"

बशारत और तुरसाना ने गर्व से एक दूसरी की आंखों में देखा।

लड़कियां याफिम ताऊ के घर कई बार जा चुकी थीं। घर में एक कमरा और रसोई थी ओर बरांडा था। साबिर की मृत्यु के बाद लड़कियां साल भर वहां ही रही थीं। तभी से सोफिया ताई को जानती थीं।

सोफिया उन्हीं दिनों सुदूर इवानोवो-वोज़नेसेंस्क से आयी थी। उस ने अनाखां की लड़कियों को अपने यहां अपनी बेटियों की तरह रख लिया था। दोनों के रूसी नाम भी रख दिये थे—वीरा और तान्या। दोनों को साबुन से नहलाती थी और कांटे-चम्मच से खाना भी सिखा दिया था।

सोफिया नयी-नयी आयी तो उज़बेकी बिलकुल नहीं जानती थी। याफिम घर न रहता तो सोफिया लड़कियों की बात नहीं समझ पाती थी। उस समय बशारत सहायता करती थी। सोफिया को तो उज़बेकी सीखने में काफी समय लगा परन्तु बशारत ने रूसी बहुत जल्दी सीख ली थी। याफिम के घर में उज़बेकी और रूसी दोनों ही चलती थीं। अनाखां बेटियों को अपने यहां ले गयी तो लड़कियां ताई को बहुत याद करती रहती थीं, मिलने के लिये भी चली जाती थीं।

याफिम के घर में बराम्दा ही बैठक थी। सोफिया ने आते ही बराम्दे में, लाल गमलों में कुछ फूल लगा दिये थे। अपने शहर से आकर सब से पहले बाज़ार से उस ने ही खरीदे थे। बशारत उसी बराम्दे में बैठ कर सोफिया ताई से रोमांचक कहानियां

सुना करती थी और तुरसाना अपनी गुड़िया को ताऊ के जूते की गाड़ी बना कर बैठा लेती और 'हट जाओ ! बच जाओ !' पुकारती-दौड़ती फिरती थी ।

बशारत झुंझला उठती—"चुप, सुनने भी दे !"

सोफिया ताई के पास एक किताब थी—'मां' । उस किताब में से पढ़ कर बहादुर मज़दूरों की कहानियां वह बशारत को सुनाती रहती । बशारत को वह कहानियां बहुत अच्छी लगती थीं । उसे पुस्तक के लिये बहुत आदर था । बशारत रूसी समझने लगी तो ताई पुस्तक पढ़ कर ही उसे सुना देती । ताई इतनी जल्दी-जल्दी पढ़ती चली जाती थी कि बशारत को विस्मय होता था । वह सोचती–कहानी ताई को याद है । पुस्तक के पन्ने पर नज़र लगाये बोलती जाती हैं ।

कभी ताई बाहर चली जातीं तो बशारत पुस्तक उठा कर, उस के पन्ने पलट-पलट कर देखने लगती । अक्षर ही अक्षर थे । लड़की को विस्मय होता, ताई इतने अक्षर एकदम कैसे पढ़ लेती हैं । ताई ने बशारत को रूसी का अ, इ पढ़ाना शुरू कर दिया था । लड़की बहुत जल्दी ही पढ़ने लग गई थी ।

बशारत ताऊ याफिम और ताई सोफिया को तो बहुत चाहती थी । 'मां' पुस्तक को भी बहुत प्यार करने लगी ।

× × ×

याफिम ने लड़कियों को कमरे में आगे कर सोफिया से पूछ लिया—"जानती हो, बेटियां क्यों आयी हैं ?"

सोफिया ने बशारत की ओर मुस्करा कर कह दिया—"हां, मैं जानती हूं ।"

ताई को बाल-बच्चे की आशा थी । बदन खूब भर आया था । उस का ढीला गाउन भी अब कुछ कसावट से आता था । नीली-नीली आँखों में दूसरी ही चमक आ गई थी । बशारत को अब ताई और भी प्यारी लगती थी । बशारत को याद था—ताई ने मां से कहा था, अगर लड़की हुई तो उस का नाम 'वीरा' रखेंगी । बशारत दौड़ कर ताई से लिपट गई और सिर उस के सीने पर रख दिया ।

"वीरा बिटिया, मां का क्या हाल-चाल है ?" ताई बशारत को वीरा ही पुकारती थी, "तुम्हारी मां को देखे कितने दिन हो गये !"

"अम्मा बिल्कुल अच्छी हैं ।" तुरसाना बहिन से पहले ही बोल पड़ी, "ताई, हमारे यहां शहतूत पकने लगे हैं ।"

तुम्हारी ताई को अब मीठे शहतूत नहीं अच्छे लगते ।" याफिम ने हंस कर कहा, ,'अब तो उसे कच्ची खुरमानी चाहिये । उसे खटायी अच्छी लगती है ।"

तुरसाना कुछ समझ नहीं सकी, ताई की ओर कौतूहल से देख कर मुस्कराती रही।

बशारत बोल पड़ी—"ताई, तुरसाना क्लब में आयेगी तो वह आप के लिये टोपी भर कर कच्ची खुरमानी ले आयेगी।"

"क्लब में आयेगी ?"

"हां जलसे में गीत गायेगी।" बशारत ने गर्व से कहा।

"ताऊ भी गीत गायेंगे।" तुरसाना ने कहा।

"हां, हां क्यों नहीं ? तुम्हारे ताऊ तो बहुत अच्छा गाते हैं।"

ताई ने लड़कियों के हाथ-मुंह धुलाये और उन्हें खाने के लिए मेज़ पर अपने साथ बैठा लिया। लड़कियां अपनी-अपनी पुरानी जगह पर ही बैठीं। खाने के समय अधिक लोग होते तो ताई को बहुत अच्छा लगता था। वह लड़कियों को बार-बार परोसती जाती थीं।

याफिम खाना खाते-खाते सुनता जा रहा था—मज़दूरों ने प्रधान से क्या-क्या कहा।

बशारत ने बीच में पूछ लिया—"ताऊ जी, क्या मज़दूरों की बात मान ली जायेगी, क्या वह जीत जायेगें ?"

"हां बेटी, जरूर मानी जायेगी।"

"ताऊ जी मज़दूर वर्ग क्या होता है ?"

याफिम भी कुछ मुस्कराया। उस ने बशारत की ओर देखा—"कामरेड साबिरा, तुम्हारा प्रश्न तो गम्भीर है।

याफिम ने अपनी कुर्सी बशारत के समीप खिसका ली। मेज़ पर झुक कर उसने पंजा लड़की के सामने फैला दिया और एक-एक उंगली को छूकर बोला—"देखो बेटी ! यह एक मज़दूर है, यह दूसरा मज़दूर है, यह तीसरा मजदूर है, यह चौथा भी मज़दूर है। ऐसे ही पांच-सात-दस-पचास, सैकड़ों मज़दूर हैं। हैं न !"

बशारत ने गर्दन झुका कर हामी भरी।

याफिम ने अपने पंजे की मुट्ठी बांध ली। अपनी भारी मुट्ठी लड़की को दिखला कर बोला—"सब मज़दूरों को मज़दूर वर्ग कहते हैं।"

याफिम अपनी कल्पना में खो गया था। कुर्सी से उठ कर चहलकदमी करने लगा और फिर बशारत की ओर देख कर बोला—"तुम ताई से सुनना, ताई तुम्हें अपने पिता की कहानी सुनायगी। इनके पिता लेनिन से मिले थे।"

"लेनिन से मिले थे ?" बशारत बहुत विस्मय से ताई की ओर आखें फाड़े रह गयी। उसे ताई कुछ और ही सी लगने लगी थी।

"बीस वर्ष पहले सोफिया ताई के पिता एक बहुत बड़े मिल मालिक मोरोज़ोव के कारखाने में काम करते थे। जब कारखाने के मज़दूरों ने क्रान्ति के लिये विद्रोह

किया तो तो ताई के पिता क्रान्ति का झंडा उठा कर मज़दूरों के आगे-आगे थे। ज़ार के सिपाहियों ने मज़दूरों पर गोली चलायी ।"

याफिम सोफिया की ओर देख कर चुप रह गया, आगे बोल न सका।

सोफिया ने बशारत के कंधे पर हाथ रख दिया—"बेटी, कोई परवाह नहीं। मैं उस बात के लिये रोती थोड़े ही हूं, कभी भी नहीं रोयी। पिता जी हमेशा कहते थे—बहादुर कभी नहीं रोते। जब पिता जी को कालापानी भेजा गया था, उन के हाथों में हथकड़ियां लगी हुयी थीं। वह कैदियों की, लोहे का जंगला लगी गाड़ी में बन्द थे। उन्होंने हथकड़ी में बंधा हुआ हाथ गाड़ी के जंगले से बाहर निकाल कर हमें विदाई दी थी तो कहा था—बहादुर बनो, कभी मत रोना। मुझे पिता जी की बात याद है, कभी भूल नहीं सकती। पिता जी कालापानी में ही समाप्त हो गये। मैंने सदा उन का उपदेश माना है। मैं तो बड़ी हो गयी हूं परन्तु तुम दोनों अभी छोटी-छोटी हो। तुम्हें भी बहादुर बनना चाहिये, तुम्हें खूब पढ़ना-लिखना चाहिये और कभी भी रोना नहीं चाहिये।

"अच्छा-अच्छा ठीक है" याफिम ने सोफिया के कन्धे पर हाथ रख दिया, "उठो, मेज़ साफ कर दें।"

बशारत उछल कर खड़ी हो गयी। वह ताई को कैसे मेज़ साफ करने देती। बशारत ने आस्तीनें समेट लीं और समावार से गरम पानी लेकर तश्तरियां, चम्मच धो-धो कर रखने लगी। ताऊ प्यार से मुस्कराकर लड़की की फुर्ती देख रहे थे। बशारत को अच्छा लग रहा था।

बशारत और तुरसाना घर लौटने के लिये तैयार हुयी तो याफिम ने उन के लिये पुस्तक निकाल दी। बहुत बार पढ़ी जा कर पुरानी पुस्तक की जिल्द टूट गयी थी।

बशारत ने किलक कर पुस्तक सीने पर दबा ली और पूछ लिया—"हमारे पिता जी भी मज़दूर-वर्ग में थे न ?"

"हां बेटा" याफिम का स्वर उमंग से रुंध रहा था, "तुम तो बहुत समझदार हो गयी हो।"

बशारत और तुरसाना एक-दूसरी का हाथ पकड़े, बांहें झुलाती हुयी घर की ओर लौट रही थीं। जब तक वे दिखायी देती रहीं, याफिम और सोफिया स्नेह से उन की ओर देखते रहे।

चौथा परिच्छेद

दोपहर बाद निमांचा में बहुत गर्मी हो जाती है। कच्ची दीवारें भी घाम से खूब तप कर गर्मी छोड़ने लगती हैं। दम घुटने लगता है।

दोपहर में गली सुनसान थी। केवल चार-पांच लड़के धूल में खेल रहे थे। लड़के खेल में आटे की दूकान बना रहे थे। उन्हों ने धूल समेट कर अपनी कमर के बराबर ऊंचा आटे का ढेर खड़ा करके उसे हाथों से चिकना दिया था। एक खूब काला भुजंग लड़का दुकानदार बन गया था। वह बहुत गम्भीर मुद्रा बना कर गली की धूल ग्राहकों के लिये तोलता जा रहा था। ग्राहक बने लड़के क्यू में खड़े थे। गलियों से बटोरी हुयी सिगरेट की डिबिया फाड़ कर नोट बना लिये थे। उंगलियों में थूक लगा कर, बहुत सावधानी से नोट गिन कर दाम दे रहे थे। फिरती वापस लेकर जांघिये की अंटी में सम्भाल लेते थे। आटा लेने के लिये अपना दामन पसार देते थे।

सब से छोटा लड़का क्यू में सब से पीछे था। पांच-एक बरस का होगा। सिर के बाल घुंघराले थे। बहती नाक को बार-बार ऊपर खींच लेता था। पांव से चोटी तक धूल से भरा था। उस के पास न दाम देने के लिये नोट थे, न फिरती अंटी में रखने के लिये कमर पर जांघिया था। उस की बारी आयी तो उस ने भी आगे बढ़ आटे के लिये अपना दामन पसार दिया। दुकानदार ने मुट्ठी भर धूल उठा कर लड़के के कुर्ते के दामन के नीचे डाल दी। बच्चा अपमान और क्रोध से चीख कर रो पड़ा।

गली के सिरे के मकान से एक स्त्री निकल आयी। उसे देख कर लड़के सिर पर पांव रख कर भाग गये। लड़कों के पाँव से उड़ी धूल के बादलों से गली भर गयी। गली की हवा कितनी ही देर तक धूल से भरी रही।

स्त्री कच्ची दीवारों के साथ-साथ छाया में चल रही थी। स्त्री बुरके में नहीं थी। गली के बीचोंबीच मसजिद की मीनार की छाया पड़ रही थी। छाया में मीनार पर लगे हलाल (चाँद-तारा) का चिन्ह भी था। स्त्री मीनार की छाया में गली लांघ कर दूसरी ओर हो गयी और रूमाल से माथे का पसीना पोंछ लिया।

गली के अन्त में छोटे बाज़ार के साथ के मकान की दहलीज में तीन स्त्रियाँ बैठी बात कर रही थीं। बूढ़ी का शरीर बहुत ही सिकुड़ा, सूखा-सा, छोटी सी लड़की के बराबर ही था। पलकें फूली हुयी थीं और आंखों से पानी बह रहा था। बुढ़िया ने बेनकाब स्त्री को देख कर मुंह फेर लिया, जैसे देखा न हो। जवान स्त्रियों ने बेनकाब स्त्री को ध्यान से देखा।

"जुलैखां है।" एक ने कहा।

"हां, जज बन गयीं है।" दूसरी भी उस के साथ ही बोल पड़ीं।

दोनों युवतियां झिझक रही थीं—घर के भीतर जा छिपें या आगे बढ़ कर जुलैखां से बात करें। बुढ़िया मुनमुना उठी—"हाय बहू, मैं तो बातों में ही उलझ गयी। मैं तो सूप मांगने आयी थी। बता दे, कहां रखा है ?"

बुढ़िया अपनी बहू को भीतर आंगन में खींच ले गयी। दरवाज़े के किवाड़ बहुत ज़ोर के झटके से मूंद दिये। दूसरी युवती ने जुलैखां की ओर कौतूहल से देखा और बुढ़िया और उस की बहू के पीछे-पीछे भीतर चली गयी। मकान के दरवाज़े पर केवल दो छोटी बच्चियां रह गयीं।

जुलैखां ने सब कुछ देख लिया था, समझ भी गयी थी। उसे याद था, जब निमांचा में पहले-पहल बिना बुरके के आयी थी तो उसे देख कर सब स्त्रिया आतंक से भाग जाती थीं। अब दो लड़कियां तो बैठी ही थीं, भाग नहीं गयी थीं। यह भी जानती थी—लड़कियों को जान-बूझ कर रहने दिया गया होगा और स्वयं दीवान के पीछे छिप कर बहुत उत्सुकता से कान लगाये होंगी।

निमांचा में स्त्रियां जुलैखां से वैसे ही परदा करती थीं, उसे देख कर छिप जाती थीं जैसे मर्दों से परदा करती थीं या छिप जाती थीं। उन्हें सब के सामने खुले मुंह फिरने वाली, बेनकाब स्त्री के समीप आने का साहस न होता। वे वेचारी तो मकान के पिछले भाग में, अलग कोठरियों—हरम में ही बन्द रहती थीं। जुलैखां उन असहाय स्त्रियों के मन की व्यथा खूब समझती थी, उन के दिलों में कितना असन्तोष उबल रहा था। बहुत सी स्त्रियां भय से चुप थीं। कुछ जीवन का जैसा अभ्यास हो गया था, उसी को स्वीकार किये थीं। कुछ जुलैखा के साहस से ईर्ष्या भी करती थीं, उस से नाराज़ भी थीं।

जुलैखां लड़कियों के पास आयी तो बड़ी लड़की बोल पड़ी—"जुलैखां मौसी, सलाम!"

छोटी लड़की ने भी अपनी रगड़-रगड़ कर लाल हुयी नाक आस्तीन से पोंछ कर मुंह ही मुंह में जुलैखां को सलाम कर दिया।

जुलैखां रुक गयी। वह थैली में बशारत और तुरसाना के लिये मीठी टिकिया लिये जा रही थी। लड़कियों को एक-एक टिकिया दे दी। छोटी लड़की किसी बड़ी उमर की लड़की का उतारा हुआ गाढ़े का चियड़ा सा कुर्ता पहने थी। जुलैखां ने झुक कर छोटी के सिर पर प्यार किया। उस के माथे पर लटक आये बाल हटाये और चूम लिया। जुलैखां के होंठ, लड़की के माथे पर जमे पसीने से नमकीन हो गये।

जुलैखां का कद लम्बा था। सिर पर कपास के फूल की छाप का पीला रेशमी रूमाल बांधे थी। शरीर पर जरा नीची काट की खूब चुस्त नीली बंडी थी। दोनों लड़कियां मुट्ठी में मिठाई दबाये, ठुड्डी उठा कर जुलैखां के चेहरे पर टकटकी लगाये

थीं। बहुत विस्मित थीं—खुले मुंह स्त्री जाने किस देश से आयी है।

जुलैखां की जवानी पक चुकी थी। आंखों के नीचे महीन-महीन, लाल-नीली नसें झलकने लगी थीं। कनपटियों पर कौओं के पंजे जैसी महीन झुर्रियां दिखाई देने लगी थीं। उस ने लड़कियों को प्यार करके पूछा—"किस की बिटिया हो!"

"मैं सलीम बुनकर की बेटी हूं।" बड़ी लड़की ने बता कर छोटी की ओर संकेत किया, "यह नरमत छैले की गोद ली है। हमारे यहां ही रहती है।"

"अच्छा!" जुलैखां लड़कियों से पुराने परिचय के ढंग से मुस्करायी, "तुम तो बड़ी अच्छी, बड़ी प्यारी बिटिया हो!"

जुलैखां आगे बढ़ कर दूसरे मकान के सामने पहुंची तो आहट पाकर घूम कर पीछे देखा—लड़कियां मुट्ठी में ली हुयी मिठाई किवाड़ों के भीतर से दिखा रही थीं। गली में आगे चायखाना पड़ता था। गली में टखने-टखने तक धूल भरी हुयी थी फिर भी जुलैखां चायखाने के दरवाज़े से हट कर जाने के लिये गली लांघ कर दूसरी ओर हो गयी।

चायखाने में ग्राहक नहीं थे। चायखाने वाले सुकड़ू बुड्ढे ने कुर्ते को कंधों से कमर पर खिसका लिया था। आस्तीनों को कमरबंध की तरह बांध लिया था और नांद का गन्दा पानी, दुकान के चौतरे के सामने, गली में अंजलियों से उलीच रहा था। चौतरे पर बहुत पुरानी तार-तार दरी बिछी हुयी थी।

सड़क से गधे पर सवार एक आदमी गली में मुड़ आया। चायखाने को देख कर गधे के कान सतर्क हो गये, उस की चाल तेज़ हो गयी। गधा हांफ रहा था, काफी दूर से सवारी लेकर आया जान पड़ता था। चायखाना देख कर जानवर को विश्राम से सांस ले पाने की आशा हो गयी होगी। गधे का सवार गाड़ी के बोझ जैसा बड़ा और भारी, अपनी सवारी के पशु से चौगुना लग रहा था। बोझ से गधे की गर्दन झुक कर कान आगे गिर गये थे। कपास के बड़े बोरे जैसे सवार की गम्भीरता देख हंसी रोक लेना कठिन था।

गधा सवार सुनहरी ज़रीदार चोगा पहने था। पांव में चमचमाते चमड़े के मोज़े थे। बायें हाथ में धूल और कीचड़ में पहनने के लिये बड़े-बड़े जूते लिये था। दायें हाथ में खूब बड़ा पीला रेशमी रूमाल था। रूमाल से अपने काले, फूले हुये चेहरे और गर्दन से पसीना पोंछता जा रहा था। चोगे में से सीने के बाल झांक रहे थे। उस की तोंद परात में रखे खमीरे आटे की तरह थल-थल कर रही थी।

गधा सवार के पीछे पच्चीस-तीस कदम पर कोई स्त्री बुरका ओढ़े चली आ रही थी। ज़रीदार चोगा पहने गधा सवार और पीछे चली आती स्त्री में किसी सम्बन्ध की कल्पना नहीं थी।

सवार को अपने गधे पर बहुत गर्व था। सवार का भारी फैला हुआ शरीर गधे की पीठ से ज़रा फिसला और उस के पांव धरती पर टिक गये तो गधे की पूरी साज-सज्जा प्रकट हुई। गधे पर चमड़े की बढ़िया जीन कसी हुई थी। जीन के नीचे अच्छे कपड़े का अस्तर था। अस्तर के किनारों पर मगज़ी थी। नीचे दूसरा बड़ा झालरदार अस्तर था। जीन से गधे की दुम तक कसाव पर आइने जड़े हुये थे और लाल फुंदने लटके थे। अयाल में काले मनके गुथे हुये थे। माथे पर भी सफ़ेद कौड़ियां टंकी पट्टी थी।

जुलैखां गधे की सज-धज को विस्मय से देख रही थी तो उस का ध्यान सवार के पीछे आती बुरकापोश स्त्री की ओर चला गया। स्त्री का बुरका बहुत पुराना बदरंग हो चुका था, जगह-जगह पेबन्द लगे हुये थे। बुरके पर गर्द की तह चढ़ी हुई थी। स्त्री के सिर पर अच्छी भारी गठरी थी और गोद में बच्चा था। पांव में बहुत पुराने, एड़ी दबे बड़े-बड़े मर्दाने जूते घसीटती हुई आ रही थी। एड़ियों में बिवाइयां फटी हुई थीं।

बुरकापोश स्त्री चायखाने के पास सूखे शहतूत की छाया में, दीवार के साथ पांव पर बैठ गयी। गोद के बच्चे को धरती पर रख दिया और सिर पर से गठरी उतार ली। स्त्री की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया, न मोटे गधा सवार ने, न चायखाने वाले सुकड़ू ने।

जुलैखां ने गरीब स्त्री को देखा तो उसकी ओर से आंख न हटा सकी। सोच रही थी—यह कौन है, चेहरा देख पाती तो शायद पहचान सकती। जाने क्या उम्र होगी! इस गरमी में, पसीने से लथ-पथ बुरके में बेचारी का दम घुट रहा होगा, जाने प्यास से गला सूख कर क्या हालत होगी…?

मुटल्ला सवार चायखाने के सामने बढ़ाव की छाया में चौड़े चौतरे पर बैठ गया। आराम के लिये घुटने पर घुटना रख लिया। चायखाने वाला सुकड़ू अमीर गाहक की सेवा में व्यस्त हो गया। तुरन्त लपक कर भीतर आंगन में गया और बांहों में हरियाली का छोटा सा बोझ ले आया। हरियाली गधे के सामने डाल दी और गधे के स्वामी की ओर खुशामदभरी मुस्कन से देख कर गधे की गर्दन प्यार से थपथपा दी।

धरती पर रखा हुआ बच्चा चीख-चीख कर हाथ-पांव चलाने लगा। शायद बेचारे को मां ने चींटियों के बिल पर ही रख दिया था। चौतरे पर बैठे मुटल्ले ने करवट लेकर स्त्री की ओर लाल आंखों से घूर लिया। स्त्री ने घबराकर बच्चे को उठाया और बुरके के भीतर लेकर चुप कराने के लिये उसके मुंह में दूध दे दिया।

जुलैखां के मन में टीस सी उठ गयी—बच्चे वाली है।

स्त्री मैले, धूल से भरे, पसीने से लथपथ बुरके में धरती पर लकड़ी के कुन्दे की

तरह निश्चल बैठी थी ।

बच्चे ने दूध पी लिया तो उसका सिर बुरके से झांकने लगा। बच्चे के काले बालों पर गोल लाल टोपी थी । टोपी पर बुरी नज़र बचाने के लिये एक ताबीज़ और काले मनके टके हुये थे । गुथी हुयी छोटी सी चुटिया बकरी की दुमड़ी जैसी बाहर निकली हुई थी । स्त्री ने बच्चे को पांव पर खड़ा कर उसका सिकुड़ गया कुर्ता खींच पेट ढक दिया और चायखाने की ओर दिखा दिया—"जा, अपने बाप के पास जा !"

जुलैखां की दृष्टि चायखाने की ओर गयी। चौतरे पर बैठा बच्चे का बाप गरमी के कारण अपने सफेद कुर्ते के दामन से सीने पर हवा ले रहा था । सामने तश्तरी में एक नान था और प्याली में शकर मिलाकर फेंटा हुआ अन्डा था । वह नान में अन्डा लगा कर बड़े स्वाद से खा रहा था । चायखाने वाले ने खूब गरम-गरम भाप छोड़ती चाय का एक प्याला बहुत आदर से गाहक के सामने रख दिया ।

जुलैखां क्रोध से जल उठी, यह दृश्य उस के लिये असह्य था । वह मुंह फेर कर चल दी । कुछ वर्ष पूर्व ऐसे दृश्य जुलैखां नित्य ही देखती थी, अब बात दूसरी थी । जुलैखां ने स्वयं जो भी अन्याय, कष्ट और आतंक सहा था उस की अपेक्षा दूसरी स्त्रियों को वैसी दशा में देखना उसे अधिक असह्य हो गया था ।

जुलैखां के मन में आया कि बुरके में लिपटी असहाय स्त्री का हाथ पकड़ कर उसे धरती से उठा कर खड़ा कर दे । उस के मुख पर से नकाब हटा कर, उससे आंख मिला कर उस की अवस्था जाने परन्तु ऐसा कर नहीं सकती थी । स्त्री बहुत डर जाती। उसने तो जीवन में, दिन के प्रकाश में कभी अपना मुख खोला ही न था । जुलैखां सहसा ठिठक गयी । दीवाल के परे आंगन से कोई स्त्री चीख-चीख कर बोल रही थी। मर्द का तीखा स्वर भी सुनायी दिया । स्त्री विरोध में और जोर से चेंचियायी । एक बच्चा चीख कर रो उठा । एक बूढ़ा शांत हो जाने के लिये समझा रहा था ।

जुलैखां सुनने लगी ।

मर्दाने स्वर ने गम्भीरता से कहा—"··· अगर हिम्मत है तो जाकर कह दो कि सोवियत सरकार को नहीं मानती !"

स्त्री चुप हो गयी । बच्चा भी चुप हो गया । जुलैखां को बूढ़े की थकीसी आवाज़ सुनायी दी—"कोई जबरदस्ती तो है नहीं, जिससे जितना बन पड़ेगा देगा, इस से सरकार को कोई मतलब नहीं ?"

मर्द की आवाज़ फिर सुनाई दी "······सरकारी हुकुम है, जो हुकुम है तुम्हें बता दिया । बातें बनाने से क्या होगा, रुपये की जरूरत है । तुम्हें नहीं देना तो जाकर कह दो । मैंने तो अपना काम कर दिया ।"

मकान का दरवाज़ा खुला । एक लम्बा-दुबला सा मर्द गली में निकल आया । मर्द

घुड़सवारों जैसी, नीली दुसूती की बिरचिस पहने था। घुटनों तक बादामी बूट थे। उस्तरे से घुटा सिर धूप में चिकनी हांडी की तरह चमक रहा था। लाल गोल टोपी पीछे खिसकी हुई थी।

मकान से निकले मर्द ने जुलैखां को देखा तो ठिठक कर ऊपर की ओर आ गया। हाथ बढ़ा कर बोल पड़ा—"सलामालेकुम खानम (श्रीमती जी)! बहुत खुश-किस्मत हूं, आप मिल गयीं।" मर्द ने मुस्कान से अपने सोना मढ़े दांत दिखा दिये।

"भीतर आप ही बोल रहे थे?" जुलैखां ने दीवार के परे आंगन की ओर आँख से संकेत कर पूछ लिया।

"जी हां खानम, इन लोगों को समझा रहा था। मेरा काम शिक्षा का प्रचार करना है, इन लोगों को समझाना-बुझाना, अक्ल देना है। खानम आप तो बहुत मेहनत करती हैं। आपको इस धूप में भी आराम नहीं, अपना ख्याल तो जरा भी नहीं। हम लोगों के सामने कितना काम है, बहुत मुश्किल है। खानम, यहां तो आप का सेवक अकेला ही है, मदद के लिये कोई नहीं है। खानम, बहुत मुसीबत में हूं, बहुत बुरी हालत है…।"

मर्द का चेहरा चिन्ता से गंभीर हो गया। आंखें भीग गयीं जैसे आंसू रोक लिए हों। मुद्रा बहुत दीन हो गयी जैसे अन्याय और अपमान के लिये दुहाई दे रहा हो, स्वयं बहुत सच्चा हो।

महमूद नैमी लड़कियों के स्कूल में अध्यापक था। जुलैखां नगर पार्टी कमेटी में स्त्रियों के विभाग की संचालक थी। नैमी को जानती थी। जनाना क्लब में निरक्षर स्त्रियों को पढ़ाने के लिये व्यवस्था की गयी थी। स्त्रियों को पढ़ा सकने वालों की आवश्यकता थी। उसी प्रयत्न में 'शिक्षा के प्रचारक' का परिचय जुलैखां से हो गया था। पढ़े-लिखे लोग थे हीं कितने इसलिये स्त्रियों की शिक्षा का काम नैमी को सौंप देना पड़ा था।

"वहां क्या झगड़ा था?" जुलैखां ने पूछा।

"खानम, बहुत ही आवश्यक, महत्वपूर्ण, क्रांतिकारी कार्यक्रम है। नगर कमेटी ने 'शिक्षा प्रचार' मास मनाने का आदेश दिया है। लोग निमांचा में प्राइमरी स्कूल खोलने के लिये रुपया इकठा कर रहे हैं। फैसला कर लिया है कि स्कूल के लिये सब लोग चन्दा देंगे। खानम, मैं तो दिन-रात इसी काम में मरा जा रहा हूं। जनाना क्लब में आप ने स्कूल आरम्भ किया है, आधा दिन वहां पढ़ाता हूं। लड़कियों के स्कूल में भी अकेला हूं और कोई अध्यापक-अध्यापिका नहीं है। फिर यह काम है पर यह भी जरूरी काम है, करना ही होगा। हमें सांस्कृतिक क्रांति को पूरा करना है। खानम, यह काम हंसी ठट्ठा थोड़े ही है, एक ऐतिहासिक काम है।"

जुलैखां के माथे पर गहरे तेवर पड़ गये—"अच्छा कामरेड, कल सुबह आप नगर पार्टी कमेटी के दफ्तर में आइये । नगर के सार्वजनिक-शिक्षक विभाग के क्रांतिकारी कार्यकर्ता आ रहें हैं । वहीं बात होगी कि सोवियत सरकार जनता से किस प्रकार की सहायता और सहयोग चाहती है । सुन लिया आपने ?"

नैमी ने सुन कर आंखें झपकीं और सोच कर बोला—"खानम ··अ···कामरेड जो आज्ञा, आप ही हमें राह दिखाने वाली हैं, आप की सहायता के बिना हम क्या कर सकते हैं ।"

जुलैखां बात समाप्त करके घूम गयी और तेज क़दमों से चल दी । नैमी के हाथ सीने पर चले गये । उस की आंखें जुलैखां की ओर लगी हुई थीं । जुलैखां गली के मोड़ से ओझल हुई तो नैमी के चेहरे से विनय की मुस्कान उड़ गयी, चेहरा कठोर हो गया ।

जुलैखां ने अनाखां की दहलीज में कदम रखा तो मुख पर मुस्कान आ गयी, क्रोध दूर हो गया । अनाखां भी उसे देख कर खिल उठी, चेहरे पर दमक आ गयी ।

"आज मेरी खुशकिस्मती का क्या ठिकाना ! तुम भी आ गयीं । अब मुंह मीठा कराओ तो बताओं, कौन आयी है !"

जुलैखां ने थैली में से टिकिया लेकर अनाखां की ओर बढ़ा दी—"लो, करो मुंह मीठा !"

वे दोनों छोटी-छोटी लड़कियों की तरह खिल-खिला उठीं ।

सोफिया ने दोनों हाथ बढ़ाये । बरामदे में आकर उजबेकी में बोली—"आओ, आओ, बड़े अवसर से आ गयीं ।"

"मुबारक हो बहना ! हाय, तुम तो बहुत अच्छी लग रही हो ।" जुलैखां ने पीछे हट कर दो कदम का अन्तर कर सोफिया के पूरे शरीर पर नजर डाली, "अब तो तुम्हारी गोद हरी हो रही है ।" जुलैखां ने अनाखां की ओर देखा, "तुम सौ बरस जियो लेकिन यह क्या तरीका है ? तुम इनके यहां खुद नहीं जा सकती थीं ? यह बेचारी इतनी दूर कैसे आयी होगी ? ऐसी हालत में इतनी दूर कौन चल पाती है !"

"इस बेचारी का दोष नहीं," सोफिया हंस कर बोली, "बशारत मुझे हरी खुरमानी का लालच देकर खींच लायी है ।"

अनाखां ने फर्श के साथ बने ताक में से छोटी दरी लेकर चौकी के पास बिछा दी और चौकी पर एक कपड़ा बिछा दिया ।

सोफिया चौकी का सहारा लेकर दरी पर बैठ गयी और जुलैखां का कपड़ा हाथ में लेकर सराहना से बोली—"हाय, बड़ा अच्छा कपड़ा पहने हो । मैं बिलकुल ऐसा ही कपड़ा बुनती थी । देखते ही पहचान लिया ।"

"तुम्हें इवानोवो-वोजनेसेंस्क की बहुत याद आती रहती है !"

"हां सच, मुझे अपनी मिल की बहुत याद आती है।"

"मैंने तो कपड़ा यहां शहर में ही खरीदा है।" जुलैखां ने बताया।

"अच्छा कपड़ा यहां काफी मंहगा है।"

"हां बहुत, यहां तो लोग गाढ़ा ही बुनते रहे हैं लेकिन यहां के बुनकरों को बढ़िया कपड़ा बुनना सिखलाना होगा। बहिन, तुम्हें अपने घर की याद तो आती ही होगी पर...।"

"कोई बात नहीं, अब हम लोग यहां ही रहेंगे, निश्चय कर लिया है।"

"शुक्रिया बहिन, तुम बहुत अच्छी हो।" जुलैखां ने सोफिया का हाथ पकड़ कर कहा, "वहां तुम कपड़ा ही बुनती थीं पर यहां तो...।"

"मैं क्या कर पाऊंगी ? देखो मेरी उमर कितनी हो गयी है और अब यह पहला बच्चा...!"

अनाखां बोल पड़ी—"सभी बातें नयी-नयी हो रही हैं। नयी खुशी की उम्मीद। बुरका छोड़ने वाली पहली स्त्री ! पहला सहकारी कारखाना...।"

अनाखां ने सोफिया के सामने एक प्याले में शोरवा रख दिया—"चख के देखो, खुरमानी से ज्यादा स्वाद लगेगा।"

सोफिया चुपचाप प्याले पर झुक गयी।

अनाखां कहती रही—"आजकल हमारे बुनकर बहुत चौंके हुये हैं। उन्हें नींद थोड़े ही आ पाती है ! सदा बातें चलती रहती हैं—क्या होने वाला है, क्या होने वाला है ? जहां चार आदमी मिल जायं, बहस होने लगती है। जाने कैसे इतनी बहस करना सीख गये हैं। अब मखुनिया मखसूम का कोई विश्वास नहीं करता। अब उस से कोई डरता भी नहीं। रजिया मौसी को जानती हो न ? वह तो कह रही थी—मुए मखुनिया के मुंह नहीं लगेगी चाहे मर्दाना सहकारी में काम करना पड़ जाय ! बुढ़िया अंजीरत है न, वही शुक्रअल्लाह दादी ! वह अपनी रट लगाये है। सब फिजूल का झगड़ा है। कुछ होने का नहीं। दीन और शरह में ऐसा कहां लिखा है। यह सब गुनाह है। रजिया मौसी ने उसे फटकार दिया—तुझे दीन-शरह का बहुत डर है तो तू घर बैठ, हम तो गुनाहगार ही भले।'

"रजिया मौसी को तो बुढ़ापे में जवानी आ रही है !" जुलैखां मुस्करायी। उस के गालों पर सुर्खी आ गयी।

अनाखां सुनाने लगी—"एक दिन कारखाने में किसी ने कह दिया कि मालिक खुद देखने आ रहा है। दादी शुक्रअल्लाह बहुत घबरा गयीं और सब को समझाने लगी—मालिक के सामने बोलना नहीं, गुस्सा नहीं दिखाना। जो अल्लाह ने दिया है,

उस से संतोष करो। दिल में कीना रखना गुनाह है ! मालिक से कभी ज्यादती भी हो जाय तो उस का बुरा क्या मानना ! ऐसा तो दुनिया में होता ही रहा है। बुराई को याद रखने से क्या फायदा ! आदमी संतोष रखे, और देखो, मालिक की इज्जत तो नयी सरकार में भी है। वह तो हमेशा से बड़ा आदमी है। खुद हमारी हालत देखने आ रहा है, उस के दिल में रहम है। मालिक तो बाप के बराबर होता है। यह तो मुबारक मौका है। अल्लाह का शुक्र करना चाहिये कि मालिक आ रहा है और तुम कुढ़ रही हो…! फिर क्या कहूं, मालिक आया तो बस दादी शुक्रअल्लाह और नज़ाकत ही उसे सलाम करने गयीं। और कोई न तो अपने करघों से उठी, न किसी ने नजर उठा कर देखा ! अब तो यह हाल है कि हमारी जनाना सहकारी में काम शुरू हो जाय तो आधी बुननेवालियां तो पहले ही दिन आ जायें। रजिया मौसी कहती है, राव हमें रोकने का यत्न करेगा तो हम भी कुदरतुल्ला की ऐसी खबर लेंगी कि खुद ही हाथ जोड़ देगा।"

जुलैखां ने गहरी सांस ली—"अभी तो बहुत कम औरतें हमारे साथ हैं, गिनी-चुनी ही समझो। दरअसल निमांचा में स्त्रियां मर्दों से ज्यादा हैं परन्तु हमारे साथ कितनी हैं ? इतनी से क्या होगा ?"

जुलैखां ने चायखाने के सामने देखी स्त्री की दुर्गति की बात सुनायी। बात उस ने इस ढंग से, इतने दर्द से सुनायी कि सोफिया की आंखों में आंसू आ गये।

"हम सब बहिने हैं," जुलैखां ने कहा, "लेकिन कौन किसी की परवाह करती है ? हमें तो चाहिये कि घर-घर जाकर, सब परिवारों में माताओं-बहुओं को अच्छी तरह से समझायें…।"

"वह तुम्हारी बात समझ पायेंगी, सुनेंगी भी ?" अनाखां ने अविश्वास से पूछा।

"क्यों नहीं समझेंगी ? माना, उन के दिमाग में अंध-विश्वास भरा है परन्तु हैं तो वह भी स्त्रियां। दिल तो उन के भी है, वे भी अनुभव करती हैं। कौन स्त्री अपनी हालत नहीं जानती ? हमारी बात क्यों नहीं सुनेंगी !"

अनाखां उत्तेजना में मुट्ठी बांध कर बोली—"मेरा तो दिल करता है, सब स्त्रियों को इकट्ठी करके, सभी को—दादी शुक्रअल्लाह और नज़ाकत को भी—सब बातें साफ-साफ कह दूं। मेरे दिल में इतनी बातें हैं परन्तु क्या करूं, मुझे कहना नहीं आता।"

"क्यों नहीं आता, क्या नहीं कहना आता, अन्ना !" सोफिया अनाखां के कंधे पर प्यार से हाथ रख कर बोली, "तुम उन्हें बताओ, प्यारी बहिनों, सहेलियो ! तुम किस जुल्म और अत्याचार से दबी हुई हो, तुम्हें धर्म और रूढ़ियों की वेड़ियों में बांध कर असहाय कर दिया गया है। तुम्हें बहका दिया है कि दासी बनी रहना ही तुम्हारा धर्म है। तुम दूसरों की दया की मोहताज बना दी गयी हो। तुम्हें जहालत में रख

कर पांवों की जूती समझा जाता है। कदम-कदम पर तुम्हारा निरादर किया जाता है। इन शासन करने वालों और ज्ञान बघारने वालों को जन्म तो तुम्हीं देती हो पर तुम्हें अन्धकार में रख कर असमर्थ बना दिया जाता है। तुम क्या नहीं जानती ? क्या तुम्हारे हृदय अन्याय और पीड़ा से जल नहीं रहे हैं ? तुम्हारे मुंह पर झूठी लज्जा की पटटी बांध दी गयी है। तुम पीड़ा से आह भी नहीं कर सकती। सदियों की गुलामी में तुम यह भी भूल गयी हो कि तुम मनुष्य हो ! तुम ने निरन्तर अनगणित अन्याय और दुख सहे हैं परन्तु तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल है। साहस करो ! तुम्हें भय किस का है ! आंख खोल कर देखो, स्वतन्त्रता के नये युग का प्रकाश चारों ओर फैल रहा है। तुम्हारे बिना मनुष्य समाज न जिन्दा रह सकता है। न तुम्हें कोई दबा कर रख सकेगा। तुम अब असहाय नहीं हो। सोवियत सरकार तुम्हारी समर्थक और सहायक है।"

सोफिया जोश में आ गयी थी, ऐसे बोलती गयी मानो बहुत बड़ी सभा में व्याख्यान दे रही हो। अनाखां आखें फैलायें, स्वप्न में खोयी-सी उस की बातें सुनती जा रही थी। धीमे से बोली—"हाय, मुझे भी ऐसे कहना आता तो··!"

जुलैखां ने अनाखां को बांह में लेकर चूम लिया—"तुम कह क्यों नहीं सकोगी ! निमांचा में तो हमें तुम से ही आशा है। बशारत के पिता ने क्या नहीं किया, उस ने सोवियत सरकार के लिये अपने प्राण दिये। सोवियत सरकार कुदरतुल्ला जैसे लोगों की कोई इज्ज़त नहीं करती, यह तुम अंजीरत दादी और सबको बता देना। तुम से अधिक अच्छी तरह और कौन समझा सकेगा !"

किवाड़ों के खटकने की आहट हुई। बशारत और तुरसाना किलकती हुई आंगन में दौड़ी चली आयीं। दोनों सोफिया से लिपट गयीं और फिर शरमाकर दोनों ने झुक कर सलाम किया। सोफिया ने देख लिया, लड़कियां जुलैखां की बंडी और लहंगे को ललचायी आंखों से देख रही थीं। सोफिया ने मुस्करा कर अनाखां की ओर कटाक्ष कर दिया।

सोफिया ने बशारत को उलाहना दिया—"वाह, बड़ी अच्छी लड़की हो। मुझे घर पर बुलाया, मैं आयी तो तम मिली ही नहीं।

"नहीं मौसी नहीं, नाराज़ नहीं होना ! अभी एक मिनट में खुरमानियां लाती हूं।" बशारत एक छलांग में बराम्दे की सीढ़ियां कूद गयी।

"मैं खुरमानियां रूमाल में बांध दूंगी।" तुरसाना गुनगुनायी और वह भी बहिन के पीछे भाग गयी।

पांचवां परिच्छेद

राव कुदरतुल्ला की हवेली में सुबह से ही कुहराम मच गया था। राव सुबह हवेली के बाग में, पक्के पोखर के किनारे छाया में चाय लेता था। वहां कालीन और चौकी पर कपड़ा बिछा देने की याद किसी को नहीं आयी।

मखुनिया मखसूम बौखलाया सा आंगन में कभी इधर दौड़ता कभी उधर। उस की आंखें लाल हो रही थीं। वह दौड़ कर जनाना ड्योढ़ी में गया, रेशमी गद्दा और तकिया उठाये बाग में रख आया। लौट रहा था तो रास्ते में पड़े बांस में बंधे झाड़ से ठोकर खा गया और वज़ू (नमाज़ से पहले हाथ-मुंह धोने) के लिये पानी भरे लोहे के कण्डाल से टकरा गया।

मखुनिया ने कमरे की दहलीज पर जूते उतारे। हाथ सीने पर रख कर झुक गया।

"हज़ूर, सलाम ! "

मखुनिया ने कई बार सलाम किया।

कमरे में मुटल्ला मतकौअल बजाज ही था। वह कोने में नरमे के कालीन पर कपास के बोरे की तरह लुढ़का पड़ा था। मखुनिया के सलाम का जवाब नहीं दिया। मुटल्ले बजाज की खूब घनी, बकरे के बालों जैसी कड़ी और नाक पर जुड़ी हुयी भौवें पलकों पर झुकी थीं। हाथ में बड़ा पीला रेशमी रूमाल था। रूमाल कभी गर्दन पर फेर लेता, कभी बालों से भरा सीना पोंछ लेता।

सुबह इसी मुटल्ले बजाज ने मखुनिया को संकट से बचा लिया था।

मखुनिया पौ फटते-फटते खबर देने के लिये दौड़ा हुआ हवेली में आया था। मालिक की अवस्था देख कर बेचारे की सुध-बुध जाती रही। कुदरतुल्ला हवेली के आंगन में, केवल बनियान-जांधिया पहने कूल के पास खड़ा था।

मखुनिया ने मालिक को देख कर धरती पर घुटने टेक दिये और गिड़गिड़ाया—"गरीब-परवर ! "

मखुनिया बहुत बुरा समाचार लाया था। शहर में डोंडी पिट गयी थी कि सरकार ने अनाज और कपड़े के दाम घटा कर कन्ट्रोल लगा दिया था।

कुदरतुल्ला ने सुना तो आंखों के सामने अंधेरा छा गया। क्रोध में पागल होकर बड़बड़ाने लगा। ऐसी खबर सुनाने की सज़ा देने के लिये मखुनिया कारिन्दे के ऊपर थूक दिया।

मखुनिया ने मालिक का थूक मुंह पर से पोंछने के लिये हाथ नहीं हिलाया कि मालिक का क्रोध न बढ़ जाये।

उसे अपने अपमान की परवाह नहीं थी। ग़रीब का दिल मालिक की परेशानी से

दहल गया था। मखुनिया पर अभी जाने क्या बीतती परन्तु उसी समय मतकौअल हवेली में आ गया।

मतकौअल धीमे से बोला—"राव साहब, सुना…!"

मखुनिया ने भगवान की कृपा समझी। दया के लिये भगवान को धन्यवाद दिया। उसे कुछ सहारा मिला—दोनों आपस में बात करेंगे। मालिक को कुछ धीरज होगा।

मतकौअल फिर चुप रहा। मुटल्ला बजाज बहुत गहरा आदमी था। दिन भर में आठ-दस बार बोल लेता तो बहुत था परन्तु जब भी बोलता, बहुत तोलतोल कर जैसे बहुत मर्म की बात कह रहा हो। कुछ विशेष कहने को न होता तो घंटों चुप रह जाता इसलिये लोग उस की बहुत ध्यान से सुनते थे।

राव कुदरतुल्ला कन्धे पर चोगा डाल कर कमरे में आ गया। राव का कद लम्बा-छरहरा था, उम्र लगभग पच्चास की। छोटी परन्तु खूब घनी दाढ़ी। शरीर पर कहीं मांस की गद्दी दिखायी देती थी तो केवल माथे पर। घने तेवर पड़े रहते थे। नाक बाज की चोंच की तरह बहुत तीखी और लम्बी थी। पहली नज़र में केवल उस का माथा और नाक ही दिखायी देते थे। अपने इसी विशिष्ट रूप के कारण वह आम लोग-बाग में अलग सा, खानदानी रईस जान पड़ता था।

कुदरतुल्ला अतिथि के साथ कालीन पर बैठ गया। दोनों मौन थे। लगभग आधे घंटे बाद मतकौअल ने अपनी झुकी हुयी भौंवें उठायीं। दबी हुयी गुर्राहट में चेतावनी दी—

"फैसला हो गया। कपड़े का दाम गिर गया…।"

मतकौअल ने बहुत सोच कर अर्थपूर्ण वाक्य कह दिया था तो सन्देह नहीं रहा कि भयंकर समाचार से निश्चय ही भय की आशंका थी।

कुदरतुल्ला ने गहरी सांस से आह भरी और करवट लेकर चुप रह गया।

हवेली की सुनहरी-भूरी बिल्ली धीमे-धीमे कदम रखती हुयी राव की बगल में कालीन पर आ गयी। बिल्ली ने अंगड़ाई लेकर सुस्ती झाड़ी, कुछ घुरघुरायी, फिर राव का ध्यान पाने के लिये राव की पीठ पीछे दबी मसनद को पंजों से खरोंचने लगी। राव ने चौंक कर गर्दन घुमायी। झुंझलाहट में बिल्ली को गर्दन से उठा कर मतकौअल के सिर के ऊपर से खिड़की से बाहर फेंक दिया।

बजाज डर कर सहसा बोल उठा—"मालिक, यह क्या…बिल्ली को फेंक दिया?"

राव चुप रहा।

बजाज ने दुआ पढ़ कर दो-तीन बार अपने सीने पर फूंक लिया कि बिल्ली सिर पर से गुजरने के कारण अनिष्ट की आशंका दूर हो जाय।

बरामदे की सीढ़ी पर बूटों की चर्र-मर्र सुनायी दी। आगन्तुक नीली बिरचिस और रेशमी कमीज़ पहने था। कमरबन्द से खूब शानदार फुंदना लटक रहा था।

"सलाम, अल्लाह रहमत !" नैमी ने गहरा सांस लेते हुये कहा, "खबर तो अच्छी नहीं है...।"

"मास्टर तुम्हें क्या फिक्र है ?" नैमी की कमीज की ओर संकेत करके राव बोला, "तुम्हें तो मास्को के रेशम की कमी नहीं। जितना चाहो कौड़ियों के मोल ले सकते हो !"

"जब मुसीबत आती है, निकम्मे लोग आपस में झगड़ने लगते हैं। समझदार लोग एक-दूसरे को सहारा देते हैं।" नैमी ने नसीहत दे दी।

राव ने कटाक्ष किया—"हां भई, तुम्हारी समझदारी में क्या शक है !"

"उंह !" नैमी खीझ में कन्धा झटका कर मौन रह गया।

आंगन से बेफिक्र और परिचित स्वर सुनायी दिया। राव और अतिथियों की आंखें मिलीं।

मुहम्मद सैयद को बाज़ार में सब लोग 'चायवाला' कहते थे। बाज़ार में उस की अच्छी साख थी। दाना आदमी गिना जाता था। वह व्यापार के लिये पूर्व के अनेक देशों में काफिलों के साथ दूर-दूर तक घूम आया था। व्यवसायिक यात्राओं में ही उस के केश श्वेत हो गये थे। कुछ लोगों का अनुमान था कि मुहम्मद सैयद अफगानी था। कुछ का ख्याल था कि वह भारत से आया था। कई बरस से शहर में ही बस कर चाय का व्यापार कर रहा था। उस के यहां सभी तरह की, सभी देशों की चाय की ईंटें, चाय के बोरे, डिब्बे मिल सकते थे। उस की दुकान पर कुछ ज्यादा बिक्री नहीं थी परन्तु वह संतुष्ट था। कह देता—मुसलमान को हज का मौका मिले तो और क्या चाहिये पर ऐसी बातों से किस को संतोष हो सकता था।

चाय वाले के पास पूंजी विशेष नहीं थी परन्तु राव उसे बहुत मानता था, गद्दी पर अपने बराबर जगह देता था। उस की बातों में बहुत रस था। खूब दुनिया देखा, दाना आदमी था। पूर्व के बड़े-बड़े व्यापारी नगरों की चमत्कारपूर्ण बातें सुनता रहता। रांव उस की बातों से मुंह खोले रह जाता। कुदरतुल्ला चाय वाले की प्रतीक्षा में ही था कि ऐसे समझदार आदमी की क्या राय होगी।

चायवाले ने कोई चिन्ता प्रकट नहीं की पर कौन मूर्ख मान लेता कि इस संकट में कन्ट्रोल की मुसीबत आ जाने पर भी, व्यापारी को चिन्ता न होती।

मखुनिया ने चायवाले को झुक-झुक कर सलाम किये। दोनों बाहें फैला कर अभ्यागत को आदर से कमरे में ले आया और फिर मालिक और अतिथियों को सलाम किये।

मखुनिया ने चौकी पर बिछे रेशम के भारी कपड़े को कालीन की तरह लपेट कर हटा दिया और दूसरा कपड़ा बिछा दिया। बड़ी तश्तरी में अंगूर, सूखी खुरमानी,

बादाम ला कर रख दिये । प्यालों में भाप छोड़ती, खूब दूध, मक्खन और मसाला मिली चाय दे दी । खसखास लगे खस्ता नान ले आया ।

मतकौल ने चौकी की ओर देख कर, चटकारा लेकर होंठ चाट लिये ।

चायवाले के होंठों पर मुस्कान आ गयी । चायवाला रूप-रंग से बुजुर्ग और ढला हुआ लगता था परन्त उसकी मुस्कान से कुदरतुल्ला के शरीर में सिरहन कूद जाती थी ।

चायवाले ने टांग फैला दी । घुटने को सहलाता हुआ मशद और काश्मीर के अनुभव और कलकत्ते के वैभव की चर्चा करने लगा मानों दूसरे लोगों की चिन्ता के विषय में कुछ मालूम नहीं था । फिर काशगर के बाजार के व्यापार की बातें बताने लगा । फिर "··आपने वह अजीब किस्सा सुना है, बम्बई के व्यापारी ने लंदन में···।"

विवश क्रोध से कुदरतुल्ला का दिल घुट रहा था । एक समय वह निमांचा का मालिक था । अब दो टके का चायवाला उसका मजाक बना रहा था, उस के सामने बैठकर बकवास किये जा रहा था और राव बेबस था ।

"राव साहब, क्या बात है ? बड़ी सांसें भर रहे हो, ऐसा क्या गम लगा है ?" चायवाला हंस दिया ।

नैमी सेठ का टुकड़ाखोर और खुशामदी था । उसने चायवाले की धृष्टता पर तेवर चढ़ा लिये परन्तु स्वयं भी साहस कर बोल उठा—

"सरकार गुलाम की खता माफ हो, यह सब हुजूर का ही किया है ।"

"हमारा किया है ?"

"हुजूर, आप कौम के बड़े मुखिया हैं । इस्लामी दुनिया के सरताज हैं । आप फखरेकौम हैं । कौम को आप का ही तो भरोसा है और आप अपनी दौलत यहां गाड़ कर उस पर बैठे हुये हैं, निमांचा के दोजख में पड़े हैं । आखिर आप को यहां मिल क्या जायगा ? आप के गोदामों में भरी कपड़े की गांठें सड़ रही हैं और हमारे जैसे लोग मास्को का रेशम पहने फिर रहे हैं ।"

"अमां मास्टर, अब तो तुम्हीं मालिक हो !" कुदरतुल्ला ने कटाक्ष किया, "पांच बरस से काओं-काओं करके कान खाये जा रहे हो—कौम, कौम ! दुनिया-ए-दीन । मैं कहता हूं, मुसलमान तो रूसी से भी ज्यादा खतरनाक है । औरतों के सिर फिर गये हैं । उनकी हिम्मत देखी है ! साबिर जुलाहे की बेवा को जानते हो; उस कम्बख्त ने नाक में दम कर दिया है । तुम कंट्रोल को रो रहे हो, वह चुड़ैल तो मेरी जान के लिये मुसीबत हो रही है ।"

चायवाले ने पलक दबा अनुमान प्रकट किया—"क्या नाम है उसका, अनाखां ?"

कुदरतुल्ला की भौंवें उठ गयीं । माथे की गद्दी पर तेवर गहरे हो गये—"तुम्हें कैसे मालूम है ?"

"वाह, जवान औरत है, हम भी मर्द हैं !" चायवाले ने नैमी की ओर आंख दबायी, "जानते हो, औरतों में बात उठे तो मर्दों तक पहुंच ही जाती है। राव साहब हवा के साथ चलो, खूब पैसा बटोरो, कम्युनिस्ट बन जाओ। तुम्हारे तो मज़े ही मज़े हैं...।"

चायवाले ने कहकहा लगाया तो उसे खांसी आ गयी। हंसी में खांसी आ जाने से उस का गला रुंधने लगा।

कुदरतुल्ला को क्रोध आ गया परन्तु डर भी था, बोला—"मुहम्मद सैयद, तुम अजीब आदमी हो। तुम तो किसी की मैय्यत पर भी हंस सकते हो परन्तु बचोगे तुम भी नहीं !"

चायवाला हंसता गया—

"मियां, तुम क्या जानो। मेरा कुछ नहीं बिगड़ने का। हमारे मुल्क में सुभान-अल्लाह—ईमान कायम है। हमारे मुल्क में अखबारों में औरतों के किस्से नहीं छपते। हमारे यहां ऐसा प्रोपेगेन्डा नहीं चल सकता।"

चायवाले ने नैमी की ओर कटाक्ष किया—"हम लोग बातें बनाना नहीं जानते। हमारा तो असूल सीधा है : काफिर का सिर कलम और झगड़ा खतम ! इसीलिये हमारा ईमान कायम है। हम तो हंसेंगे; क्यों नहीं हंसेंगे ? वक्त है तलवार उठाने का और तुम लोग माशूकों की तरह, लौंडियों की तरह अदायें दिखा रहे हो। जब तुम्हारा सिर धरती पर गिरेगा तभी होश आयेगा। तब कहना—यह तो कानून के खिलाफ है ! और क्या करोगे ? अनाखां—जुलाहे की बेवा निमांचा के लिये मुसीबत हो गयी है। तुम लोग कांप रहे हो; हम हंसें नहीं तो क्या करें ?"

कुदरतुल्ला ने रहस्य के स्वर में पूछा—"तो फिर शुरू कर दें ? ठीक मौका है ?"

"मौका ?" चायवाले ने झुंझलाहट से कन्धा झटका, "याद नहीं, पांच बरस पहले मैंने क्या कहा था ? मैंने तभी कहा था—इस दाने पर मत लपको, फंस जाओगे। मुर्गी बन जाओगे, दड़वे में बन्द हो जाओगे। तुम सोवियत के गुलाम बन गये। नेप में हो जाने का बहुत लालच था। नेप में हो जाओ और फखरेकौम भी बने रहो। आखिर मुर्गी बन गये। पांच बरस से सोवियत के अण्डे सेक रहे हो या नहीं ! अब चूज़े निकलेंगे तो सोवियत के होंगे। अपना कारखाना देख कर, कारीगर गिन-गिन कर फूले नहीं समाते थे। अब वह सब किस के हाथ में पड़ेंगे ? अब मुर्गी के हांडी में जाने की बारी आ रही है।"

मुटल्ले मतकौअल के निरन्तर चलते जाते जबड़े सहसा रुक गये। नींद में झुकी भौंवें उठ गयीं। उस ने होंठ चाट लिये और समर्थन में बोल पड़ा—"वाह, मुर्गी के शोरवे का क्या कहना, लाजवाब चीज़ है।"

चायवाला झुंझलाहट छिपाने के लिये हंस कर उठ खड़ा हुआ। सलाम के लिये सीने पर हाथ रख कर दरबारी ढंग से झुक गया—"शुक्रिया, लज़ीज़ नाश्ते के लिये शुक्रिया। नसीहतों के लिये भी शुक्रिया। बहुत ज्यादा खा गया। आप तो दरियादिल हैं पर मुझे अपने पेट का तो ख्याल करना चाहिये।"

मखुनिया ने फिर मेहमान को आदर से लिवा ले जाने के लिये कमर दोहरी करके बांहें फैला दीं।

चायवाले ने मखुनिया को तीखी नजर से देखा और राव को आदाबअर्ज़ करके बाहर चला गया।

नैमी ने चायवाले की पीठ की ओर संकेत करके कह दिया—"आवारा लाल-बुझक्कड़ है। मशद और काबुल की सरायों में बातें गढ़ना सीख लिया है। पांच साल से वही बकवास किये जा रहा है...।"

कुदरतुल्ला ने नैमी के समर्थन का संकेत कर दिया और मौन रहा। चायवाले ने पांच वर्ष पूर्व कुदरतुल्ला को परामर्श दिया था कि अपने खजाने से क्रान्ति-विरोधी जिहाद (धर्मयुद्ध) करने वाले लुटेरे मुस्लिम जत्थों को हथियार खरीद दे।

नैमी ने आसपास नजर डाल कर फिर धीमे से कहा—"वह तो अवारा फांक आदमी है, उस का बिगड़ क्या जायेगा।"

कुदरतुल्ला मौन रहा। मन ही मन नैमी को उत्तर दिया—तुम तो अपना मतलब पूरा करना खूब जानते हो।

मौलाना नैमी इन बरसों में काफी दुबला हो गया था, जैसे भूख का मारा टट्टू हो। पांच बरस पहले किस रोब से वाज़ (धर्मोपदेश) झाड़ता था! श्रोताओं की भीड़ उस के सामने स्तब्ध रह जाती थी। अब लोगों को विश्वास ही नहीं हो सकता था कि सन १९१७ में—समाजवादी क्रान्ति के आरम्भ में—इसी मौलाना नैमी ने पुराने शहर की बड़ी मसजिद में लोगों को जिहाद (धर्मयुद्ध) के लिये कैसे ललकारा था: 'ऐ मुसलमानों, शमशीरे-दीन खींचो! उठो, काफिर रूसियों को उन के खून के दरिया में ग़ारत कर दो! मुसलमान गरीब हो या अमीर, सब बिरादरेदीन हैं। कोकन्द की आजाद मुस्लिम सल्तनत जिन्दाबाद!' जनता मरने-मारने के लिये उत्तेजित हो हो गयी थी। तब नैमी की जवानी की उम्र थी पर मौलवियों में उस का बहुत ऊंचा रुतबा था। सफेद पगड़ियां बांधने वाले मौलवी भी उस का बहुत अदब करते थे।

सर्वसाधारण लोग पुरानी बातें भूल चुके थे। नैमी अब स्कूल का मास्टर और शिक्षा का प्रचारक साधारण नागरिक बन गया था। नयी सरकार को उस पर विश्वास था। चायवाले की पहुंच वहां तक कैसे हो सकती थी? उसे प्रायः सरकारी सलाह-मशविरे के लिये बुला लिया जाता था। उसे बुरा क्यों न लगता!

नैमी उठ कर चला तो कुदरतुल्ला उसे बाहर तक पहुंचाने गया। मखुनिया किवाड़ खोलने लगा तो राव ने उसे एक तरफ ढकेल कर किवाड़ स्वयं खोल दिये।

नैमी दरवाज़े से निकला तो गली पार कर सीधा नाक उठाये चलता गया। एक बार भी पीछे घूम कर नहीं देखा। कुदरतुल्ला ने गहरी सांस लेकर सोचा, यह मिज़ाज ! वास्तव में अब मखुनिया के अतिरिक्त किसी दूसरे का भरोसा नहीं किया जा सकता था।

राव ने कमरे में लौट कर मुटल्ले बाज को भी चलता कर दिया। यह भी अच्छा ही हुआ। उसी समय आंगन से राव के बेटे की आवाज सुनायी दे गयी।

राव कुदरतुल्ला का बेटा पिता के लिये चिन्ता का ही कारण था। बेटे का पिता की कठिनाइयों और परेशानियों से कुछ भी परिचय या उन से सम्पर्क नहीं था। पिता भी बेटे की दुनियां और करतूतों से प्रायः बेखबर ही रहता था। नसरतुल्ला को पिता के मिलने-जुलने वालों से कोई मतलब नहीं था। पिता के कारोबार में भी उसका कोई सहयोग नहीं था। पिता को बेटे से कोई आशा भी नहीं था। कभी एक पैसा भी उस ने नहीं कमाया था। कमा सकेगा, ऐसी आशा भी नहीं था पर बेटे की फिजूलखर्ची की सीमा नही थी। पिता के लिये केवल परेशानी का ही कारण था। चिंता से राव का दिल डूबने लगता—उस के जीवन की कठिन कमाई और जोड़ा हुआ धन मूर्ख बेटे के हाथों में पढ़ कर कितने दिन टिकेगा ? उस की आंख मुंदते ही बेटा सब कुछ बर्बाद कर देगा। कुदरतुल्ला का धन और इज्ज़त भी मिट्टी में मिल जायेगी। इतना ही नही, उस कपूत का क्या ठिकाना था जो जुये में बैठ जाये तो बाप-दादा की दौलत एक ही दांव में लगा दे।

कुदरतुल्ला ने दरवाज़े से आंगन में झांक कर बेटे को पुकार लिया—"जरा सुनो तो !"

बेटे ने बाप की आवाज़ पर घूम कर भी नहीं देखा। अपना चेचक के दागों से छिदा चेहरा छिपाये दूसरी ओर निकल गया। "अल्लाह कसम, मैंने कुछ नहीं लिया। मैंने तो तुम्हारे पैसे को हाथ नही लगाया ...।" नसरतुल्ला कहता हुआ दूसरे आंगन में चला गया। कुदरतुल्ला की बेगम, खोजा बीबी अपने इकलौते बेटे पर सौ जान से फिदा थी। मां को कोई परवाह नहीं था—बेटा लायक था या नालायक, चुस्त था या आलस की गठरी। मां को एक ही चिंता थी—बेटा जवान हो गया था। उस के लिये बहू आनी चाहिये थी।

नसरतुल्ला को भी घर और परिवार से जो कुछ लगाव था, मां के कारण ही था। मां ने उस से कभी नहीं पूछा—कहां जाता था ? क्या करता था ? क्या करेगा ? वह सदा बेटे की सेवा में तत्पर रहती थी। बेटे का सन्तोष ही उस का सन्तोष था। मां के अतिरिक्त नसरतुल्ला को 'भला' कहने वाला दूसरा था भी नहीं।

"अब्बा के पास जाओ, तुम्हें बुला रहे हैं।" मां ने बेटे को प्यार से कहा।

बेगम का ख्याल था राव बेटे के ब्याह के सम्बन्ध में ही बात करने के लिये बेटे को बुला रहे होंगे। खोजा बीबी, पिता-पुत्र में और किस बात की कल्पना कर सकती थी।

नसरतुल्ला ने चोगा उठा कर कन्धों पर डाल लिया और मुंह बनाये पिता की ओर चला गया। पिता के सामने गर्दन झुकाये, नज़र कमरे के कोने की ओर किये मौन खड़ा रहा। लड़का उत्तेजित हो जाता था तो उस के चेहरे पर चेचक के दाग और भी गहरे और काले दिखायी देने लगते थे।

"बैठो! बेटा, जरा बैठो! सुना है तुमने, क्या मुसीबत आ गई है!"

बेगम बाप-बेटे की बात सुन सकने की उत्सुकता में, राव को हुक्का दे जाने के बहाने हुक्का उठाये भीतर चली आयी।

"हाय, यह बेचारा क्या जाने!" बेगम हुक्के की सीप की बनी निगाली पति के हाथ में देकर, चिलम में आंच ठीक करती हुयी बोली, "उस बेचारे को फिकर नहीं होगी; फिकर की तो बात ही है!"

राव ने बेगम को टोक कर कहा—"खैर, समझ लो, अब घर का खर्चा बहुत सोच समझ कर चलाना होगा। जिस आवारा को देखो, मुंह उठाये चला आता है। यह खर्च अब नहीं निभ सकेंगे।"

बेगम ने समर्थन में हामी भरी और चौकी पर पड़े नान और दूसरी चीजें समेटती हुयी बोली—"आप क्यों फिकर करेंगे हम लोग सब कुछ देख लेंगे। इतने दिन से इस मौके की उम्मीद में हैं। हम कोई बेखबर थोड़े ही थीं। आप हुकुम दे दीजिये सब कुछ हो जायेगा।"

"तुम क्या बके जा रही हो?" राव ने खीज कर बेगम की ओर देखा और फिर बेटे की ओर आंख उठायी, "कैसा मौका? किस बात के लिये हां कर दूं?"

बेगम स्तब्ध रह गयी। उसने चौकी की ओर गर्दन झुका ली। राव को क्रोध आ गया, मुट्ठी बंध गयी।

"क्या बात है? यह क्या तमाशा हो रहा है? तुम्हें ख्याल भी है, क्या मुसीबत आयी है? सहकारी दुकानों में मास्को का माल छतों तक अट गया है। हमारी दुकानों पर कोई बालिस्त भर कपड़े का ग्राहक नहीं, कोई उधार कपड़ा लेने को तैयार नहीं। मेरा दिवाला निकला जा रहा है, तुम ऐसे काहिल, बेगैरत हो कि कुछ होश ही नहीं है। खुदा ने तुम्हारी जैसी औलाद देकर क्या अज़ाब दे दिया! तुम किस ख्वाब में हो!"

नसरतुल्ला ने अपनी नाक खुजला ली, बोला कुछ नहीं। चेहरे पर भी चिंता का भाव नहीं आया। वह किस बात की फिक्र करता! फिक्र करने के लिये क्या पिता

कम था ! पिता दिन-रात फिक्र ही करता था, लालच और कंजूसी में मरा जा रहा था।

नसरतुल्ला पिता के सामने कह देने का निश्चय करके आया था। आखिर कब तक चुप बना रहता। राव क्रोध में बक चुका तो बेटे ने पूछ लिया :

"मेरा ब्याह कब होगा ?"

राव क्रोध और उत्तेजना से बहुत थक गया था, उस पर बेटे की मूर्खता की चोट। मसनद का सहारा लेकर मौन रह गया। ऐसे बेटे का उपाय क्या था !

बेगम ने साहस किया। बासी खरबूज़े की तरह झुर्रियों से सिकुड़े चेहरे पर खुशामद की मुस्कान आ गयी :

"हाय, लड़के पर बिगड़ क्यों रहे हो ? उस की बात का जवाब तो दो ! अल्लाह रखे, पूरा जवान हुआ है। कैसे चुप बैठा रहे ? तुम्हें नहीं ख्याल आता, उस की जवानी यों ही जा रही है।"

राव क्रोध से थूक कर उबल पड़ा—"कुतिया, चुड़ैल ! वह बेगैरत गलियों की धूल फांकता फिर रहा है, इसे उस की जवानी पर तरस आ रहा है ! खसम की जान पर आ बनी है, उस का कोई ख्याल नहीं !"

राव बौखलाहट में तकिया छोड़ कर उठ बैठा और चीख-चीख कर अपना सिर पीटने लगा।

बेगम दौड़ कर पति का हाथ पकड़ने लगी।

नसरतुल्ला चुप, निश्चल खड़ा रहा।

राव कुछ शान्त हुआ तो नसरतुल्ला ने नज़र बचाये कह दिया :

"सुन लो, मैं निमांचा वाले साबिर की बड़ी लड़की से ब्याह करूंगा।"

नसरतुल्ला की बात सुन कर मां और पिता दोनों को ही काठ मार गया। उन्हें अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। बेगम ने गहरी सांस ली :

"हाय अल्लाह ! मैं मर गयी, वह तो अनाखां की लड़की है।"

अपमान की चोट से कुदरतुल्ला की विह्वलता दब गयी। उस ने मसनद पर पीठ सीधी कर ली। उंगली से ड्योढ़ी की ओर संकेत करके हुक्म दिया—"निकल जा यहां से, बेगैरत कुत्ते ! मुझे अपना मुंह मत दिखाना ! निकल जा यहां से कुतिया के पिल्ले, तू मेरे खानदान को डुबोयेगा ! निकल जा यहां से !"

नसरतुल्ला पिता की उत्तेजना और क्रोध से विक्षिप्त नहीं हुआ। निश्चित आंगन की ओर चल दिया। बेगम रोती हुई बेटे के पीछे-पीछे दौड़ गयी।

आंगन में बेगम ने सुना, कमरे में राव बड़बड़ाये जा रहा था—कैसा बेगैरत है। मेरा उस रांड से आग-पानी का बैर। मैं इस नामुराद को कत्ल कर डालूंगा। ऐसे बेगैरत से और क्या उम्मीद थी…।

कुदरतुल्ला कमरे से निकल लाया। बराम्दे की सीढ़ियों पर बैठ कर अपने ख़ूब चमचमाते घुटनों तक ऊंचे बूट पहन लिये। खड़े होकर चारों ओर क्रोध भरी नज़र डाली। मखुनिया सामने खड़ा अपनी पानी भरी लाल-लाल आंखें झपक रहा था। राव ने हुकुम दिया :

"जा रे, तू अभी जा, चारबाज़ार और कुश्वाक की दूकानों पर जा···नहीं, मैं खुद ही जाऊंगा। बहुत हो गया···।"

राव ने अपनी कसीदा कढ़ी कीमती टोपी सिर से उतारी। टोपी को तहा कर चोगे के भीतर की जेब में रख लिया। समीप खूंटी पर बड़ी टोपी टंगी थी। राव ने बड़ी टोपी में से छोटी गोल काली टोपी निकाल ली। टोपी को दो बार हाथ पर पटक कर शिकन सीधे किये और सिर पर रख ली।

राव क्रोध और क्षोभ को वश में नहीं कर पा रहा था, बोल उठा—"सुन लिया, हमारे नौनिहाल का शौक सुन लिया! तोबा, कोई हद है बेवकूफी और जलालत की! लाहौलबिला··! निमांचा के लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे? उस डाइन बेवा ने मेरी जिन्दगी अज़ाब कर दी। क्या जमाना आ गया है?·· पिछला जमाना होता तो मैं उस चुड़ैल को भंगी के झाड़ू से बुहार कर फिकवा देता। रांड की धूल का भी नहीं चलता।"

मखुनिया ने मालिक की सहानुभूति में गहरी सांस ली। साहस करके बोल उठा :

"हुज़ूर, वह औरत बड़ी दबंग है। कारख़ाने की सब औरतें उस से डरती हैं, उसी की मानती हैं। जैसे वह सब की ख़सम हो और दूसरी सब उस की बेगमें हों। कभी कोई उसके सामने बोल भी लेती है तो मानती उसी की हैं। हुज़ूर के सामने क्या अर्ज करूं! हुज़ूर खुद सब कुछ जानते हैं, हुज़ूर को क्या नहीं मालूम।"

कुदरतुल्ला क्रोध से कांप उठा। उसका नौकर, उसका गुलाम भी सामने बोलने लगा था। मन में आया उस के मुंह पर थूक कर लात मार दे पर बेबस था। आह भर कर चुप रह गया।

मखुनिया ने मालिक के सामने कमर झुका कर सलाम किया। राव ने अपनी दाढ़ी हाथ में लेकर पल भर सोचा और कमरे में लौट गया।

मखुनिया दबे पांव मालिक के पीछे-पीछे रहा। उस का मन दहल रहा था, मालिक क्षोभ में जाने क्या कर बैठे?

राव ने मखुनिया को पीछे आते देख कर मुस्कान दबा ली और कह दिया—"बेगम को तो बुला रे!"

मखुनिया उल्टे पैरों लपक गया और पल भर में बेगम आ गई।

"अच्छा, अपने बेटे से कह दे—जहां चाहे शादी कर ले।" राव ने रुखाई से कह दिया।

भय से बेगम के घुटने लड़खड़ा गये। खड़ी न रह सका, [redacted]
"हाय मैं मर गयी ! क्या कह रहे हो, कुछ तो ख्याल करो ! लड़का तो नादा खानदान का नाम डुबा दोगे ! लड़के की क्या इज्जत रह जायेगी···इस घर के लिये क्या खानदानी लड़कियों की कमी है !"

"जो कहा है, सो कर। अपने लाड़ले को खुश होने दे।" राव ने धमका दिया। बेगम चली गयी तो राव विद्रूप से हंस पड़ा।

"सुन लिया वे तूने हम ने क्या कहा ?" राव ने मखसूम की ओर देखा, "हम ने कहा, लड़के को अपने मन की कर लेने दो। तू कहता होगा हमारा दिमाग खराब हो गया ! तुम लोग कुदरतुल्ला को क्या समझोगे ? अब देखना उस बेवा रांड को कैसा नाच नचाता हूं। चुड़ैल दाने पर लपकी खुद दौड़ी आयेगी। राव के लड़के से ब्याह होने की उम्मीद पायेगी तो रंभाती हुई दौड़ी आवेगी। दिमाग से सब फितूर निकल जायेगा···उस रांड ने तो लड़की को मुट्ठी भर अनाज के लिये किसी भिखमंगे के हाथ सौंप दिया होता; कहां लड़की को महलों में जगह मिलने की उम्मीद हो गई है। ऐसी बेवकूफ़ नहीं बड़ी घाघ है !"

"हुजूर, बहुत तेज औरत है···।" मखुनिया ने अपनी बात कहने के लिये साहस किया।

सेठ उस की न सुन क्षोभ में कहता गया—"इस नामुराद लौंडे से शायद कुछ काम बन ही जाय। उम्मीद तो कुछ भी नहीं है पर शायद इस मुसीबत में वही काम दे जाय···।"

छठा परिच्छेद

'पत्थर की सड़क' पहले पत्थर की नहीं थी पर वहां खूब बड़ा बाजार था। बाजार के चौक में तांगों के अड्डे के सामने खूब ऊंची सफेद इमारत थी। इमारत पर छतरियां बनी हुयी थीं। सन् १९१६ में नगर की म्युनिसिपल कमेटी का दफ्तर इसी इमारत में था। बाद में बाजार की दुकानों के लिये चारबाजार में जगह दे दी गयी और सड़क को चौड़ी करके पत्थर मढ़ दिया गया। तब से सड़क का नाम भी 'पत्थर की सड़क' पड़ गया था।

...द इमारत पर एक साल लोहे की खूब बड़ी काली चादर का बोर्ड लगा रहा ...ार्ड पर बहुत बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—'पुरानी बस्ती की कमेटी'। बोर्ड हट... दिया गया तो दीवारों पर उस के निशान बहुत दिनों तक बने रहे। बाद में सफेद इमारत के साथ लकड़ी की एक खूब ऊंची बड़ी इमारत भी बना दी गयी थी। लकड़ी की इमारत पर लाल झण्डे फहराते रहते थे। एक पुराने तख्ते पर लिख दिया था—'पुरानी बस्ती का जनाना क्लब'।

क्लब के सामने खूब भीड़ थी। जगह-जगह बुरके पहने स्त्रियां गोल बांधे खड़ी बातचीत कर रही थीं। छोटी-छोटी लड़कियां नंगे पांव और उलझे केश वाले लड़के खेल में दौड़-भाग कर रहे थे। मिठाई और नमकीन खोमचे वाले आवाजें लगा रहे थे। भला कहीं भीड़ हो और खोमचे वाले न पहुंचें!

क्लब के भीतर भी स्त्रियों की खूब भीड़ थी। बहुत सी स्त्रियां अपने बुरके घुटनों पर रखे दीवारों के साथ-साथ लगी बेंचों पर बैठी थीं। कुछ दरवाजों के सामने खड़ी हुयी बात कर रही थीं। उन के बुरकों के नकाब भी सिर पर उलटे हुये थे। कहीं पीछे से लड़कियों की खिलखिलाहट और दुतारे की ठुनक-ठुनक भी सुनायी दे जाती थी। हाल कमरे के अन्त में बड़ी मेज़ थी। मेज पर लाल कपड़ा बिछा था। मेज के बायीं ओर क्लब के दफ्तर का दरवाज़ा था। दरवाज़ा खुला हुआ था। दफ्तर में क्लब की संगीत-मंडली, कसीदा-मंडली और नगर के अनेक भागों की उत्साही कार्यकर्ता स्त्रियां जमा थीं। मास्टर नैमी भी कमरे में मौजूद था।

जुलैखां को बहुत सी स्त्रियां घेरे हुयी थीं। सभी को उस से आवश्यक काम था। सभी जल्दी में और परेशान लग रही थीं परन्तु जुलैखां शांत थी। अवसर पाकर जुलैखां ने अनाखां को समीप बुला कर पूछ लिया—"निमांचा में क्या हो रहा है?"

"जुलैखां बहन, हमारे यहां की सभी स्त्रियां आयी हैं। रज़िया मौसी कुमरी को भी ले आयी है, बस नज़ाकत और दूसरी दो नहीं आयी हैं।"

"नज़ाकत कहां है, उसे क्यों नहीं लायीं?"

नैमी खुशामद की मुस्कान से अपने सुनहरे दांत दिखा कर बोल पड़ा—"कामरेड जुलैखां, दो-एक के आने न आने से क्या होता है! आप ने तो कमाल कर दिया। क्या कम स्त्रियां आयी हैं? मैं तो सुबह से देख-देख कर हैरान हूं।"

"मास्टर, तुम अपनी सेहत की भी तो फिकर करो।" जुलैखां ने नैमी को दो शब्दों में उत्तर दे दिया और फिर स्त्रियों की ओर घूम गयी, "तस्वीर का क्या हुआ? हाफिज़ाखां, तस्वीर आ गयी?"

छोटे कद की, चेहरे पर झुर्रियां पड़ी स्त्री ने बांह में लिया हुआ अपना लाल बुरका समीप की आलमारी पर रख दिया। वह साथ के कमरे में गयी और तुरन्त

एक चित्र लेकर लौट आयी।

चित्र किसी श्वेत-केश वृद्धा का था परन्तु वृद्धा की आंखों से यौवन का तेज झलक रहा था। चित्र पर मालायें पहनायी हुयी थीं। जुलैखां ने सन्तोष प्रकट किया। हाफिज़ा खां चित्र हाल में ले गयी।

नैमी दफ्तर के कोने में कुर्सी पर बैठी एक युवती की ओर चला गया। अपने कमरबन्द से लटकते फुन्दे को हाथ में लेकर युवती से बोला—"खानम, वल्लाह तुम तो पेरिस की परियों को भी मात कर रही हो!"

खानम सब स्त्रियों में अलग लग रही थी। हरे रंग का, खड़े कालर का छोटा फौजी कोट, कमर पर चौड़ी पेटी खूब कसी हुई थी। घुटनों तक छोटा सा स्कर्ट इतना तंग था कि जरा बड़ा कदम ले तो बखिया उधड़ जाय। सिर के केश लड़कों की तरह कटे हुये थे। घुड़दौड़ के छोकरों जैसी तिरछी टोपी। होठों पर खूब गहरी पुती हुई लाली काली जान पड़ रही थी और सूख कर चटक गयी थी।

नैमी ने जेब से घड़ी निकाली। घड़ी पुराने ढंग की, चांदी की लम्बी चेन में लगी हुई थी। नैमी ने घड़ी का ढक्कन खोल कर समय देखा। खट से ढक्कन बंद किया और युवती से बोला—"कब से बैठी काम कर रही हो! आओ ज़रा उठो, दो कदम इधर आओ!"

खानम घुटनों तक ऊंचे, भरी हुई पिंडलियों पर खूब फिट बूट पहने ठुमक कर चलती थी तो बूट चर्र-मर्र बोलते जाते थे। नैमी ने खानम के कन्धे के साथ हो उस की कोहनी बांह में ले ली। वे दोनों हाल में, लाल कपड़े से ढकी मेज़ की ओर चल दिये। रहस्यमय स्वर में बात करते जा रहे थे। उन्हें अपनी ओर लगी आंखों की कुछ खबर नहीं थी।

हाल में सन्नाटा छा गया। सन्नाटे में फुसफुसाहट सुनायी दी। गरीब मज़दूर बस्ती की स्त्रियों ने खानम को देख कर मुंह फेर लिये: कई स्त्रियां नैमी से पढ़ने जाती थीं तो चेहरे से नकाब हटा लेती थीं। उन्हों ने भी लज्जा से आंखें झुका लीं—हाय मर गयीं! और चेहरे पर नकाब डाल लिये।

एक लड़की विस्मय से आंखें फाड़े नैमी और खानम की ओर टकटकी लगाये थी। बुरका ओढ़े समीप खड़ी उस की मां ने बेटी के सिर पर एक धौल दे दिया और उसे मुंह फेर लेने के लिये डांट दिया।

अनाखां हाल में आयी तो बुरका पहने एक स्त्री ने उसे रोक लिया—"अनाखां बेटी, मैं तो घर जा रही हूं।"

अनाखां ने आवाज़ पहचानी, कुमरी थी—"क्यों इतनी जल्दी क्या है?"

"बच्चों को अकेले छोड़ आयी थी, आटा भी मांड़ कर रख दिया था।"

"नहीं, अभी नहीं जाना। बस, सभा शुरू हो रही है, साथ-साथ चलेंगी। घबरा क्यों रही हो ! दो मिनट की तो बात है।"

अनाखां ने नैमी के साथ चलती खानम को संकेत से अपनी ओर बुला लिया और उसे दफ्तर में जुलैखां के सामने ले गयी।

जुलैखां ने खानम की ओर देखा—"क्यों, क्या बात है, तुम्हारी गली से तो कोई भी नहीं आयी ?"

"मैंने तो सब से कहा था।" खानम झुंझलायी, "समझाते-समझाते थक गयी, सब कुछ कह दिया। मैं तो इन के साथ पागल हो जाऊंगी, कामरेड जुलैखां ! सब ने कह दिया था आयेंगी ''। मैं तो खुद नहीं समझ पा रही।"

"सुनो !" जुलैखां ने खानम की पोशाक पर ऊपर से नीचे तक नज़र डाली। उस के माथे पर तेवर पड़ गये, "तुम्हें क्या हो गया है ? औरतें तुम्हारी बात सुनेंगी ? यह तुम बंदरिया सी क्यों बनी हुई हो ? अभी जाओ, ढंग से कपड़े पहन कर आओ ! यह क्या बेहयायी है ? खबरदार, क्लब में फिर इस तरह आयी !"

"किसी को क्या, मैं जैसा चाहूं पहनूं ! बहन जुलैखां, आप मेरी सास की तरह खौंखिया रही हैं।"

जुलैखां गम्भीर हो गयी। उसने हाल में खड़ी स्त्रियों की ओर संकेत किया—"ये सब मज़दूर बस्ती की भली औरतें क्या हैं ? ये सब तुम्हारी मां और सास नहीं तो क्या हैं ? मैं सब के सामने तुम्हें फटकार दूंगी। तुम्हें कुछ शर्म है तो अपने आप संभल जाओ !"

खानम गर्दन झुकाये चुपचाप चली गयी।

जुलैखां स्त्री कार्यकर्ताओं के साथ हाल में गयी। कार्यकर्त्ता स्त्रियां मेज़ को घेर कर बैठ गयीं। नैमी भी मेज़ के साथ बैठ गया। हाल में स्थिति बदल गयी। सब स्त्रियां उत्सुकता से जुलैखां की ओर देखने लगीं। वह अपनी जगह से उठ कर व्याख्यान देने की मेज़ की तरफ बढ़ आयी। सब की आंखें उसी ओर लगी थीं जैसे घाम से व्याकुल प्यासे की आंखें जल की ओर उठ जाती हैं। सब के कान भी उसी ओर लगे हुये थे।

बहुत सी स्त्रियां जुलैखां को पहले भी देख चुकी थीं, बहुत सी उस के विषय में सुन चुकी थीं। तीसरी पंक्ति में एक स्त्री हाफिज़ा लाल बुरका ओढ़े थी। उन दिनों लाल बुरका ओढ़ने का मतलब वही था जो मर्दों में लाल तारा लगा लेने का मतलब था। क्रान्ति में सहयोग देने वाले मर्द लाल तारा लगाते थे और स्त्रियां लाल बुरका ओढ़ लेती थीं। हाफिज़ा के जालिम पति और ससुर उस बेचारी को बदनाम करके बहुत सता रहे थे। जुलैखां ने कचहरी में उस की तरफ से वकालत की थी। दो बरस से हाफिज़ा लाल बुरका पहनने लगी थी।

जुलैखां स्त्री के चित्र की ओर संकेत कर बोली—

"प्यारी बहिनों और सहेलियो ! मैं आप को बताना चाहती हूं कि हम आज इस तस्वीर पर माला क्यों चढ़ा रहे हैं ! यह हमारी एक कम्युनिस्ट बहिन है। इस ने यहां की बहिनों के नाम पत्र भेजा है। शायद कुछ बहिनों को मालूम हो, हमारी इस बहिन का नाम कलारा जेतकिन है। यह बहिन लेनिन के साथ काम करती थी और उन की सहायक भी थी।"

लेनिन की साथी और सहायक एक स्त्री ! स्त्रियों को विस्मय क्यों न होता ? कोई स्त्री इतना बड़ा चमत्कार कर सकती थी तो स्त्रियों के लिये कठिन क्या था, क्या असम्भव था ?

जुलैखां अपने चारों ओर बैठी स्त्रियों को कलारा के साहस, बुद्धिमानी और वीरता की कहानी सुना रही थी। सुननेवालियों के लिये कलारा तो दूर और अपरिचित थी। वे जुलैखां को जानती थीं। बूढ़ी और जवान सभी स्त्रियां आदर और स्नेह से कलारा के स्थान पर जुलैखां को ही देख रही थीं। जुलैखां उन की तरह उज़बेक स्त्री थी परन्तु उस ने कितने चमत्कार जीवन में किये और देखे थे। क्या उस का भाग्य था ? उस ने लेनिन के दर्शन पाये थे। लेनिन से हाथ भी मिलाया था। स्त्रियों के लिये यह सब बातें परियों की कहानियों की ही तरह चामत्कारिक थीं। सन १६२६ में जुलैखां स्त्रियों की एक कान्फ्रेंस में भाग लेने के लिये मास्को गयी थी। वह मास्को से लौटी थी तो शहर भर के लोग उस के दर्शन के लिये आते थे। वह लेनिन को साक्षात देख कर, उन से बात करके आयी थी।

स्त्रियां जुलैखां की बातें तनमय होकर बहुत विस्मय और विश्वास से सुनती थीं, कोई उस की उपेक्षा नही कर सकता था।

जुलैखां ने कलारा जैतकिन का पत्र पढ़ कर सुनाया—

"उज़बेकिस्तान की प्यारी बहिनो ! मध्य-एशिया की अनेक जातियों को तुम्हारी बहिनों ने खूब अच्छी तरह देख और समझ लिया है कि उन के जीवन को मनुष्यों की तरह संतुष्ट बना सकने के लिये और उन के आत्मसम्मान की रक्षा के लिये सोवियत प्रजातंत्र सरकार का क्या महात्व है। आज मध्य-एशिया की स्त्रियां अपने समाज के जीवन के सभी कामों में भाग ले रही हैं और उन्होंने प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अद्‌भुत योग्यता और दृढ़ता का परिचय दिया है। हमारी बहिनें मजदूरों और किसानों के जनतंत्र को सफल और सशक्त बनाने में और कम्युनिज़म को सफल बनाने में सहयोग दे रही हैं। आप अपने हृदय के सम्पूर्ण प्रेम, अपनी सम्पूर्ण पवित्रता से, अपने पूरे उत्साह और इच्छा-शक्ति से, कम्युनिस्टों की भावना और उत्साह से समाजवादी जनतंत्र को सफल बनाइये…।"

"बहुत ठीक ! बहुत खूब !" नैमी ने बहुत गम्भीर मुद्रा में जरा उठ कर समर्थन किया ।

ज़ुलैखां ने नैमी की ओर नहीं देखा, उसकी परवाह नहीं की । स्त्रियों का ध्यान भला उस ओर कैसे न जाता । सब खुश थीं—ज़ुलैखां कितनी दबंग है ! वह उस मुए की क्या परवाह करती है । हम स्त्रियों की आपस की बात है, हम जो चाहें कहें, ये मुआ बीच में क्यों बोलता है !"

उज़बेक स्त्रियां अपनी कलारा बहिन और ज़ुलैखां बहिन की बात सुन रही थीं । कलारा और ज़ुलैखां उज़बेक स्त्रियों को, अपनी रूसी बहिनों की तरह साहस करने के लिये ललकार रही थीं । ज़ुलैखां ने स्त्रियों को अपनी सहेली सोफिया नादेज़दिना का भी परिचय दिया—"सोफिया बहिन एक रूसी क्रान्तिकारी की बेटी हैं । ये बहुत दूर से अपना घर छोड़ कह हमारे शहर में आयी हैं । ये उज़बेक बहिनों को बुनायी का काम और ज़िन्दगी का ढंग सिखाने में सहायता देंगी···।"

"प्यारी बहिनों, बताइये, कलारा बहिन के पत्र का क्या जवाब दिया जाना चाहिये! आप आप अपनी राय दीजिये ।" ज़ुलैखां ने पूछा ।

स्त्रियां चुप रह गयीं ! किसी की गोद से बच्चे के ठुनकने की आवाज़ सुनायी देने लगी ।

"मुझे इजाज़त दीजिये !" नैमी ने बहुत गहरा सांस लेकर दोनों हाथ उठाये मानों कलारा जेतकिन के पत्र से उसका हृदय पसीज गया था ।

ज़ुलैखां ने नैमी को चुप रहने का संकेत किया—"ठहरिये, पहले बहिनों को बोल लेने दीजिये ।"

"ठीक तो है, ठीक तो है । इसे क्या मतलब ? हां, इसे क्या मतलब !" यह क्यों बोलता है !" स्त्रियां असंतोष से फुसफुसाने लगीं ।

ज़ुलैखां ने अपने समीप बैठी स्त्री के कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"बहिनो, मैं अनाखां बहिन से प्रार्थना करती हूं कि वह अपनी राय दें । वह खाममुखा शरमा रही हैं ।"

मेज़ के आसपास बैठी स्त्रियों ने ज़ुलैखां के समर्थन में ताली बजा दी । शेष स्त्रियां भी तालो बजाने लगीं । अनाखां के चेहरे पर एक रंग आता था और एक रंग जाता था । संकोच से चेहरा लाल हो गया परन्तु वेचारी को खड़ा होना पड़ा । सब स्त्रियां सुनने के लिये स्तब्ध हो गयीं ।

अनाखां साहस कर मुंह में बोलने लगी :

"मैं, मैं क्या कहूं । मुझे तो नहीं मालूम, मुझे कहना नहीं आता । पत्र में···पत्र बहुत अच्छा है, बहुत अच्छी बातें लिखी हैं जैसे मेरी लड़की गीत गाती है । माफ

कीजिये, मुझे कहना नहीं आता। बहुत अच्छा पत्र है, इतना अच्छा पत्र तो किसी ने नहीं लिखा।"

सब स्त्रियां सांस रोके बहुत ध्यान से सुन रही थीं। उन्हीं जैसी एक बुनकर स्त्री बोल रही थी। बेचारी विधवा थी, बाल-बच्चे वाली थी। शरमा रही थी। उस ने ठीक तो कहा। स्त्रियां उस की ओर आदर से देख रही थीं, जैसे जुलैखां का आदर करती थीं।

अनाखां ने समझा और उसे साहस मिला :

"मुझे एक बात कहनी है। बात यह है कि हम निमांचा की औरतें बुनकर सहकारी बनाना चाहती हैं। बात यह है कि हम लोग कुदरतुल्ला के कारखाने में काम करती रहेंगी तो सोवियत सरकार की कोई मदद नहीं मिलेगी।"

नैमी की कुर्सी चरचरा गयी। उस ने बेचैनी से करवट ले ली, झट बोल उठा—"ठीक है, बहुत ठीक है।"

"हम सात जनी हैं और हम सातों सहकारी में काम करेंगी और हम सात जनी भी जब आप कलारा बहिन को पत्र का जवाब लिखेंगी तो उस पर दस्तखत करेंगी।"

कुमरी का असन्तुष्ट स्वर सुनायी दिया—"सात जनी क्यों? बिटिया, सात जनीं क्यों कह रही हो, आठ कहो!"

"आठ कैसे?" एक और बोल उठी, "हम सब दस्तखत क्यों नहीं करेंगी? हम भी करेंगी···!"

"पत्र तो सभी के नाम आया है···।"

अनाखां मुस्करा दी। सभी स्त्रियां एक साथ बोलने लगी थीं जैसे कारखाने में बात करती थीं।

रज़िया मौसी भीड़ में से जगह बनाती हुई मेज़ की तरफ चली आयी। वह अपना बुरका और नकाब बांह के नीचे दबाये थी। मेज़ के पास आकर ज़ोर से बोल उठी—"क्या कह रही हो बहिनों, तुम मेरी सुनों! मैं बुढ़िया हो गयी, मैंने बहुत देखा है। तुम मेरी सुनो! मेरी इतनी उमर हो गयी, आज मैं भी सभा में आयी हूं। लोग मुझे जाने क्या-क्या कह रहे हैं। आठ जनी सहकारी में काम करेंगी, मैं भी करुंगी। सब से पहले अनाखां ने कहा था और फिर मैंने भी कहा था, समझीं तुम! मैं तो उस के साथ हूं। मैं तो सच्ची-सच्ची कहूंगी। मैं बुढ़िया हुयी, मुझे क्या डर है! अरे हां, हंसने की क्या बात है! जुलैखां जिस बहिन की बात बता रही थी, क्या नाम जिस की तस्वीर है···।"

रज़िया मौसी ने चित्र की ओर संकेत किया—"तुम सोचो तो सही, वह बहिन कहां, कितनी दूर रहती है और उसे हमारा इतना ख्याल है। उस ने खत भेजा है, हमें

सलाम लिखा है । जुलैखां, सोफिया बहिन की तारीफ कर रही है । हम उन की बहुत इज्ज़त करते हैं पर जुलैखां क्या किसी से कम है ? मुझे तो पुरानी सब बातें याद हैं। नौ बरस हो गये जब जर्मनी के बादशाह के साथ लड़ाई हो रही थी तब मालूम है, क्या हुआ था ? यहाँ—इसी बाज़ार में, इसी खिड़की के नीचे—मालूम है क्या हुआ था ?"

"ज़ार की पुलिस हमारे मर्दों, हमारे बेटों और जमाइयों को लड़ाई में भेजने को पकड़ने लगी । शहर भर की औरतें निकल कर यहां जमा हो गयी थीं । किसी के हाथ में लकड़ी, किसी के हाथ में बेलन, कोई चिमटा-करछुल लिये थी । साथ वाले बड़े मकान में खब पुलिस भरी हुयी थी । तब वहां दफ्तर था । पुलिस बन्दूकें लेकर औरतों के सामने खड़ी हो गयी । सब औरतें चिल्लाने लगीं कि हम अपने बेटों को नहीं ले जाने देंगी । उन्हें ले जाना हो तो हमें बताओ कहां ले जा रहे हो ?हमें क्या मिलेगा ?

"एक बड़ा लाल-मुंहा मुच्छड़ अफसर था । बहुत ज़ालिम था । खुदा उसे ग़ारत करे—वह घूंसा दिखा कर धमकाने लगा । मैं बताऊं तुम्हें क्या मिलेगा ?

"सब औरतें दफ्तर पर पत्थर फेंकने लगीं । जिस के हाथ जो कुछ लगा पुलिस वालों पर फेंकने लगीं । मुच्छड़ अफसर ने बांह उठा कर पुलिस वालों को हुकुम दिया—होशियार ! सिपाहियों ने बन्दूकें औरतों की ओर तान दीं कि औरतें पीछे नहीं हटेंगी तो गोली चला देंगे । औरतें पीछे हटने लगीं, कई तो भाग गयीं ।

"तब एक बहादुर औरत आगे बढ़ गयी । उस ने अपने बुरके से नक़ाब खींच कर दूर फेंक दी । सीना ताने पुलिस वालों की तरफ बढ़ गयी । पुलिस वालों ने उस के सीने की तरफ बन्दूकें कर लीं । औरतों के कलेजे डर के मारे मुंह को आ रहे थे पर वह नहीं डरीं । उस ने पुलिस वालों को ललकारा—तुम हम पर गोली चलाओगे ! नामर्दो, तुम्हें शर्म नहीं आती ! हमारा खून पी-पी कर मुटाये हो और हम पर गोली चलाओगे ! बहुत बहादुर बनते हो तो अपने बादशाह के लिये लड़ाई पर खुद क्यों नहीं जाते ? औरतों पर ही गोली चलाने की हिम्मत रह गयी है, लानत है तुम पर !

"मुझे सब याद है, उस के बोल अब भी मेरे कानों में गूंज रहे हैं । ख्याल करो, सोलह सिपाही बन्दूकें ताने सामने खड़े थे । उन की बन्दूकें झुक गयीं । मुच्छड़ अफसर बौखला उठा । सिपाहियों को गाली देने लगा, उन्हें हन्टर मारने लगा । सब औरतों ने दफ्तर को घेर लिया । तब उस बहादुर औरत ने औरतों की तरफ घूम कर सब को ललकारा :

"माताओं और बहिनों, अपने मर्दों और बेटों को ज़ालिमों के जंग में हरगिज़ मत जाने दो !"

"मुच्छड़ अफसर और उस के खुशामदी सिपाहियों ने उस बहादुर औरत की मुश्कें बांध लीं । उसे घसीट कर दफ्तर में ले गये । घुड़सवार सिपाही दौड़ पड़े । औरतों को

हन्टरों से मारने और रौंदने लगे। मुश्किल से मेरी जान बची। बड़ी मुश्किल से घर पहुंची। आज जब मैंने बेटी ज़ुलैखां की बातें सुनीं और ज़ुलैखां को मेज़ के पास देखा तो मुझे उस बहादुर बेटी की बातें याद आ गयीं कि पुलिस का कैसे सामना किया था। मैं सब बहिन-बेटियों को बता दूं, वह बहादुर बेटी कौन थी? सब सुनो, मैं बताये देती हूं। वह बहादुर बेटी ज़ुलैखां ही थी जो तुम्हारे सामने बैठी हुयी है।"

रज़िया मौसी की आंखों से आंसुओं की धारायें बह गयीं। अनाखां ने ज़ुलैखां के गले में बांहें डाल दीं। रज़िया मौसी के आंसू रुक नहीं पा रहे थे। सब स्त्रियां धैर्य से चुपचाप मौसी की बात सुनने की प्रतीक्षा कर रही थीं।

"बहिनो-बेटियो, तुम कहोगी कि मैं क्या कह रही हूं!" मौसी रज़िया फिर संभल कर बोली, "मुझे तो यही कहना है कि ज़ुलैखां ठीक बात कह रही है। हमें उस की बात माननी चाहिये। बहिनों, ज़ुलैखां जो कुछ कहती हैं सो बिलकुल ठीक है। तुम जानती हो, उस ने लेनिन से हाथ मिलाया है। उस का हाथ मुबारक है। मुझे बस एक ही बात कहनी है कि तुम्हें हम बूढ़ी औरतों का भी ख्याल करना चाहिये। सहकारी में हम लोगों के भी नाम रखे जाने चाहिये। तुम लोग क्या जानो कि हम लोगों ने क्या-क्या सहा हैं। हम लोग भी नयी ज़िन्दगी देखना चाहती हैं।"

सभी स्त्रियों के चेहरे प्रसन्नता और उत्साह से चमकने लगे, सभी बोलने लगीं—"हम भी सहकारी में होंगी। कौन नहीं जानता कि क्या-क्या मुसीबतें सब ने झेली हैं। हम नरक में पड़ी रहें!"

एक लड़की तेज कदम रखती हाल में आयी। उस ने ज़ुलैखां के कान के पास झुक कर कुछ संदेश दिया। नगर कमेटी से संदेश आया था। ज़ुलैखां को किसी आवश्यक काम के लिये तुरन्त बुलाया गया था।

ज़ुलैखां उठी और लड़की के साथ बायीं ओर के कमरे में चली गयी।

ज़ुलैखां के जाते ही नैमी उठ कर मेज़ पर आ गया। अब तक स्त्रियां मेज़ के पास जहां खड़ी थीं वहीं से अपनी बात कह रही थीं परन्तु नैमी प्रधान वक्ता के स्थान पर आकर खड़ा हुआ। उस ने अपनी घड़ी और चाँदी की चेन हाथ में लेकर तोली, बहुत अदा से समय देखा और घड़ी को अपने सामने मेज़ पर रख लिया। उस की उस्तरे से घुटी चिकनी खोपड़ी ठीक ऊपर लटके लैम्प के प्रकाश में चमचमा रही थी।

"गरीब प्यारी माताओ और बहिनो!" सब स्त्रियां सुनने के लिये स्तब्ध हो गयीं।

"हमें अपनी सोवियत सरकार का शुक्रिया करना चाहिए। सरकार ने हमें नयी रोशनी दी है। अब पुरानी जहालत को खत्म कर देने का वक्त आ गया है, आज़ादी का सूरज निकल आया है! जब हम पढ़े-लिखे लोग साइंस की चमचमाती रोशनी से रौशन दिमाग लोग, बुरके की कैद में आप की बरबाद होती जिन्दगी को देखते हैं तो

हमारा दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। यह हमारी बड़ी बदकिस्मती है कि अब भी हम में बहुत से लोग पुराने रिवाज़ों के गुलाम बने हुये हैं। उन लोगों में आज़ाद होने की हिम्मत नहीं है। सब से जरूरी और पहला काम पुराने रिवाज़ों की जंजीरों को तोड़ना समझा जाना चाहिये। मिसाल के तौर पर अब भी बहुत सी औरतें अपने पतियों और सास-ससुर के हुक्म की गुलाम बनी हुई हैं और अब भी बुरके की कैद में बन्द हैं! यह बहुत शरम की बात है कि नये ज़माने में भी अपनी आंखें बन्द किये हुये हैं। सोवियत सरकार ऐसी जहालत की गुलामी को किसी तरह बरदाश्त नहीं कर सकती।

मैं पूछना चाहता हूं कि आप अपने घरों की चारदीवारी की कैद में कब तक पड़ी रहेंगी? कब तक आप सिर्फ अपने पति और बच्चों के ख्याल में डूबी रहेंगी! मैं शिक्षा और नये ज्ञान का एक मामूली सेवक हूं। मैं आप से अपील करता हूं कि आप अपने बुरकों को फाड़ कर सहकारी का साथ दीजिये! आप को किसी से डरने की जरूरत नहीं है। आप के बच्चों का प्रबन्ध सोवियत सरकार करेगी। सोवियत सरकार आप के जाहिल पतियों की भी अक्ल ठीक कर देगी···।"

सामने बैठी हुई स्त्रियां कसमसायीं। उन में असन्तोष की हिलजुल होने लगी—"हाय मैं मर गयी··! तौबा! तौबा!···हाय अल्लाह!"

अनाखां ने उठ कर नैमी को चुप हो जाने के लिये कहा। नैमी ने कुछ नहीं सुना। वह और भी उत्साह से बोलता गया :

"मैं आप लोगों को बता देना चाहता हूं कि यह बहुत शर्म की बात है। अब भी कुछ ऐसी स्त्रियां हैं, जो अपने चौके-बर्तन में जूठन की तरह चिपकी रहना चाहती हैं। मैं कहता हूं, जमाना बदल चुका है। अब स्त्रियों के लिये बच्चों और पति की दुनिया को छोड़ कर बहुत बड़ी दुनिया का दरवाजा खुल गया है। सोवियत सरकार को काम करने वाली स्त्रियों की जरूरत है। अगर आप के परिवार आप की आजादी के रास्ते में रुकावट डालते हैं तो आप उनकी शिकायत सोवियत अदालत में कीजिये। ऐसे नालायक लोगों को लात मार कर उन से अलग हो जाइये। ऐसे परिवार और घर पर लानत है। आप को सोवियत सरकार की सहकारी में पूरी आज़ादी मिलेगी। आप आराम ले बैरकों में रह सकेंगी। आप के बच्चों को अनाथालयों में रखा जायेगा! स्त्रियों की आज़ादी जिन्दाबाद! स्त्रियों की आज़ादी के लिये लड़ने वाली बहादुर स्त्रियां जिन्दाबाद!"

हाल में सन्नाटा था। सिर्फ किसी की गोद में बच्चे के रोने की चीखें सुनायी दे रही थीं। पीछे बैठी स्त्रियां चुपके-चुपके हाल से चली जाने लगीं।

मंच पर बैठी हुई स्त्रियां सहसा उठ खड़ी हुईं। अनाखां तुरन्त दरवाज़े की ओर भागी। उस ने पुकार लिया—कुमरी बहिन, कुमरी बहिन! कहां जा रही हो?"

जुलैखां लौट आयी। जुलैखा को देख कर नैमी अनाखां के पीछे दौड़ पड़ा। बांहें फैला कर पुकारने लगा—"प्यारी बहिनों, माताओ, कामरेडो! आप लोग कहां जा रही हैं। सब बहिनें अपनी-अपनी जगह पर बैठ जायें। सभा पांच-सात मिनट में ही समाप्त हो जायेगी···।"

जुलैखां तुरन्त परिस्थिति भांप गयी। उसे आ गयी देख कर स्त्रियां भी शांत हो गयी थीं और बैठने लगी थीं। कई स्त्रियां अब भी खड़ी हुई थीं। अनाखां दरवाज़े से लौट आयी। बेचारी बहुत कठिनता से अपने आंसू रोके हुये थी।

"कुमरी चली गयी। कह गई—तुम्हारी सहकारी से मुझे कुछ मतलब नहीं। वह खुद चली गयी और दूसरियों को भी साथ ले गयी। अब क्या करेंगी?"

अनाखां के पीछे नैमी भी लौट आया। उसके माथे पर पसीना छलक आया था। कुर्सी पर धम्म से गिर पड़ा—

"कामरेड जुलैखां, आप ने पहले बताया ही नहीं, कुछ तो बता देतीं! मैं तो इसी ख्याल में था कि यहां समझदार क्रान्तिकारी स्त्रियां ही हैं। आप ही बताइये, ऐसी स्त्रियों से सहकारी चल सकती है? कामरेड जुलैखां, माफ कीजिये, मुझे तो इन लोगों से कोई उम्मीद नहीं है। जब तक समझदार संगठित लोग साथ न हों, कैसे काम चल सकता है। शुरू में चाहे कम स्त्रियां हों परन्तु समझदार, पक्की स्त्रियों को लेना चाहिये···।"

जुलैखां ने नैमी को डांट कर टोक दिया—"तुमने यह क्या बकवास किया है? तुम्हें यहां आने की जरूरत ही क्या थी?"

जुलैखां के तेवर देख कर नैमी घबड़ा कर उठ खड़ा हुआ। उस का रंग पीला पड़ गया। गिड़गिड़ाकर बोला—"मैंने तो स्त्रियों को सिर्फ आज़ादी के लिये साहस करने के लिये कहा था ·।"

"हूं" जुलैखां ने होंठ काट कर नैमी की ओर देखा, "स्त्रियों के सामने उनके पति और बच्चों के लिए इस तरह से कहा जाता है? पतियों और बच्चों से प्रेम करने के लिये लानत-मलानत की जाती है? तुम सोवियत सरकार को बदनाम कर रहे हो!"

"तौबा, तौबा! आप क्या फरमा रही हैं!" नैमी का गला रुंध गया, "खानम, आप मुझ से ऐसी उम्मीद कर सकती हैं! आप समझती हैं कि मैंने माताओं, बहिनों की बेइज्ज़ती की है तो मैं उन से माफी मांगने के लिये तैयार हूं।"

"चुप रहो! बैठ जाओ!"

नैमी चुपचाप बैठ गया।

स्त्रियां हैरान और स्तब्ध थीं, एक स्त्री ने सब के सामने मर्द को फटकार दिया। आसमान फट नहीं पड़ा। मर्द ने औरत का कत्ल नहीं कर दिया। फिर भी स्त्रियों के कलेजे दहल गये।

जुलैखां ने अवसाद भरी आंखों से स्त्रियों की ओर देखा—"मेरी बहिनो, तुम किस अंधकार में पड़ी हुई हो ! गुलामी ने तुम्हारी क्या अवस्था कर दी है ? धैर्य से काम लेना आवश्यक था।" जुलैखां ने स्त्रियों को धीमे स्वर में सम्बोधन किया :

"प्यारी बहिनों, किसी बहिन को कोई मजबूरी नहीं है। जो खुद चाहेंगी, सहकारी में शामिल हो सकती हैं, जो नहीं चाहतीं, उनके लिये कोई मजबूरी नहीं है।"

"हां हां इस में क्या संदेह है।" नैमी ने बहुत उत्साह से समर्थन किया।

"अगर आप के पति आप को सहकारी में जाने की इजाजत नहीं देते, तो आप उन्हें समझाइये, उन की मंजूरी लेने की कोशिश करिये। अगर आप के पति रज़ामंद नहीं होते तो आप सहकारी में न आइये। आप उन से इस बात के लिये झगड़ा नहीं कीजिये। उन्हें हालत को अच्छी तरह से देख लेने और समझ लेने का मौका दीजिये। हमें यकीन है कि कुछ दिनों में वे खुद ही आप को रज़ामन्दी दे देंगे। आप अगर चाहती हैं तो बुरका पहन कर भी सहकारी में आ सकती हैं। याद रखिये, सहकारी में सिर्फ औरतें ही होंगी कोई मर्द उस में नहीं होगा। फिर भी बुरका छोड़ देने की मजबूरी नहीं है। सहकारी में समय की भी कोई कैद नहीं है। आप को जब भी अपने घर के काम से और बच्चों की देखभाल से फुरसत मिले, आप वहां जाकर काम कर सकती हैं। अगर चाहें तो गोद के बच्चों को साथ ला सकती हैं। सहकारी में बच्चों के लिये खास इंतजाम किया जायेगा, उन के लिये खिलौने और खाने-पीने का भी प्रबन्ध होगा। जिन बहिनों को बुनना नहीं आता उन्हें बुनना भी सिखलाया जायेगा ताकि वे फुर्सत के समय कुछ कमा सकें। जो कपड़ा आप बुनेंगी वह औरतों की अपनी दुकान में बेचा जायगा। दुकान में कपड़ा बेचने का काम औरतें ही करेंगी। उस दुकान से केवल औरतें ही कपड़ा खरीद सकेंगी। कपड़े का दाम सहकारी की स्त्रियां ही तय करेंगी।"

जुलैखां धीमे धीमे बोल रही थी, जैसे मां डरे हुए बच्चे को समझा रही हो। उस के मन की वेदना को सब स्त्रियां नही भांप सकीं।

जुलैखां अपनी बात पूरी करके मुस्कराई—"बाहिनो बताओ, इस में कोई घबराने की बात है ? क्या इस में आप का ही भला नहीं है ?"

"हमारा भला क्यों नहीं है" बहुत सी स्त्रियों ने एक साथ समर्थन किया।

"इसमें कोई डरने की बात है ?"

"नहीं, इस में डरने की क्या बात है।" पहली पंक्ति में बैठी एक जवान युवती बोल उठी।

सभा समाप्त हो गयी। स्त्रियां हाल से चलने लगीं। बहुत सी कार्यकर्त्ता स्त्रियां जुलैखां को घेरे हुये बात कर रही थीं।

नैमी उन के बीच में घुस आया। सीने और सिर पर हाथ मार कर बताने लगा : तीस बरस से इस जहालत को दूर करने के लिये, शिक्षा का प्रचार करने के लिये सिर फोड़ रहा हूं। मैं तो इस अन्ध-विश्वास को दूर करने के लिये, सांस्कृतिक क्रांति के लिये जान कुर्बान कर देने के लिये तैयार हूं...।

नैमी तो सांझ तक बोलता चला जाता परन्तु जुलैखां ने उसे बाहर चले जाने के लिये कह दिया।

जुलैखां दूसरी स्त्रियों के साथ क्लब के दफ्तर में चली गयी।

सुबह दफ्तर और हाल के फर्श को बुहार और धोकर खूब चमका दिया गया था। भीड़ के कदमों से फर्श फिर गन्दा हो गया था। क्लब में इतनी स्त्रियां कभी नहीं आयी थीं परन्तु जुलैखां प्रसन्न नहीं थी, बहुत थकी-थकी सी लग रही थी। दफ्तर की खिड़की के बाहर चीनी गुलाब की झाड़ी दिखायी दे रही थी। पेड़ में अधफूटी कलियां भरी हुयी थीं। जुलैखां उसी ओर नज़र लगाये चुप थी।

जुलैखां ने समीप खड़ी स्त्रियों की ओर देख कर गहरा सांस लिया—"आज के अनुभव से आप को सावधान हो जाना चाहिये ! मुझे विस्मय है, आप ने यह सब होने क्यों दिया, उस ढोल को क्यों चुप नहीं करा दिया ? आप ने उसे डांट क्यों नहीं दिया ?"

"क्या बताऊं, मैं सोच तो रही थी" अनाखां ने स्वीकार किया, "इसलिये चुप रह गयी कि स्कूल का मास्टर है !"

"मास्टर है तो क्या हुआ ?" जुलैखां ने पूछा, "तुम्हें भी तो कुछ समझ है। बेहूदा बात देख कर तुम चुप क्यों रही ? अनाखां, तुम्हें उचित-अनुचित देख कर खुद फैसला करना चाहिये। ऐसे हाल तो तुम्हारे सामने रोज़ आयेंगे !"

"अच्छा, अब मैं यहां रोज आया करूंगी। सिर्फ स्त्रियों के नाम लिख लेने से ही कुछ नहीं होगा। उन से बातचीत करना जरूरी है ताकि मौके पर घबरा न जायें।"

जुलैखां ने अनाखां की ओर देख कर मुस्करा दिया—"हमारी सहकारी की प्रधान तुम्हें ही बनना होगा।"

"ना, ना, बहिन जुलैखां, यह मेरे बस का नहीं। तुम जानती हो, यह सब मैं नहीं समझती। प्रधान तो सोफिया बहिन को ..।"

"सोफिया तुम्हारी मदद करेगी।"

"प्रधान उन्हीं को बनाइये, मैं उन की मदद करूगी।"

"नहीं, नहीं नगर कमेटी के स्त्री विभाग में बात हुयी थी। सब लोगों ने तुम्हारे लिये ही फैसला किया है। इस में डरने की क्या बात है ?"

"नगर कमेटी में मुझे कौन जानता है ?"

"वाह, सब जानते हैं। तुम समझती क्या हो ?"

अनाखां ने घबरा कर अपना चेहरा दोनों हाथों में छिपा लिया। उस का चेहरा लाल हो गया।

सातवां परिच्छेद

बचपन में नसरतुल्ला का नाम मिट्ठू पड़ गया था। उसके हाथ सदा ही मिठाई से चिपचिपाते रहते थे। इतना लाड़ और चूमा-चाटी होती रहती थी कि बच्चे के गाल कभी खुश्क नहीं हो पाते थे। मां तो बेटे को ऐसे चाटती रहती थी जैसे बिल्ली बिलौटे को चाट-चाट कर प्यार करती है। बाप भी कहता रहता था,"पहला लड़का है। यही सब कुछ संभालेगा। घर में दौलत चाहे जितनी हो, दौलत को संभालने वाला वारिस नहीं तो सब बेकार! दौलत तो आनी-जानी है उस का क्या, खानदान बेटे से चलता है...।"

बहुत सुख-चैन के दिन थे। मां-बाप बेटे पर न्यौछावर थे। बेटे के मुंह से निकली बा तपूरी होने में देर नहीं लगती थी। कुदरतुल्ला बेटे के मुंह से पहले शब्द सुनने के लिए बहुत उत्सुक था। लड़का बोले तो सही, चाहे चिड़िया का दूध ही मांग ले! तब कुदरतुल्ला दरिया दिल था, खर्च से नहीं डरता था। इकलौते बेटे की बात में पीछे न रहता।

एक दिन कुदरतुल्ला के यहां कोई रईस मेहमान आया था। राव मेहमान को बिदाई देने के लिये हवेली की ड्योढ़ी तक गया। बेटा गोदाम में था। मेहमान की गाड़ी में जुता बढ़िया घोड़ा खूब सजा-धजा था। घोड़े के माथे पर आयल में मनके गुंथे हुये थे और झालर बंधी हुयी थी। बच्चे ने घोड़े की ओर अपना हाथ फैला दिया।

राव गद्गद् हो गया। इकलौते बेटे ने पहली बार अपनी इच्छा प्रकट की थी। राव ने सांझ से पहले बेटे के लिये दो बछेरियां खरीद लीं। एक बछेरी बहुत सील थी। दूसरे दिन नसरतुल्ला दिन भर बछेरी से खेलता रहा। हवेली के बाग में से गुथिया ला-लाकर बछेरी के आयल में उलझा देता था। दूसरे दिन उस ने बछेरी की ओर आंख भी नहीं उठायी। उस के सब चाव जल्दी ही समाप्त हो जाते थे। बस गोलियां चूसते रहने का ही शौक था।

उन दिनों मसजिद के इमाम का लड़का महमूद नैमी मदरसे में पढ़ाता था। नैमी

प्राय: राव के यहां आता रहता था। नैमी नसरतुल्ला के लिये बहुत बड़ी भविष्यवाणियां किया करता था—बहुत ज़हीन है,··· नाम कमायेगा···कौम का सरताज होगा !

बेगम को यह सब बातें अच्छी नहीं लगती थीं। उसे नैमी से खटका ही रहता था। एक दिन नैमी ने कहा—बेटे को साइंस पढ़ानी चाहिये—बेगम सुनते ही बहुत घबरा गयीं।

बेगम ने धमका दिया—"नैमी, तुम पागल हो गये क्या ? दुश्मनों की आंख में नून-खटाई, मेरा बेटा साइंस क्यों पढ़ने लगा ? उस के बाप के यहां क्या कमी है ?"

नैमी ने समझाया—"मालकिन, यह ज़माना ही साइंस का है। साइंस से दौलत बढ़ती है। बड़े-बड़े रोजगारों में हिसाब-किताब, बहीखाते की जरूरत होती है। बड़े-बड़े व्यापारी दूर-दूर मुल्कों से कारोबार करते हैं। आज हमारी कौम को ऐसे व्यापारियों की जरूरत है जो विलायत से व्यापार कर सकें, विलायत जा सकें !"

बेगम नाराज हो गयी—"क्या बकते हो तुम, मेरे बेटे के यहां बीसियों पढ़े-लिखे नौकर होंगे। मेरा बेटा पैसा देगा तो तुम्हारे साइंस वाले उस की जूतियां उठायेंगे !"

बेगम ने बेटे को गोद में उठा लिया और भीतर के आंगन में चली गयी।

नसरतुल्ला ने एक बात बचपन से ही बहुत अच्छी तरह से समझ ली थी कि सब लोग, खास करके उस के माता-पिता उसे रिझाने और सन्तुष्ट करने के लिए ही थे। उसे किसी की चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। सब कुछ उस का था, सब उस के दास थे। नसरतुल्ला को अपने पिता जरा नही भाते थे। वह उन के लाड़ और पुचकार से बहुत ऊबा रहता था।

नसरतुल्ला को सब ओर ऊब ही ऊब जान पड़ती थी। काम उस के लिये एक ही था, ऊब से बचने का यत्न करना। ऊब से बचने का उपाय था, पैसा उड़ाना। पैसा था उस के पिता का। निखट्टू पुत्र के प्रति पिता का प्यार घटने लगा। राव बेटे के लाड़-प्यार में रुपया बहाते जाने से हाथ खींचने लगा और फिर बहुत ही कंजूस बन गया। सेठ को अपना इकलौता पुत्र अपने भाग्य और दुर्भाग्य का अभिशाप जान पड़ने लगा।

नसरतुल्ला के कई शत्रु थे। सब से अधिक वह डरता था कल्लू कुलमत से। कुलमत नामी जुआरी था। उस के बराबर पांसा फेंकने वाला दूसरा नहीं था।

नसरतुल्ला बरसों इस आशा में रहा कि कल्लू कुलमत को जुए में नीचा दिखा के रहेगा, उस के कपड़े भी उतरवा लेगा पर उस की आशा पूरी नहीं हुयी। कुलमत को कोई हरा नहीं सका। विवाह की उमंग से नसरतुल्ला का दिल जरूर बहलता था। आखिर पिता ने उस की जिद मान ली। पिता बेटे पर कैसे जुलम करता···!

सप्ताह और बीत गया पर राव कुदरतुल्ला की हवेली में कुहराम शांत नहीं हुआ।

दो वर्ष पहले हवेली के बड़े आंगन के एक ओर, दो कमरे का एक छोटा मकान बनवा दिया गया था। कमरों की दीवारों पर नमगां के सुन्दर कसीदा कढ़े गब्बे लटका दिये गये थे। सन्दूकों में शाल-दुशाले भर दिये गये थे। हवेली में पक्के पोखरे के किनारे बैठी स्त्रियां रजाइयां और गद्दे सीती रहती थीं। मखुनिया मखसूम बाज़ार से कपड़ा, रुई, धागे-डोरे पहुंचाता रहता था। बेगम के कमर से दोहरे हो गये शरीर में नयी शक्ति आ गयी थी। उस के पांव धरती पर नहीं पड़ते थे। इस घर से उस घर में, इस आंगन से उस आंगन में फुदकती फिरती थीं। हवेली में मेहमानों का तांता बंधा रहता था। रात तीसरे पहर तक हवेली में प्रकाश बना रहता था।

दोपहर में बहुत गर्मी हो जाती तो नसरतुल्ला अपने नये, सजे-बजे मकान में चला जाता। रेशमी गद्दे पर तकिया बगल में लिये करवट से लेट गया। मखुनिया उस के सामने सूखी खुरमानी और बादाम रख जाता। नसरतुल्ला खुरमानी या बादाम मुंह में चुगलते हुये दूल्हा बनने की कल्पना में डूब जाता।

आधा आंगन उसे मिल गया था। आधा आंगन ही क्या, पूरी जायदाद—आंगन, हवेली, बाग और मखुनिया भी तो आखिर उसी के होने वाले थे। नसरतुल्ला के मन में आता वह किसी पर हुक्म चलाये :

"ऐ अम्मा!" नसरतुल्ला ने डांट दिया, "हमारे बूट दे जाओ!"

नसरतुल्ला फिर कल्पना में डूब कर फर्श पर बिछे नर्म कालीन को सहलाने लगा···मेरी बीबी नंगे पांव इस कालीन पर चलेगी। उसे दिखायी देने लगा—बहू शरमाती हुयी आयेगी। अपने कोमल मीठे स्वर में कहेगी—सुनो तो एक बात कहुं···?

नसरतुल्ला ने बशारत का चेहरा कभी नहीं देखा था परन्तु अपने विश्वास में बशारत के प्रेम में अपने आप को खो चुका था।

बसंत के दिनों की बात थी। जाड़ों की शेष बरफ पिघल-पिघल कर पनचक्की की कूल गंदले पानी से खूब भरी हुयी थी। नसरतुल्ला कूल के पास से गाड़ी पर जा रहा था। कूल पर उसे दो लड़कियां दिखायी दी थीं। छोटी लड़की के उघाड़े सिर से दो लम्बी-लम्बी चोटियां लटकी थीं। उस की आंखें भय से फैल गयी थीं। वह कूल में बहते जाते एक गेंद की ओर हाथ उठा कर चिल्ला रही थी :

"बहना! डूब रहा है, डूब रहा, पकड़ो-पकड़ो!"

बड़ी लड़की सिर पर ओढ़ी बण्डी में अपना मुंह छिपाये थी। उसने झटपट अपनी सलवार घुटनों से ऊपर खींच कर, कुर्ता सलवार के कमरबन्द में खोंस लिया और कूद कर गेंद निकाल लायी। नसरतुल्ला को लड़की के भीग कर चिपटे हुए कपड़ों में से लड़की के सुघड़, स्वस्थ शरीर और भीग कर धूप में चककती गोरी-गोरी पिंडलियों की झलक मिल गयी थी। नसरतुल्ला का शरीर सिहर उठा था।

कई दिन बाद जुए के अड्डे में लड़कियों की चर्चा हो रही थी। दलाल तुर्दिमत भी मौजूद था। पियक्कड़ उमर ने कटाक्ष करके कहा :

"साबिर मजूरे की लौंडिया देखी है किसी ने ? अभी चौदहवां लग रहा है पर क्या नूर चढ़ा है, बिलकुल सेब जैसे गुलाबी गाल बिलकुल हूर ! अमां, रेशम का गद्दा हो और ऐसी हूर बगल में। जन्नत का मज़ा आ जाये !"

तुर्दिमत ने कटाक्ष से होंठ चाट कर कहा—"देखो, किस के नसीब में आती है !"

नसरतुल्ला की आंखें लाल हो गयीं। उस ने दोनों की तरफ घूर कर डांट दिया—"चुप, ज़बान खींच लूंगा !"

नसरतुल्ला भावी दुलहन की याद में तड़फ रहा था। उस का आग्रह पिता ने मान लिया था। अब आश्वासन था कि बशारत उस की ही थी। उस का स्वप्न पूरा होने में कोई सन्देह नहीं रहा था। बशारत उसे मिल ही गयी थी। अब तक नसरतुल्ला की मां उस के संकेतों पर नाचती थी। अब सेवा के लिये बहू भी आ रही थी। उस हवेली में परम्परा से यही क्रम चला आ रहा था।

साबिर की विधवा अनाखां के यहां अभी तक सम्बन्ध के लिये कोई संदेश नहीं भेजा गया था। इतने बड़े रईस के यहां ऐसी बात की क्या चिन्ता होती, उन्हें क्या जल्दी थी ? लड़की की मां ने लोगों से ऐसी सम्भावना की चर्चा सुनी होगी तोत ड़प रही होगी...। दिन-रात खुदा से दुआ मांग रही होगी कि यह काम बन जाये। घटक जायेगा तो उसे बहिश्त के फरिश्ते की तरह सिर-आंखो पर लेगी।

नसरतुल्ला कल्पना में डूब जाता तो उस के होठों पर मुस्कान आ जाती : · गरीब विधवा सास सुनेगी तो खुशी से पागल हो जायेगी। अल्लाह गरीबी का भी ख्याल करता है, जिस को चाहे बना दे। गरीब विधवा का कहीं दिमाग ही न फिर जाय .. लड़की कुदरतुल्ला राव की हवेली में जा रही है। किसी गरीब को ऐसी उम्मीद कहां हो सकती थी ! गरीब विधवा का भाग चमक उठा है, उस की लड़की नसरतुल्ला की खिदमत करेगी। विधवा नसरतुल्ला की मां की खिदमत में रह जायेगी।

नसरतुल्ला के मन में एक चिन्ता भी थी। उसे रुपये की बहुत जरूरत आ पड़ी थी। वह कल्लू कुलमत से पांसा खेलने वाला था। बहुत जोर की पकड़ होने वाली थी। बहुत जबरदस्त दांव लगने को था। राव से मांगने की हिम्मत नहीं हो रही थी। विवाह की तैयारी में बहुत रुपया लग रहा था। पहले भी राव से पैसा निकालना होता था तो सौ बहाने करने पड़ते थे, खुशामदें करनी पड़ती थीं, गिड़गिड़ाना पड़ता था तब कहीं थोड़ा-बहुत मिलता था।

नैमी ने नसरतुल्ला को उधार देने का विश्वास दिलाया था। नैमी रुपया तो क्या देता, सदा नसीहतें दे-दे कर कान-सिर खाता रहता था। बेईमान ने भरोसा दे दिया

था कि स्कूल के लिये जमा हुयी रकम उधार दे देगा लेकिन धुत्ता दे गया। कसम खाने लगा—कोई चुड़ैल जुलैखां सब रकम उठा ले गयी। उस की जान ही बड़ी मुश्किल से बची। बेईमान बकता है, इतनी रकम कोई औरत को दे देगा! नसरतुल्ला बहुत परेशान था, रकम मिल जाती तो कल्लू कुलमत का मिजाज़ ठीक कर देता।

असाका के कल्लू कुलमत की बड़ी दहशत थी। पांसा फेंकने में उस का जोड़ नहीं कुल था। नसरतुल्ला उसे पछाड़ पाता तो दुनिया भर में उस की धाक बंध जाती।

कल्लू कुलमत जिस शहर में पहुंच जाता, रईसज़ादे घबरा जाते थे। शहर की इज्ज़त का सवाल हो जाता। उस के मुकाबले में कोई न आता तो शहर की नाक कट जाती। कुलमत का कहीं भी पहुंच जाना शहर के बांकों के लिये मुसीबत थी।

हफ्ता भर पहले ही दलाल तुर्दिमत कुलमत की चर्चा कर रहा था—छत तक उछाल कर इस सफाई से पांसा फेंकता है कि मजाल जो बांह जरा उठ जाये। उसी प्रसंग में तुर्दिमत ने कहा था, कुलमत ने निमांचा के राव के साहबज़ादे नसरतुल्ला का भी जिक्र किया था—नसरतुल्ला ने निमांचा की नाक रख ली है। शहर के दूसरे किस रईसज़ादे में दम था कि कुलमत के सामने आता? कोई हिम्मत भी करता तो नसरतुल्ला उसे अपने से आगे कैसे बढ़ जाने देता। लाहौलबिला, शहर भर में खबर फैल जाती कि नसरतुल्ला कुलमत से डर गया। इस से बड़ा अपमान और क्या होता…! कल्लू जुआरी उस का नाम यों थोड़े ही ले रहा था!

नसरतुल्ला को अगर किसी मनुष्य से ईर्ष्या थी तो कल्लू कुलमत से। नसरतुल्ला अपने बराबर कभी किसी को समझता तो ईर्ष्या का प्रश्न हो सकता था। कल्लू कुलमत की ऐसी धाक से लड़के का मस्तिष्क खौल उठा था।

नसरतुल्ला अपने कमरे में गद्दे पर लेटा, चेचक के दानों से छिदे चेहरे से पसीना पोंछता हुआ सोच रहा था—इस कुत्ते नैमी ने बहुत धोखा दिया, अब क्या उपाय हो?

नसरतुल्ला के बूट लिये बेगम भीतर आयी। बेटे का चेहरा देख कर उस की चिन्ता भांप गयी। मां का मन घबरा गया। बेटे पर पिता के अत्याचार के लिये उसे बहुत दुःख हुआ—लड़का इतना परेशान है, बाप को ख्याल भी नहीं…

नसरतुल्ला ने घुटने तक ऊंचे बूट में पांव डाल कर बहुत जोर से खींचा। लगा कि बूट की सींवन उधड़ जायेगी। बूट पहन कर खड़ा हुआ तो एक और फुंकार छोड़ी। चेहरे से लग रहा था, मार बैठेगा। बेगम का दिल डर के मारे बैठा जा रहा था। वह पांव दबाये कमरे से निकल गयी।

नसरतुल्ला हवेली से निकल कर बाज़ार में आया और एक गली में मुड़ गया। अपने नित्य बैठने के स्थान 'बिनौले वाले हमाम' (बिनौले की आंच से गरम स्नान-गृह) में पहुंच गया। बाप-दादा की कमाई उड़ाने वाले, शहर के बांके रईसजादों की बैठक

यहां ही जमती थी ।

नसरतुल्ला के जवान दोस्त बड़े हौंसले वाले और खुशमिज़ाज थे । हवेली में तो जैसा राव खुद था, वैसे ही मेहमान भी आते थे । सदा बाजार-भाव, किफायत और रुपया जोड़ने की बातें, आपस में एक-दूसरे की जेब काटने के लिये तैयार ! यह सब सुन कर जवान को बड़ा कोफ्त होता । उस के लिये वैसी बातें और संगति असह्य थी । पिता के अतिथियों के साथ बैठना पड़ जाता तो गूंगा-बहरा बना रहता । उन ऊल-जलूल बातों और मामलों से उसे कोई मतलब नहीं था ।

राव कुदरतुल्ला का दिल चिन्ता से ऐसे बैठा जा रहा था मानो क़यामत सिर पर आ गयी थी । बिलकुल बौखलाया रहता । उस के हर धन्धे में कोई न कोई गड़बड़ पैदा होती जा रही थी । राव ने अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया था और फिर किसी तरह पांव जमाने का यत्न कर रहा था । नसरतुल्ला को इन सब बातों की न कोई खबर थी न परवाह ही थी । कुछ बरस पहले राव ने तुर्किस्तान ट्रेडिंग कम्पनी में पत्ती ले ली थी । उसे लाखों के लाभ की आशा थी परन्तु दूसरे बड़े-बड़े सौदागरों ने मिलकर उसे कुचल डाला था । नसरतुल्ला को इस सम्बन्ध में क्या मालूम होता ? इस के बाद राव ने नैमी की मार्फत तिकड़म करके सोवियत सरकार को माल देने का ठेका ले लिया था । आशा थी कि इस तरह तुर्किस्तान के व्यापारियों से उठायी हानि को पूरा कर सकेगा परन्तु उस में भी निराशा हुई । राव को लग रहा था कि वह अथाह खायी में गिरा जा रहा था ।

नसरतुल्ला को न तो कोई परिवर्तन दिखायी दिया था और न उसे पिता के संकटों का परिचय और चिन्ता थी । सोवियत सरकार कायम हो जाने से भी उस के लिये कोई अन्तर नहीं आया था । अब भी राव और साहूकार मौजूद थे । खर्च के लिये पैसा था । अलबत्ता शहर के बाजार और गलियों में कुछ दूसरी रंगत जरूर दिखाई देती थी । उघाड़े मुंह लड़कियां और स्त्रियां दिखाई दे जाती थीं । नसरतुल्ला के लिये तो यही दिल-बहलाव था । इस परिवर्तन का कारण नसरतुल्ला क्या सोचता ? सोचने का रोग उसे था ही नहीं ।

नसरतुल्ला मित्रों की गप्पबाजी में भी कभी कुछ विचित्र बातें सुन लेता था । परवाह न करने पर भी कई नये शब्द सुनाई दे जाते थे—क्रान्ति, सोवियत, गरीबों की सरकार ! ऐसे शब्दों से क्षण भर के लिये नसरतुल्ला को भी विस्मय और कभी आतंक अनुभव हो जाता परन्तु राव की महफिल और चर्चा मूलतः दो भिन्न संसार थे । नसरतुल्ला को अपनी ही महफिल में सांत्वना मिलती थी । अपने मित्रों में बैठ कर वह वह दुश्चिन्ताओं से मुक्त और निर्द्वन्द्व हो जाता था ।

बिनौले वाले हमाम में कदम रखते ही नसरतुल्ला के कान में मित्रों की चुहल और कहकहों की गूंज पड़ती और उस की सब चिन्तायें मिट जातीं। वह निश्चिन्त, स्वच्छन्द उल्लास से उमंग उठता। यहां कोई बाधा नहीं थी। केवल जेब में पैसा चाहिये था—शराब, शुगल और दोस्तों की कमी नहीं थी। किसी का दिमाग ही फिरा हो तो दूसरी बातें सोचे...। जुये का अड्डा तम्बाकू के धुयें और शराब पिये दोस्तों की सांसों से गरमाया रहता था। वहां पहुंच कर नसरतुल्ला पर उन्माद सा छा जाता। वहां दाम दे सकने पर सब कुछ मिल सकता था। नसरतुल्ला वहां कभी कहकहों में और कभी तन्द्रा में खोया रहता।

बिनौले वाला हमाम बाज़ार से हटकर चारबाज़ार मुहल्ले की एक गली में था। नसरतुल्ला ने आगे-पीछे नज़र दौड़ायी और जूतों की चर्र-मर्र दबाये रखने के लिये पंजों के बल, दबे पांव, अधखुले दरवाज़े से भीतर हो गया। नसरतुल्ला भीतर की आहट लेने के लिये पल भर रुका। कुछ सुनायी नहीं दिया। समझ लिया, अभी दूसरे लोग नहीं आये थे। वही सब से पहले पहुंचा था। दलाल ड्योढ़ी में ही दिखायी दे गया। वह अद्धे रेशम का चोगा पहने था। नसरतुल्ला दलाल के साथ बैठक में हो गया। तुर्दिमत ने कमर दुहरी कर नसरतुल्ला को अभ्यर्थना में सलाम किया। कमरा अभी सूना था, कल्लू कुलमत के आगमन की खबर शहर में फैल गयी थी। किस रईसजादे का हाथ भर का कलेजा था कि अखाड़े में उतरता! चार-पांच बांके कौतूहल मे आये जरूर थे परन्तु भीतर कदम रखने की हिम्मत नहीं पड़ी। दरवाज़े से झांक कर ही लौट गये और हमाम के आसपास की गलियों में मंडरा रहे थे।

दूसरों के भय से नसरतुल्ला को भी आतंक तो जरूर अनुभव हुआ परन्तु फिर ख्याल आया, शायद हार ही जाय इसलिये जितने कम लोग रहें अच्छा।

तुर्दिमत ने फर्श में बनी पक्की फड़ को झाड़-पोंछ कर खूब चमका दिया था। शेष जगह अब भी मैली और घुटी-घुटी सी हुयी थी। उन लोगों को वहां उसी तरह के वातावरण में स्वाभाविक लगता था, आराम मालूम होता था। कमरे की छत के साथ तम्बाकू के धुयें के बादल चढ़े रहते थे। छत के साथ रोशनदान में नीला कांच था। कमरे में एक ही खिड़की फर्श से हाथ भर ऊपर थी। खिड़की पिछवाड़े के आंगन में खुलती थी। आंगन, हमाम के ईंधन के लिये बिनौले के बोरों से अटा हुआ था। कमरे में ईंटों का फर्श था। फर्श के बीचोंबीच जहां खिड़की से रोशनी पड़ती थी, एक चिकनी सिल चमचमा रही थी। सिल, घिस-घिस कर टकसाल से नये निकले सिक्के की तरह झलमला रही थी। चारों दीवारों के साथ-साथ चटाइयों पर गद्दे, तकिये लगे हुये थे।

तुर्दिमत ने तम्बाकू में थोड़ी चरस मिलायी। बहुत सावधानी से हुक्का ताजा करने लगा। नसरतुल्ला की ओर आंख उठा कर गद्गद् स्वर में बोला—"सरकार, आप

की बदौलत इस शहर की इज्ज़त बच गयी नहीं तो नाक कट गयी थी ।"

तुर्दिमत ने हुक्के से दो कश खींचकर चिलम को चेता दिया और निगाली नसरतुला के हाथ में देकर बोला—"सरकार, कल्लू कुलमत का नाम सुनते ही सब की हवा खिसक गयी ! सब ऐसे लापता हो गये जैसे गधे के सिर से सींग ! कल्लू है भी बड़ा जालिम ! उस से दांव लगाने के लिये हाथ भर का कलेजा चाहिए ! सच कहता हूं सरकार, अल्लाह कसम, शेर की तरह आंखें लाल हो जाती हैं उस की…" तुर्दिमत सम्भला, मुंह में आयी बात निगल ली, सोचा— यों ही किसी की हिम्मत नहीं पड़ रही है । यह लौंडा भी डर कर चम्पत न हो जाये । उसे उम्मीद थी, कुलमत आया है, बहुत बड़े-बड़े दांव लगेंगे, खूब नाल मिलेगी पर यहां तो उजाड़ पड़ा था ।

तुर्दिमत ने बात बदलने के लिये खम ठोंका—"और किस में दम है कि कुलमत के सामने आये ? पर खेल का क्या है, कौन कह सकता है क्या हो जाय ! यह तो हिम्मत और किस्मत का खेल है । जो खेलेगा नहीं जीतेगा क्या ? शहर के तो आप ही शेर हैं । जिस में खेलने का हौसला है, वही जीत भी सकता है । कुलमत तो कह रहा था कि पांसा छोड़ कर पत्तों में आ जाये । पांसे में कोई उस के सामने आता ही नहीं । क्या जमाना आ रहा है, लोगों में पांसा खेलने का हौसला ही नहीं रहा पर साहब, पांसा है शाही खेल । लोगों ने खामुखा उड़ा दिया है कि कुलमत कभी दांव नहीं हारा । बस उस की तारीफ तो यह है कि दांव लगाने से डरता नहीं, कभी पीठ नहीं दिखायी उस ने । जेब खाली हो जाय तो कपड़े-जूते दांव पर लगा दे, अपने हाथ-पांव दांव पर लगा दे; नाक-कान, अपना सिर तक दांव पर लगा दे ! खेल में ऐसा मस्त हो जाता है कि न कुछ सुनता है न देखता है । उस का खेल देखने लायक है । कहता है, खाट पर ऐड़ियां रगड़-रगड़ कर मरा तो जुआरी क्या हुआ ! सरकार मालूम है आप को, उस का एक ही काम है । उस के जोड़े का एक ही खिलाड़ी था—शोहमित । बेचारा मर गया, अल्लाह जन्नत बख्शे । इन दोनों का जोड़ होता था । एक दिन कुलमत सब कुछ हार गया । गांठ में कुछ नहीं रहा तो उस ने अपना कान दांव पर लगा दिया । किस्मत देखिये, फिर हार गया । उस ने छुरा लिया और बांया कान काट कर शोहमित के सामने…।"

तुर्दिमत के कान खड़े हुए, ड्योढ़ी की ओर कदमों की आहट थी । वह उछल कर जीने से ऊपर चला गया ।

कमरे में अब भी धुंधला ही था । हवा में हमाम में जलते बिनौलों की दम घोटती गन्ध थी । नसरतुल्ला को लग रहा था कि फैले हुये रक्त की गंध से उस का दम घुट रहा हो । दिल दहल-दहल जाता था जैसे किसी जाल में फंस गया हो । एक बार ख्याल आया—उठ कर भाग जाये । उठने को हुआ कि दलाल के लौटने से पहिले निकल जाये । जीने की ओर लपका परन्तु भाग न सका ।

एक ठिगना, इमली के तने के कुन्दे जैसा मोटा, मजबूत आदमी चुनौती में सीना ताने जीने से उतर आया। नसरतुल्ला, कल्लू कुलमत को राह देने के लिए एक ओर हट गया।

कल्लू कुलमत का चेहरा आबनूस की तरह काला था। उस्तरे से घुटी, लोटे जैसी खोपड़ी कन्धों पर ही जुड़ी हुई थी। गर्दन थी ही नहीं कि कोई पकड़ कर गला घोंट सके। बायें कान की जगह एक छोटी सूखी सी बोटी चिपकी हुयी थी। दायां कान बहुत बड़ा लगता था। कड़ी-कड़ी भौवों के नीचे बाज जैसी गोल-गोल क्रूर आंखें। माथा आंखों पर झुका हुआ। मुग्दर जैसी मोटी लम्बी बांहें घुटनों को छूती थीं। किसी के धक्के से उस का कुछ बिगड़ नहीं सकता था। अच्छे जवान आदमी पर उस का पंजा पड़ जाता तो छूट जाना खिलवाड़ नही था।

तुर्दिमत ने आदर से कमर दोहरी कर दोनों बांहें फैलाये, आदरणीय अतिथि को खातिर से दीवार के साथ गद्दी पर बैठाया।

कुलमत ने नसरतुल्ला की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। कुलमत के पीछे-पीछे अन्धा पियक्कड़ उमर पांव घसीटता बैठक में आ गया। उमर तांगा जोत कर रोज़ी कमाता था। शौक एक ही था—शराब का पर बात सीधी और बेलाग कह देता था। उमर जुआ नहीं खेलता था परन्तु उदार पिलाने वालों की आशा में रोज़ ही आ बैठता था। उमर अड्डे का विदूषक था। उस के बिना महफिल में रंग नहीं जमता था।

उमर ने नसरतुल्ला को सीने से लगा लिया। नौजवान को देख कर उस का दिल भर आया, आंखें भी भींग गयीं। नशे में लड़खड़ा रहा था। पांव सीधे नहीं पड़ रहें थे। बहुत गुस्सा आ गया था। गुस्से के मारे मुंह के कोने पर झाग आ गयी थी।

उमर ने नसरतुल्ला को सीने से लगा कर कहा—"तुम मुझे अपना भाई समझों। मैं मौजूद हूं, किसी ने तुम्हारी तरफ नजर तिर्छी की तो उस की जान ले लूंगा!…के खानदान को सात पीढ़ी तक कतल कर डालूंगा!…देखो दोस्त, नाराज मत होना!…न… न…नाराज हो गये?"

नसरतुल्ला को कुछ हौंसला हुआ।

कुलमत नजर झुकाये कुछ गुनगुनाया, होंठ भी हिलते नहीं जान पड़ते थे:

"कहो साहबजादे, कुछ खेलते-बेलते हो या छोड़ दिया? लोग कहते हैं, तुम्हारी दौलत का तो किसी को कुछ अन्दाज ही नहीं!"

उमर ने मुंह खोल कर कुलमत की ओर देखा और फिर इतनी जोर से कहकहा लगाया कि फर्श पर लोट गया।

नसरतुल्ला को गुस्सा आ गया—क्या बत्तमीजी है, न सलाम न दुआ। इतना मिजाज कि नज़र तक नहीं मिलायी, उल्टे मज़ाक कर रहा है। चुप रह गया, सोचा—बिना

जवाब दिये उठ कर चल दे और बेइज्ज़ती का जवाब दे दे परन्तु तुर्दिमत ने बहुत खातिर से उसे कुलमत के बराबर बैठा दिया।

उमर अपना पुराना गीत नाक से गुनगुनाने लगा।

"कागा उड़-उड़ जाइयो···!"

उमर बोलता गया—"सुभान अल्लाह, अल्लाह ने भी क्या कुदरत बनायी, क्या मज़ाक किया है, माशा अल्लाह ··हम तो ऐसे खुदा से मुनकिर हैं लेकिन भैया, सब कुछ उसी की कुदरत है। हम तो उसी की रज़ा के गुलाम हैं। हमने तो सब कुछ बाजी पर लगा दिया। हमारी बख्शवरी कौन करेगा! अरे, कुलमत शाह का क्या कहना हम तो इनके गुलाम हैं···"

उमर छत की ओर नशे से लाल आंखें उठा कर बोला—"वाह-वाह, क्या हीरे-जवाहरात चमक रहे हैं···वाह, भई वाह! हमारे तुर्दिमत की मिसाल दुनिया में नहीं, क्या महक आ रही है। नसरतुल्ला तो हमारे बिरादर हैं, उन के लिये तो हम जान दे दें ··।"

कल्लू कुलमत बोल उठा—"अरे भाई क्या कहना, शरीफज़ादा है।" और उसने हुक्के से खूब लम्बा कश खींच कर नसरतुल्ला के मुंह पर छोड़ दिया, "क्या समझते हो तुम, तुम्हारे बाप की जायदाद में रखा क्या है? अब है कितने दिन की!"

नसरतुल्ला को बहुत क्रोध आ गया। चाहता था, उठ कर चला जाय परन्तु उमर उसके कन्धे पर लुढ़क कर उस से लिपट गया:

"भाई जान, हम तो तुम्हारी इज्जत बाप की तरह करते हैं। तुम आलिम आदमी हो! क···क···कोई तुम्हारी तरफ आंख उठाये तो उस की आंख निकाल लूं। हम से नाराज नही होना। अरे, तुम्हें कौन नहीं जानता! थोड़ी बूज़ा (बाजरे की बीयर) लोगे? मैं मंगाऊं? तुम मालिक हो, मैं जा कर खुद ले आऊं। अबे तुर्दिमत जा, बुर्जी के यहां लपक कर जा। मालिक के लिये बूजा ले आ। उस के यहां बहुत ठंडी, बिलकुल बरफ जैसी रखता है।"

तुर्दिमत झपटता हुआ जीने से ऊपर चला गया।

उमर फिर अलापने लगा,

"महके चमेली की डाल ·रोवे भौंरा···।"

"ओ हो···ओ हो···हो हो!" उमर मस्तिाये बकरे की तरह बमियां उठा, "वाह ·· वाह, क्या हुस्न है! क्या परी है! क्या चाल है, जैसे बतासों पर नाच रही हो। क्या नज़र है कि सीने से पार हो गयी। हम तो तेरे इश्क में मर गये ··मर गये।"

उमर नशे में लुढ़क गया।

नसरतुल्ला का दिल आतंक से बैठा जा रहा था। पीठ पर ठंडा पसीना आ रहा

था। कल्लू कुलमत का सामना था, ज़बान सूख कर तालू से चिपक रही थी और बत्तीसी बंध गयी थी। मुंह से बोल फूटना कठिन हो गया था।

कुलमत ने बड़े ज़ोर से जम्हाई ली। नसरतुल्ला की ओर देख कर बोला—"तुम भी किसी लौंडिया से इश्क कर लो। उसी के फिराक में पड़े रहना और तुम्हारे बस का क्या है ?"

नसरतुल्ला ने दांत पीस लिये। उस का हाथ कमर में बंधी बसी की डोरी पर चला गया। बाप की तिजोरी से चुराये नोट बसी से खींच कर कुलमत के सामने फर्श पर डाल दिये।

कुलमत ने उड़ती-उड़ती नजर नोटों पर डाली और जाने क्या जादू किया कि पलक मारते उस के हाथ में पांसा था। पांसा उस की हथेली में से ही फूट पड़ा या उस की आस्तीन से सरक आया, कोई कह नहीं सका।

कुलमत जरा आगे झुक गया और हुक्के की निगाली से आधे नोट नसरतुल्ला की ओर सरका दिये—"घर लौटने के लिये तांगे, इक्के का भाड़ा तो रख लो !" और बड़ी उपेक्षा से कह दिया, "तुम्हारे जैसे रईसों के लौंडों से हम क्या खेलेंगे ?"

उमर की आंखें खुल गयीं। नींद में भी उस ने रुपया सूंघ लिया था ! नसरतुल्ला संभल भी नहीं पाया था कि पांसा उछला। उस के सामने सिल पर पर गिरा और वह उछल कर बैठ गया।

"तुम्हारा आया।" उमर उत्साह से चिल्ला उठा।

सत्ता आया था।

कुलमत ने उधर आंख भी नहीं की—"हम ने तो कौल कर लिया था कि इन रईसजादों से कभी नहीं खेलेंगे।"

पांसा फिर फेंका गया। सिल से उतरा और गिरा।

"सत्ता !" उमर की घिघी बंध गयी। उस का नशा उतर गया। वह उत्साह से नोट समेट-समेट कर गिन-गिन कर गड्डियां बनाने लगा।

नसरतुल्ला की पीठ पर ठंडे पसीने की धारें बह रही थीं—सत्ता आया था। सात हजार रूबल दांव पर लगाने थे। उस के सिर पर शैतान सवार था। वही तो उसे यहां ले आया था पर अब क्या कर सकता था ?

चौदह हजार रूबल की गड्डियां दांव पर रख दी गयीं। कुलमत की आंखों में ज़रा चमक आयी। इस बार उस ने हुक्के की निगाली से नोटों को नहीं छुआ। उस की जम्हाई और सुस्ती गायब हो गयी थी। उस ने पांसे को मुट्ठी में मल कर कमर सीधी कर ली

तुर्दिमत एक छोटी मश्क में बूज़ा लिये जीने से उतर आया। उमर ने आगे बढ़ कर एक प्याला भर लिया और एक ही सांस में चढ़ा गया और फिर बकने लगा।

नसरतुल्ला के पेट में बल पड़ रहे थे। उसे उमर की बकवास पर क्रोध आ रहा था परन्तु आंखें उस की कुलमत की ओर लगी हुई थीं। कुलमत भी नसरतुल्ला की ओर देख रहा था। उसकी आंखों में सचमुच खून उतर आया था।

तुर्दिमत ने झाग से उफनते प्याले खिलाड़ियों के सामने बढ़ा दिये। नसरतुल्ला ने प्याला एक ही सांस में पी लिया। उस का हाथ कांप रहा था, कानों में सायं-सायं हो रही थी, और आंखों के सामने गुलाबी-गुलाबी गर्द उड़ रही थी। उमर की आवाज़ कहीं दूर से आती जान पड़ रही थी :

"देखो मालिक, नसरतुल्ला साहब का ख्याल रखियेगा···किसी को नाराज़ करना ठीक नहीं है···।"

उमर के प्याले से नसरतुल्ला के गर्दन पर बूज़ा गिर पड़ी। वह बके जा रहा था—"साहबजादे दूल्हा बनने वाले हैं। राव की सब जायदाद के यही मालिक होंगे। खेल का मजा तो तब आयेगा।"

कुलमत के होंठ मुस्कान में तिरछे हो गये—"जब वह दिन आयेगा तब भी खेल लेंगे। शादी तो होनी चाहिये। उमर चौधरी तुम क्या कह रहे हो? हमने साहबजादे को कब नाराज़ किया? हम ने कुछ कहा? हम तो साहबजादे की बहुत इज्ज़त करते हैं।" कुलमत का स्वर गम्भीर हो गया।

कुलमत ने बूज़ा के दो घूंट लिये और प्याला एक ओर रख पांसा फेंका।

कुलमत दांव हार गया।

कुलमत ने दांव पर लगी नोटों की गड्डियां एक रूमाल में समेट दीं और रूमाल नसरतुल्ला को थमा दिया।

नसरतुल्ला का सिर चकरा गया—दलाल तुर्दिमत ठीक ही कह रहा था, कल्लू के अपना कान काट कर देने की बात जरूर ठीक ही होगी। इस के हाथ में शैतान रहता है। इस बार चूक गया। पांसे की तरह किस्मत भी तो पलटती है। इस तरह खेलने में क्या डर है! पीछे हटने की क्या जरूरत! अब पांसा नसरतुल्ला के हाथ आया।

नसरतुल्ला ने पीठ सीधी कर सीने पर से चोगा हटा लिया। पांसा उछाल कर नसरतुल्ला ने अपने भाग्य को पुकारा—"गार्तकम!" और जोर से सीना ठोंक लिया।

"फिर आपका!" उमर चिल्लाया।

नसरतुल्ला ने फिर पांसा फेंका—"गार्तकम!"

"फिर आप का!" उमर और भी जोर से चिल्लाया।

नसरतुल्ला के सामने दांव पर उस के रूमाल में बंधी रकम से दूनी रकम पड़ी हुई थी। उस का सिर घूम रहा था। वह कल्लू कुलमत से जीतता जा रहा था।

उमर ने दलाल की ओर कटाक्ष किया। दोनों ही समझ रहे थे। बिलौटा चूहे

को खिला रहा था, जैसे उस के पंजे में दम न हो और फिर सहसा उस पर अपना पंजा धर देगा।

पांसा कई बार हाथ बदल चुका था। कुलमत अब सर्तक हो गया था। बूज़ा के दो-तीन प्याले ले लिये थे। शाबास! शाबास! कह नसरतुल्ला का हौंसला बढ़ाये जा रहा था। दलाल और उमर भी हंस-हंस कर राव के बेटे का उत्साह बढ़ा रहे थे, कनखियों से कुलमत की ओर भी देखते जा रहे थे। कुलमत गम्भीरता से दायां कान खुजला रहा था। कमरे में काफी अन्धेरा हो गया था। तुर्दिमत ने एक मोमबत्ती जला दी।

खेल घंटे भर तक चला। सब रकम कुलमत के हाथों में पहुंच गयी थी।

नसरतुल्ला सन्न हो गया था, आंखें पथरा गयी थीं। उसे न कुछ दिखाई दे रहा था न वह कुछ समझ ही पा रहा था। बहुत बड़ी रकम उस के हाथों में आ गयी थी तब भी मन उस का दहल रहा था। आखिर सब कुछ खो बैठा था। उस का शरीर ऐसे कांप रहा था मानो जूड़ी का ज्वर आ रहा हो। कुलमत ने उसे खिलाखिला कर चित्त कर दिया था।

नसरतुल्ला के मस्तिष्क में मूढ़ता का कोहरा भर गया। सुध-बुध खो बैठा—कब हमाम में आया था और कितनी रकम हार गया था। उसे केवल फर्श पर पड़ा चमकता हुआ पीला पांसा दिखायी दे रहा था। कमरा पांसे की किल्ली पर चकरघिन्नी की तरह घूम रहा था। उस का सर्वस्व कुलमत भालू के पंजे में चला गया था। कुलमत का दिल न रोने-गिड़गिड़ाने से, न गाली-धमकी से ही हिल सकता था।

कुलमत ने सब रकम बटोर ली और उपेक्षा से कह दिया—"जायदाद-वायदाद के दांव पर हम नहीं खेलते।"

नसरतुल्ला गिर पड़ने की आशंका में कमरे के फर्श में अपने पंजे गड़ा देने का यत्न कर रहा था। उस के नाखुन फिसल जाते थे। खड़े हो सकने के लिये घुटनों में दम नहीं रहा था। मस्तिष्क में बूज़ा का झाग भरा हुआ था। उसे ख्याल आया—मुझे पिला कर ठग लिया।

नसरतुल्ला उमर की तरफ ज़ोर से गुर्राया।

उमर ने कुलमत को चुनौती दी—"मालिक अभी क्या है? समझते क्या हो? हमारा शेर तो अभी अखाड़े में उतरा है। अभी तुमने साहबजादे के हाथ देखे क्या हैं? समझते क्या हो? उन का तो वह हौंसला है कि बहू तक को दांव पर लगा दें!"

नसरतुल्ला उठ खड़ा हुआ तो कदम लड़खड़ा रहे थे, आंखों से खून टपक रहा था, क्रोध के आवेग से गला घुट रहा था पर विवश था। उसने जीने की रेलिंग का सहारा ले लिया और संभल-संभल कर ऊपर चढ़ गया।

नसरतुल्ला हमाम से निकला तो अन्धेरी गली में अकेला था। नशे से सिर चकरा जाने के कारण पांव डगमगा रहे थे। वह अंधेरे में दीवालों का सहारा ले-लेकर चल रहा था। रास्ता भी पहचान नहीं पा रहा था।

चौराहे पर पहुंचा तो सहारे के लिये गली के सिरे पर खड़े तार के खम्भे से सीना सटा कर खड़ा हो गया। याद करने का यत्न किया—खेल कैसे आरम्भ हुआ था परन्तु कुछ याद न आ सका। सिर काबू में नहीं था। आंखें फाड़-फाड़ कर गली और बाज़ार को पहचानने का यत्न किया, केवल कनकटे कुलमत का काला चेहरा ही दिखायी दिया। उमर का चेंचियाता हुआ स्वर सुनायी दिया—बहू तक को दांव पर लगा दें...।

नसरतुल्ला ने दांत पीस लिये—लगा दूंगा, बहू को भी दांव पर लगा दूंगा। किसी को क्या मतलब है! किस की धौंस है? मैं बाप को दाँव पर लगा दूंगा।...बेईमान दगाबाज़, सुअर...! देखूंगा तुझे! खून पी जाऊंगा तेरा...!

हमाम में कल्लू कुलमत ने किसी से ज्यादा बात नहीं की। हमाम से निकला और चुपचाप नेक मुसलमान मुहम्मद सैयद चायवाले के मकान की ओर चला गया।

आठवां परिच्छेद

कुमरी जनाना क्लब की सभा से नाराज़ हो कर चली आयी थी। उस के बाद अनाखां कई दिन उस से मिल नहीं पायी। कई स्त्रियां अब भी कुदरतुल्ला के कारखाने में काम कर रही थीं। अनांखा को उन लोगों के बारे में मालूम भी नहीं हो सका था।

ज़ुलैखां ने अनाखां को उलाहना दिया—"उन लोगों को भरोसा दिला कर ऐसे हाथ खींच लेना चाहिये था? तुम उन के घर ही चली जातीं!"

कुमरी निमांचा की एक खण्डहर सी कुठरिया में रहती थी। आगन की कच्ची दीवारें जगह-जगह से गिरी हुयी थीं। कुमरी ने बरामदे के आगे पतेल का पर्दा खड़ा कर लिया था।

कुमरी लोहे की कालिख मढ़ी केटली को खंगाल रही थी। दोनों बच्चे चटाई पर बैठे थे। अंजीरत—शुक्र अल्लाह दादी—कुछ परे हट कर छांव में बैठी हुई थी।

अनाखां ने बराम्दे में कदम रख कर बुरका उतारा तो अंजीरत उसे देख कर तुरन्त खड़ी हो गयी—"आ, अनाखां बिटिया, कैसे आयी!" बुढ़िया ने होठों-होठों में कुछ पढ़ा और अपने कंधों पर दो-तीन बार फूंक लिया—शुक्र अल्लाह!

अनाखां ने वीरान, उदास आंगन में नज़र डाली—धरती घाम से झुलसी लगती थी। कोई पेड़ या दूब की पत्ती नहीं थी। आंगन के बीचों-बीच ढीले, टुटहे चर्खे के पास गठड़ी भर रुई पड़ी हुयी थी। टीन के टूटे से डिब्बे को मूंज की रस्सी से बांध कर सम्भाला हुआ था। डिब्बे में चर्खे के कते सूत की दो-तीन अट्टियां पड़ी हुईं थीं।

कुमरी बहुत दुबला गयी थी, आंखें गहरी धंस गयी थीं। होंठ झुर्रियों से सिकुड़ गये थे और दांत होंठों से बाहर निकल आये थे। सिर पर केश अधिक नहीं थे, उन में सफेदी की डोरियां खूब स्पष्ट हो गयी थीं। अनाखां के मन में टीस उठ आयी। बेचारी अकेली है, कोई मदद करने वाला नहीं।

"कुमरी बहिन, काम पर नहीं जाती ?"

"जाती क्यों नहीं। आज ज़रा तन ठीक नहीं था। बैठो, बैठो ! बड़ी मेहरबानी की, दर्शन तो दिये। हमने तो कहा, हमें भूल ही गई होगी। बैठो न !"

"घर पर भी काम करती हो ?"

"बन पड़ता है तो थोड़ा-बहुत करती ही हूं। राव के कारखाने में अब काम ही क्या रह गया है। उस का कपड़ा कोई खरीदे भी ! वह भी अब, काम करो न करो, कुछ नहीं कहता। काम नहीं है तो मजूरी क्या मिलेगी ?चाय बना रही हूं। खाने को तो कुछ है नहीं।" कुमरी अपनी फटी जूती घसीटती चूल्हे की ओर चली गयी।

अंजीरत दादी आंचल से हवा लेती हुई बोल उठी—"शुक्र अल्लाह का ! बहू, तू तो किस्मत को कोसती रहती है। हम तो कहते हैं, शुक्र है अल्लाह का ! हम गरीब औरतों का क्या है, जो सिर पर आयेगा झेलना ही होगा।"

अनाखां कुमरी के बच्चों की ओर बढ़ गयी। दोनों लड़के उठ कर खड़े हो गये। दोनों की ही कमर में पाजामा नहीं था। पेट फूले हुये थे, मैले चिथड़े से कुर्ते कमर से ऊपर ही थे। दोनों के चेहरे पसीना और धूल जम कर काले हो रहे थे।

अनाखां ने बड़े लड़के से पूछ लिया—"बेटे, मुंह क्यों नहीं धोता ?"

"अरे, गरीब यतीमों का मुंह कौन धोता रहता है !" अंजीरत ने लड़के की ओर से उत्तर दे दिया।

बात अनाखां को लग गयी। उस की बच्चियों का भी तो पिता नहीं था।

अंजीरत कहती गयी—"बच्चे न हों तो बुरा, बच्चे हों तो बुरा। औरत की तो सब तरह मुसीबत है।"

"दादी शुक्र अल्लाह, तुम क्या उज्र कर रही हो ?तुम तो अल्लाह का शुक्र करो !" अनाखां ने अंजीरत को उलाहना दिया और बराम्दे में बैठ गयी।

कुमरी मक्का की एक रोटी लायी। रोटी तोड़ कर दोनों बच्चों और अंजीरत को दे दी।

पतेल के झीने पर्दे में से अनाखां पर धूप छन रही थी। कुमरी ने धूप रोकने के लिये चटाई उठा कर पर्दे के साथ खड़ी कर दी।

अंजीरत के हाथ कांप रहे थे। उस ने रोटी का एक टुकड़ा तोड़ कर मुंह में रख लिया और जबड़ों में कुचलने लगी। रोटी का चूरा उस के कुर्ते के आंचल पर गिर गया था। उसे चुनते हुये बोली—"हाय अल्लाह, देखो तो लोगों ने कितना झूठ उड़ा दिया है। लोग तो कह रहे हैं—अनाखां राव के कारखाने से काम छोड़ कर गयी तो उस ने अपना बुरका और नकाब जला दिये, नाई के यहां जाकर बाल कटा डाले। होंठों पर सुर्खी लगाये बाजारों में घूमती फिरती है। हम ने सुना तो हम ने भी सच मान लिया था। मैं बूढ़ी औरत क्या जानूं! कहा—सच ही कहते होंगे। तुम्हें देखा तो मैं तो पहचान नहीं सकी! शुक्र अल्लाह का। हाय कैसे झूठे लोग हैं!"

अनाखां गम्भीर हो गयी—"दादी तुमने किस से सुना है, कौन कहता है?"

"और कौन कहेगा, वही औलिया–हजरत की बुढ़िया।" कुमरी ने बताया "चहल्लुम के बाद उस ने बहुत बड़ी दावत दी थी न। गेहूं के दलिये का कितना बड़ा देग बना था, सुभान अल्लाह! मुहल्ले भर के लोग खा गये तब भी खतम नहीं हुआ। जानती हो, गेहूं का दलिया तो बहुत मुतबर्रिक चीज़ है। दावत में मैं भी चली गयी थी। दादी की तबियत ठीक नहीं थी और छोटा लड़का भी पन्द्रह दिन से बीमार था। पीला पड़ गया था। दादी को भी ले गयी थी।

"औलिया बुढ़िया ने देखते ही कह दिया—लड़के को किसी ने कुछ कर दिया है। लड़के को ही नहीं बुढ़िया पर भी नज़र असर है। उस ने बच्चे के सिर से टोपी उतार ली और बोली देख लो, बच्चे का तावीज़ सूख गया है। तब मुझे याद आया—बच्चे की टोपी एक रात रीठे के पेड़ के नीचे पड़ी रह गयी थी। तुम जानती हो, रीठे के पेड़ पर रात में जिन्नात और बुरी बलायें बसेरा करतीं हैं। औलिया ने पुराना तावीज़ टोपी से फ़ाड़ कर आग में डाल दिया और नया तावीज़ बना दिया। बच्चे के मुंह में थूक दिया। मैंने उस के पांव पकड़ लिये। अल्लाह की कुदरत! बच्चे के चेहरे पर एकदम रौनक आ गयी।"

"और फिर क्या हुआ?" अनाखां ने पूछा।

"फिर तेशोकोप्कोक से एक औलिया आयी हुई थी, वह खेलने लगी ..।"

"मैं पूछ रही हूं, उन्होंने कहा क्या?" अनाखां ने टोक दिया।

"वह औलिया जो तेशोकोप्कोक से आयी थी, चकरघिन्नी की तरह खूब घूमी, खूब घूमी, घूमती ही गयी। दूसरी औरतों ने बाहों से पकड़ लिया तो उस का चेहरा बिलकुल पीला हो गया और धरती पर गिर पड़ी। मुंह से झाग निकल रही थी। उस ने चारों तरफ देखा और बोली—'फकीर बखावतदीन ने कहा है—ऐ नादान औरतों, दगाबाज

लोगों से होशियार रहो, गुनाहगार लोगों से होशियार रहो। शैतान बेवा औरत के कंधे पर सवार हो जाता है ।"

"क्या मतलब था उस का ?" अनाखां ने पूछ लिया ।

"उस ने कहा कि वेवायें गुमराह, गुनाहगार हो जाती हैं । उनके गुनाहों की सजा सब को झेलनी पड़ती है । शहवत (वासना) का खलल जवान और बूढ़े सब का दिमाग खराब कर देता है । वेवा औरत के जिस्म में शैतान घुस जाता है तो उस पर शहवत के बुखार की गर्मी चढ़ जाती है और वह मर्द की चाहत से दौड़ती है…"

कुमरी ने मुंह पर हाथ रख कर कहा—"मैं क्या जानूं, मैं जाहिल औरत ! या अल्लाह, हमें गुनाह और मुसीबत से बचा !"

दादी शुक्र अल्लाह के आंसू बह आये । वह हिचक-हिचक कर रोने लगी ।

अनाखां मन के दर्द को मुस्कान से दबा कर बोली—"दादी, रोती क्यों हो ?कुछ बताओ तो, मुझे भी तो कुछ बताओ ! मैं भी तो कुछ समझूं ?"

अंजीरत बहुत आतंक से धीमे-धीमे बोली—"तेशोकोप्केक के फकीर ने कहा, वेवाओं के गुनाह मर्दों पर भी सवार हो रहे हैं । मर्द अपने बीबी-बच्चों को घर से निकाल-निकाल कर बारिकों में भेज रहे हैं । इतनी औरतें शहवत से पागल होकर बेगैरत हो गयी हैं कि उन्हें काबू में रखने के लिये सरकार ने जनाना सहकारी बना दी है । वहां सरकार घरों से भागी औरतों को खाने को देती है और कैद रखती है । दुनिया गारत हुयी जा रही है । फकीर ने कहा, अब फिर औरतों पर मार पड़ना जरूरी है । जो दीनदार लोग अपने मजहब के पक्के हैं, अपनी बीवियों को मार-मार कर सीधा कर देंगे इसीलिये मैं तो कहती हूं, शुक्र अल्लाह का !"

कुमरी भय से गर्दन झुकाये निश्चल बैठी हुयी थी, उसे अनाखां से आंख मिलाने का साहस नहीं हो रहा था । चूल्हे पर रखी केटली से पानी उफन-उफन कर आग में गिरने लगा । कुमरी ने बहुत गन्दा चिथड़ा लेकर केटली चूल्हे से उतारी और चाय बनाने लगी । उसे बराम्दे में आने का साहस नहीं हो रहा था ।

अंजीरत दादी दोनों हाथों से सिर को पकड़े आतंक से कहे जा रही थी, "या अल्लाह, क्या बेगैरती है ! दुनिया का क्या होगा ?"

अनाखां सोच रही थी—सचमुच कितनी शर्म की बात थी, दुनिया का क्या होगा ? वह उठ खड़ी हुयी । अपना बुरका हाथ में ले कर बोली— 'कुमरी मौसी, तुम ऐसी-ऐसी बातें सुनोगी, उन्हें सच मानोगी तो हम चले यहां से, फिर हमारा यहां क्या काम !"

कुमरी गर्दन नहीं उठा सकी, रूंधे हुये गले से बोली—"अनाखां बहिन, मैं…" वह और कुछ कह नहीं सकी ।

अंजीरत ने आंख बचा कर कहा—"अनाखां बिटिया; मैं क्या जानूं ? अल्लाह का

हजार-हजार शुक्र है। मैं तो गुनाह से डरती हूं। अल्लाह कसम, मैंने तो किसी को कुछ नहीं कहा, तुम्हें भी कुछ नहीं कहा। जिन्हों ने जनाना सहकारी बनायी है उन्हें भी कुछ नहीं कहा।"

अनाखां ने कुमरी की ओर देखा—"मौसी, तुम क्यों नहीं बोलती ? तुम बोलो, तुम ने क्या देखा है ? मेरा क्या पागलपन देखा है ? मेरी क्या बेगैरती-बेशर्मी देखी है ? जनाना सहकारी मैंने चलायी है, मैं सहकारी की प्रधान हूं। मैंने क्या किया है ? मुझे क्या चाहिये ? मुझे मर्द चाहिये ? तुम सच-सच कहो, तुम क्या नहीं जानती हो ? मैंने जो कुछ किया है, यतीम बच्चों के लिये किया है। तुम्हारे बच्चों के लिये किया है, अपने बच्चों के लिये भी किया है। अंजीरत दादी, मैंने दीन, मजहब के खिलाफ क्या कहा है ? वह झूठी बकवास करने वाले, झूठी तोहमतें लगाने वाले ही काफिर हैं, बेदीन हैं। बता दो, मैंने क्या झूठ कहा है, बता दो मैं क्या बुरा कर रही हूं ?"

अनाखां क्रोध में ड्योढ़ी की ओर चल दी।

"अनाखां !" कुमरी ने चीख कर अनाखां का रास्ता रोक लिया, "गरीब नज़ाकत पर बहुत मार पड़ी है। कल उस के मर्द ने उसे बहुत मारा है। बहना मेरा नाम मत लेना, तुम खुद जाकर देख लो··!"

"नज़ाकत पर मार पड़ी है ?" अनाखां ने विस्मय से पूछा।

"बेचारी दहाड़-दहाड़ कर रो रही थी।"

अंजीरत ने रोते हुये कहा—"देख ले-देख ले, बिटिया ! फकीर की बात सच्ची हो रही है। औरतों पर मार पड़ने लगी है।"

अनाखां के पांव लड़खड़ा गये। बराम्दे की सीढ़ी पर ही बैठ गयी। आंगन का दरवाज़ा खुलने की आहट हुयी। दर्जी मदरेम की बहू शोखिस्ता बच्चे को गोद में लिये हंसती हुयी दौड़ी आयी। उसने पुकार लिया—"कुमरी मौसी, शुक्र अल्लाह दादी, मैंने तो अनाखां बहिन को तुम्हारे आंगन में देखा तो दौड़ी चली आयी। हाय रे, तुम तो बड़ा मनहूस मुंह बनाये बैठी हो, जैसे कुछ बुरा हो गया हो !"

"आ, आ बेटी शोखिस्ता !" कुमरी ने मुस्कराने का यत्न किया, "बड़ी खुश है री, अल्ला रक्खे, हाय कितनी प्यारी लग रही है।"

अंजीरत ने बच्चे के लिये हाथ बढ़ा दिये—"अल्लाह बुरी नजर बचाये, लड़का अच्छा लग रहा है" अंजीरत ने दुआ पढ़ कर दो बार लड़के मुंह पर फूंक दिया, "बलायें दूर हों। कैसा गोरा-गोरा, मोटा-मोटा लग रहा है !"

शोखिस्ता खिल उठी। बच्चा भी किलक रहा था।

"होगा क्यों नहीं दादी !" शोखिस्ता बच्चे को अंजीरत की गोद से लेकर हंसती हुई चहकने लगी, "कह दे—दादी, तुम्हारी दुआ से लोहे के पलंग पर गद्देदार बिस्तर

पर सोते हैं, रोज नहाते हैं, मोटी मलाई पड़ा दूध पीते हैं। हम मोटे क्यों नहीं होंगे !" शोखिस्ता बच्चे को सिर से ऊपर उछालने लगी।

बच्चा डरा नहीं, खुश होकर किलकारियां भरने लगा।

"हाय री गिरा देगी ! अल्लाह उम्रदराज़ करे ! ···बैठ तो !"

"नहीं भाई, कह दे—अम तो काम पल जा लए एं।" शोखिस्ता ने बच्चे को चूमते हुए उस की ओर से उत्तर दिया।

"इसे क्या साथ ही ले जाती है ?" कुमरी ने कुछ विस्मय, कुछ ईर्ष्या से पूछ लिया।

"और नहीं तो क्या ! कह दे, अब तो अम्मा के छात छकाली में जाते हैं। अम्मा छकाली में काम करती हैं। अम छकाली की शिशुशाला में खेलते हैं।"

शोखिस्ता अनाखां की ओर घूम गयी—"प्रधान बहिन उधर ही जा रही हो, साथ ही चलें। अभी आयी एक मिनट में कपड़े बदल कर !"

अनाखां बरामदे से उतर गयी, क्रोध से उस की मुट्ठियां बंध गयी थीं। दांत दबाये थी। क्रोध में कह दिया—"मैं नज़ाकत के पास जा रही हूं।"

अंजीरत और कुमरी की आंखें मिल गयीं। दोनों घबरा गयीं। अनाखां का रास्ता रोक कर दोनों गिड़गिड़ाने लगीं।

"अल्लाह का रहम, वहां न जाना, वहां न जाना ! तुम उस के मर्द को नहीं जानती, बड़ा जालिम है। बेइज्ज़ती कर देगा ··" कुमरी ने कहा।

"हां बेटी, तुम काहे को जाओगी ! तुम्हें क्या है ! शुक्र अल्लाह का, नज़ाकत अच्छी भली तो है।"

"तुम क्यों डर रही हो, पागल हो !" अनाखां के दोनों को चुप करा दिया। फिर जुलैखां से सुनी हुई बात दोहरायी—अपने दिल और दिमाग की बात सुनो ! "डरो मत कुमरी मौसी, मैं तुम्हारे यहां आयी हूं तो नज़ाकत के यहां क्यों नहीं जाऊंगी ?"

कुमरी सिर झुकाये चुप रह गयी। अनाखां उसके आंगन से चली गयी थी।

नरमत छैले का मकान गली के सिरे पर था। वहां अच्छी खासी भीड़ रहती थी। मकान के साथ बहुत ऊंचा घना पोपलार का पेड़ था। पोपलार इतना ऊंचा था कि निमांचा में किसी भी जगह से दिखायी पड़ जाता। पेड़ पर बगलों का बहुत पुराना घोंसला था। बड़े-बूढ़े लोग बचपन से ही पोपलार और घोंसले को देखते चले आ रहे थे

नरमत छैला बहुत अच्छा कारीगर बुनकर था। उस के पास काफी पैसा हो गया था परन्तु पैसा उस ने करघे पर मेहनत से नहीं, चोरी से अफीम बेच-बेच कर कमाया था।

लोग कहते थे कि नरमत के मकान के ऊपर पोपलार का वासी बगला भी अफीमची था। नरमत बगले के लिये पोस्त की सूखी डोडी के छिलके छत पर फेंक देता था।

बगला छिलके खा-खाकर नशयी हो गया था। कभी छत पर छिलके न पाता तो उदास होकर घंटों नरमत की छत पर एक टांग पर खड़ा रह जाता।

नरमत ने चढ़ती जवानी में ही अपनी करतूतों से छैला नाम कमा लिया था। अफीम के कारोबार में कुदरतुल्ला से संगति हो गयी। दोनों मित्र बन गये थे। राव ने नमागां के अपने एक दूर के सम्बन्धी की अनाथ लड़की नज़ाकत से उस का विवाह करा दिया था। बहुत लोगों का ख्याल था कि नरमत के अफीम के कारोबार में राव का भी साझा था।

अनाखां ने नरमत की ड्योढ़ी में कदम रखते ही नकाब सिर पर पलट लिया और सीधी भीतर के दालान में चली गयी। नज़ाकत हवा के लिये करघे वाली कोठरी की दहलीज में दरी बिछाये करवट से लेटी हुई एक टोपी पर कसीदा काढ़ रही थी। नज़ाकत ने अनाखां को देख कर टोपी तो एक ओर रख दी पर दरी से उठी नहीं।

"तुम क्यों आयी हो!" नज़ाकत ने नाराज़गी से रूखे स्वर में पूछ लिया और रो पड़ी। हिचक-हिचक कर रोती हुई कहती जा रही थी, "यहां क्यों आयी हो? तुम्हें किसने बुलाया है? यहां तुम्हारा क्या काम है?"

नज़ाकत सुन्दर थी, हंसमुख और बेपरवाह थी परन्तु इस समय उस का चेहरा बिलकुल पीला हो रहा था, बीमार लग रही थी। होंठ सूजे हुये थे और भौंवों पर लगा उस्मा गालों पर फैल गया था।

अनाखां समझ गयी नज़ाकत उठ नहीं पा रही थी। वह नज़ाकत के समीप दरी पर बैठ गयी और पूछ लिया—"तुम्हें क्यों मारा है?"

नज़ाकत कुछ बोल नहीं पायी थी कि नरमत भीतर आ गया।

"हाय अल्लाह मुझे उठा ले!" नज़ाकत घबराकर हाथ मलने लगी।

नरमत कद का ठिगना था। गाल ढलके हुये थे, आंखें सूजी-सूजी सी लगती थीं जैसे नींद से उठा हो। चलते समय पांव जरा फैल जाते थे। साफ-अच्छे कपड़े पहने हुये था। सफेद पतलून को घुटनों तक ऊंचे बूटों में दिये हुये था। बूट पालिश से चमक रहे थे।

क्रोध में अनाखां को नकाब चेहरे पर डाल लेने का ख्याल नहीं आया। उस ने घूर कर नरमत की आंखों में देखा।

नरमत के कदम ठिठक गये। उसने अब तक अपने घर में कभी मेहमान स्त्री को बेनकाब नही देखा था, अब तक कभी किसी स्त्री की इतनी क्रुद्ध नजर नहीं देखी थी।

"तुम ने बीबी को क्यों मारा है?"

नरमत आंगन में पड़े शहतूत के कुन्दे पर बैठ गया। अपनी मर्दानगी का रोब बनाये रखने के लिये आंखें दूसरी ओर फेरे रहा। अब तक कभी किसी स्त्री ने इस तरह निर्भय

हो कर सख्ती से उस से बात नहीं की थी ।

दो दिन पहले नरमत ने स्वयं ही राव कुदरतुल्ला से पूछा—"अपनी औरत को खामुखा क्यों पीट दूं ?"

कुदरतुल्ला ने नरमत से शिकायत की थी कि नज़ाकत उस के कारखाने में बुनने-वालियों को वहकाती थी ।

नरमत ने राव की बात का विरोध किया था—"यह कैसे हो सकता है, वह तो आप के कारखाने में ही काम कर रही है । सदा मेरे कहने में चलती है ।"

राव के माथे की गद्दी पर गहरे तेवर पड़ गये । उस ने नरमत को डांट दिया—"बको मत ! शरम नहीं आती, घर वाली के काबू में हो गये हो ! कोई घर वाली का ऐसे बखान करता है, ऐसे सिर चढ़ाता है । अन्धा कर दिया है तुझे । उल्लू बना रही है । हमें तो दीखता है, वह बेवाओं की शहबत से गरमा रही है । गरमी से पागल हो जायेगी, हाथ से निकल जायेगी तो रोना बैठ कर । तेरी घर वाली है तो हमारा भी भतीजी हैं । तेरे और उसके भले के लिये ही समझा रहे हैं । तुम अभी जाओ और लाठी लेकर उस की गरमी अच्छी तरह से झाड़ दो !"

नरमत छैला परेशान था, घर वाली को यों ही कैसे पीट दे । औरत को पीट देने में उसे ऐतराज नहीं था परन्तु कोई बहाना तो चाहिये था ।

नरमत को बहाना मिल गया । नज़ाकत राव के कारखाने में सन्तुष्ट नहीं थी । उस ने अपने मर्द से झूठ भी नहीं कहा था—कारखाने में न काम था, न वहां से पगार मिल पाती थी । जनाना सहकारी में औरतें कहीं अधिक पा रही थीं । नज़ाकत ने राव का कारखाना छोड़ कर जनाना सहकारी में चली जाने के लिये तो नहीं कहा परन्तु कारखाने की हालत बता रही थी तो नरमत को बहाना मिल गया ।

मुहल्ला नज़ाकत की चीखों और आर्तनाद से गूंज उठा ।

नज़ाकत को पिटते रहने की आदत नहीं थी इसलिये विरोध और आत्म-रक्षा में चिल्लाने और हाथ-पांव चलाने लगी । घरवाली के दुस्साहस से नरमत का दिमाग खौल उठा । होश आया तो देखा, नज़ाकत को बहुत अधिक पीट दिया था ।

नरमत ने मन को समझा लिया, चलो अच्छा ही हुआ । औरत की गर्मी तो दूर हो जायेगी । औरत अपना भला कब समझती है ।

नरमत ने मन को समझा लेना चाहा परन्तु घरवाली को बहुत बुरी तरह पीट देने का कलख मन से दूर नहीं हो रहा था । उस की आंखें लज्जा से झुकी थीं । साबिर मजदूर की विधवा को फटकार कर अपने घर से निकाल देने का साहस नहीं कर सका । उसे कुछ उत्तर भी नहीं दे पाया ।

अनाखां ने नरमत को धमकाया—"बोलते क्यों नहीं हो । तुम समझते क्या हो !

तुमने खुद अपनी बेइज्ज़ती की है। खुद अपने आप को मारा है। तुम भी शुक्र अल्लाह दादी की तरह अन्धे हो, लोगों के बहकाने में आ गये। मुल्लाओं के प्रोपेगेन्डा से पागल हो गये!"

नरमत घबरा गया। मुल्लाओं का प्रोपेगेन्डा क्या होता है, वह नहीं जानता था। हैरान था, साबिर मजदूर की बेवा को किस ने बता दिया था कि उस ने घरवाली को अपनी इच्छा से नहीं दूसरे के कहने से पीटा था। यह बात तो नज़ाकत भी नहीं जानती थी। क्या जवाब देता?

नरमत शहतूत के कुन्दे से उठ कर खड़ा हो गया। अनाखां से नज़रें बचाये, बेपरवाही दिखाने के लिये धीरे से बोला—"मेरी निकाही बीवी है। हमारे बीच में दूसरा कोई क्यों बोले!"

अनाखां कुछ और न कह दे इस आशंका से नरमत तुरन्त आंगन से चल दिया।

नज़ाकत पति का भय समझ गयी थी। पति के डर जाने से विस्मित थी और मर्द को दहला देने वाली स्त्री के साहस से भी विस्मित थी।

नज़ाकत ने साहस पाकर अपने आप को निर्दोष बताने के लिये कहा—"बहिना, सच कहती हूं, जब से तुम और रज़िया मौसी चली गयीं, कारखाने में तो बिलकुल अच्छा नहीं लगता।"

"अकेले तो दिल घबराता ही है। तुम सब से अलग क्यों बनी हो? बहिना, हम तो सब पुरानी सहेलियाँ हैं।" अनाखां जाने के लिये उठ खड़ी हुयी।

"हाय इतनी जल्दी क्यों जा रही हो?"

"इन्तज़ार कर रही होंगी।"

"बेटियां?"

"नहीं, बहनें।"

"सच बताओ, सहकारी में तुम्हीं प्रधान हो?"

"वहां आओ तो अपने आप देख लोगी।"

"हाय, धीमे बोलो।"

"क्यों, मुझे किस का डर है! जैसे मन होगा बोलूंगी।"

"हाय, बुरा क्यों मान गयीं, मैं तो तुम्हारे लिये ही कह रही थी।"

"तुम इतना डरती क्यों हो?" अनाखां चलने को हुयी, "मैं तो बेवा हूं, बुढ़िया हो रही हूं। तुम्हें क्या डर है, हौसला करना चाहिये।"

अनाखां आंगन से चली गयी तो भी नज़ाकत उदास आंखों से ड्योढ़ी की ओर देखती रही।

सूर्य मध्याकाश में पहुंच गया था। बाज़ार के लोग विश्राम के लिये अपने घरों

की गलियों में आ रहे थे। कोई मुर्गी, बत्तखें लिये चला आ रहा था, कोई कुछ और। एक स्त्री रंगीन पलना उठाये चली आ रही थी। एक बुढ़ऊ गधे पर लदी बोरियों पर बैठा चला आ रहा था। छोटे-छोटे लड़के सीटियां और पीं-पीं बजा कर दौड़-भाग रहे थे। भिखारी भी दिखाई दे रहे। लस्सी बेचने वाले एक-दूसरे की होड़ में अपनी लस्सी को ओले और बरफ से भी ठंडी बता रहे थे। कठपुतली नचाने वाले भी अपना ताम-झाम उठाये आराम के लिये चल दिये थे।

अनाखां गली से बाज़ार में आयी। लुहारों की गली में जाकर एक फाटक के सामने खड़ी हो गयी। फाटक पर तख्ती लगी हुई थी। तख्ती पर लिखा था—"पुरानी बस्ती की लाल अक्तूबर जनाना सहकारी।" अनाखां फाटक के भीतर जाने से पहले चाव से तख्ती को पढ़ लेती थी।

फाटक के भीतर खूब बड़ा दालान था। आंगन की लम्बाई और चौड़ाई में रस्सियां बंधी हुई थीं। नये चिरे तख्तों से छोटे-छोटे बाड़े बना दिये गये थे। उन में से करघों की पटर-पटर और स्त्रियों के बोलने का स्वर सुनायी दे रहा था। आंगन में आकर अनाखां ने बुरका उतार लिया और फाटक के साथ बने पुराने, झुक आये बालाखाने (चौबारे) का जीना चढ़ गयी। जनाना सहकारी का दफ्तर इसी चौबारे में था।

सोफिया दरवाज़े पर ही मिल गयी। बोली—"कब से तुम्हारी राह देख रही हूं।"

सोफिया की बच्ची महीने भर की ही थी परन्तु उस ने काम पर आना शुरू कर दिया था। सब से पहले सोफिया ही अपनी वीरा को सहकारी की शिशुशाला में लायी थी। उस के बाद शोखिस्ता अपने बेटे को लाने लगी। सहकारी में सब से अधिक ध्यान शिशुशाला और भोजनालय की ओर दिया जाता था। शिशुशाला में बीस छोटे-छोटे बिस्तरे, पलने और बच्चों को नहलाने के लिये चिलमचियां खरीद ली गयी थीं। भोजनालय के लिये तश्तरियां और कटोरियां भी ले ली गई थीं। सहकारी में आने वाली स्त्रियां संतुष्ट थीं। काम खूब उत्साह से आरम्भ हुआ था।

"निमांचा में क्या हालचाल है?" सोफिया ने पूछ लिया।

"निमांचा में स्त्रियां देख रही हैं और सोच रही हैं। हमारे सहकारी की हालत सब के सामने है। इस से अच्छा और क्या उदाहरण होगा? कुमरी भी आ जायगी।"

"कुमरी ने आने के लिये कहा है?"

"कहा तो नहीं पर देख लेना आ जायगी!"

"मैंने ठीक कहा था न? मेरी बात का विश्वास उन्हें नहीं होता। तुम्हें तो वे अपने में से समझती हैं।"

"कल मौसी रज़िया को भी साथ लेती आऊंगी।"

"ठीक कहा तुमने, जरूर ले आना। यहां कपड़ा बुन लेने से वह काम ज्यादा

जरूरी है। जुलैखां बहिन ने ठीक कहा था—कपड़ा बुनने की चिन्ता की अपेक्षा मनुष्यों की चिन्ता ज्यादा आवश्यक है। कपड़े के थान बुन डालने से अधिक आवश्यक है दूसरी स्त्रियों को सहकारी में ले आना।"

अनाखां की उदासी सोफिया से छिप नहीं सकी। उस ने पूछ लिया—"तुम सुस्त क्यों हो, क्या बात है? क्या हुआ है?"

"तुम यहां के लोगों की मूर्खता को तो जानती हो!" अनाखां ने सोफिया को बताया—फकीर बुढ़िया स्त्रियों को कैसे बहकाती थी। बुढ़िया क्या-क्या भविष्यवाणियां करती थी। गरीब नज़ाकत पर मार पड़ने कीं बात भी बता दी।

"ऐसा जाल-फरेब तो ये लोग करेंगे ही" सोफिया ने कहा, "परन्तु अब अन्ध-विश्वासी लोग ही इन के जाल में फंस सकेंगे।"

"बहिना, औरत मार की परवाह चाहे न करे परन्तु बदनामी से डरती है। नज़ाकत का दिल क्या यहां आने को नहीं चाहता पर डरती है।"

"तुम परवाह मत करो। हमारा काम उन्हें समझाना है। हां मुझे ख्याल आया—अपनी सहकारी की एक दुकान निमांचा में ही खोल दें तो कैसा रहे? जनाना दुकान! क्या ख्याल है? सिर्फ स्त्रियों के लिये दुकान खोल दें! कुरान शरीफ में स्त्रियों को दुकान पर जाने की मनाही तो नहीं है। बाज़ार जा सकती हैं तो दुकान पर भी आ सकती हैं।"

अनाखां सोफिया की बात बहुत ध्यान से सुनने लगी।

"मैं जुलैखां से भी बात करूंगी।" सोफिया ने कहा, "केवल स्त्रियों के लिये दुकान खोल दी जाय। वहां कोई मर्द न जा सके तब तो स्त्रियां निधड़क वहां जा सकेंगी। दुकान में बुरका उतार सकेंगी, दूसरी स्त्रियों से विश्वास और भरोसे से बात कर सकेंगी। कपड़े के बारे में बात करेंगी तो हमारी सहकारी के भी बारे में जान जायंगी। जो सुनेगीं, दूसरियों को भी बतायेंगी। लोग तो कहते ही हैं कि बात औरत के कान में पड़ी तो दुनिया भर में फैल गयी। तुम्हारे यहां तो कहावत है कि स्त्री पड़ोस में सूप मांगने जाय तो गांव भर की खबर लेकर लौटती है। स्त्रियां दुकान में जायेंगी तो तुम से और जुलैखां से भी मिलेंगी। दुकान में खूब तस्वीरें लगा देंगे—बच्चों को कैसे खिलाना-पहनाना चाहिये। दुकान पर किसी होशियार लड़की को रखेंगे जो सब बातें समझा सके।"

"बहिना क्या कहना! खूब सोचा है तुमने!"

"तुम्हीं बताओ, दुकान में किस लड़की को रखें!"

अनाखां ने तुरन्त खोजिया का नाम लिया—"बहुत होशियार, समझदार लड़की है। क्लब में जा कर पढ़ना-लिखना भी सीख गयी है। अब अरगाश को पत्र लिखाने

के लिये मेरे पास थोड़े ही आती है, खुद ही लिख लेती है।"

"खोजिया तो अभी बहुत छोटी है।" सोफिया ने सन्देह प्रकट किया।

"हम में बड़ी कौन है ?" अनाखां बोल उठी, "मुझे ही क्या आता था ! तुम लोगों ने मुझ पर भरोसा किया है तो खोजिया का नहीं करोगी ?"

सोफिया ने प्यार से अनाखां के माथे पर झुक आयी लट संभाल दी—"अन्ना, तुम तो कमाल कर रही हो, इतनी आशा तो मुझे नहीं थी।"

"बहिना, तुम ने नहीं कहा था कि घर से बाहर निकलोगी, सहकारी में जाओगी, काम सम्भालोगी तो अपने आप समझ आ जायेगी। कोठरी में मुंदी रहने से समझ कैसे आ सकती है।"

दोनों सहेलियां एक-दूसरी की आंखों में देखती चुप रह गयीं और करघों की ओर चली गयीं।

नवां परिच्छेद

उन दिनों नैमी दिन के समय राव कुदरतुल्ला की हवेली में जाना उचित नहीं समझता था। राव के उदार आतिथ्य का लोभ दमन कर लेना भी सरल नहीं था। राव के यहां कौम और इस्लाम के भविष्य के सम्बन्ध में जो गूढ़ चर्चा होती थी, उस का महत्व भी कम नहीं था इसलिये नैमी दोपहर में या रात के सन्नाटे में ही बहुत चौकन्ना रह कर राव के यहां जाता था। निमांचा में हालत बदल चुकी थी। अब लोग पहले की तरह राव का रोब नहीं मानते थे बल्कि राव से मिलने-जुलने वालों की ओर कनखियों से देख लेते थे।

राव की हवेली में भी पुरानी बात नहीं रही थी। राव बात-बात पर चिढ़ जाता था। वह दरियादिली भी नहीं थी इसलिये लोग उतनी खुशामद भी नहीं करते थे। राव और भी खिन्न बना रहता।

लोगों में गुपचुप बात चल रही थी कि राव का बेटा नसरतुल्ला अनाखां की बेटी से ब्याह करना चाहता था। राव के सब से अधिक नमकहलाल गुलाम मखुनिया मखसूम को इस अफवाह से बहुत अपमान अनुभव होता था। कुछ अनुमान नहीं था कि गरीब विधवा को अपने इस सौभाग्य का समाचार मिल गया था या नहीं। अनाखां के व्यवहार से ऐसा कुछ भी आभास नहीं मिलता था। उस के व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया था।

राव ने अपनी स्थिति और खानदान की प्रतिष्ठा के विश्वास में विधवा के यहां समाचार या अनुरोध भेज देने की चिन्ता नहीं की थी। अनाखां को भी ऐसी कोई चिंता नहीं जान पड़ती थी। निमांचा का पुराना मालिक अब लोगों के लिये मज़ाक बन रहा था। उस के खुशामदी भी उस की पीठ पीछे उस पर हंसने लगे थे। राव कुछ नहीं कर सकता था।

नसरतुल्ला स्वभाव से ही बेपरवाह था, उसे क्या चिन्ता होती। वह शीघ्र विवाह की आशा में, बन्ना बनने की उमंगों में मस्त था। विवाह की प्रतीक्षा में शेष दिनों को शराब की खुमारी में और आनन्दमय विवाहित जीवन के स्वप्नों में बिता रहा था। बेगम खोजा बीबी भी इसी आशा में थी कि बेटे की बहू आ जाय तो वह शेष जीवन आराम से, निश्चिन्त होकर बिता सके। उसे एक ही चिंता थी कि बहू के घर संदेश भेजने के लिए अनुमति दे दें परन्तु अनेक दुश्चिन्ताओं में डूबे राव का ध्यान उस ओर नहीं था।

एक रात नैमी राव के समीप बैठा बात कर रहा था। मखुनिया ने दरवाज़े में आकर सलाम किया और पिटे हुए कुत्ते की तरह, आंसू भरी लाल कातर आंखों से मालिक की ओर देखता रह गया।

"क्यों, अभी और क्या है?" राव मखुनिया पर झल्ला उठा।

"सरकार, खता माफ करें। इधर कारखाने में सात ही बुननेवाली आती थीं पर आज तो दो ही आयीं हैं।"

"क्यों, क्या बात है?"

"सरकार, वह डोकरी कुमरी सब को जनाना सहकारी में ले गयी है।"

राव ने समाचार से अपना सिर दोनों हाथों में थाम लिया और मसनद पर लुढ़क गया। उस का आत्माभिमान भी अब शेष नहीं था। मेहमानों के सामने घबराहट छिपाये रखने का भी ख्याल नहीं रहा था।

मखुनिया अत्यन्त कातर भाव से सिर झुकाये हाथ बांधे अपने अपराध का दण्ड पाने की प्रतीक्षा में था। दहलीज पर बैठा रहा।

"वहां बैठे क्या ताक रहे हो?" राव झल्ला उठा, "जो बाकी बचा है, उसे भी खत्म कर दे! नमक हराम, जा, सब में आग लगा दे!"

"गरीबपरवर मेरा कोई कसूर नहीं। तेशोकोप्कोक से एक आदमी कारखाने में आया था। 'चार बाजार' से एक लड़का भी आया था। उन लोगों ने कहा कि हमारी दुकानों में कोई गाहक आता ही नहीं। हफ्तों से एक गज कपड़ा नहीं बिका। हुज़ूर, सरकार की दुकान का गतगाज़ी भी सहकारी में चला गया है...।"

"चुप बदजात! दफा हो यहां से!" राव क्रोध में उछल पड़ा। उस की मुट्ठियां

बंध गयीं, "निकल जा यहां से, नमकहराम कुत्ते !"

मखुनिया ने ज़मीन छूककर सलाम किया और चुपचाप दहलीज से ओझल हो गया। राव फिर मसनद पर बैठ गया। उस का गला विवश क्रोध से रुंध रहा था—"महमूद भाई, मैं तो बरबाद हो गया। अब बरदाश्त नहीं होता।"

नैमी बेंत पर लगी हड्डी की मूठ को सहलाता रहा, कुछ बोला नहीं।

"राव कुदरतुल्ला बरबाद हो गये तो औरों का क्या होगा ? मुसलमानों का क्या होगा ?" राव की उदास आंखों में पल भर के लिये पुराना तेज चमक उठा।

"आपदा क्या कभी अकेले आती है…।"

कमरे का दरवाजा धक्के से खुला और एक झोंके में नसरतुल्ला कमरे में। लड़के के सिर पर टोपी नहीं थी। आंखें पथरायी हुईं, कुर्त्ता सीने से फटा हुआ, पांव लड़खड़ा रहे थे। चेहरे और सीने पर पसीना और आंखों से आंसू की धारायें बह रही थीं।

"अब्बा !" नसरतुल्ला आंसुओं से रुंधे गले से हिचकि लेकर चीख उठा, "मैं मर गया। मेरी बहू छीन ले गये !"

राव के हाथ से सीप के मनकों की तसबीह (माला) छूट गयी। घबराहट में उस का ऊंची एड़ी का जूता तसबीह पर पड़ गया और वह फिसल कर गिरते-गिरते बचा।

नसरतुल्ला अपना सिर और छाती पीट-पीट कर रोता जा रहा था। वह बगल के कमरे की ओर बढ़ गया। कमरे के किवाड़ उस के सिर और घुटनों की टक्कर से खुल गये। नौजवान धम्म से फर्श पर गिर पड़ा।

"हाय कनकटा-काला चोर !" नसरतुल्ला रो-रोकर चीखता जा रहा था।

वेगम हाय-हाय चिल्लाती हुई दौड़ी आयी।

"निकल जा यहां से वेहया !" राव वेगम पर चीख पड़ा।

वेगम की घिग्घी बंध गयी। वह उल्टे पांव लौट गयी।

नैमी उठकर बेगम को तसल्ली देने और हरम तक छोड़ आने के लिये चला गया। नैमी ने लड़के की मां को समझाया—"घबराने की कोई बात नहीं है। लड़के ने ज़रा ज्यादा पी ली है। नींद आ जायगी, सब ठीक हो जायगा…।"

नैमी कमरे में लौटा तो देखा राव मसनद पर घुटनों पर हाथ रखे बहुत हताश-निस्सहाय मुद्रा में बैठा था। नैमी को देख कर गिड़गिड़ा उठा :

"महमूद भाई, आओ लड़के को तो संभालो। कैसे बक रहा है ! जज़ाक अल्लाह, (भगवान न करे) कोई सुन लेगा तो क्या होगा ? वह कमबख्त वेवा मुझे यों ही मिट्टी में मिलाये दे रही है। मेरा अपना लड़का भी मुझे गारत कर रहा है। महमूद भाई, चुप कराओ उसे ! लोग सुनेंगे तो मेरा बाज़ार में निकलना दुश्वार हो जायगा।"

नैमी साथ के कमरे में चला गया।

नसरतुल्ला कालीन पर औंधे मुंह पड़ा था। चिल्ला-चिल्ला कर उस का गला घिघिया गया था। नैमी ने उसे कंधे से पकड़ कर झकझोरा—"अरे सुनो, रोने से क्या होगा ? अभी तुम्हारी उमर क्या है ! इतना दिल छोटा क्यों करते हो ! होश करो ! सब कुछ हो जायगा। उठो हौसला करो…।"

"क्यों ? उस की ही क्या उमर है…उस काले चोर-गुण्डे को समझ लूंगा…।"

"इतना बकते क्यों हो ? होश करो ! अपनी बदनामी करवा रहे हो ! हम सब समझ लेंगे। वह जीत गया, उस की किस्मत थी।"

"जीत गया ? देखूंगा कैसे जीतता है ! मैं उस गुण्डे की चमड़ी उधेड़ लूंगा।"

नैमी को इस झगड़े में पड़ना अच्छा नहीं लग रहा था, बोला—"तुम होश करो, तुम होश में नहीं हो। यह बेवकूफी करने का वक्त है ? अपनी जबान काबू में करो ! अक्ल से काम लो ! हम सब ठीक कर लेंगे !"

नसरतुल्ला के चेहरे पर कटाक्ष की मुस्कान आ गयी—"मियां, तुम कल्लू कुलमत को क्या जानो ? तुम उसे क्या ठीक करोगे !…मियां, हम कौड़ियों-दमड़ियों के दांव नहीं लगाते हैं। वह फिर आयेगा, फिर हमारा जोड़ होगा।"

नसरतुल्ला ने कालीन के नीचे हाथ डालकर टटोला और काले चमड़े की म्यान से खंजर खींच लिया।

"आने दो कल्लू चोर को ! अब की अपना कफन लेता आये ! इस बार कलेजा चीर कर न रख दूं तो…।"

नैमी घबरा गया। उस ने स्वर दबा कर लड़के को समझाया—"पागल हो गये हो ! अपने मां-बाप का तो ख्याल करो ! तुम मुसलमान हो। बांकों का यही कायदा होता है ? मुसलमान बांके एक-दूसरे पर हाथ उठाते है ? वह लौंडिया के लिये इतना पागल है तो तुम्हीं चुप कर जाओ, उसे ही ले लेने दो ! बात मत बढ़ने दो, अपने खानदान की इज्ज़त का तो ख्याल करो !"

नसरतुल्ला ने खंजर खींच कालीन में भोंक दिया—"हरगिज़ नहीं, वह कैसे ले जायगा ! उसे लेगा तो उस की लाश को ले जाय ! वह मेरी नहीं होगी तो उस की भी नहीं होगी।"

नैमी चुप रह गया। उसे अनुमान नहीं था कि बात इतनी बढ़ जायगी। सोच रहा था, झंझट से कैसे छुट्टी पाये।

नसरतुल्ला नशे में चुप हो गया, उस की आंखें मुद गयीं और खुले हुये दोनों होठों से लार बह गयी। हाथ-पांव शिथिल हो गये और कालीन पर पसर गया।

नैमी ने सान्त्वना का सांस लिया। दूसरे कमरे में बैठे राव को सुना कर बोला—"शाबाश, होश करो, हल्ला मत करो ! चुप-चाप सो जाओ ! नींद से तबियत

ठीक हो जायगी।"

नैमी आहट न करने के लिये धीमे-धीमे पंजों पर कदम लेकर राव के समीप लौट आया।

"समझा दिया उसे, कुछ होश आया?" राव ने पूछ लिया।

"हां···नींद आ गयी है। इन्शाअल्लाह सब ठीक हो जायगा।"

"पागल क्या बक रहा था?"

"कुछ नहीं, सब ठीक हो जायगा" नैमी ने राव को रहस्य के स्वर में तसल्ली दी, "कल मैं सुबह ही चायवाले से बात करूंगा। मेरा ख्याल है, चायवाला उस चोर कल्लू कुलमत को जानता है। तुम भी लड़के को पास बैठा कर जरा ढंग से बातचीत करना। लड़का आपे से बाहर हो रहा है, यह बात ठीक नहीं है।"

नैमी तुरन्त ही हवेली से चल दिया। बाज़ार में कुछ दूर जा कर उस ने खैर मनायी—मुसीबत से बचा।

नैमी चायवाले के यहां नहीं गया। बहुत नाजुक वक्त आ गया था। वह ऐसे लोगों से मिलने में बहुत डरता था। ऐसे लोगों की संगति में भय ही भय था। वे लोग जाने कब धर लिये जायें और दूसरों को भी साथ ले मरें।

नैमी बहुत परेशान था—अब किस के यहां जाय, किस का विश्वास करे, कौन उस का साथ देगा। उस के मुस्लिम-तुर्क साम्राज्य के स्वप्नों को पूरा करने की शक्ति किस में थी?

गली में सन्नाटा था और घटाटोप अंधेरा। मकान, दीवारें और वृक्ष सभी अंधेरे में घुलमिल गये थे। सन्नाटे में हवा भी सो गयी जान पड़ती थी।

नैमी ने पीठ पीछे आहट पाकर घूम कर देखा। भय से कांप उठा। अंधेरे में कोई उस का पीछा कर रहा था। नैमी के मस्तिष्क में कुलमत का ख्याल कौंध गया। वह उछलकर पैंतरे से हो गया और चोट की आशंका में बेंत चेहरे के सामने कर लिया।

"डर क्यों गये? चलो तुम्हें घर पहुंचा आऊं!" विद्रूप का स्वर सुन कर उसने पहचाना—चायवाला था।

नैमी ने आंखें फाड़-फाड़ कर अंधेरे में देखा, सचमुच चायवाला ही था। सोचा, अंधेरे में आदमी कितना डर जाता है।

"रहमत अल्लाह! जानते हो, आदमी के दिल में डर हो तो अपनी छाया को ही भूत समझ लेता है।" नैमी ने अपना भय छिपाकर कहा, "भाई मुहम्मद सैयद, कसम तुम्हारी, अभी तुम्हारे यहां जा रहा था।"

"मास्टर साहब हुक्म कीजिये, बन्दा खिदमत में हाज़िर है!" चायवाले ने भी विनय से कहा।

नैमी अपना भय छिपाने के लिये कुछ अधिक ही बोलता जा रहा था। राव के बेटे की सब करतूत सुना दी—"वल्लाह, क्या तमाशा बना हुआ था, क्या बकवास कर रहा था !···शहर में आये एक शरीफ मेहमान और शरीफ चाय वाले के मित्र के लिये क्या बक रहा था ··।"

"मास्टर साहब, जवानी बावली होती है" चायवाले ने उपेक्षा से कह दिया, "इस उमर में यह सब होता ही है। लड़के को चार दिन हंस-खेल लेने दीजिये, सब ठीक हो जायगा !"

"बेवकूफ ने लड़की को कत्ल कर दिया तो ?"

"अरे लड़की ही तो है ! वह जाने, लड़की जाने।" चायवाले ने समझाया, "आप को हम से क्या मतलब ! छोड़िये, आप क्यों परेशान हैं ?"

"हां, और क्या ?" नैमी ने स्वीकार कर लिया।

"लड़का है, कर लेने दो उसे !" चायवाले ने एक बार और कहा, "आप को लड़के के पागलपन में उलझने की क्या जरूरत · "

"खुदा न करे, मैं क्यों उलझूंगा भाई · !"

चायवाला मुस्करा दिया। नैमी को अंधेरे में उस के दांतों की चमक दिखायी दे गयी। चायवाले ने आत्मीयता से नैमी की बांह हाथ में ले ली और बोला—"मियां, मैं तो कहता हूं, इस ज़माने में लोग खंजर पकड़ना भूल ही गये ! यह तो शरीफों का हथियार है। कोई नौजवान खंजर चला सके, मैं उस की इज्ज़त करूंगा और मौके से खंजर का इस्तेमाल होना ही चाहिये ! क्या ख्याल है आप का ?"

चायवाले की बात से नैमी को कंपकंपी आ गयी परन्तु चायवाला आत्मीयता से उस की बांह को पकड़े बात करता रहा—"मास्टर साहब, सुना है वह आप के स्कूल में जाती है ?"

"क्या मतलब?" नैमी ने आशंका अनुभव की।

"मतलब क्या, सुना है।" चायवाला फिर बोला, "अपनी मां का बुरका पहने रहती है। आप ने भी देखा होगा, रात-अंधेरे में मां-बेटी एक जैसी ही लगती हैं।"

नैमी का मन चाहा, भाग जाये परन्तु चायवाला उस की बांह को पंजे में जकड़े था। मुस्कराकर बोला :

"आप भी तो स्त्रियों में क्रान्ति कराने वाले नेता हैं ! जनाना क्लब में आप के लेक्चर की बात सुनी थी। मास्टर साहब, आप से तो ऐसी उम्मीद नहीं थी···लेकिन आप बोल बहुत हौंसले से रहे थे। मास्टर साहब, हौंसले की तो मैं हमेशा दाद देता हूं !"

"मु·· मुझे यह पसन्द नहीं···" नैमी ने बहुत साहस करके कहा।

"सही है, बिलकुल सही है। मैं खूब जानता हूं।" चायवाले ने सराहना के स्वर में कहा, "आप तारीफ सुनना पसन्द नहीं करते। आप नज़रों में आना भी पसन्द नहीं करते, ठीक ही है। लोग भी क्या कहते होंगे, आप क्या थे, क्या हो गये! यकीन रखिये, मैं उस बात का जिक्र नहीं कर रहा हूं। मैं ऐसा जाहिल नहीं कि खाहमुखाह आप को परेशान करूं। मैं दिल से आप की इज्ज़त करता हूं!"

नैमी का दिल बैठा जा रहा था, उस ने बेंत का सहारा ले लिया।

"मास्टर साहब, हमें अपने दोस्तों की मदद करनी ही चाहिये।" चायवाले ने उलाहने से आत्मीयता प्रकट की, "आप को मेरी तलाश थी क्योंकि आप हमारे दोस्त, बेचारे बदनसीब बाप की मदद करना चाहते हैं। आप का बहुद नेक इरादा है। खुदा का खौफ मानने वाले, दीनदार नेक आदमी को ऐसा करना ही चाहिये।"

नैमी मौन रहा। वह बिना समझे-बूझे किसी संकट में उलझने के लिये तैयार नहीं था।

चायवाला स्वर दबा कर कहता गया—"कल शाम स्कूल की छुट्टी के बाद आप के यहां लड़कियों के लिये साहित्य-चर्चा की सभा होगी न! हां, मुझे याद है कल ही है। सभा में तो काफी समय लगता है, देर हो जाती हैं, होनी ही चाहिये, समझ लिया! लड़की खूब अंधेरा होने पर ही घर जा सके, समझ गये!"

"मैं···मैं···" नैमी बोल न सका।

चायवाले ने नैमी को टोक दिया—"मेरे दोस्त, खुदा के हुक्म के बिना दुनिया में कुछ नहीं हो सकता। दीनदार, सच्चा मुसलमान खुदा के हुक्म में कैसे रुकावट डाल सकता? तुम तो मास्टर हो, तुम्हारा काम पढ़ाना है। जितनी अच्छी तरह से, जितनी देर तक पढ़ाओ, उतना ही अच्छा है। मास्टर को ऐसे ही पढ़ाना चाहिये कि पाठ में पढ़ने वालों का मन लगा रहे। विद्यार्थी ध्यान से बात सुनते रहें। पाठ में से कोई उठ कर न जा सके। इस बात के लिये तुम से कोई जवाब- तलब नहीं किया जा सकता। इस के अलावा तुम्हें किसी बात से मतलब नहीं। समझ गये!"

बूढ़े गरीब मास्टर ने होश सम्भाला तो अपने घर के दरवाज़े के सामने गली में अकेला था। चारों ओर अंधेरा और सन्नाटा। राव के घर से आते समय उसे रास्ते में चायवाले के साथ किसी ने नहीं देखा था।

नैमी अपने बिस्तर में लेट गया। उस का मस्तिष्क घूम रहा था। क्या करे··· साहस करे, जाकर कह दे! उस का शरीर कांप-कांप उठता और पसीना आने लगता।

उस रात महमूद नैमी की आंखों में नींद नहीं थी। दिन में किसी के सामने कुदरतुल्ला की हवेली में जाने का साहस नहीं था इसलिये पौ फटने से बहुत पहले ही

फिर हवेली में पहुंच गया। रात भर सोच-सोच कर निश्चय कर लिया था—जैसे भी हो राव के लड़के को समझायेगा। दुस्साहस करके सब के सिर पर मुसीबत न डाल दे।

नैमी हवेली के आंगन में, नसरतुल्ला के कमरे में उस से अकेला बात कर रहा था। राव ने बेगम को उधर न जाने के लिए सख्त ताकीद कर दी थी और स्वयं भी नहीं गया। उसे नैमी पर पूरा विश्वास था कि बक-झक कर लड़के का दिमाग उलझा लेगा। लड़का सब कुछ भूल जायगा—कौन हारा, कितना हारा; सोचेगा शायद सब स्वप्न ही देख रहा था।

नसरतुल्ला मास्टर की बात सुनते-सुनते 'वोदका' की बोतल से चुस्कियां लेता जा रहा था। सन्दूक के पीछे दूसरी बोतल भी रखे था। उस ने विवाह का उत्सव मनाने के लिए शराब की काफी बोतलें जमा कर ली थीं।

नैमी ने शराब बिलकुल नहीं पी। वह दृढ़ निश्चय करके आया था कि लड़के को समझाये परन्तु जिह्वा उस का साथ नहीं दे रही थी। चायवाले के शब्द बार-बार मस्तिष्क में गूंज जाते थे—इस ज़माने में खंजर का फन रह ही कहां गया है...खुदा की रज़ा के खिलाफ दुनिया में कुछ हो ही नहीं सकता...आप तो हमारे दोस्त, बेचारे बदनसीब बाप की ही सहायता करना चाहते हैं...।

भगवान की इच्छा थी, नैमी जो कुछ कहने के लिये आया था, कह नहीं सका। विस्मित था, उस के मुख से दूसरी ही बात निकल रही थी। वह बांकों की शान और साहस की बात कह रहा था—"...इस ज़माने में लोगों में अपनी इज्ज़त का ख्याल रह ही नहीं गया, हिम्मत ही कहां है! मुसलमान के लिये, मुसलमान के बेटे के लिये इज्ज़त और दीन से बढ़ कर दुनिया में और है ही क्या! शरीफ खानदानों की बहुयें बेनकाब फिरें तो इज्ज़त और इस्लाम कैसे बचेंगे?"

नसरतुल्ला बहुत ध्यान से चुपचाप नैमी की बात सुनता रहा। बीच में कभी-कभी दांत पीस कर शत्रुओं को गाली दे बैठता था, खंजर हाथ में लेकर तड़प उठता, जैसे पिंजड़े में बन्द चीता तड़प उठता है।

नसरतुल्ला को समझा-समझा कर बूढ़े मास्टर का गला सूखने लगा। रात भर नींद न ले सकने से भी उस का शरीर निढाल था। दिन का प्रकाश फैल जाने से पहले ही अपने घर पहुंच जाना उचित था। उस ने सोच लिया—इंसान के हाथ में क्या है! वही होगा, जो मंजूरे खुदा होगा।

राव कृतज्ञता से नैमी को हवेली के फाटक तक छोड़ने गया। बेटे के प्रति उस का क्रोध धुल चुका था। लड़के को सान्त्वना देने के लिये स्वयं जाकर कुछ रुपया उस के हाथ में दे दिया।

नसरतुल्ला रात पड़ने तक पीता ही रहा । राव और बेगम ने उस से कुछ नहीं कहा । जानते थे, लड़का अपना दुख भुलाने का यत्न कर रहा था ।

दसवां परिच्छेद

क्लब में संध्या रेलवे मजदूरों के लिये संगीत का कार्यक्रम था । तुरसाना को भी गीत गाना था । बशारत क्लब में समय पर पहुंच जाने के लिये छटपटा रही थी परन्तु मास्टर उसे 'साहित्य-सभा' में रोके था, जाने नहीं दे रहा था । उसे विलम्ब हो गया था फिर भी बशारत दौड़-भाग कर तुरसाना का गाना सुनने के लिये क्लब में पहुंच ही गयी । उसे बहुत बुरा लगा—अम्मा, सोफिया तायी और याफीम ताऊ नहीं आ सके थे । हाय, बहन ने कितना अच्छा गाया जैसे सचमुच पक्की एक्ट्रेस हो । अम्मा और सब लोग सुनते तो कितने खुश होते ।

संगीत के कार्यक्रम के बाद अब्दुस्समद ने तुरसाना को हार पहनाया—"किशोर संघ की ओर से ।" अब्दुस्समद ने अपनी बांह बहुत जोर से फैला दी, उस के सीने पर लगे तगमे खनखना उठे । ऊंचे स्वर में बोला, "सर्वसम्मति से यह हार तुरसाना साबिरोवा को भेंट किया जाता है । तुम मंच से भाग कर कहां जा छिपी थीं ? हम तो तुम्हें ढूंढते ही रहे ।"

तुरसाना का चेहरा लाल हो रहा था । गर्दन नहीं उठ पा रही थी । फीतों से गुथीं लम्बी-लम्बी दोनों चोटियां घुटनों तक लटकी थीं । बशारत के मन में सूक्ष्म सी स्पर्धा हुयी—अब्दुस्समद कह रहा है, किशोर संघ की ओर से सर्वसम्मति से, सब सदस्यों की ओर से ।

अब्दुस्समद ने तुरसाना को बताया—"प्रोफेसर साहब भी तुम से बात करना चाहते थे । तुम जाने कहां छिप गयीं ?"

तुरसाना पुलक उठी—"प्रोफेसर साहब कहां हैं ?"

"वे तो घर चले गये । तुम्हें अपने यहां आने को कह गये हैं ।"

"प्रोफेसर साहब कितने बूढ़े हैं !" तुरसाना ने कहा, "मैं उन के घर गयी थी । मैंने गाया था तो उन्हों ने बहुत बड़ा, काला-काला बाजा बजाया था । हाय, कितना अच्छा बजाते हैं ! पहले वह भी गाते थे । वह भी ताऊ जी के शहर से आये हैं । ज़ार के राज में बीमार हो गये थे, उन का गला खराब हो गया । डाक्टरों ने इलाज किया

पर गला ठीक नहीं हुआ। मुझे उन्हों ने बताया था तो उन की आंखों में आंसू आ गये थ। हाय, मुझे बड़ी दया आयी! उन्हों ने मुझे कहा—बिटिया, अपने गले का बहुत ख्याल रखना। यह बहुत बड़ी नेमत है, तुम्हारे लिये और दूसरे लोगों के लिये भी। बताया, एक बहुत बड़ा शहर है, वहां बहुत बड़ी रंगशाला है, दुनिया में सब से बड़ी। वहां रोज गाना होता है। पूरा नाटक गाने में होता है। मुझे उस का नाम नहीं याद रहा।"

"धत्त पागल!" बशारत ने बोलने का अवसर देख आगे बढ़ कर कहा, "उसे नाटक थोड़े ही कहते हैं, उसे तो कंसर्ट (संगीत-समाज) कहते हैं।"

"नहीं, नाटक कहते हैं, प्रोफेसर साहब ने बताया है।" तुरसाना ने कन्धे हिला कर आग्रह किया, "मैं भी स्कूल में दाखिल होऊंगी! मैं भी किशोर दल की मेम्बर बनूंगी!"

"वाह, तू तो इतनी छोटी है।" बशारत ने अब्दुस्समद की ओर देखा, "यह क्या दल में भर्ती हो सकती है?"

"ज़रूर-ज़रूर!" अब्दुस्समद ने समर्थन किया।

"सोफिया तायी कहती है, किशोर दल बड़े-बड़े कारखाने बनायेगा। शत्रुओं का मुकाबला करेगा यह तो सिर्फ गाती है। सब लोग काम करेंगे, लड़ाई में जायेंगे और यह गीत गायेंगी?"

अब्दुस्समद हंस पड़ा—"गीत गाने की जरूरत तो हर काम में होती है, लड़ाई में भी होती है। गाना तो हर मौके पर चाहिये।"

"वाह जी, ऐसे कामों में गाने-रोने की क्या मतलब?" बशारत चुनौती के स्वर में बोली, "हम तो बूढ़े प्रोफेसर साहब की तरह कभी भी न रोयें। मैं तो अम्मीजान, सोफिया तायी और जुलैखां मौसी की तरह काम करूंगी, लड़ूंगी।"

बशारत आस-पास खड़े किशोर-किशोरियों को सुना कर बोली—"अम्माजान की सहकारी में जाकर देखो, कुदरतुल्ला के कारखाने जैसा हाल थोड़े ही है। वहां तो स्त्रियां बिलकुल रेल के कारखाने की तरह काम करती हैं, गाती थोड़े ही रहती हैं, काम करती है।"

अब्दुस्समद ने अपने साथियों की ओर नज़र डाल कर बशारत से कहा—"बशारत सुनो! तुम्हारे लिये एक काम है, बहुत महत्वपूर्ण काम। कर पाओगी?"

"महत्वपूर्ण काम है, मैं ज़रूर करूंगी।" बशारत ने साहस से कहा।

"तुम्हें एक छोटी सी पुस्तक दूंगा। बहुत महत्वपूर्ण पुस्तक है। किशोर दल के सब लोगों को वह पुस्तक पूरी याद होनी चाहिये।" समद ने जेब से दियासलाई की डिबिया के बराबर एक छोटी सी पुस्तक निकाली—किशोर दल के नियम।

"पहले इसे स्वयं पढ़ो। कोई बात समझ न आये तो पूछ लेना, मैं समझा दूंगा। फिर इसे अपने स्कूल में लड़कियों को पढ़ाना। तुम्हारी सहायता के लिये किशोर दल की नगर कमेटी से भी किसी को भेजने का यत्न करेंगे। यदि मुझे कहा गया तो मैं आ जाऊंगा, तुम्हारे स्कूल में किशोर दल का संगठन आरम्भ होना चाहिये।"

बशारत ने पुस्तक को आदर से दोनों हाथों में ले लिया—"मैं इसे पूरा जबानी याद कर लूंगी।"

अब्दुस्समद ने हाथ बढ़ा कर बशारत से मिलाया। बशारत ने समद से हाथ मिला कर गर्व से बहिन की ओर देखा—बहिन को किशोर दल की ओर से हार मिला था तो वह भी कम नहीं रही थी।

रात पड़ रही थी। दोनों बहिनें तुरन्त घर के लिये चल दीं। गलियों में धूल ठंडी हो चुकी थी। ठंडी-ठंडी मुलायम धूल पांव को भली लग रही थी। तुरसाना बहुत उमंग में थी। हाथों में क्लब से मिला हार, जूते और फीते संभाले थी। जल्दी घर पहुंच कर मां को दिखाना चाहती थी।

बशारत मां का नया बुरका ओढ़े थी। उस के लिये कुछ बड़ा ही था, पांव में उलझ रहा था इसलिये किनारे को हाथों में समेटे थी। अब वह बच्ची तो थी नहीं कि जाते ही सो जाती। मां सहकारी की प्रधान थी, रात-रात जाग कर काम करती थी। बशारत को भी घर जाकर, रात जाग कर नयी पायी पुस्तक पढ़नी थी।

लड़कियों को क्लब में विलम्ब हो गया था। आकाश में तारे खिल आये थे। बशारत सोचती आ रही थी—अम्मां राह देख रही होंगी। अम्मा को कितना काम करना पड़ता है, कैसी दुबली होती जा रही हैं। सुबह सूरज निकलते ही सहकारी में चली जाती हैं, संध्या भी देर से लौटती हैं। कितनी थक जाती हैं!" बार-बार न कहो तो खाना भी न खायें। हाय, कहीं बीमार न पड़ जायं! पर अब पहले की तरह रोती तो नहीं हैं···अम्मां बीमार पड़ गयीं तो क्या करूंगी? बीमारी आनी है तो मुझ को ही आये! अम्मां कितनी अच्छी हैं, कितना काम कर रही हैं तभी तो सब लोग उन्हें इतना मानते हैं···।

लड़कियां निमांचा की तंग टेढ़ी गली से घर की ओर बढ़ने लगीं। बुरके में बशारत को बहुत गर्मी लगी तो उस ने नकाब सिर पर पलट ली। अन्धेरा था और गली में कोई था भी नहीं। बशारत तेज कदमों से चल रही थी। तुरसाना पीछे नहीं छूट जाना चाहती थी। हांफती हुई बहिन के साथ-साथ दौड़ती चली आ रही थी।···अम्मां खाने के लिये उन की प्रतीक्षा कर रही होंगी। दोनों ही दौड़ कर मां से लिपट जाना चाहती थीं। तुरसाना चौकी पर खाना परोसना चाहती थी।

लड़कियां अपने मकान के दरवाज़े पर आकर ठिठक गयीं। धरती पर कुछ काला-

दिखायी दिया। कोई गिरा पड़ा था या नशे में बेहोश होकर गिर गया था। तुरसाना नशे में बेहोश लोगों से बहुत डरती थी। बशारत को भी थोड़ी-बहुत घबराहट होती ही थी। लड़कियां भीतर कैसे जातीं ?

धरती पर पड़ी हुई काली छाया सी चीज कुछ हिलती सी दिखायी दी। दोनों लड़कियां भय से सुन्न रह गयीं।

कराहट सी सुनायी दी। दोनों लड़कियां सिमिट कर एक-दूसरे लिपट गयीं। धरती पर फैली काली वस्तु निश्चल हो गयी परन्तु लड़कियां कदम बढ़ाने का साहस न कर सकीं।

बशारत के मन में आवेगा उठा, उस ने साहस किया। तुरसाना को पीछे करके काली वस्तु की ओर एक कदम बढ़ी और अंधेरे में छाया की ओर झुक कर और आंखें फाड़ कर देखा। हृदय धड़क रहा था परन्तु एक कदम और आगे बढ़ी—उस ने मां का बुरका पहचान लिया।

"अम्मां !" बशारत की चीख निकल गयी।

"अम्मां ! हाय अम्मां !" तुरसाना भी चीख उठी।

भय से चीखती लड़कियां मां के निश्चल शरीर को टटोलने लगीं जैसे बिल्ली के बच्चे आंखें खुलने से पहले मां को दूध के लिये टटोलते हैं। दोनों भय से चीख-चीख कर रो रही थीं।

लड़कियों की चीखों से पड़ोसी निकल आये। कोई लालटेन भी ले आया। बशारत ने देखा, छैला नरमत लालटेन लिये झुक कर देखा रहा था।

पड़ोस से आयी औरतें खून-खून पुकार कर चीख उठीं :—

"मार दिया ! दौड़ो-दौड़ो !"

पड़ोसिनों ने अनाखां का मूर्च्छित शरीर उठा लिया और घर के भीतर ले गयीं। किसी ने चिराग जला दिया।

"जल लाओ !…जल्दी करो ! जल दो !…अभी जान है…!"

निमांचा में रात भर कोई न सो सका। घरों में और आंगनों में दिये जलते रहे। अनाखां के आंगन में और घर के सामने स्त्री-पुरुषों और बच्चों की भीड़ लगी रही।

रजिया, खोजिया और कुमरी पल भर भी अनाखां के पास से नहीं हटीं। उन्होंने अनाखां के खून से लथ-पथ कपड़े उतार कर शरीर से खून धोया और जैसे भी बनपड़ा, दांयें कन्धे पर पटिटयां बांध कर खून रोकने का यत्न किया।

छैले नरमत को 'चार बाजार' जाकर रूसी डाक्टर को बुला लाने के लिये कहा गया। नरमत को घुप्प अंधेरे में अकेले जाते डर लग रहा था। स्त्रियों ने कायरता के लिये उस की लानत-मलामत की। उसके साथ एक और आदमी कर दिया गया। दो

आदमी स्वयं ही याफिम दानिल और जुलैखां को बुलाने चले गये। नज़ाकत दरवाज़े पर खड़ी हो गयी थी कि खामुखाह ही लोग भीतर भीड़ न लगते जायें।

दादी शुक्र अल्लाह अनाखां की खाट के पास धरती पर घुटने टिकाये, अंजली बांधे निरन्तर दुआएं पढ़ती जा रही थी—शुक्र अल्लाह तेरा ! अल्लाह रहमत कर ! या परवरदिगार तूने लड़की की जान बचा ली। हाय अल्लाह, न जाने क्या हो जाता ? हाय अल्लाह, हाय अल्लाह रहम कर···!"

अनाखां ने आंखें खोलीं परन्तु फिर मूर्छित हो गयी। बहुत अधिक रक्त बह जाने के कारण बहुत निर्बल हो गयी थी। रज़िया ने प्याले में जल लेकर उस का मुख खोल कर जल डाला। दो घूंट पी कर उस के होंठ हिले—

"मेरी बच्चियां···?"

तुरसाना और बशारत को मां की खाट के पास लाया गया। अनाखां ने पलकें उठा कर धुंधली सी नजर लड़कियों की ओर डाली और फिर मूर्च्छित हो गयी।

नरमत डेढ़ घंटे बाद 'चार बाजार' से लौटा। उसे डाक्टर मिला ही नहीं। उस ने बीसियों दरवाज़े खटखटाये पर उसे डाक्टर का पता नहीं चल सका। याफिम और जुलैखां को बुलाने के लिये दौड़े गये आदमी भी नहीं लौटे थे।

अनाखां ने कंधे पर बंधी पट्टियों पर खून झलक आया था। दादी शुक्र अल्लाह उठी और मकड़ी का जाला ले आयी। उस ने जाला घाव पर लगा देने के लिये कहा।

अनाखां ने फिर पलकें खोलीं। रज़िया ने उसे पुकारा। वह कुछ उत्तर न दे सकी। उस के हाथ-पांव बरफ की तरह ठंडे होते जा रहे थे।"

अनाखां की खाट को घेर कर बैठी हुई स्त्रियों के हृदय आशंका से मुंह को आ रहे थे। खोजिया और कुमरी लड़कियों को बाहों में लिये थीं। लड़कियां बार-बार रो उठती थीं। मुहल्ले के लोग नज़ाकत को दरवाज़े से ठेल कर भीतर आने लगे— "हमें आखिरी सलाम तो कह लेने दो !"

जुलैखां और सोफिया आ गयीं। उन के साथ एक बूढ़ा रूसी था, चश्मा लगाये, छोटी नोकीली सी लाल दाढ़ी। सिर के सफेद केश कंधों पर फैले हुये थे। बूढ़े ने अनाखां के हृदय की परीक्षा की और सुई में दवाई भरने लगा।

दादी शुक्र अल्लाह देख न सकीं, उस की चीख निकल गयी। आंखें फेर लीं और ऊंचे स्वर में दुआ पढ़ने लगी। स्त्रियां बुढ़िया को पकड़ कर आंगन में ले गयीं।

डाक्टर अनाखां के घाव की परीक्षा करके रूसी में बोला—"छुरे का घाव है। रसोई के छुरे से हमला किया गया है। खून बहुत बह गया है परन्तु हृदय ठीक काम कर रहा है। गुण्डे ने पीछे से हमला किया है। कसाई का हाथ चूक गया। प्राणों को खतरा नहीं है।"

रज़िया डाक्टर के सामने हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाई—"डाक्टर साहब, सच बता दीजिये, कोई खतरा तो नहीं है !"

डाक्टर ने उजवेकी में उत्तर दिया—"नहीं, जान पर कोई खतरा नहीं है । बच्चों को बाहर ले जाओ !"

जल उबाला गया ।

डाक्टर घाव को धो रहा था तो अनाखां को होश आ गया । वह दर्द से कराहने लगी ।

"दर्द होता है ?" डाक्टर ने पूछा, "ठीक है । अच्छा है !"

आंगन में खबर पहुंच गयी—अनाखां बच गयी । डाक्टर साहब कह रहे हैं, खतरा नहीं है ! चंगी हो जायेगी ।

याफिम आया तो उस के साथ कोट-पतलून पहने चुस्त नौजवान भी था ।

नौजवान ने पूछा—"यह घटना कहां हुई ?"

"ड्योढ़ी के सामने ।"

नौजवान के माथे पर बल पड़ गये—"वहां तो सैकड़ों लोग आ जा चुके हैं । सब से पहले कौन आया था ?"

"लड़कियां, इस की बेटियां !"

"बड़ी उमर के लोगों में से सब से पहले कौन आया था ?"

छैले नरमत को नौजवान के सामने बुलाया ।

"तुम ने क्या देखा ? कोई छुरा या चाकू दिखाई दिया ?"

"नहीं साहब, मैंने तो कुछ नहीं देखा । छुरा नहीं देखा । हुजूर, मैं तो डाक्टर को बुलाने चला गया था ।"

नौजवान ने स्त्रियों से पूछा—"यह कुछ बोली, कुछ कह रही थी ?"

"हम ने तो नहीं सुना ।" रज़िया ने जबाब दिया ।

"कुछ तो कहा होगा ? बोली ही नहीं ?"

"बस लड़कियों के लिये पूछ रही थी ।"

"और कुछ नहीं ?"

"जी नहीं ।"

नौजवान ने अनाखां का बुरका लेकर उसे ध्यान से देखा और फिर डाक्टर से पूछा—"अब क्या हाल है ?"

"अब होश में है," डाक्टर ने कहा, "पर उसे नींद आ जानी चाहिए । चाहो तो एक-आध बात पूछ सकते हो, ज्यादा नहीं ।"

नौजवान ने अनाखां की खाट पर झुक कर पूछा—"आप देख पायीं किस ने वार किया ?"

अनाखां ने बहुत धीमे से इनकार में सिर हिला दिया।

"किसी पर संदेह है ?"

अनाखां ने संकेत से इनकार कर दिया और आंखें मूंद लीं।

स्त्रियां उस की खाट बरामदे से कमरे के भीतर ले गयीं।

याफिम दानिल और नौजवान चले गये।

अनाखां सुबह तक सोती रही। नींद में कभी बड़बड़ा भी देती थी। जुलैखां और सोफिया उस की बात को कुछ समझ नहीं पा रही थीं कि वह क्या कह रही थी। रज़िया मौसी ने ध्यान से सुन कर बताया—कुछ ऐसा कह रही है—मैं नहीं तो उसे भी नहीं...।"

प्रातः अनाखां की नींद खुली तो उस ने जल मांगा। वह जल पी कर फिर शांत गाढ़ निद्रा में सो गयी। दूसरे दिन निमांचा के सब घरों की स्त्रियां अनाखां को देखने आयीं। स्त्रियां चुपचाप आ-आकर बरामदे के सामने आंगन में बैठती जा रही थीं। बहुत सी स्त्रियां अनाखां और लड़कियों के लिये खाना बनाकर लेती आयी थीं। बरामदा छोटे-छोटे बर्तनों, हांड़ियों और छोटी-छोटी पोटलियों से भर गया था। बाहर गली में भी लोग खड़े थे। किसी को घर से निकलता देखते तो उसे घेर कर अनाखां का हाल-चाल पूछने लगते। आंगन में बैठी स्त्रियां लड़कियों के मुख देख कर मां की अवस्था का अनुमान लगा लेती थीं। लड़कियां अब रो नहीं रही थीं। बार-बार आंगन में आकर कौतूहल से झांक जाती थीं।

अनाखां ने सुना उस की चिन्ता में, उस का हाल-चाल पूछने के लिए इतनी स्त्रियां आयी हैं तो उस ने अनुरोध किया—"मुझे बरामदे में ले चलो या उन्हें भीतर आ जाने दो।"

"नहीं बहिन, यह नहीं होगा," जुलैखां ने आश्वासन दे दिया, "तुम्हें चिता करने की जरूरत नहीं। उन से मैं स्वयं बात कर लूंगी।"

"मैं भी सुनूंगी!"

"खिड़कियां खोल देते हैं, तुम यहीं से सुन लेना।"

कमरे की खिड़कियां खोल दी गयीं। जुलैखां और सोफिया स्त्रियों से बात करने के लिये बरामदे में चली गयीं। जुलैखां को देख कर सब स्त्रियां खड़ी हो गयीं।

जुलैखां स्त्रियों को सुनने का संकेत करके बोली—"बहिनो, आप जानती हैं कि अनाखां बहिन को किसने घायल किया है ?"

"हत्यारे को सज़ा मिलनी चाहिये!" स्त्रियां बोल उठीं, "हम हत्यारे का खून पी जावेंगी!.. इस तरह लोगों का कत्ल करने का क्या मतलब ?"

"दादी शुक्र अल्लाह कहां है ? कहीं दिखाई नहीं दे रहीं।" जुलैखां ने सोफिया

की ओर झुक कर पूछा ।

"शुक्र अल्लाह् का, उसे रहने ही दो !" सोफिया ने जुलैखां से कह दिया ।

जुलैखां ने स्त्रियों को अपने चारों ओर बैठा लिया । सब स्त्रियां सुनने के लिए चुप हो गयीं तो उस ने कुंदूज सुलेमानोवा की कहानी सुनायी :

"बुखारा की बात है । वहां सोवियत की पहली कांग्रेस 'रेगिस्तान चौक' में होने वाली थी…।

"फरवरी का महीना था । अंधेरी रात । रिमझिम निरन्तर बरसात । शरीर को बेंधती तेज ठण्डी हवा । बियाबान सन्नाटा । बस, कभी-कभी बादल छाये आकाश के नीचे से कोई एक-आध बाज सपाटा मार जाता था । सूनी कच्ची सड़क पर अकेली लढ़िया चली जा रही थी । सुनसान वीरान में लढ़िया के पहियों की चूं-चूं, चर्र-चर्र रेत के मैदानों में दूर-दूर तक गूंज रही थी । लढ़िया में अकेली कुंदूज सुलेमानोवा थी । वह अपने कस्बे की स्त्रियों की ओर से कांग्रेस में, सोवियत सरकार को धन्यवाद देने के लिये बुखारा जा रही थी ।

"देश के इतिहास में इस से पूर्व कभी भी किसी स्त्री ने मर्दों के सामने खड़ी होकर बोलने का साहस नहीं किया था । लोग कुंदूज के अकेले बुखारा यात्रा का समाचार सुनकर उस के साहस पर हैरान थे । मीलों लम्बे रेतीले मैदानों में यात्रा के लिये निकल पड़ना जवां मर्द के लिये भी कम साहस की बात नहीं थी ।

"वीर, साहसी कुंदुज का भाषण सुन सकना कांग्रेस में आये लोगों के भाग्य में नहीं था । रेगिस्तान से भेड़ियों और बाज़ों ने कुंदूज पर आक्रमण नहीं किया । वह बुखारा तक पहुंच भी गयी थी । नगर के द्वार पर क्रान्ति विरोधी हत्यारे, लुटेरे बसमाकिओं के दल ने उस वीर नारी पर आक्रमण कर दिया । उस के शरीर पर छुरों के तेइस घाव लगे । बसमाकियों ने उस के शरीर के टुकड़े करके रेगिस्तान में अपने साथी भेड़ियों और सियारों के लिये फेंक दिये ।

"अनाखां पर भी उन्हीं हत्यारों ने वार किया है । बेईमान हत्यारे स्त्रियों को डरा देना चाहते हैं । बहिनों, तुम जवाब दो, अनाखां आप का जवाब सुन रही है । क्या आप ऐसे हमलों से डर जायंगी ?"

स्त्रियां अनाखां को देख पाने के लिये कमरे की खिड़कियों के सामने आ गयीं । स्त्रियां बिलकुल चुप थीं, केवल उन के कलेजों की धड़कन ही सुनायी दे रही थी । बशारत का मन उमड़ आया । दौड़ी हुई भीतर गयी और मां का घाव दुखने के डर से उस के पांव से लिपट गयी ।

आंगन की स्तब्धता में बशारत की धीमी आवाज़ सुनायी दे गयी—"अम्मा ! अम्मा !"

अनाखां अपने बिस्तर से खिड़की की ओर मुंह करके बोली ।

"मेरी बहिनो, मेरी सहेलियो !" कमज़ोरी के कारण उस की आवाज़ नहीं निकल सकी ।

रज़िया और कुमरी ने अनाखां को सान्त्वना दी—"… रहने दो, तुम परेशान न हो । तुम बस जल्दी चंगी हो जाओ । हम किसी से डरने वाली नहीं हैं ।"

नज़ाकत बरामदे में एक ओर खड़ी थी, वह सोफिया के पास आ गयी । सोफिया का हाथ पकड़ कर उसने कहा—'मैं भी सहकारी में काम करूंगी । मेरा भी नाम लिख लो ।"

"सच कह रही हो ?…तुम सहकारी में आओगी !" सोफिया ने सन्देह प्रकट किया ।

"मुझे बहुत डर लगता है । घर में अकेले मुझे बहुत डर लगता है । मैं भी तुम्हारे साथ रहना चाहती हूं ।"

"अनाखां !" सोफिया ने खिड़की की ओर मुंह करके पुकारा, "नज़ाकत भी सहकारी में आयेगी ।"

"शाबाश !" अनाखां ने उत्तर दिया ।

एक स्त्री फटा हुआ चिथड़ा सा बुरका पहने जुलैखां की ओर बढ़ आयी । स्त्री के पांव में जूती भी नहीं थी ।

"तुम भी सहकारी में नाम लिखाओगी ?" जुलैखां ने स्त्री से पूछ लिया ।

स्त्री ने उत्तर दिया—"आप मुझे जानती थोड़े ही हैं !"

"तुम्हें कहीं देखा तो जरूर है ।" जुलैखां ने स्त्री को ध्यान से देख कर कहा । जुलैखां को याद आ गया—मनकों और सीप की मालाओं से सजाधजा गधा, चायखाने के चौंतरे पर पाल्थी मारे, प्लेट चाटता बहुत मोटा सा आदमी । सूखा, मुरझाया सा शहतूत का पेड़, गोद का बच्चा लाल टोपी पहने, टोपी से बाहर निकली बच्चे की छोटी सी चुटिया…।

"किस की घरवाली हो तुम ?"

स्त्री पल भर को झिझकी । उस ने अपने चारों ओर देखा और बोली—"हुजूर, सुना है आप जज हैं । मैं आप को ढूंढ़ रही थी । सुना कि आप यहां आयी हैं, इसलिये आयी हूं । मुझे कुछ कहना है…।"

स्त्री सब के सामने अपनी बात नहीं कहना चाहती थी । जुलैखां उसे एक ओर ले गयी । जुलैखां ने कहा—"मैं तो तुम से आप ही मिलना चाहती थी । अच्छा हुआ, तुम आ गयीं ।"

स्त्री ने जुलैखां के सामने बहुत झुक कर कहा—"अल्लाह हुजूर का इकबाल करे, उम्रदराज़ हो !"

जुलैखां बरामदे में एक ओर बैठ स्त्री से बहुत देर तक बात करती रही ।

जुलैखां और सोफिया कमरे में लौटकर आयीं तो अनाखां ने सोच कर कहा—"कल रात कोई मुझ से कुछ पूछ रहा था ।"

"हां हां !"

"अब मुझे कुछ याद आ रहा है···।"

"क्या ?"

"जब मैं चोट खा कर गिरी तो कुछ सुनायी दिया था, जैसे कोई कह रहा था । मैं नहीं तो उसे भी नहीं···?"

"यह तो तुम बेहोशी में भी कह रही थी ।"

"नहीं, अब मुझे याद आता है, भारी सी आवाज थी · मैं नहीं तो उसे भी नहीं · ?"

"मतलब क्या है···?"

"यह तो नहीं जानती ।"

ग्यारहवां परिच्छेद

जब तक डाक्टर से नहीं कह दिया कि अब कोई खतरा नहीं है और अनाखां की अवस्था काफी नहीं सुधर गयी, रज़िया मौसी अनाखां के यहां ही रही, अपने घर नहीं गयी । उसे अपने घर की कुछ भी खबर नहीं थी ।

रज़िया ने अपने आंगन में कदम रखा तो देखा—एक जवान गुलाब की झाड़ी के नीचे बैठा था, उस का झोला समीप ही धरती पर पड़ा था । पहले तो रज़िया ने नकाब उठाने का साहस नहीं किया फिर चीख कर जवान की ओर दौड़ पड़ी । उस का बुरका पांव के नीचे दब कर गिर पड़ा ।

"बेटा !"

अरगाश ने मां को आलिंगन में लेकर सान्त्वना दी—"अम्मा, रो क्यों रही हो !"

अरगाश का कद-काठ अच्छा था । उस का लाल पलटन का पुराना कोट धूप और वर्षा से बदरंग हो चुका था । कोट का कालर पसीने के नमक से सफेद हो रहा था । ऊंचे बूटों पर खूब धूल चढ़ी हुई थी । रेगिस्तान की लू से तपे चेहरे से मरदानगी दमक रही थी ।

अरगाश चार बरस तक लाल पलटन में मोर्चे पर लड़ कर लौटा था । पूरा जवान

मर्द हो गया था परन्तु मां की आंखों ने उस की चाल-ढाल में बचपन की पुरानी आदतें भांप लीं। वही पुरानी चंचलता, निठल्ला न बैठ सकना।

अरगाश ने जेब से एक डिबिया निकाली। तम्बाकू की पत्ती लेकर सिगरेट बनाने लगा। रज़िया चौके में चली गयी। आखें बेटे के चेहरे से हटा नहीं पा रही थी। आंसू थम नहीं रहे थे। उसे लग रहा था जैसे सपना देख रही हो—अल्लाह रखे! कितना प्यारा जवान लग रहा है।

"अम्मा रोये क्यों जा रही हो! अभी रो-रो कर मन नहीं भरा?" अरगाश ने पूछ लिया।

"हाय, रोयें तेरे दुश्मन! बेटा, मैं कहां रो रही हूं!"

रज़िया चाय तैयार कर रही थी तो अरगाश ने बूट उतार दिये। हाथ-मुंह धोकर छांह में मिट्टी के चबूतरे पर पाल्थी मार कर बैठ गया। अपने चारों ओर नज़र डाल कर बोला—"आज तो अपने चौंतरे पर बैठे हैं।"

आंगन वीरान सा लग रहा था। पतेल का छप्पर वर्षा से छन गया था। रसोई में और दूसरी दीवारों पर भी लिपाई की जरूरत थी। इधर-उधर बांस और चटाई के टुकड़े बिखरे हुये थे। अरगाश ने मां की ओर करुणा से देखा—"अम्मा कहती तो होगी कि तुम्हें छोड़ कर भाग गया था। तुम्हें सब बताऊंगा, क्या-क्या किया, क्या-क्या देखा तब नाराज़ नहीं रहोगी! अम्मा, सदा ही तुम्हारी याद आती रही। यही ख्याल था कि तुम्हारे लिये, तुम्हारे जैसे गरीबों के लिये ही सब कुछ कर रहा था।"

रज़िया, ने उत्तर दिया—"बेटा मैं क्यों नाराज़ हो जाऊंगी! सरकार के लोग—अल्लाह उन्हें खुश रखे—मेरी इज्ज़त करते हैं, मुझे लाल पलटन के सिपाही की मां कहते हैं। तू गया था तो दो सरकारी आदमी आये थे। मेरा सब हाल-चाल पूछ गये। मैं दफ्तर में जा कर तेरी तनखाह ले आती थी। सात बार ला चुकी हूं। कुदरतुल्ला के कारखाने में भी काम करती थी। मुझे क्या तकलीफ थी?"

अरगाश को बुरा लगा—"तुम लाल पलटन के सिपाही की मां, तुम कुदरतुल्ला के कारखाने में काम करती थीं?"

रज़िया ने बेटे को पत्र में भी यह बात लिखी थी, तब भी अरगाश को पढ़ कर बहुत बुरा लगा था।

रज़िया ने बताया—"अब तो हमने अपनी सहकारी बना ली है पर गुण्डे हमें डरा रहे हैं। उन्होंने हमारी प्रधान के ऊपर छुरा चलाया है, कत्ल कर देना चाहते थे। निमांचा में उसके बराबर दूसरी दमदार स्त्री नहीं है।"

"उन लोगों की इतनी हिम्मत?"

"मैं क्या जानूं बेटा, बेईमान लोग स्त्रियों को दबाये रखना चाहते हैं।"

"इन्हीं बेईमानों से तो लड़ रहा था।"

रज़िया के चेहरे पर चिन्ता आ गयी। बेटे को दुःखद घटना सुनाना नहीं चाहती थी परन्तु निमांचा की स्थिति बताना तो जरूरी था।

अरगाश उत्तेजना में चौतरे से उठ खड़ा हुआ। उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था—गरीबों का खून पीने वाले शहर में अब भी मौज मार रहे थे। उसके पिता का हत्यारा भी ज़िन्दा था। लाल पलटन क्रान्ति-विरोधी हत्यारों को कुचल रही थी परन्तु ऐसे हत्यारे तो नगर में ही मौजूद थे।"

सुल्तान का बेटा अरगाश १६२१ में, लाल पलटन में स्वयंसेवक भर्ती हो गया था। उस समय उसकी आयु १६ बरस की थी। उस का हृदय कुदरतुल्ला और कुदरतुल्ला जैसे राक्षसों के प्रति क्रोध और घृणा से जल रहा था। अपना घर छोड़ कर ताशकंद पहुंचने में अरगाश को बहुत संकट झेलने पड़े। ताशकंद में 'लाल रक्षकों' के दफ्तर में पहुंच कर उसे राइफल और कारतूस तो मिल गये परन्तु वह लाल सेना का सिपाही अदियान स्टेशन की लड़ाई के बाद ही बन सका।

अरगाश बहुत से मोर्चों पर लड़ा परन्तु उस का जोश कम नहीं हुआ। वह 'उज़बेक पलटन' में भी रहा और इस्मिक कूल के किनारे जन स्वतंत्रता के विरोधी बसमाकियों से भी लड़ाई के मैदान में अरगाश कभी पीछे नहीं रहा। उस ने शत्रु को कभी पीठ नहीं दिखाई। उस का अनुमान था कि उस के नगर में भी लोग पीछे नहीं रहे होंगे। लौट कर हैरान था—अमीर-उमरा और साहूकार अब भी तिजारत के फंदों से दौलत बटोरे जा रहे थे बल्कि लोगों पर छुरे चला रहे थे…।

रज़िया बेटे को बहलाने के लिये दूसरी बातें करना चाहती थी। बेटे की ओर देख कर मुस्करायी और दामन का किनारा उंगली पर लपेटते हुए पूछ लिया—"चिट्ठियां मिलती थीं!"

"कैसी चिट्ठियां?" अरगाश ने समझ कर भी पूछ लिया।

मां बेटे की ओर देख कर हंस दी—जैसे सब कुछ जानती हो।

"अम्मा, चिट्ठियां तुम्हें भी दिखाती थी?"

"दिखायी तो नहीं पर मैं क्या इतना नहीं जानती थी कि चिट्ठी और किसे लिखेगी! लोग तो कहते हैं—खोजिया ने मुहब्बत में लिखना-पढ़ना भी सीख लिया।"

"हां, पिछली चिट्ठियां तो अपने हाथ की ही लिखीं थीं।" अरगाश का स्वर बदल गया। अरगाश ने हाथ पर उंगली रख कर संकेत किया, "पर इतनी छोटी-छोटी सी चिट्ठियां भी क्या…।"

"बेटा, चिट्ठी छोटी हुई तो क्या, बड़ी हुई तो क्या! मन की बात ही तो कहनी है।…सच्ची कहूं, मैं तो खोजिया को अपनी बहू मान चुकी हूं। सब लोग लड़की की

तारीफ करती हैं। कहती हैं, अनाखाँ से कम नहीं है। निमाँचा की दुकान तो वही सम्भाले है।"

"दुकान ?···कैसी दुकान ?" अरगाश को बहुत बुरा लगा, "अब भी दुकानें चल रही हैं, तिजारत हो रही है ?"

रज़िया ने बेटे को समझाया—"वैसी दुकान थोड़े ही है। यह तो स्त्रियों की अपनी द्वाकन है।"

अरगाश मन ही मन झुंझलाया—"कुदरतुल्ला ने सभी को दुकानदारी सिखा दी है। पक्का खून चूस है।"

रज़िया को बेटे की बात अच्छी नहीं लगी।

"क्या कह रहे हो, मालूम है ? जुलैखां क्या कहती है ? हमारे यहां तो सब को लेनिन की, सोवियत सरकार की और बहुत सी बातें सब को बतायी जाती हैं। सब को सिखाया जाता है कि दूसरों को कैसे समझाना चाहिये। खोजिया खूब समझा लेती है।"

अरगाश कटाक्ष से मुस्कराया। सोचा—शायद मुझे भी समझा देगी।

मां ने कहा—"लड़की बहुत समझदार है, बहुत अच्छा दिमाग है। अल्लाह उसे अच्छी रखे ! तुम खुद देख लेना।"

अरगाश ने सोचा—मां इन बातों को क्या समझेंगी ! स्वयं इतने दिन दूर पलटन में रह कर आया था। अपनी आंखों शहर की हालत देख लेना चाहता था।

अरगाश अगले दिन सुबह से घर को सम्भालने में लग गया। चार बरस से घर में कोई मर्द नहीं था। गुलाब की झाड़ी में एक मोटी-लम्बी शाखा सूख गयी थी। उस में अब कल्ले नहीं फूट रहे थे। अरगाश ने लकड़ी काट ली और बराम्दे के ढल आये छप्पर के नीचे टेक लगा दी। आंगन में क्यारियों से हट कर मिट्टी खोद ली। गारा बना कर कोठरियों और आंगन की दीवारों को लीप दिया। आंगन को भी बराबर किया।

चौथे पहर तक अरगाश ने बहुत कुछ सम्भाल लिया था। विश्राम के लिये आंगन में से गुजरती छोटी कूल के किनारे बैठ कर सिगरेट बना रहा था कि आंगन में एक युवती चली आयी। युवती बुरके में थी परन्तु चेहरे पर नकाब नहीं था। सहमे से कदमों से उसी की ओर आ रही थी परन्तु ठिठक गयी और संकोच से बुरके के दामन की झालर के डोरे खींचने लगी।

"सेहतमंद हो अरगाश भाई, क्या हाल-चाल है ? सब ठीक-ठाक है न !" युवती आंखें झुकाये बोली।

अरगाश चार बरस बाद लौटा था। एकदम पहचान तो नहीं पाया परन्तु लड़की

के नाज़ुक हाथ देख कर अनुमान कर लिया, कौन होगी। चार बरस में जवान हो गयी थी। पत्र तो बिलकुल लड़कियों की तरह ही लिखती थी परन्तु अब बच्ची नहीं रही थी। खूब ढंग से पहन-ओढ़ कर आयी थी। अरगाश को झेंप लग रही थी। वह गारे-मिट्टी का काम करके बैठा था। आस्तीनें कोहनियों से ऊपर और पतलून घुटनों तक समेटे था। हाथ-पांव गारे से सने हुये थे।

झिझकते हुये बोला—"शुक्रिया खोजिया, तुम्हारा क्या हाल है ?"

खोजिया लज्जा से उत्तर न दे सकी। ख्याल आ गया—इतनी जल्दी क्यों दौड़ी चली आयी पर आयी थी तो कुछ बात तो करनी ही थी—"हाय मौसी ने आप को ज़रा भी आराम नहीं लेने दिया, आते ही काम पर जोत दिया।" लड़की के स्वर में सहानुभूति और सराहना दोनों ही घुली हुई थीं।

अरगाश का साहस बढ़ा—"यह भी कोई काम है ! सुना है, तुम तो जनाना सहकारी का काम कर रही हो ! "

"कहां, मौसी ने कहा होगा ?" खोजिया के चेहरे पर लज्जा की मुस्कान आ गयी।

"कुछ बताओ तो सही, यहां कैसे काम चल रहा है ?"

"हमारे काम में ऐसा क्या रखा है ! आप क्या सुनेंगे ? आप तो लाल सेना के सिपाही हैं। इतने बहादुर···।"

अरगाश ने अनुमान किया—लड़की अपनी दुकान की बात से झेंप रही है। आत्मीयता से बोला—"क्यों, हमें नहीं बताओगी ?"

"आप हमारी मदद करेंगे न !"

"मेरे करने लायक कुछ होगा तो तुम्हारी खिदमत के लिये हाजिर हूं।"

खोजिया को सुन कर तो बहुत अच्छा लगा परन्तु लजा गयी। आंखें झुकाये बोली—"मैं अपने लिये थोड़े ही कह रही हूं। मौसी घर में हैं न !" जैसे उसे पता नहीं था। वह रज़िया को अभी-अभी सहकारी में देख कर आयी थी। उसी से अरगाश के आने का समाचार पाया था।

"हाय, कहा क्यों नहीं, मौसी घर में नहीं हैं। बड़े वैसे हैं !"

खोजिया लौटने को हुई परन्तु अरगाश ने रोक लिया—"सुनो तो !"

अरगाश ने कूल में अपने हाथ धो लिये और लपकता हुआ कोठरी में गया। पल भर में एक नया रेशमी रूमाल लेकर लौटा। नीले रुमाल पर कपास के सफेद फूल छपे हुये थे।

"तुम तो दुकान की मैनेजर हो। तुम्हारे लिये यह कौन बड़ी चीज है फिर भी रख लो ! तुम्हारे लिये ही लाया हूं।"

"नहीं भाई, मुझे नहीं चाहिये।"

"क्यों इस में क्या हर्ज है ? अम्मां के लिये भी ऐसा ही लाया हूं ।"

"हाय, मैं मर गयी । सब को पता लग जायगा । लोग क्या कहेंगे ?"

"क्या परवाह है । क्या कर लेंगे ?"

खोजिया ने मन में सोचा—मुझे किस की परवाह है परन्तु बोली—"आप ने यों ही इतनी तकलीफ की !"

खोजिया ख्याल में डूब गयी । उस के हाथों ने ताजगी की सुगन्ध लिये कोमल रेशमी रुमाल को सीने पर दबा लिया । अरगाश को लगा, उसे खोजिया के हृदय में स्थान मिल गया ।···घर से सैकड़ों मील दूर रेगिस्तान के मैदानों में, बीहड़ पहाड़ों में, तारों भरे खुले आकाश के नीचे सदा ही इस सुख की कल्पना उस के मन में बनी रहती थी ।

खोजिया लजा गयी, खड़ी नहीं रह सकी, भाग गयी । अरगाश की आंखें उसी की ओर लगी हुई थीं ।

अरगाश ने अपना फौजी कोट धोकर खूब अच्छी तरह से इस्तरी कर लिया । कमर पर वर्दी की पेटी कसे था । उस के अपने शहर की सड़क उस के भारी फौजी बूटों की ठोकर से गूंज रही थी । दो घोड़े जुती एक बग्घी, गर्द के बादल उड़ाती उस के पास से निकल गयी । बहुत से लोग बगल में कागज़ और बस्ते लिये व्यस्तता में आ-जा रहे थे । बूढ़ी स्त्रियां बच्चों को उंगली पकड़ाये लिये जा रही थीं । कुछ स्त्रियां फलों की टोकरियां लिये बाजार से लौट रही थीं । रोगन-मरम्मत करने वाले राज-मिस्त्री, मजदूर तसले-बाल्टियां और अपने हथियार लिये चले आ रहे थे । सभी को काम था, सभी अपने-अपने काम में व्यस्त थे ।

अरगाश चार बरस तक कठिन सैनिक जीवन बिता कर लौटा था । उस ने हफ्तों घोड़े की पीठ पर कूच किया था । घोड़े को सरपट दौड़ाये गांवों और कस्बों से निकल जाता था । तब ऐसे जीवन की झलक पाकर उस के मन में अपने नगर की स्मृति जाग उठती थी । रेगिस्तान के मैदान दिन की घाम में भाड़ की तरह तपने लगते थे । रात में रेत ठंडी हो जाती तो जाड़ा लगने लगता । उस समय सिपाही अलाव जलाकर उस के चारों ओर सो जाते थे । अरगाश आंच के सेक में लेटा कल्पना में ऐसे ही स्वप्न देखता रहता था । उसे आराम की इच्छा नहीं थी । घर के चौतरे पर बैठे या लेटे रहना उस की प्रकृति में नहीं था । वह कुछ करना चाहता था, कुछ बनाने के लिये श्रम करना चाहता था ।

अरगाश बाज़ार में पहुंचा तो उसे नानवाई की पुकार सुनायी दी—"नान बढ़िया गरम-गरम ! मुंह में रखो, मक्खन हो जाए !"

एक रोटी वाला सिर पर रोटियों से भरा खूब बड़ा झावा लिये चला आ रहा था। उस के कुर्त्ते के बटन खुले थे। झावे में कबाब, प्याज़ और हरी मटरी भी सजी हुई थी। बाज़ार, मसालेदार कबाब और धनिये-मिर्ची की गंध से महक रहा था।

कबाब वाला अंगीठी सामने रखे बैठा था। धुयें की चरचराहट से उस की आंखें मिची हुई थीं परन्तु पुकार लगाये जा रहा था—"चालीस मसाले का कबाब! जो नहीं खायेगा पछतायेगा!"

काशगर के नानवाई बाहें फैला-फैला कर बहुत पतली-पतली चपातियां बनाते हुये चिल्ला रहे थे—"शाही चपाती है! न्यामत चपाती है!"

सराय की ड्योढ़ी में एक कसाई सिर कटे मेढ़े की खाल उतार रहा था। उस की बाहें कोहनियों तक रक्त से सनी हुई थीं। उस के हाथ और उंगलियां इतनी फुर्ती और सफाई से चल रहे थे कि आंख टिक नहीं पाती थी।

अरगाश की नज़र एक खूब सजी हुई दुकान पर टिक गयी। दुकान में रंग-बिरंगे थान सजे हुये थे। रंगीन सूत की लच्छियां लटकी हुई थीं। शीशे के अमरतबानों में मीठी गोलियां, लेमनड्राप, उस्मा और मेंहदी सजी हुई थी।

दुकानदार की तोंद खूब भारी थी। वह घुटने पर घुटना चढ़ाये मसनद पर बैठा था। कान पर गज का फीता अटका हुआ था। निष्क्रिय हाथों की उलझी उंगलियां तोंद पर रखे था।

अरगाश ने दुकानदार को पहचान लिया, मतकौअल था। चार बरस में उस का मुटापा ज़रा भी कम नहीं हुआ था। मक्कार!

मतकौअल की दुकान के नीचे एक भिखारी भीख के लिये तूमड़ी सामने रखे बैठा था। भिखारी अलेयार के शेर गुनगुना रहा था। उस के समीप ही एक ठीकरे में बुरी नज़र का प्रभाव दूर करने के लिये अगर, लोबान, बालछड़ का धुआं उठ रहा था।

अरगाश ने ग्लानि से एक ओर थूक दिया और आगे बढ़ गया।

अरगाश ने सारंगी का स्वर सुन कर ध्यान से देखा, स्वर एक बड़े मकान की खिड़कियों से आ रहा था। खिड़कियों पर धूप रोकने के लिये तिरपाल के टुकड़े तने हुये थे। उसे याद आया—पहले वहां किसी राव का खूब बड़ा होटल था। सोचा, अब यहां क्या है? दरवाज़े पर खूब बड़ा बोर्ड था—'मिगलेव ब्रदर्स, प्राइवेट काफी हाउस।'

अरगाश ने अनुमान किया, कोई बोर्ड लगा रह गया होगा परन्तु दुकान की खिड़कियों से शीशों पर वही नाम बिलकुल नया-नया लिखा दिखायी दिया। याद आया—पहले तो मिगलेव का होटल नये शहर की बस्ती में था।

अरगाश ने अपना कोट पेटी के नीचे खींच कर चुस्त किया और काफी हाउस

में चला गया। अच्छी-खासी भीड़ थी। लोग मेज़ों पर झुके बैठे थे। आंखें नशे से झिपी हुई और गालों पर शराब की तेजी की सुर्खी। सब बोल रहे थे, कोई किसी की सुन नहीं रहा था।

एक मोटा सा जवान, घुटने तक बूट चढ़ाये बहुत गरज रहा था। कभी पागलों की तरह हंस पड़ता। जवान ने अपने सामने मेज़ पर खड़ी बोतलें हाथ के सपाटे से फर्श पर फेंक दीं और हुंकार उठा—"और लाओ!"

एक कोने में सारंगी वाला तख्त पर घुटने मोड़े सारंगी बजा रहा था। तख्त पर दो जवान कसीदेदार कीमती टोपियां लगाये बैठे थे। दोनों के बीच में एक काले केशों वाली युवती बैठी थी। युवती की भौंवें लाल थीं। चेहरा पाउडर से ढका था, होंठों पर खूब सुर्खी थी। दोनों नशे में थे। एक जवान युवती के कंधे का सहारा लिये ऊंग रहा था। युवती के दूसरी ओर बैठा जवान उस के कान में कुछ कह रहा था। उन लोगों के सामने भी मेज़ पर बोतलें गंजी हुयी थीं।

युवती ने बात करने वाले जवान को परे ढकेल कर अरगाश की ओर कटाक्ष कर दिया। अरगाश युवती की ओर अपलक देखता रह गया। स्वप्न में भी कल्पना नहीं हो सकती थी कि ऐसे स्थान में कोई स्त्री हो सकती है।

एक बूढ़े से बैरे ने अरगाश के समीप आ कर सलाम किया—"हुज़ूर, क्या हाजिर किया जाये?"

अरगाश उल्टे पांव होटल से बाहर हो गया। हैरान था, उस के शहर में तो कुछ भी नहीं बदला था। अब भी हरामखोर, पियक्कड़ मौज कर रहे थे। वही खरीद-फरोख्त, वही व्यापार-तिजारत की लूट-मार!... चार बरस तक मुसीबतें उठाने का, चार बरस तक जान हथेली पर लेकर बसमाकियों से लड़ने का क्या फायदा हुआ?

शराब की दुकान के सामने पटरी शराब के पीपों से रुकी हुई थी। शराब के ड्रम पर ड्रम चढ़े हुये थे। ड्रमों के पीछे से शराब वाले का काला-काला चेहरा झांक रहा था। उस का पोपला मुंह मुस्कान में दोनों कानों तक फैल गया। उसने पुकार लिया।

"क्या चाहिये, बन्ने मियां! अंगूरी, वोदका, बियर, बूज़ा, शराब, मुसल्लस जो चाहो, हाजिर करें!"

शराब वाले ने अरगाश के उत्तर की प्रतीक्षा न कर झाग उफनता बूज़ा का प्याला उस की ओर बढ़ा कर शेखी से मुस्करा दिया।

"तुम्हारा क्या नाम है?" अरगाश ने पूछ लिया।

"नाम से तुम्हें क्या लेना है?"

"ठीक से जवाब दो, क्या नाम है तुम्हारा? किस की दूकान है, शराब किस की है, कौन मालिक है?" अरगाश ने डपट कर पूछा!

शराब वाले का हाथ कांप गया—"भैया, अपनी ही है। पियो, दाम थोड़े ही मांग रहे हैं!"

अरगाश कुछ न कह कर आगे बढ़ गया। सोचा—समझता तो है कि अब ज़माना बदल गया है, कौन मालिक है! ...कोई पूछने वाला नहीं है, अब भी मनमानी कर रहे हैं। यहां तो कुछ भी नहीं हो पाया पर यह नहीं चलेगा। यह कैसे हो सकता है?

अरगाश नये शहर की ओर घूम गया। डाकखाने की इमारत की मरम्मत हो गई थी। उस पर नीला रंग पोत दिया गया था परन्तु साथ की इमारत की दीवालें अब भी आग से काली और गोलियों से छिदी हुई थीं।

अरगाश को याद आ गया—चार बरस पहले जब वह लड़का था डाकखाने के रास्ते ही वह किले की ओर गया था। दुश्मन दनादन तोपें दाग रहा था परन्तु उस ने परवाह नहीं की थी। उसे रेल मजदूरों की एक टुकड़ी में दूत का काम दिया गया था। याफिम ताऊ, साबिर चाचा के लिये पत्र देते थे। अरगाश पत्र को मुंह में छिपा कर ले जाता था। जानता था, युद्ध का परिणाम पत्र को ठीक समय पर, उचित स्थान पर पहुंचा देने पर ही निर्भर करता था। आखिरी लड़ाई में साबिर चाचा बहुत घायल हो गये थे। वह साबिर चाचा का संदेश लेकर दौड़ा हुआ बाज़ार में याफिम ताऊ के यहां गया था।

रेल के कारखाने में अरगाश ने देखा—कारखाना बहुत बढ़ गया था। खूब ज़ोरों से काम हो रहा था। नया ढंग दिखाई दे रहा था और बहुत सुव्यवस्था थी।

अरगाश ट्रेड यूनियन के दफ्तर में याफिम दानिल के पास गया तो आदर से चुप था परन्तु उस के मन में नगर में देखी स्थिति के कारण क्षोभ उबल रहा था।

याफिम दानिल अरगाश का गुरू था। सब से पहले अरगाश ने उस की कमान में ही काम लिया था। अरगाश उस का बहुत आदर करता था।

याफिम ने अरगाश का स्वागत आत्मीयता और स्नेह से किया। अरगाश को लगा कि याफिम को शहर की स्थिति की कुछ खबर नहीं या उसे परवाह नहीं थी, कोई चिन्ता नहीं थी। अरगाश को याफिम का उल्लास और संतोष अच्छा नहीं लगा। वह मन ही मन घुट कर चुप रह गया।

याफिम नौजवान का भाव भांप गया। अरगाश का हाथ अपने हाथों में दबा कर बोला—"क्यों, क्या बात है, चुप क्यों हो गये? इतने दिनों बाद मिले हो, कुछ बोलते ही नहीं? परेशान क्यों हो?"

"नहीं मैं तो ठीक ही हूं।" अरगाश ने उत्तर दिया, "अभी नगर में घूम कर आ रहा हूं। मैं तो कुछ समझ नहीं पाया। अब भी वही सब चल रहा है, वह मतकौअल, वह मिगलेव! दानिल साहब, आखिर परिवर्तन क्या हुआ, बना ही क्या?"

याफिम ने नौजवान को सिर से पाँव तक देखा और जोर से हंस दिया, "यों ही व्यर्थ में लड़-लड़ कर मरे !"

"तो और क्या।" अरगाश दबा नहीं, हम फिजूल मीलों पांव पर चीथड़े लपेट-लपेट कर दलदलों में लड़ते रहे ? रेगिस्तान में रेत फांक-फांक कर मशीनगनों का सामना किस लिये करते रहे ? आप ने ही कालापानी किस लिये काटा था। जान हथेली पर लिये किले पर हमला करने क्यों गये थे ? बताइये, मुझे भी समझाइये ! क्या थक गये हैं, अब दम नहीं रहा ?"

याफिम मूछों में मुस्कराया—"तुम बैठो, बात करें तो समझ में आयगा। तुम्हारे दिमाग में भूसा थोड़े ही भरा है। समझोगे क्यों नहीं !"

अरगाश को कुछ सान्त्वना मिली। याफिम ताऊ पर उसे भरोसा था।

याफिम ने पूछा—"तुम नगर में घूम कर आये हो। हालत देख कर तुम्हें बहुत विस्मय हुआ पर तुम ने देखा ही क्या ?"

"मैंने देखा क्या ? मैंने देखा, हमारे दुश्मन, हमारा खून पीने वाले खूब मौज मार रहे हैं।"

"ठीक है। पहले तुम देखने का ढंग सीखो। शत्रु पर तो सदा नज़र रखनी ही चाहिये परन्तु तुमने अपने मित्रों को भी देखा ? कपास का कारखाना कितने जोर से चल रहा है ? जानते हो, वहां कौन संचालक है, अब्दुल करीम। हमारा पुराना मज़दूर साथी। लेनिन मार्ग पर राष्ट्रीय बैंक देखा ? वह भी हमारे ही हाथ में है, हम ही उस के मालिक हैं। 'उत्पादक सहकारी' और 'उपभोक्ता सहकारी' संस्थायें किस के हाथ में हैं ? तुम वहां गये ? जनाना सहकारी की बाबत सुना है ? इन सब का कुछ महत्व नहीं समझते ?...हमारा रेल का कारखाना कितना बढ़ गया है ? अभी देखोगे, कुछ दिन में वहां गाड़ियां बनने लगेंगी। यह सब नहीं देखते ? तुम क्रान्ति के सिपाही हो। तुम्हें यह सब देखना चाहिये !"

"यह सब तो देखता हूं।"

"देखते हो तो तुम्हारा मन काम करने को नहीं चाहता ? दिल कुछ कर सकने के लिये नहीं छटपटाता ?"

"क्यों नहीं, परन्तु पहले शत्रुओं को खत्म करना जरूरी है। अभी बन्दूक की जरूरत है।"

"नहीं, नहीं ! बन्दूक का समय हो चुका। याद रखो, बन्दूक निर्माण का काम नहीं कर सकती। अब हथौड़े-छेनी की जरूरत है। हमारी पार्टी के झण्डे पर हंसिया-हथौड़े का चिह्न क्यों बनाया गया है ? हमारा असली लक्ष्य तो निर्माण है। हमें अपने उत्पादक श्रम से निर्माण द्वारा क्रान्ति को सफल बनाना है। हम ने क्रान्ति

निर्माण और उत्पादन का अवसर पाने के लिये ही की है ।"

"निर्माण, क्या यह तिजारत नफाखोरी निर्माण है ?" अरगाश ने उत्तर मांगा ।

"तिजारत भी हमें सीखनी होगी" याफिम ने आग्रह से कहा, "बल्कि हमें और अच्छे ढंग से तिजारत करनी होगी । तुम्हारे सामने कुदरतुल्ला का उदाहरण है । बरसों से वह कारखाना चला रहा था परन्तु हमारी सहकारी शुरू में ही उस से अधिक नफा निकाल रही है । निमांचा के बुनकरों को सहकारी अधिक मज़दूरी देती है, वहां मजदूरों को अधिक आराम भी है । पीढ़ियों पुराने संस्कारों के बावजूद, जहरीले विरोधी प्रचार के बावजूद, छुरे और कत्ल की धमकियों के बावजूद, स्त्रियां जनाना सहकारी में शामिल हो रही हैं । यह हमारी विजय, किले जीत लेने से भी बड़ी विजय है ।"

अरगाश कुछ पल मौन रह गया उस का स्वर बदल गया—"मां भी यही कह रही थी, मां काफी समझने लगी है । मैं मां से फिर बात करूंगा ।"

याफिम ने नौजवान की आंखों में देखा—"अब कुछ समझ में आया ? जाकर देखो लोग क्या कर रहे है ! देखो स्त्रियां क्या कर रही हैं ! तुम मज़दूर के बेटे हो, तुम स्वयं समझ जाओगे कि हमारी श्रेणी के लिये संघर्ष का क्या मार्ग होना चाहिये । हमें अवसर के अनुकूल अपने उद्देश्य के लिये, बन्दूक हथौड़े और शब्दों का भी उपयोग करना चाहिये ।"

अरगाश की गरदन झुक गयी—"ताऊ जी, मैं काम करने के लिये ही तो लौटा हूं इसीलिये तो आप के पास आया हूं ।"

"अच्छा, हाथ मिलाओ !" याफिम ने मुस्कराकर हाथ बढ़ा दिया ।

अरगाश ने याफिम का हाथ इतने जोर से पकड़ कर झटका कि याफिम की उफ निकल गयी—"बस-बस ! बूढ़े आदमी पर रहम करो ! बाबा, रहम करो !"

"आप तो फैक्टरी कमेटी के प्रधान हैं न ?" अरगाश ने पूछा ।

"हां, क्यों ?"

"आप को तो नगर कमेटी का प्रधान होना चाहिये था या नगर पार्टी कमेटी का मंत्री होना चाहिये था । आप को तो महत्वपूर्ण काम हाथ में लेना चाहिये था ?"

याफिम गम्भीर हो गया—"जनता के काम में सभी काम महत्वपूर्ण हैं । रूसी कहावत नहीं सुनीं—पद आदमी का महत्व नहीं बढ़ाता बल्कि आदमी पद का महत्व बढ़ाता है । ईमानदारी से काम करो । जनता के हित के लिये काम करो । सभी काम महत्वपूर्ण हैं ।"

"मुझे भी तो काम बताइये !" अरगाश ने अनुरोध किया ।

"काम की क्या कमी है ? तुम्हें तो मोर्चे पर खड़ा होना पड़ेगा !" याफिम मुस्कराया ।

याफिम और अरगाश रेल के कारखाने के हाते में, रेल की पटरी के साथ-साथ जा रहे थे। कारखाने के साथ पहले खाली पड़ी जमीन में अब जगह-जगह कारखाने की इमारतें फैल गयी थीं और पक्की ईंट की एक खूब ऊंची इमारत की दीवारें आकाश की ओर उठती जा रही थीं। नयी इमारत के पड़ोस में पुरानी, धुएं से काली इमारतें मुर्गियों के दर्बों जैसी लग रही थीं। नयी इमारत में लगे तख्ते, लोहे के शहतीर और सरिये आकश को छू रहे थे। काठ के मकानों जैसे बड़े-बड़े बक्सों में बंद मशीनें और डाइनेमो अपने लिये स्थान बन जाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। अगराश इतनी ऊंची इमारत और इतनी मशीनें देखकर विस्मय से कुछ बोल नहीं पा रहा था।

"कुछ देखा ?" याफिम ने कटाक्ष से पूछा।

"बहुत-बहुत देखा !" अरगाश की बाछें खिल गयीं।

अरगाश दूसरे दिन भी याफिम के यहां गया। याफिम ने उसे देखते ही कहा—"आओ, मेरे साथ चलो !"

याफिम अरगाश को जनाना क्लब में ले गया। उस दिन क्लब के दरवाज़े पर इतनी भीड़ थी कि भीतर जा सकने के लिये कुछ टेढ़े-तिरछे हो कर जाना पड़ा। हाल खूब भरा हुआ था। याफिम ने अपने और अरगाश के लिये दो कुर्सियां ले लीं।

मंच के सामने पहली बेंच पर एक खूब मोटा सा आदमी अकेला बैठा था। उस के शरीर पर धारीदार चोगा और सिर पर नोकदार मखमली गोल टोपी थी। मोटे के साथ किरच चढ़ाये एक सिपाही चौकस खड़ा था। सिपाही के कोट की बांह पर लाल पट्टा था। किर्च रोशनी में खूब चमक रही थी। बेंच पर बैठा मोटा दोनों हाथों से अपनी तोंद सम्भाले, हाल में शोर की परवाह न कर फर्श की ओर टकटकी लगाये था।

याफिम ने मोटे की ओर संकेत कर अरगाश के कान में पूछ लिया—"पहचानते हो ?"

"नहीं तो।"

"आखिर पकड़ा गया। जुलैखां ने छोड़ा नहीं।"

"जुलैखां की मां भी तारीफ कर रही थी।"

"बहुत चुपचाप काम करने वाली है" याफिम ने कहा।

मंच पर रखी मेज पर लाल मेजपोश था। मंच से आवाज सुनायी दी, श्री मतकौअल, पिता का नाम मर्दानकुल अदालत में हाजिर हो ?"

मुटल्ला बैठे ही बैठे उत्तर के लिये ज़रा हिल गया।

"अदालत के प्रश्न का उत्तर खड़े होकर दो !"

सेठ मतकौअल घुटने का सहारा लेकर खड़ा हो गया।

"मतकौअल आप स्वीकार करते हैं कि श्रीमती कुलनिसा शादमान की बेटी का बच्चा आप की संतान है ?"

मतकौअल ने खांस कर गला साफ किया और फिर बहुत धीमे से बोला, जैसे समझा रहा हो—"मर्द औरत को रखेगा तो बीवी बना के रखेगा। बीवी हो तो बच्चे होते ही हैं।"

जज ने पूछा—"क्या यह ठीक है कि शादमान की बेटी कुलनिसा आप के यहां नौकर थी ?"

मतकौअल ने पल भर सोचा और हाथ जांघ पर पटक कर उत्तर दिया—"बीवी का काम मर्द की खिदमत-नौकरी करना है। बीवी नौकर ही होती है !"

जुलैखां ने प्रश्न किया—"यह ठीक है कि कुलनिसा को आप ने दासी बनाने के लिये खरीदा था ?"

"क्या ?" मतकौअल ने पूछ लिया।

जुलैखां ने अपना प्रश्न दुहराया।

"मैं सवाल का मतलब नहीं समझा।"

जुलैखां ने धैर्य से अपना प्रश्न तीसरी बार किया।

मतकौअल कुछ झिझका—"सौदागार का तो काम ही खरीदना-बेचना है।"

मतकौअल के उत्तर से हाल में बैठे लोगों के माथे पर बल पड़ गये।

"साफ-साफ जवाब दो ! अपना गुनाह कबूल करते हो ?" जुलेखां ने प्रश्न किया।

"खुदा के सामने सभी मुसलमान गुनाहगार हैं।" मतकौअल ने उत्तर दिया।

मतकौअल ईश्वर के नाम पर अन्धविश्वास की दुहाई देकर बच नहीं सका।

बाज़ार में मतकौअल का बहुत आतंक था। आसपास के मुहल्लों में वह सब से अमीर था। बस्ती की बहुत सी स्त्रियां मुकदमा सुनने के लिये आयी थीं। सब सांस रोके जुलैखां की जिरह सुन रही थीं।

कुलनिसा बुरका ओढ़े थीं। उस के आंसू बहे जा रहे थे। स्पष्ट बोल नहीं पा रही थी परन्तु उस की बातों में बनावट और फरेब नहीं था।

कई स्त्रियों को विस्मय था कि इतना झगड़ा और मुकदमा हो किस बात पर रहा था ? ऐसी बातें तो सदा होती रही हैं। स्त्रियां सदा से सब कुछ सहती रहती हैं। वे तो यही सुनने आयी थीं कि जुलैखां क्या कहती है ? इसी उत्सुकता में मां बेटी को और बेटी मां को मुकदमे में लिवा लायी थी। जुलैखां की बातें सुन कर उन्हें विस्मय भी हुआ और आशा और उत्साह भी अनुभव हुआ—क्या उनके जीवन बदल जायंगे ?

अरगाश ने सोचा—जुलैखां लोगों की भावना खूब समझती है।

कुलनिसा की मां अरमांजार के राव के यहां नौकर थी। मां बूढ़ी हो चुकी थी,

थी, बीमार भी रहती थी, शरीर में शक्ति नहीं रही थी। बिटिया काम-काज में मां का हाथ बटाती रहती थी। राव सोच रहा था कि कम्बख्त बुढ़िया मर जाय, उसे निकालना न पड़े। एक रात बहुत सर्दी थी। बीमार बुढ़िया बेटी की गोद में सिर रखे-रखे चल बसी।

कुलनिसा को झोपड़ी में शव के पास जाते डर लगता था। वह दो दिन तक बिना कुछ बोले अपनी झोपड़ी के चक्कर लगाती रही और फिर भूखी-प्यासी उस भयानक झोपड़ी से भाग खड़ी हुयी।

कुलनिसा अपनी मां की झोपड़ी से चली तो शरीर के कपड़ों और मां के फटे-पुराने बुरके के अतिरिक्त उस के पास कुछ भी नहीं था। पांव में जूती भी नहीं थी। वह एक बड़े नगर में पहुंच गयी। कुलनिसा देहात के घरों का मोटा-झोटा काम ही जानती थी। कई दिन तक नगर में नौकरी खोजती फिरती रही। एक दिन बुढ़ापे से कुबड़ी हो गयी बुढ़िया की नज़र उस पर पड़ गयी।

बुढ़िया ने कुलनिसा से सहानुभूति से बात की। गांव की लड़की जैसे औरों को अपना दुखड़ा सुनाती रही थी, उस ने बुढ़िया से भी सब सच-सच कह दिया। बुढ़िया ने प्यार से कुलनिसा का हाथ पकड़ लिया और एक बहुत बड़ी बजाजी की दुकान में लिवा ले गयी।

दुकान में गद्दी पर बैठा कपास के बोरे जैसा बहुत मोटा आदमी अपनी तोंद को अंगूठों से सहला रहा था।

बुढ़िया ने मोटे बजाज के कान के पास मुंह कर बात की और फिर कुलनिसा के चेहरे से नकाब हटा कर उस का मुख तोंदियल बजाज को दिखा दिया। लड़की को बजाज के फूले गालों और सूजे हुये होठों पर कृपा भाव दिखाई दिया।

बजाज ने लड़की के कान पकड़ कर उसे अपने समीप खींच लिया और उसे मुंह खोलने को कहा। लड़की भय से कांप उठी, कुछ समझ न सकी। बजाज लड़की के दांत-देख कर उस की आयु ठीक-ठीक जान लेना चाहता था।

"मालिक, मैं चौका-बासन कर कर लूंगी!" कुलनिसा हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ायी।

मोटे बजाज ने होंठ चाट कर घरघराये हुए स्वर में पूछ लिया—"ठीक से काम करेगी न!"

बुढ़िया ने बजाज की ओर मुंह उठा कर समझाया—"मालिक, तुम्हारी बीवियों से काम नहीं हो पाता, उन बेचारियों के हाथ-पांव में ताकत कहां! यह सब कर लेगी, बहुत ढूंढ-ढूंढ कर सरकार के लिये लायी हूं...।"

बजाज ने बुढ़िया की मुट्ठी में कुछ दे दिया। बुढ़िया कुलनिसा से बोली : लौंडिया, तुझे खाना-कपड़ा मिलेगा, आराम से रहेगी। मुझे भुला मत देना, याद रखना। माशा

बुआ को भुला मत देना ।

बजाज उठ कर खड़ा हो गया । कुलनिसा उसे विस्मय से देख रही थी । बजाज की बाहें और टांगें भारी तोंद की तुलना में छोटी-छोटी लगती थीं । भारी तोंद को संभालने के लिये खूब वह चौड़ा कमर-पट्टा बांधे था ।

बजाज मतकौअल अस्तबल से बढ़िया जीन-साज कसा एक गधा निकाल लाया । शरीफ बजाज पैदल चलना पसन्द नहीं करता था । वह फुर्ती से उछल कर गधे पर सवार हो गया । कुलनिसा नंगे पांव गधे के पीछे-पीछे चल दी ।

मकान पर पहुंच कर मतकौअल ने कुलनिसा की बांह पकड़ कर उसे जनाने दरवाज़े के भीतर ढकेल दिया और अपने हाथों पर लड़की के बुरके से लग गयी धूल झाड़ कर, पीछे घूम कर कह दिया—"जो काम हो इसे बताओ !...ख्याल से काम लेना, मुफ्त में नहीं ले आया हूं !"

कुलनिसा को आशा थी, उसे कुछ वेतन मिलेगा । उस ने सुना था, नौकर नौक-रानियों को वेतन मिलता है पर यह कुलनिसा का भ्रम ही था ।

मतकौअल की दो बीवियां थीं । बड़ी बीवी पर पति से कम मुटापा नहीं था । सिर पर सफेदी आने लगी थी परन्तु भड़कीले कपड़ों और जेवर का शौक अभी खूब था । शायद उम्र बढ़ने के साथ-साथ सिंगार का चाव और शौक बढ़ता जा रहा था । खोयी-खोयी, फैली हुई आंखों से कुछ पागलपन सा झलकता था । बात-बात पर हंसती रहती थी । समझती थी, हंस देने से वह अल्हड़ छोकरी लगेगी ।

छोटी बीवी सदा की बीमार थी । बहुत दुबली, कद भी छोटा जैसे बचपन में ही बुढ़ापा आ गया हो । माथे, गालों और होठों पर झुर्रियां पड़ गयी थीं । पीठ, कन्धे, सीना कहीं भी मांस दिखायी नहीं देता था । उस की अवस्था से अनुमान होता था कि ग्यारह-बारह वर्ष की उम्र में ही ब्याह दी गयी होगी । शरीर पनप पाने से पहले ही क्षय होने लगा । किशोरी से ही बुढ़िया बनने लग गयी । उस के मन और शरीर की व्यथा ने, उस के स्वभाव में भी भयंकर विष भर दिया ।

कुलनिसा का काम दो मालकिनों की सेवा था ।

मतकौअल की बीवियों ने कुलनिसा की ओर ऐसे घृणा से देखा जैसे कोई भिखमंगी घर में घुस आई हो । कुलनिसा ने उन्हें बहुत झुक कर सलाम किया परन्तु उन्हों ने विस्मय-पूर्ण घृणा से नीचे तक परखा और मुंह फेर लिये ।

कुछ पल बाद बड़ी बीवी सहमती हुई उस की ओर बढ़ी, जैसे मरखनी गइया के समीप जा रही हो । दो उंगलियों से कुलनिसा के माथे से लटका नकाब हटा कर उस के चेहरे पर नज़र डाली । छोटी भी दांतों में होठ दबाये नौकरानी को देखने के लिये आगे बढ़ गयी । नौकरानी बहुत कम उम्र की थी । बड़ी ने खीसें निकाल कर

मुंह ही मुंह में कुछ कहा। छोटी ने उस की कम उम्र के प्रति ईर्ष्या से क्रोध में थूक दिया।

दोनों मालकिनें कुलनिसा को तानों से बेंधने लगीं।

"गूंगी है।"

ऐंठ तो देखो, सिर थोड़े ही उठायेगी!"

कुलनिसा कुछ समझ ही नहीं पा रही थी। क्या कहे, क्या करे, कहां जाय? बेचारी गमईगांव की लड़की कुछ समझती ही नहीं थी। खोई-खोई सी लग रही थी।

"ब्याह हो गया है?" छोटी ने पूछा।

कुलनिसा ने इनकार में सिर हिला दिया।

छोटी का चेहरा और भी क्रुद्ध हो गया।

"अरी बदन दबाना जानती है!"

"झाड़ू-बुहारी कर लेती हूं।"

बड़ी ने धमकाया—"जा-जा, जाकर पहले नहा फिर देखूंगी!"

कुलनिसा नहा-धो कर आयी तो उस का नया उठता रूप-यौवन देखकर दोनों में समझौता हो गया। कल तक दोनों में कुत्ते-बिल्ली का बैर था परन्तु साझे शत्रु के आ जाने से दोनों क्रोध, घृणा और निर्दयता में नौकरानी के विरुद्ध एक हो गयीं। दोनों ने तय कर लिया कि नई औरत को पल भर भी चैन नहीं लेने दें। एक के मुंह से बात निकलती तो दूसरी का भी हुक्म तैयार रहता।

कुलनिसा काम से नहीं घबराती थी, उसे किसी काम से इनकार नहीं था। कभी उस के माथे पर बल न पड़ता। मालकिनों की लात, थप्पड़ या चिकोटी का भी वह विरोध न करती। उस के लिये एक ही विनोद था—बड़ी मालकिन आइना लिये घंटों सिर में मेंहदी रचाती, भौंवों पर उस्मा और आंखों में सुरमा लगाती रहती तो उस के मन में हंसी की गुदगुदी उठने लगती।

दोनों मालकिनों को एक बात से बहुत संतोष हुआ:

एक दिन मतकौअल घर पर नहीं था तो दो सरकारी आदमी आये। एक उज़बेक था और दूसरा रूसी। दोनों ही जवान थे। हाथ में कागज-पेंसिल लिये थे। उन्हों ने मतकौअल को पुकारा। मतकौअल नहीं था। बड़ी बीवी ने बुरका ओढ़ कर किवाड़ों की आड़ से उत्तर दिया।

रूसी जवान ने कागजों में देख कर पूछा—"इस घर में नौकरानी है?" बड़ी ने स्वीकार किया, "हां है।"

"नाम और पिता का नाम बताइये!"

"सेठ मतकौअल।"

"सेठ का नाम नहीं, लड़की का नाम बताइये !"

"कुलनिसा है शायद।"

"उस के पिता का नाम ? कौन लोग हैं वह ?"

बड़ी ने छोटी को पुकार लिया—"अरी ओ पढ़ी-लिखी, क्या है उस के बाप का नाम, कौन लोग हैं री ?"

जनाने से ही छोटी का उत्तर सुनायी दिया—"हम क्या जाने उस के बाप का नाम, कौन लोग हैं ?"

उज़बेक जवान ने कहा—"उसी को हमारे सामने बुलाइये, कहां है वह ?"

बड़ी भीतर के आंगन में गयी। कुलनिसा भीतर तलइया का किनारा धो रही थी। बड़ी ने उस की पसली में एक ठूंसा दिया।

"जा, आये हैं तेरे यार ! कैसी गूंगी बनी हुयी थी। मक्कार कहीं की ! आग लगे तेरे झोंटे में।"

कुलनिसा बुरका ओढ़ कर पूछ-ताछ करने नालों के सामने गयी। वह 'कर विभाग' के आदमी थे। कुललिसा ने अपना नाम, पिता का नाम बता दिया। जवानों ने इस की नौकरी का कागज देखना चाहा। पूछा, कितनी तनखाह है ? क्या-क्या काम करना पड़ता है वगैरह-वगैरह। कुलनिसा को मालूम ही नहीं था कि नौकरी का शर्तनामा होता है।

जवानों ने पक पर्चा लिख कर बड़ी बीवी के हाथ में दे दिया और ताकीद कर दी—नौकरानी को रखने की लिखा-पढ़ी होनी चाहिये और कचहरी में रजिस्ट्री होनी चाहिये। यह काम चौबीस घण्टे में हो जाना चाहिये।

मतकौअल की दोनों बीवियां बहुत खुश हुयीं कि कुलनिसा का नाम सरकारी दफ्तर में लिख लिया गया कि वह नौकरानी है। चुड़ैल की खूब बेइज्ज़ती हुयी। अब चाहे चुड़ैल कितनी ही जवान हो, उन की सौत, सेठ की बीवी नहीं बन सकेगी। उन्हें अब डर नहीं था।

बड़ी बीवी ने सरकारी पर्चा सेठ के हाथ में दिया तो वह क्रोध से थर-थरा उठा। पांव पटक कर चिल्लाया :

"खूब तमाशा, तीन प्रति सैकड़ा घरेलू नौकरों की कमेटी को दूं, पांच प्रति सैकड़ा सरकार को दूं। नौकरानी की तनखाह हुयी कि मुसीबत हो गयी। माशा बुआ अलग मुठ्ठी भर रुपया ले गयी। अब लौंडिया को तनखाह दूं, सरकार के यहां भी कर भरूं ! आदमी के दाम की कोई हद है ? मर्द हो तो एक बात है, कोई दे भी दे, औरत का क्या दाम !"

मतकौअल को उपाय सूझ गया—घर में है तो घरवाली है, बीवी ही है। बीवी पर

तो कोई टैक्स नहीं है। बीवी को तनखाह नहीं दी जाती। बीवी से सस्ता और क्या होगा ?

मतकौअल को दूरिदर्शिता और गहरे सोच की अपेक्षा दांव-पेंच पर ही अधिक भरोसा था। जैसा अवसर होता था, निबाह लेता था इसलिये जब राव कुदरतुल्ला जैसे भेड़िये जाल में फंस कर छटपटा रहे थे, उस का कुछ नहीं बिगड़ा था।

मतकौअल ने दोनों बीवियों को हुक्म दिया, नौकरानी को अदालत ले जाना है। इस के कपड़े बदलवा दो।

सेठ गधे पर सवार हो गया। कुलनिसा उस के पीछे-पीछे चली। मतकौअल शहर में तो गया पर कर विभाग के दफ्तर में नहीं गया और न उस ने कुलनिसा की नौकरी के कागज़ की रजिस्ट्री करायी।

मतकौअल ने घर लौट कर बड़ी बीवी को एक कागज़ थमा दिया—"वे लोग फिर आयें, नौकरी की रजिस्ट्री का कागज़ मांगें तो कह देना—हमारे यहाँ कोई नौकरानी नहीं है। उन लोगों को यह कागज़ दिखा देना।"

"हाय, कैसा कागज है यह ?"

"निकाह का कागज़ है और क्या होगा ? इस पर तो कर नहीं ले लेंगे !"

बड़ी पहले तो खीसें निपोर कर हंसी फिर बात समझ में आयी तो विलाप से चीख उठी—"हाय अल्लाह ! हाय मैं मर गयी !"

छोटी भी दौड़ी आयी। स्थिति जान कर वह भी चीखने लगी :

"हाय किस से ? नौकरानी से ! लाहौल, हाय उसी मुंहझोंसी से। हाय हम ने खुद सांपिन पाली···।"

"चुप रहो !" मतकौअल ने धमकया।

सेठ ने बीवियों को समझाने का यत्न किया—"तुम कितनी बेवकूफ हो, कुछ नहीं समझतीं। तुम्हारी तो नौकरानी ही है, निकाह कर लिया तो उस से क्या हो गया ? उस की तनखाह और सरकारी कर बचा। तुम्हारा क्या नुकसान ?"

बीवियों ने विश्वास नहीं किया और वे रोती ही रहीं।

कुलनिसा का जीवन असह्य हो गया। दोनों मालकिनें उसे सांस-सांस में कोस-कोस कर गाली देती रहतीं—मर जाये रांड। इस का बेड़ा गरक हो।···तेरी कब्र पर आग लगे ! कुलनिसा को मार-मार कर उन के हाथ दुख जाते। हर दम उस पर आँखें गड़ाये रहतीं। कुलनिसा बेचारी रो लेने के सिवा और क्या कर सकती थी !

कुलनिसा रोने लगती तो मालकिनें और गाली देतीं—"मर जा बेहया रांड ! इसे ज़रा शर्म नहीं है, कैसे जोर से रो रही है। यह भी ख्याल नहीं है कि बाहर मर्द सुनेंगे।"

मालकिनें अपने हाथ से कोई भी काम नहीं कर सकती थीं और कुलनिसा जो भी काम करती उसी में ऐब निकाल कर उसे गाली देकर मार बैठतीं। कुलनिसा मालिक की आवाज़ पर पानी का लोटा लेकर चलती तो बीवियां लोटा उस के हाथ से छीन कर धक्के से गिरा देतीं।

छोटी उसे धक्का देकर कोने में कर देती और चिकोटियां काट-काट कर गाली देती—"इस रांड को खसम चाहिये। इस रांड को मर्द चाहिये। शक्ल तो देख अपनी कुतिया कहीं की बीवी बनेगी, तेरा खून पी जाऊं!"

कुलनिसा को किसी तरह कल नहीं थी। पहले तो बड़ी और छोटी मारतीं और फिर अपने हाथ-पांव दुख जाने के लिये गाली दे-दे कर चिल्ला-चिल्ला कर कोसने दे कर रोने लगतीं।

कुलनिसा पर दूसरी मुसीबत आयी।

मतकौअल दोनों बीवियों की ईर्ष्या और चिढ़चिढ़ाहट से बहुत परेशान हो गया। उन्हें सीधा करने के लिये उस ने दूसरा उपाय आरम्भ किया। कुलनिसा से उस का व्यवहार बदल गया। कुलनिसा ने उस के कटाक्ष देखे तो भय से कांप उठी, दिन-रात चौकन्नी रहने लगी। डर के मारे रात को सो न पाती। जरा सी भी आहट पाती तो अपने टाट से कूद कर खड़ी हो जाती। कानों में सेठ के भारी-भारी कदम और घरघराते गले की सांसें सुनायी देने लगतीं।

कुलनिसा समझ नहीं पा रही थी क्या करे, किस से फरियाद करे, उसे कौन बचायेगा? कभी सोचती, तहकीकात करने वाले सरकारी आदमी फिर आ जाते तो शायद रक्षा मिलती पर उन लोगों का पता मालूम नहीं था। उसे उन से भी डर लगता था। उस की रक्षा करने वाला, उसे सहायता देने वाला कोई नहीं था। उस की मां की सहायता ही किस ने की थी!

एक रात मतकौअल ने कुलनिसा को अकेली पाकर पकड़ लिया और अपने कमरे में बन्द कर लिया।

कुलनिसा किस के सामने फरियाद करती! और कौन था, किस से सहायता और सहानुभूति की आशा कर सकती थी। उस से घृणा करने वाली, उसे मारने वाली मालकिनों के ही पांव पकड़े। बहुत रोयी। वह और किसी को जानती ही नहीं थी।

कुलनिसा को नहीं मालूम था कि मालकिनों ने उसे मारा-पीटा या उस के साथ क्या किया। वह मूर्छित हो गयी थी, फिर उसे ज्वर आ गया। कई दिन ज्वर में पड़ी रही।

मतकौअल डर गया था। अजीब समय आ गया था। नौकरानी भी मर जाती तो तहकीकात होती और जाने उस पर क्या बीतती! उस ने छोटी और बड़ी दोनों को धमकाया। उन की अच्छी तरह मरम्मत की और कुलनिसा को खाना बना कर

देने और दवाई पिलाने के लिये मजबूर कर दिया। कुलनिसा की अभी उठती उमर थी, शरीर में बल था। फिर चंगी हो गयी।

सेठ का घरबार फिर पुराने ढर्रे पर चलने लगा। छोटी और बड़ी को अपनी किस्मत ठोक कर, कलेजे पर पत्थर रख कर कुलनिसा को अपनी सौत मान लेना पड़ा। अब कुलनिसा सेठ की सब सेवा करती, उस के पांव धोती, उस का शरीर दबाती और दूसरी दोनों सौतों की भी सब सेवा करती।

मतकौअल बहुत संतुष्ट और प्रसन्न था, उस ने सिर पर आये संकट से भी लाभ उठा लिया था। कुलनिसा न वेतन के लिये सरकार की ओर से नौकरों को दी गयी सुविधाओं का दावा कर सकती थी न उसे पत्नी का ही कोई अधिकार था। वह केवल बेज़बान दासी थी।

कुलनिसा के आ जाने से सेठ की दोनों पत्नियों ने घर के सब कामों से हाथ खींच लिये थे।

कुलनिसा के लड़का हो गया तो उस का जीवन और भी दूभर हो गया। पूरे घर की सेवा, दम तोड़ मेहनत के साथ-साथ मालकिन सौतों के क्रोध, ईर्ष्या और घृणा से बच्चे की रक्षा करने की चिन्ता और हो गयी। वह मां बन गयी थी परन्तु घर में उस का कोई आदर और अधिकार नहीं था। बच्चे के कारण वह अब पहले की तरह काम में नहीं लगी रह सकती थी। सेठ दोनों बीवियों के काहिलपन से भी चिढ़ा रहने लगा। अब उस से भी नाराज रहता था। कुलनिसा और उस का बच्चा सेठ के लिये बोझ बन गये थे। स्वभाव से मक्खीचूस सेठ व्यर्थ का खर्चा कब तक सहता रहता! उस ने कुलनिसा और उस के बच्चे को घर से निकाल दिया।

सेठ मतकौअल से भूल हो गयी।

बेघरबार, अपने और अपने बच्चे के लिए शरण खोजती कुलनिसा ने जुलैखां का नाम सुना और उस के पास दुहाई देने पहुंची। कुलनिसा को रक्षा और शरण मिल गयी।

जुलैखां ने मुकदमे में मतकौअल की पूरी करतूत खोल कर रख दी और कुलनिसा के लिये न्याय की मांग की। कुलनिसा स्वतंत्र और आत्म-निर्भर हो गयी।

मतकौअल के मुकदमे में जिरह समाप्त हो गयी। जज लोग मुकदमे का फैसला सोचने के लिये दूसरे कमरे में चले गये। याफिम ने अरगाश से पूछ लिया—"कहो, क्या देखा? क्या समझे? अब समझे, हमारा क्या कर्त्तव्य है?"

अरगाश की मुट्ठी बंध गयी, बोला—"मैं तो कह ही चुका हूं कि मजदूरों का खून पीने वाले, स्त्रियों पर बलात्कार करने वाले इन आदमखोरों को समाप्त करना जरूरी है।"

"इतना ही नहीं अरगाश, काम इस से अधिक है।" याफिम ने टोक कर समझाया।

"तुम क्रोध से उत्तेजित हो। उत्तेजना से काम नहीं चलेगा। उत्तेजना में आदमी सोच नहीं पाता। हमें बहुत सोच-समझ कर चलना है।"

"और क्या सोचना है, क्या समझना है?"

"बहुत सोचना है, बहुत समझना है। हमारे सामने बहुत बड़ा काम है। कुलनिसा को मतकौअल के पंजे से छुड़ा देना ही काफी नहीं है। उसे जीवन के लिये अधिकार, अवसर और साधन देना भी आवश्यक है। अरगाश, हमारे सामने निर्माण का काम है। हमें ईंट-ईंट जोड़ कर नये समाज की इमारत खड़ी करनी पड़ेगी। यह कम्युनिस्टों का उत्तरदायित्व है।"

तेरहवां परिच्छेद

मास्टर नैमी के मस्तिष्क पर चायवाले का आतंक बहुत गहरा बैठ गया था। कहीं भी अकेला आत-जाता तो उसे अपने पीछे चायवाले के कदमों की आहट सुनायी देने लगती। अपनी कोहनी पर चायवाले के लोहे से कड़े पंजे की जकड़ अनुभव होने लगती। धुंधले अंधेरे में उसे सभी मकानों की ड्योढ़ी के सामने कोई जवान बांका, बुरका ओढ़े स्त्री की पीठ में छुरा भोंकता दिखाई पड़ता। मास्टर घबरा कर अपने हाथों पर नजर डाल लेना चाहता कि उस के हाथों पर तो खून नहीं लग गया ''उस के होंठ अपने आप ही हिलने लगते जैसे कोई जप या पाठ कर रहा हो।

"मैंने तो कुछ नहीं किया। मैं क्या कर सकता हूं। हाय, अब तो कोई उपाय नहीं ।"

नैमी को राव कुदरतुल्ला के यहां जाने का साहस नहीं होता था। लाभ भी क्या था! मुसीबत के मारे जो लोग पहाड़ी ढलवान पर फिसल कर नीचे अथाह खाई में गिरे जा रहे थे, किसी झाड़ी की जड़ों के हाथ में आ गये निर्बल तंतुओं को पकड़ कर गिरने से बचे हुए थे, उन पर अपना बोझ डाल देना उचित नहीं था। मुकदमे के बाद मतकौअल की दुकान बन्द हो गयी थी। जुर्माने में पूरे चार साल की तनखाह कुलनिसा को देनी पड़ गयी थी। कुलनिसा को मानो कारूं का खजाना मिल गया था। ऐसी अवस्था में नैमी के लिये मतकौअल की ड्योढ़ी का दरवाजा भी नहीं रहा। बेचारा

कहां जाता ? जहां दो प्याले चाय पीकर दो-चार बातें कर लेता, इस्लाम के भविष्य की चिन्ता कर लेता। नैमी के लिये वह अकेलापन भयंकर यातना बन गया था।

मास्टर नैमी के लिये अब स्कूल में भी परेशानी हो गयी। पहले वह स्कूल में पढ़ाते समय अपने मन के गुबार निकाल लेता था। लड़कियों के सामने भाषण देकर अपनी विद्वता का गर्व पूरा कर लेता था। किसी ज़माने में वह दीनदार मुसलमानों की सभाओं में जोशीले व्याख्यानों से भीड़ को धर्म-रक्षा के लिये ललकारा करता था। अब अपना जोश स्कूल के कमरे में ही सीमित रखना पड़ता था परन्तु स्कूल में जो चाहता कह लेता था। अब स्कूल में लड़कियां भी उस की बातें श्रद्धा और आदर से नहीं सुनती थीं। लड़कियों के चेहरे पर उपेक्षा का भाव आ जाता था जैसे उन्हें उस की बकवास की कोई परवाह न हो। लड़कियां भी उसे न समझें—यह मानसिक वेदना नैमी के लिये असह्य थी। क्या करता, समय ही ऐसा आ गया था। बहुत सावधानी से फूंक-फूंक कर कदम रखने की आवश्यकता थी।

स्कूल में खेल के समय और पढ़ाई समाप्त होने के बाद लड़कियां बशारत को घेर लेती थीं। सब उस के पीछे-पीछे घूमा करतीं जैसे वह उन सब में बड़ी हो। सभी लड़कियां उसे बहुत मानती थीं। वह जनाना सहकारी प्रधान की बेटी थी। उस की मां की प्रतिष्ठा और अधिकार ऐसे बढ़ते जा रहे थे कि विस्मय होता था। बशारत की मां पर आक्रमण होने से भी लड़कियों में कोई दहशत नहीं थी। लड़कियां बशारत का आदर पहले से भी अधिक करने लगी थीं। नैमी स्थिति को कुछ समझ नहीं पा रहा था।

बशारत का साहस भी बहुत बढ़ गया था। बिल्कुल मां के कदमों पर चल रही थी। नैमी ने सुना, बशारत रूसी पढ़ना-लिखना सीख गयी तो आशंका से सिहर उठा। कई बार देखा था कि लड़की के पास एक छोटी सी पुस्तिका थी। वह लड़कियों को इकट्ठा करके उस पुस्तिका में से बड़े उत्साह और तन्मयता से पढ़-पढ़ कर समझाती थी। नैमी को मालूम था कि बशारत 'किशोर कम्युनिस्ट दल' के नियमों की पुस्तक लेकर लड़कियों के बीच में व्याख्यान देती थी। एक दिन नैमी ने बशारत के हाथ में दूसरी पुस्तक भी देखी—गोर्की का उपन्यास 'मां'···कैसा समय आ गया था !

मास्टर सोच-सोच परेशान था—एक लड़की उस के लिये मुसीबत किये दे रही थी, वह उसे बरबाद करके छोड़ेगी ! सब तकदीर की बात थी। नैमी को क्या मालूम था कि संकट इतनी जल्दी आ जायेगा।

साधारणतया लड़कियों के स्कूल में पुरुष अध्यापक और लड़कियों के बीच सफेद मारकीन का एक परदा लटका रहता था। लड़कियां उस परदे को 'मास्टर की नकाब' कहती थीं। उस दिन भी पढ़ाई शुरू होने से पहले परदा डाल दिया गया था। सब

काम यथावत आरम्भ हुआ था।

उस दिन भी मास्टर नैमी ने लड़कियों की हाजिरी ली। पाठ आरम्भ करने से पहले वह बशारत से पूछ लेता था—"हमारी मुअज्जिजा बहिन अनाखां की तबियत कैसी है ?"

बशारत मास्टर को धन्यवाद देकर बता देती थी कि मां की अवस्था सुधर रही है।

नैमी उत्तर पाकर सान्त्वना का गम्भीर सांस ले लेता था।

उस दिन बशारत ने परदे के पीछे से दूसरा ही उत्तर दिया—"दुश्मनों ने तो अम्मा को कत्ल कर देने का ही यत्न किया था।"

बशारत के नये ढंग से नैमी को मन में क्रोध आ गया परन्तु प्रकट में लड़की को समझाने के लिये पिता की तरह स्नेह के स्वर में भर्त्स्ना की—"आज तुम्हारे स्वर में क्रोध और घृणा की झंकार जान पड़ रही है। क्या किसी अच्छी लड़की से ऐसी आशा की जानी चाहिये ?"

बशारत ने मास्टर की नसीहत की ओर ध्यान नहीं दिया और ललकार के स्वर में बोली—"ऐसी कायरता से मजदूर श्रेणी डर नहीं सकती। मजदूर श्रेणी को कोई भी नहीं दबा सकेगा!"

स्कूल के कमरे में विरोध और असन्तोष का अजीब सा सन्नाटा छा गया। नैमी ने संयम से काम लिया। लड़की से बहस करना उचित नहीं था। क्षोभ प्रकट करना भी उचित नहीं था। उसे विश्वास था कि लड़कियों को अपनी बात समझा लेगा।

नैमी परदे के सामने दायें-बायें चलते हुये समझाने लगा। उसके शानदार घुटनों तक ऊंचे बादामी बूट चर्रमर्र कर रहे थे—"पिछली बार हम अपने परम ज्ञानी, महाकवि कुलखोजा अहमद यासवी* के अद्वितीय और बहुमूल्य उपदेशों की चर्चा कर रहे थे। महाकवि बहुत ही दयालु और सच्चे मुसलमान कवि थे। उनका हृदय दीनों और अनाथों के प्रति करुणा से आप्लावित था। दीनों के कष्ट और कठिनाई को देख-देख कर उनके आंसू कभी सूख नहीं पाते थे। वे किसी के भी दुःख और कष्ट की उपेक्षा नहीं कर सकते थे। उनके शब्द दीनों और दुखियों के लिये आध्यात्मिक सान्त्वना के स्रोत थे। उनकी कुछ पंक्तियां आपको सुनाता हूं। नैमी ने यासवी की कुछ पंक्तियां सुनाकर लड़कियों को उनका गूढ़ भावार्थ समझाया :

---

*कवि अहमद यासवी का जन्म सन ११०५ और मृत्यु ११६६ में हुई थी। वे आध्यात्मवादी और रहस्यवादी कवि थे। उनका उपदेश था, भाग्य से असन्तोष दुख का कारण है, पाप का विरोध पाप को बढ़ाता है।

"दुःख, कष्ट और अपमान मिले तो उसे अपना भाग्य समझो, उसे अमूल्य धन की तरह समेट कर रखो।

"एक गाल पर थप्पड़ लगे तो दूसरा गाल सामने कर दो, प्रतिकार में हाथ न उठाओ।

"ज़ालिम तुम पर ज़ुल्म करे तो उससे अधिक ज़ुल्म की प्रार्थना करो। इसी में तुम्हारा बल है, शक्ति है।"

नैमी का स्वर भावोद्रेक से कोमल हो गया। परदे के पीछे से कापियों पर क़लमों के चलने की आहट मिली। लड़कियां अपनी कापियों में कविता लिख रही थीं। नैमी ने अपनी सफलता पर गर्व अनुभव किया। मुस्कान दबाकर बोला—"महात्मा कुलखोजा अहमद कहते हैं—इस पृथ्वी पर कभी मनुष्यों को एक-दूसरे पर हाथ उठाते न देखूं…। जब अपनी साधना से पैगम्बर के दर्जे पर पहुंच गये तो धरती फट गयी और वे उसमें उतर गये और धरती में सात कोस नीचे एकान्त में तप करने लगे। वे बरस भर में केवल एक अंगूर का आहार करते थे। उस अद्वितीय साधना से विचार कर उन्होंने लिखा—

"ऐ मुसलमानो, दीन के प्यारो…

हम सात कोस पाताल के वासी…

"मैं एक सवाल पूछ सकती हूं ?" बशारत सहसा बोल पड़ी।

मास्टर को लड़की का स्वर धृष्ट और ऊंचा लगा।

नैमी ने अपना क्रोध वश में करके कहा—"पहले इस बात को पूरा लिख लो" वह बोलता गया।

"लिखो, प्रातःस्मरणीय संत कुलखोजा अहमद यासवी संसार भर के दीनों से सहानुभूति रखते थे। वे अनाथों के रक्षक थे। संसार के विचारकों और लेखकों में उनका स्थान सबसे प्रथम है।"

"यह ठीक नहीं है" बशारत बोल पड़ी, "मैं तो यह नहीं लिखूंगी। सब से बड़ा लेखक मैक्सिम गोर्की है।"

सब लड़कियां बोलने लग गयीं। शोर मच गया।

लड़कियों की धृष्टता से मास्टर नैमी का क्षोभ उबल पड़ा। उसने ज़रा खांसकर अपने को वश में किया।

"लड़कियो, सुनो-सुनो !" नैमी का स्वर और कोमल हो गया, "मैं क्या सुन रहा हूं, क्या देख रहा हूं ? सबसे पहले तो आपको अपने शील और विनय का ध्यान रखना चाहिये। स्कूल ज्ञान और संस्कृति का मन्दिर है। आपको यह भी याद रखना चाहिये कि बुजुर्गों और अपने गुरू की बात का अविश्वास करना पाप है। जिस समय

हम विद्यार्थी थे, अपने गुरूजन की शिक्षा को सदा आदर और पूर्ण विश्वास से स्वीकार करते थे। मैं तुम्हें जो कुछ पढ़ा रहा हूं, वह सार्वजनिक शिक्षा विभाग के आदेशों के अनुसार है। मैं सोवियत सरकार के आदेशों का पालन कर रहा हूं।"

सब लड़कियां चुप हो गयीं।

नैमी कहता गया—"यह ठीक है कि मैक्सिम गोर्की भी एक लेखक है" नैमी के माथे पर बल पड़ गये, "परन्तु हमें उस लेखक से क्या प्रयोजन हो सकता है? वह दूर देश का लेखक है। उसके साहित्य का हमारे जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं। उसे तुर्किस्तान की गरीब जनता के जीवन का कोई परिचय नहीं था। उसे हमारे जीवन का परिचय हो भी नहीं सकता था। उसे हमारे दु:खों और भावनाओं की क्या अनुभूति हो सकती थी?"

नैमी को ख्याल आया, यह क्या—वह मूर्ख लड़की से तर्क करने लगा था। यह तो उचित नहीं था। इससे तो बात बिगड़ेगी। तभी परदे के पीछे दिखायी दिया—बशारत फिर उठ कर खड़ी हो गयी थी।

"यह ठीक नहीं है, यह बिलकुल गलत है," बशारत ऊंचे स्वर में निर्भय बोली, "मैक्सिम गोर्की ने क्रान्ति में भाग लेने वाले हमारे पिताओं के सम्बन्ध में लिखा है…।'

"साबिर की लड़की!" नैमी ने बहुत जोर से डांट दिया और फिर तुरन्त अपने आप को सम्भाला।

नैमी परदे के समीप आकर खड़ा हो गया। स्वर को बहुत कोमल करके स्नेह के उपालम्भ से बोला:

"बेटी, मैं तुम्हारे ढंग से बहुत हैरान हूं। तुम अपने पिता की बात करती हो! मेरा तो ख्याल है कि तुम हमारे साथी वीर मुल्ला साबिर की बेटी हो। मैक्सिम गोर्की ने जो कुछ लिखा है, रूसियों के विषय में लिखा है। क्या तुम भूल गयी हो कि तुम एक बहादुर उज़बेक मुसलमान की लड़की हो? इस से तो यही अच्छा होता कि तुम किसी रूसी की औलाद होती…।"

"ओफ़!"

"हाय!"

परदे के पीछे लड़कियां आतंक, लज्जा और विरोध से चिल्लाने लगीं।

बशारत ने अपना चेहरा हाथों में छिपा लिया जैसे मुख पर थप्पड़ पड़ गया हो ओर जोर से रो पड़ी।

मास्टर नैमी स्तब्ध रह गया—क्या कह बैठा था! उसी समय घंटी बज गयी। नैमी की जान बची।

नैमी ने अपनी घबराहट छिपाने के लिये बशारत को हुक्म दे दिया—"तुम अभी

हाल कमरे में जाओ !" नैमी आत्मसम्मान की रक्षा के लिये पीठ अकड़ाये स्कूल के कमरे से चला गया ।

नैमी पछता रहा था—"क्या कर बैठा, उस से भूल होती जा रही थी । क्यों वह लड़की से तर्क कर बैठा ! अब जैसे भी हो, लड़की को चुप और शांत करा देना आवश्यक था ।

नैमी हाल में पहुंचा तो देखा कि बशारत के साथ और सब लड़कियां भी चली आई थीं ।

"मैंने तो केवल बशारत साबिरा को ही बुलाया था ।" नैमी ने बहुत कड़ाई से लड़कियों को सम्बोधन किया । चाहता था दूसरी लड़कियों को चले जाने का हुक्म दे दे परन्तु गले ने साथ नहीं दिया ।

बशारत सामने आ गयी और उस ने नकाब चेहरे से खींच कर फेंक दिया । उस का चेहरा आंसुओं से भीगा हुआ था ।

"मेरी बेटी, मेरी बच्ची, यह तुम क्या कर रही हो !" नैमी विस्मय और करुणा से बोला, "तुम्हारी लज्जा को क्या हुआ ?"

"लज्जा आप को आनी चाहिये !" बशारत ने बराबरी से उत्तर दिया । लज्जा आप को आनी चाहिये । आप ने मेरी मां और पिता के लिये क्या कहा है ? मेरे पिता मजदूर थे, ताऊ याफिम और सोफिया भी मजदूर हैं । वे उजबेक नहीं हैं परन्तु उन से अच्छा और कौन है ? मैं जाकर मां को बताऊंगी, आप ने क्या कहा है ! आप झूठी और गलत बातें सिखाते हैं ।"

भाग्य की बात उसी समय मुख्यअध्यापिका दूसरी अध्यापिकाओं के साथ हाल में आ गयीं । नैमी बिलकुल फंस गया था । बचाव की कोई राह नहीं रही थी । इतने लोग साक्षी थे । बशारत और दूसरी लड़कियां अड़ कर खड़ी थीं ।

बशारत बिना बुरके के निर्भय बोलती जा रही थी । नैमी ने जीवन में ऐसा तिरस्कार और आतंक कभी अनुभव नहीं किया था ।

नैमी ने लड़कियों को उलझाने के लिये कई बातें बनायीं । उचित व्यवहार, अनुशासन और गुरूजन के सम्मान की बातें कीं परन्तु कोई बात नहीं जमी । लड़कियां उस का विरोध करती रहीं । पुचकार और खुशामद किसी काम नहीं आयी ।

मुख्याध्यापिका ने नैमी को एक ओर ले जाकर पूछा—"आप यहां लड़कियों को पढ़ाते हैं या उन्हें भड़काने के लिये उल्टी बातें सिखाते हैं…?"

•

लड़कियों की खूब बड़ी टोली रास्ते भर बहस करती और हंसती बशारत को घर तक पहुंचाने के लिये गयी । साथ पढ़ने वाली लड़कियों में परस्पर खूब मित्रता और

आत्म-विश्वास हो गया था। उन की मित्रता और दृढ़ता की परीक्षा हो गयी थी।

बशारत को अपने ऊपर भरोसा हो गया—अब्दुस्समद ने उसे 'किशोर कम्युनिस्ट दल' का संगठन करने का उत्तरदायित्व दिया था, उसे वह गर्व से निबाह रही थी। बशारत ने घर लौटते समय बाजार में भी बुरका नहीं पहना। बांह के नीचे दबाये रही।

अनाखां खिड़की के पास खाट पर लेटी हुई थी। कंधे पर पट्टी खूब सफेद और सुथरी थी। बशारत समझ गयी, डाक्टर आकर पट्टी बदल गया है। तुरसाना बराम्दे में गाने का अभ्यास कर रही थी। उसे क्लब की टोली के साथ संगीत में भाग लेना था।

पड़ोसिन आकर खाना बना कर रख गयी थी। बशारत ने झटपट खाना गरम किया ओर मां के समीप बैठ उसे चम्मच से खिलाती हुई बात करने लगी—"अम्मां, कैसी तबियत है? हाय, बड़ी अच्छी लग रही हो…!"

"बिटिया, अब तो जल्दी ही ठीक हो जाऊं।" अनाखां ने कहा, "मुझे सहकारी की बहुत चिन्ता है, जाने कैसा काम चल रहा है। मुझे कोई कुछ बताता ही नहीं। तुम भी मुझे अपनी कोई बात नहीं बताती, कोई बात है जरूर! अपनी अम्मां को भी नहीं बताओगी?"

"नहीं अम्मा, कोई बात नहीं है!" बशारत का चेहरा गुलाबी हो गया, "अच्छा बता दूं, पहले वचन दो, परेशान नहीं होगी!"

अनाखां ने बेटी के सिर पर हाथ रख दिया।

बशारत ने स्कूल की घटना मां को बता दी। मां बहुत विस्मय से सुन रही थी जैसे विश्वास न हो रहा हो। कई बार दुहरा-दुहरा कर प्रश्न किये :

"तुम ने क्या कहा?"

बशारत ने नैमी को जो उत्तर दिया था, मां को दूसरी बार बताया।

"क्या उसके सामने ही नकाब उतार कर फेंक दी?" मां ने माथे पर तेवर बना कर पूछा।

"अम्मा, मैं क्या करती? मुंह पर कपड़ा डाले कोई ठीक से जवाब कैसे दे सकता है?" लड़की ने सफाई दी।

मां की आंखों में दो बूंद आंसू आ गये।

बशारत का चेहरा लटक गया—"अम्मा, तुम नाराज हो गयीं इसीलिये तो मैं बता नहीं रही थी।"

मां ने बेटी को इतने ज़ोर से गोदी में दबा लिया कि कन्धा दुख गया। बोली—"मेरी नन्हीं बिटिया, ठीक कह रही है तू! मुंह पर कपड़ा डाले बात कैसे हो सकती है! सुनो, हम दोनों एक ही बुरके से गुजारा कर रही थीं। दोनों ने एक साथ ही उससे छुट्टी ले ली।"

"सच कह रही हो अम्मा ?" बशारत किलक उठी ।

"सच नहीं तो क्या, मैं अपनी बेटी से पीछे रह जाऊं ! बारह बरस की थी तभी से बुरका ओढ़ रही हूं । तुझे तो बिना बुरके के कोई कठिनाई नहीं होगी । मुझे ज़रूर बहुत अजीब लगेगा परन्तु अपना खून बुरके पर चढ़ा कर उससे छुट्टी ले रही हूं । तेरे पिता होते तो बहुत खुश होते ।"

"तुरसाना, यहां आओ, सुनो !" बशारत ने पुकार लिया ।

उस दिन अनाखां के लिये अभी एक और विस्मय शेष था ।

जुलैखां, सोफिया और याफिम अनाखां के यहां आये तो सुलतान का लड़का अरगाश भी उनके साथ था । आते ही उन्होंने मिठाई मांगी—"मुंह मीठा कराओ तो तुम्हें खबर सुनायें ! तुम्हारी सहकारी के दिन पूरे हो गये ।"

"हाय, क्यों ?" अनाखां घबरा गयी ।

"सहकारी से बहुत बड़ी चीज़ बन रही है । सरकार ने निमांचा में कपड़े की मिल लगाने की मंजूरी दे दी है । इवानोवोवोजनेसेंस्क से मशीनें आयेंगी ।"

सोफिया ने कहा—"अन्ना, मैं तो सोच रही थी कि मेरे शहर से कभी कोई खबर भी आ पायेगी या नहीं ! यहां तो मेरे शहर से मशीनें चली आ रही हैं ।"

अनाखां ने बशारत को बुला लिया और बेटी की आंखों में आंखें डाल उसे खुश-खबरी सुना दी ।

बशारत उछल पड़ी—"मैं कल स्कूल में सब लड़कियों को बताऊंगी । अपनी जमात में बूढ़े मास्टर को भी बताऊंगी ।"

"बूढ़ा मास्टर अब तुम्हें नहीं मिलेगा । बहुत पढ़ा-सिखा लिया उसने !" जुलैखां ने कहा, "अब तुम्हारे लिये कोई ढंग के ही अध्यापक रखेंगे···।"

× × ×

सांझ को अनाखां से मिलने के लिये एक जवान आया । जवान सूट और टाई पहने था । एक बार पहले भी, जिस संध्या अनाखां घायल हुई थी, वह जवान आया था । जवान ने लड़कियों को बाहर आंगन में भेज देने के लिये संकेत कर दिया ।

जवान ने अनाखां से पूछा—"आपको याद है कि जिस समय आप पर आक्रमण हुआ था, उस समय आपने क्या शब्द सुने थे ?"

"जी, याद आता है, सुना था—मैं नहीं तो उसे भी नहीं ।"

"आपका क्या अनुमान है ? इन शब्दों का क्या मतलब हो सकता है ?"

"यह तो मैं खुद नहीं समझती ।"

"माफ कीजिये" जवान ने बहुत धीमे स्वर में कहा, "मामले की तह तक पहुंच

सकने के लिये मुझे कुछ सवाल पूछने पड़ें तो बुरा न मानियेगा। आप विधवा हैं। आयु आपकी ज्यादा नहीं है। आपको कभी सन्देह नहीं हुआ कि कोई आदमी आपकी ओर ज्यादा ध्यान दे रहा हो ?"

अनाखां ने शर्मा कर आंखें झुका लीं।

"मेरा मतलब उस तरह से नहीं है। आप समझ सकती हैं कि हमारे शत्रु मूर्ख लोगों को बहकाकर अपना हथियार बनाकर हम पर आक्रमण कर रहे हैं।"

"जी, मुझे तो ऐसा कभी सन्देह नहीं हुआ।"

जवान ने कुछ सोच कर सिर हिलाया—"आप की बड़ी लड़की बाहर जाती है तो आप ही का बुरका पहन जाती है न ?"

"जी हां।"

"ऐसा प्रायः ही होता है।"

"जी हां।"

"लड़की की उठान अच्छी है, आयु विवाह के योग्य समझी जा सकती है ?"

"जी हां।" अनाखां ने कुछ घबराहट सी अनुभव की।

"यह बताइये कि स्कूल से किस समय लौटती है ?"

"चार बजे।"

"सदा चार ही बजे लौटती है ?"

"जी, कभी देर भी हो जाती है पर प्रायः देर नहीं होती।"

"जिस संध्या आप पर आक्रमण हुआ, लड़की कहां थी ?"

"जनाना क्लब में, नहीं-नहीं, रेलवे क्लब में थी।"

"अकेली ही थी ?

"अकेली नहीं, उस की छोटी बहिन भी साथ थी।"

"ठीक याद है आप को ?"

"जी हां ! उस संध्या छोटी लड़की ने क्लब में गाया था। दोनों साथ-साथ लौटी थीं।"

"आप की लड़की कभी आप से पूछे बिना भी कहीं आती-जाती है ?"

"ऐसा तो कभी नहीं हुआ।"

"लड़की पर आप को कभी संदेह नहीं हुआ ?"

"जी नहीं, बशारत हौंसले वाली है परन्तु सदा कहना मानती है। कोई बुरी आदत नहीं।"

"माफ कीजिये, मैं लड़की से भी कुछ पूछ सकता हूं ?"

अनाखां हंस पड़ी—"वह आप की बात समझेगी ही नहीं।"

"हो सकता है पर ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो लड़कियों या स्त्रियों के समझने या न समझने की कोई परवाह नहीं करते। बशारत को कभी किसी आदमी के व्यवहार से किसी प्रकार का संदेह नहीं हुआ ?"

"मुझ से उस ने कभी नहीं कहा।"

"कभी आप को भी संदेह नहीं हुआ ?"

"जी नहीं !"

"आप को बताने में कोई संकोच तो नहीं हो रहा है ?"

"जी नहीं, आप से संकोच क्यों करूंगी !"

नौजवान कुछ पल मौन सोचता रहा—"आप को यह नहीं मालूम था कि लड़की के विवाह के लिये आप से प्रस्ताव किया जाने वाला था ?"

"जी बिलकुल नहीं ! कौन प्रस्ताव करने वाला था ?"

"कुदरतुल्ला।"

"आप को यह ख्याल कैसे आया ?" अनाखां विस्मित रह गयी

"दादी शुक्र अल्लाह से बात करके देखियेगा !"

नौजवान ने सोच कर कहा—"अभी नहीं, आप किसी से बात न कीजियेगा ! अपना संदेह कहीं भी प्रकट करना उचित नहीं है।"

"लड़की के लिए कोई खतरा तो नहीं है ?"

"अब कोई खतरा नहीं हो सकता।"

"पहले था ?"

"कह नहीं सकता, आक्रमण तो आप पर ही किया गया।"

"आप बशारत का नाम क्यों ले रहे हैं ?"

"आप की ही तो लड़की है !"

"मैं कुछ समझ नहीं सकी। इस ऊंट-पटांग विवाह के अनुमान में और मुझे छुरा मार देने में क्या सम्बन्ध हो सकता था ?"

"अनुमान ही तो किया जा सकता है !"

अनाखां का चेहरा चिन्ता से पीला पड़ गया, उस ने सिर तकिये पर रख लिया।

"आप को मैंने बहुत थका दिया" जवान ने सहानुभूति से कहा और फिर गम्भीर स्वर में बोला, "मुझे आप के साहस पर विश्वास है। साहस होने पर भी धोखे में नहीं रहना चाहिए। मुझे आदेश मिला है कि आप को यह दे दूं।" जवान ने छोटा सा रिवाल्वर जेब से निकाल कर अनाखां के सामने रख दिया।

रिवाल्वर देख कर अनाखां सिहर उठी। याद आया, पहले-पहल उस ने रिवाल्वर याफिम के हाथ में देखा था। अब उसे भी हाथ में रिवाल्वर लेना पड़ रहा था।

"मैं क्या करूंगी ? मैं तो इसे चलाना नहीं जानती ।" अनाखां ने कहा ।

"इस में भय की क्या बात है ?" जवान ने तसल्ली दी, "चलाना सीख लीजिये ! जुलैखां सिखा देंगी । वह भी रखती हैं ।"

जवान रिवाल्वर अनाखां के समीप रख कर चला गया ।

चौदहवां परिच्छेद

इंजीनियर सरगी लवोविच ने सेंटपीटरसबर्ग की यूनीवर्सिटी से इंजीनियरिंग की परीक्षा पास की थी । परीक्षा पास कर लेने के बाद सरगी को कई वर्ष तक लगता रहा कि उस के जीवन में कोई लक्ष्य नहीं था । उस के जीवन का कोई उपयोग नहीं था, उस का जीवन व्यर्थ था ।

सरगी के दिन निष्क्रियता और शैथिल्य में बीत रहे थे ।

अपनी निष्क्रियता में मन को समझा लेता—मैंने तो निर्माण कर सकने के लिए जन्म लिया था, निर्माण करने की ही शिक्षा पायी परन्तु मेरा दुर्भाग्य है कि चारों ओर ध्वंस ही ध्वंस हो रहा है, निर्माण का अवसर कहीं नहीं है ।

सरगी विद्यार्थी जीवन में बड़े-बड़े स्वप्न देखा करता था । उन स्वप्नों के पूरे होने का अवसर नहीं आया था । घर उस का 'नोवोगोरद' में था । बूढ़े माता-पिता निम्न-मध्य-वित्त श्रेणी के थे । उन्हें अपने पुत्र से बड़ी-बड़ी आशायें थीं : बेटा बहुत बड़े-बड़े, गगनचुम्बी गिरजे बनायेगा, बड़े-बड़े पुल बनायेगा, बड़े-बड़े स्मारक खड़े करेगा । सरगी को अपने माता-पिता की आशायें याद आ जातीं तो उस का सिर लज्जा से झुक जाता, दिल डूबने लगता । उस के मन पर इतना आतंक बैठ गया था कि पर्व-त्योहार के दिन भी अपने माता-पिता की समाधि के दर्शन के लिये जाने का साहस न होता—मानो वे अपने पुत्र के जीवन की निष्फलता से घबराकर कब्र में से उठ खड़े होंगे ।

सरगी के जीवन में दो दुर्घटनायें एक साथ ही घट गयी थीं : उस का विवाह और पहला विश्व-युद्ध ।

सरगी ने वकील वर्नाविस्की की लड़की से विवाह किया था । वर्नाविस्की ने युद्ध के आरम्भ में ही खूब रुपया कमाया था । वर्नाविस्की की लड़की बहुत सुन्दर थी । रीमा, सरगी के निर्माण के स्वप्नों से मोहित हो गयी थी परन्तु विवाह के बाद सरगी ने

शीघ्र ही अनुभव कर लिया कि पत्नी और ससुर के परिवार से उस की निभ नहीं सकेगी।

वर्नावस्की सेना को माल देने का भी काम कर रहा था। उस काम में वकालत से कहीं अधिक नफा था। सरगी को न वह काम पसन्द था न वह उसे कर ही पाया। रीमा इस बात से बहुत चिढ़ गयी थी। रीमा का बड़ा भाई सेना में खूब बड़ा अफसर था। उस स्थिति से लाभ उठा कर पिता-पुत्र दोनों हाथों से रुपया बटोर रहे थे। सिपाहियों का रक्त रुपया बन-बन कर वर्नावस्की की तिजोरियों में जमा होता जा रहा था। वर्नावस्की की तोंद गुब्बारे की तरह फूलती जा रही थी परन्तु सरगी अपनी कमाई में से रीमा को एक दमड़ी भी नहीं दे सका। रीमा को भी अपने पिता और भाई की तरह अपने निकम्मे पति से विरक्ति हो गयी। वे लोग सरगी को 'अहिंसा-वादी' और 'विश्वप्रेमी' कह-कह कर ताने देते रहते थे।

सरगी को भी क्रोध आ जाता, कह बैठता—"तुम लोग खूंखार, असभ्य, हिंसक हो! तुम ने देश की क्या गति कर दी है, सब कुछ ध्वंस और बरबाद किये दे रहे हो! ऐसे लोगों के कारण इतने वर्षों में मुझे एक भी मकान बना सकने का अवसर नहीं मिला, जहां लोग शांति से रह सकें, अपने बाल-बच्चों को पाल सकें।"

रीमा के पिता और भाई सरगी की बातों पर कहकहा लगा, ताली मार कर हंस देते थे मानो वह उन की अत्युक्तिपूर्ण प्रशंसा कर रहा हो।

चतुर व्यापारियों को क्या मालूम था कि समाजवादी क्रान्ति की बिजली बिना बादल के फट पड़ेगी, उन के करोड़ों कमाने की कल्पनाओं के महल धरधरा कर गिर पड़ेंगे। क्रान्ति का तूफान तो आया परन्तु चतुर व्यापारी सर्वथा धराशायी नहीं हो गये। वे अपने व्यवसाय में दूरदर्शिता से काम ले रहे थे। उन की पूंजी एक फ्रांसीसी बैंक में थी। क्रान्ति के आघात से बचने के लिये एक ही उपाय था, फ्रांस चले जाना। १६१८ में वर्नाकस्की परिवार फ्रांस चले जाने की तैयारी कर रहा था। उन्हें विश्वास थ कि सरगी भी उन के साथ ही जायगा। सदा ही विद्यार्थी जीवन के स्वप्नों में रहने वाला सनकी दार्शनिक, रूस में कर ही क्या सकता था? यूरोप में जाकर सम्भवतः उस का दिमाग सही रास्ते पर आ जाये!

सरगी के लिये नोवोगोरद में अकेले रह जाना कठिन जरूर था परन्तु इतने दिन वर्नावस्की परिवार में रहने के कारण सर्व-साधारण लोगों से उस के सम्पर्क टूट चुके थे, दूसरों से पृथक रहने का अभ्यास हो गया था। सम्बधियों और मित्रों से बिछुड़ कर अकेले रह जाना भी बहुत कठिन था परन्तु सरगी सुसराल के परिवार के साथ नहीं गया। उस का विचार था कि देश की अवस्था जैसी भी हो, देश को संकट में छोड़ कर चल देना देना देशद्रोह था। रीमा बिदाई के समय रोने लगी। सरगी को बुरा लगा। उस ने मुंह फेर लिया, वह देशद्रोही और ठगों से बात नहीं करना चाहता

था। रीमा के पिता और भाई उस पागल से क्या बात करते ! ससुर परिवार से सरगी का सम्पर्क समाप्त हो गया।

नोवोगोरद से बर्नावस्की परिवार के चले जाने के बाद उन का कुछ पता नहीं चला। अपने विवाहित जीवन के स्मृति-स्वरूप सरगी के पास ड्राइंग के सामान के कुछ सेट और बक्स ही रह गये थे। पत्नी और पत्नी के पिता ने यह वस्तुयें सरगी को उस के जन्म-दिनों पर उपहार-स्वरूप दी थीं। उन्हें उपयोग कर सकने का अवसर कभी नहीं आया था। सम्भवतः यह उपहार सरगी को उस के शैथिल्य के प्रति उपालम्भ-स्वरूप ही दिये गये थे।

क्रांति से व्यवस्था बदल जाने के कारण सब ओर अव्यवस्था दिखायी दे रही थी। सब ओर भूखे, अधनंगे, व्याकुल लोग ही दिखायी देते थे। यह अवस्था देख कर सरगी सिहर उठता था। कारखानों और मिलों में काम रुक गया था। मजदूर बेकार होकर इधर-उधर भटक रहे थे। जाड़े और बर्फ से व्याकुल लोग मेज़-कुर्सी, पलंग-अलमारी, जो कुछ भी, जैसी भी लकड़ी पा जाते प्राण बचाने के लिये जला डालते थे। सरगी दोब्रोखोतोव उन लोगों के प्रति सहानुभूति और ममता तो अनुभव करता था परन्तु उन से सम्पर्क न होने के कारण उन की भावना से परिचित नहीं था। वह समझता था, यह लोग क्रांति करके अब स्वयं उस ध्वंस का शिकार बन रहे हैं।

मजदूर गिर गयी मिलों को फिर से खड़ा करके काम शुरू कर रहे थे। वे लोग खंडहरों को फिर से उपयोगी बना सकने के दृढ़ निश्चय से जुट गये थे। मजदूरों में उत्साह और उमंग की लहरें दौड़ रही थीं कि पूरे देश का रूप बदल कर रख देंगे। यह परिवर्तन देख कर सरगी सिहर उठता था। याद आने लगता, कभी वह भी ऐसे स्वप्न देखा करता था। चाहता था कि वह भी मज़दूरों के उत्साह, विश्वास और आशा का भाग पा सके और उस में सहयोग दे सके परन्तु इतने वर्ष के शैथिल्य और निरुत्साह से उस का मन मर चुका था। उसे मजदूरों की आशा में विश्वास नहीं हो पाता था।

सरगी ने और भी परिवर्तन देखा। अब मजदूर और कारीगर बाजारों में घरेलू दस्तकारी की छोटी-मोटी चीजें—कैंची, चाकू, सिगरेट, लाइटर आदि बना कर बेचते नहीं दिखायी देते थे। मिलों और कारखानों में दिन-रात पूरी शक्ति से काम होने लगा था। सरगी मन में गहरी पैठ गयी निराशा और शैथिल्प के बावजूद दूसरों को लगन से व्यस्त देख कर सोचता—वह भी कुछ करे।

एक दिन दो आदमी सरगी के घर मिलने आये। सरगी ने दोनों में से एक मजदूर को पहचान लिया। कई दिन पहले सरगी ने उसे बाजार में घर में बनाये सिगरेट-लाइटर बेचते देखा था।

"सुना है आप इंजीनियर हैं!" मजदूरों ने सरगी से पूछा।

"था तो सही।"

"तो फिर आप काम में मदद क्यों नहीं देते ?" रूठ कर बैठे हैं कि हम सफल न हो सकें। क्या पुराने पूंजीपतियों के लौट आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं ?"

"मैं तो किसी की प्रतीक्षा नहीं कर रहा हूं।"

"तो क्या घर में बैठ कर अंडे से रहे हैं ?"

"मैं क्या करूं, मुझे बेकार बैठना स्वयं अच्छा नहीं लगता। आप लोग बताइये, क्या कर सकता हूं ?"

"हमें तो इंजीनियरों की सख्त जरूरत है। जो बात हम नहीं समझते आप हमें बतायें। हमारे साथ काम कीजिये। हमारा निर्देशन कीजिये।"

"जरूर करूंगा।"

मज़दूर सरगी को अपने साथ ले गये।

सरगी मजदूरों के साथ नीवें खोदने में, शहतीर और पुराना लोहा ढोने में भी हाथ बटाता रहा। उस ने कभी थकावट की परवाह नहीं की। काम से थक कर उसे संतोष की स्फूर्ति सी अनुभव होती थी। उसे अपना जीवन बिलकुल बदल गया लगता था। उसे भी मजदूरों के बराबर ही राशन मिलता था। मज़दूरों के साथ एक होकर उसे गर्व अनुभव होता था। मज़दूर उस से बहुत हिलमिल गये थे, उसे अपने जैसा ही समझते थे। सरगी ने जीवन में पहली बार संतोष पाया।

काम आगे बढ़ा तो सरगी को प्रबन्धक और निर्देशक के रूप में काम संभालना पड़ा। स्थिति बदल गयी, वह दफ्तर में बैठने लगा। मजदूर उसे अपना निर्देशक और विशेषज्ञ इंजीनियर समझने लगे। सरगी को अनुभव होने लगा कि वह फिर सर्व-साधारण से पृथक हो गया था, शायद लोग उस पर संदेह करने लगे थे, उस के काम में मीन-मेख निकाली जाने लगी थी। सरगी को यह बहुत बुरा लगता था। वह मज़दूरों के साथ उन की संगति में उन्हीं की तरह रहना चाहता था। मज़दूर उस से चिढ़ भी जाते थे तो भी वह उन का अविश्वास नहीं करना चाहता था।

कारखाने में लोगों ने कहना शुरू कर दिया कि इंजीनियर की पत्नी और ससुर मुनाफाखोर और क्रांति-विरोधी थे इसीलिये वे विदेश भाग गये। इस का भी क्या भरोसा ? ऐसी बातें सुन कर सरगी का सिर लज्जा और ग्लानि से झुक जाता था। सोचने लगता—यदि उस से इस विषय में पूछताछ की जायगी तो क्या उत्तर देगा ? झूठ तो वह बोल नहीं सकेगा।

दुश्चिन्ताओं के मारे सरगी को नींद नहीं आ पाती थी। ससुर का सुन्दर और खूब बड़ा मकान तो उस ने बहुत दिन पहले ही छोड़ दिया था परन्तु उस पुराने सम्बन्ध और कलंक से कैसे मुक्ति पा सकता था। उस के मन में मज़दूरों के साहस

और व्यक्तिगत निस्वार्थ के लिए बहुत आदर था। वे लोग नाम अथवा किसी भी लाभ की आशा न कर, नयी व्यवस्था की सफलता के लिए अपने आप को बलिदान कर रहे थे। वे लोग भूख और सर्दी की परवाह नहीं कर रहे थे। संसार भर के पूंजीपति मिल कर उन्हें असफल कर देने के लिए यत्न कर रहे थे परन्तु रूस के मज़दूर परास्त हो जाने के लिये तैयार नहीं थे। संसार भर के पूंजीपति विरोध और घृणा से उन्हें कुचल डालने का यत्न कर रहे थे। प्रतिक्रिया में उन के मन में भी पूंजीपतियों और अमीरों के प्रति घृणा और संदेह क्यों न होता! वे उन्हें शत्रु कैसे न समझते!

सरगी के मन में प्रतिक्षण आशंका बनी रहती थी—यदि उस की पत्नी और ससुर के विषय में पूछा जायेगा, यदि उस पर मज़दूरों की व्यवस्था को हानि पहुंचाने का आरोप लगाया जायेगा तो वह क्या उत्तर दे सकेगा? सरगी उस सम्बन्ध के लिये लज्जित था, उसे भुला देना चाहता था परन्तु लोग तो उसे विश्वासघाती, भेदिया ही समझेंगे। वह उन्हें कैसे समझा सकेगा?

सरगी के लिये अपने प्रति शंका और आरोप की आशंका असह्य हो गयी। एक दिन उस ने ड्राइंग का सामान, आवश्यक कपड़े और कुछ अत्यन्त प्रिय पुस्तकें एक सूटकेस में डाल लीं। उसे नोवोगोरद से, अपने बाप-दादा के नगर से बहुत ममता थी। वहां उस ने गिरी हुयी इमारतों का मलबा और टूटा-फूटा सामान लेकर खूब बड़ी मिल खड़ी कर देने का चमत्कार कर दिखाया था परन्तु वह नगर उसे छोड़ना पड़ा। सरगी अपना सूटकेस उठाये, जाड़े के कोहरे से भरे जंगल में सूखे पत्तों को रौंदता चल दिया।

सरगी नोवोगोरद से दूर, बहुत दूर, जितनी भी दूर सम्भव था, चला जाना चाहता था। वह मध्य एशिया में पहुंच गया परन्तु वहां भी उस के मन को संतोष और शांति न मिल सकी। अब उस के मन में दूसरा ही पश्चाताप और ग्लानि थी—उस ने कैसी कायरता दिखायी? जिस काम को उस ने अपनी पूरी शक्ति लगा कर बढ़ाया था, उसे केवल काल्पनिक भय से छोड़ कर आ गया था।

सरगी एक बरस तक एक म्यूनिसिपल कमेटी में नक्शे बनाने और नक्शों की नकलें तैयार करने का काम करता रहा। उस ने सुना कि वहां भी एक इंजीनियर की जरूरत थी। नोवोगोरद में इंजीनियर की आवश्यकता की बात सुन कर उसे आश्चर्य हुआ था। उस नगर में इंजीनियर की आवश्यकता सुन कर और भी अधिक विस्मय हुआ।

• सरगी की नींद सूर्योदय के समय ही खुल गयी थी परन्तु शैथिल्य में मैले-कुचैले, सिलवटें पड़े बिस्तर से उठा नहीं था। उस के सामने कोने में एक मकड़ी बड़ी तत्परता से जाला बुन रही थी। सरगी आलस्य में लेटा उसे ही देख रहा था। खिड़की के

कांच पर आहट पाकर उस ने घूम कर देखा। एक भूरा सा मज़बूत हाथ दिखा यी दिया। हाथ खिड़की के टूटे हुए कांच में से एक पुर्जा भीतर डाल कर गायब हो गया।

पुर्जे पर नगर पार्टी कमेटी में तुरन्त उपस्थित होने का आदेश था। सरगी का अनुमान था कि पुर्जा भूल से उस के यहां डाल दिया गया होगा।

सरगी पार्टी कमेटी के दफ्तर में पहुंचा तो उसे एक अच्छे ऊंचे कद की स्त्री ने अपने कमरे में बुलवा लिया। उस के नख-शिख खूब प्रभावशाली थे। स्त्री उज़बेक थी। सरगी को और भी विस्मय हुआ।

उज़बेक स्त्री ने कुर्सी से उठ कर और मुस्कराकर हाथ बढ़ा दिया—"मेरा नाम जुलैखां है। आप सरगी लवोविच दोब्रोखोतोव हैं ? आप से मिल कर बहुत प्रसन्नता हुई। आप इंजीनियर हैं न ?"

"जी, मैं इंजीनियर था।" सरगी ने मन की निराशा दबा कर उत्तर दिया।

"तो अब क्या हैं ?"

"अब तो क्लर्क हूं।"

"तब तो आप को नया काम सीखना पड़ रहा होगा।" जुलैखां ने मुस्करा दिया।

जुलैखां ने सरगी को समीप कुर्सी पर बैठाया और उस के स्वास्थ्य और रहन-सहन के सम्बन्ध में पूछा जैसे इसी प्रयोजन से सरगी को दफ्तर में बुलाया था। जुलैखां ने बहुत आत्मीयता से उस की असुविधा और आवश्यकताओं के बारे में बहुत कुछ पूछा। बिलकुल बड़ी बहिन की तरह बात कर रही थी। सरगी कुछ समझ नहीं पाया, क्यों उस ने अपने मन की गोपनीय व्यथा भी प्रथम परिचय में ही जुलैखां को बता दी। अकेलेपन से इतना व्याकुल हो चुका था कि आत्मीयता पाते ही पिघल गया। जुलैखां से सभी कुछ कह गया।

"ठीक है, मैं खूब समझती हूं।" जुलैखां ने सहानुभूति से द्रवित स्वर में कहा।

सरगी को बहुत विस्मय हुआ—वह उज़बेक स्त्री उस की व्यथा को कैसे समझ सकती थी ! अब तक कभी किसी ने उस से इस प्रकार बात नहीं की थी फिर भी उस ने आश्वासन पाया। उसे जुलैखां का बात करने का सीधा-स्पष्ट ढंग बहुत अच्छा लगा।

"मैं समझती हूं, आप की परेशानी को खूब समझती हूं।" जुलैखां ने इंजीनियर की ओर झुक कर विश्वास दिलाया, "आप काम करना चाहते हैं, आप को आप के योग्य काम मिलना चाहिये। समाज का लाभ भी इसी में है। यही चाहते हैं न आप ?"

"चाहता तो हूं !" सरगी ने स्वीकार किया, "मेरा स्वप्न या महत्वाकांक्षा तो यही थी। आप का अनुमान ठीक है, इसी कारण मैं परेशान था परन्तु उस स्वप्न को छोड़ चुका हूं इसलिये अब परेशान भी नहीं हूं।"

"सुनो इंजीनियर भाई, उस स्वप्न को छोड़ क्यों दिया जाये ? हम लोग तो बहुत कुछ बनाने के बहुत बड़े-बड़े स्वप्न देख रहे हैं। कम्युनिस्ट भविष्य के स्वप्नों को कभी भी नहीं छोड़ सकते।"

"आप मुझे इंजीनियर कहती हैं तो मुझे हंसी आ जाती है।"

"हंसी की बात क्या है ? आप अपने आप को भुला देना चाहते हैं परन्तु हम आप को पहचानते हैं!"

"हो सकता, आप भूल कर रही हों!"

"भूल नहीं है, आप इंजीनियर हैं, इसलिये हम आप को इंजीनियर का काम देंगे।"

"आप देंगी ?"

"जी हां!"

सरगी जुलैखां से बात करके लौटा तो दूसरा ही व्यक्ति था, मन में स्फूर्ति और आत्मविश्वास उफ़न रहे थे। वह दिन सरगी की स्मृति में चिरस्थायी हो गया।

"मिल! कपड़े की मिल!…"सरगी खोया-खोया सा बड़बड़ाता जा रहा था। आस-पास चलते लोगों का उसे ध्यान नहीं था। मुझे मिल की इमारत खड़ी करने का काम देंगे। यही तो कह रही थी। हे भगवान, सब मजाक ही तो नहीं है! …मैं स्वपन देख रहा हूं ? इंजीनियर! इंजीनियर बनूंगा ?

सरगी ने घर लौटते ही सूटकेस खोल कर किताबें निकालीं और उन के पन्ने पलटने लगा—सौभाग्य से नोवोगोरद से पुस्तकें लेता आया था। उन पुस्तकों से अधिक मूल्यवान और प्यारी वस्तु क्या हो सकती थी ? पुस्तकों के पन्नों पर हाथ फेर कर उसे रोमांच हो रहा था। उस की नजर कई पृष्ठों पर फिर गयी, कितने आवश्यक गुर और नक्शे थे, वे उसे भूलते जा रहे थे…नहीं, इन्हें कभी भूल सकता हूं। एक ही नज़र में उसे सब कुछ याद आने लगा। इतने दिन तक उन से बच पाने के लिये उन्हें भुला देने का यत्न करके भी वह उन्हें भुला नहीं सका था।

सरगी का हृदय तड़प उठा—पुस्तकों को लेकर पार्टी कमेटी के दफ्तर में जुलैखां के पास जाकर कहना चाहता था—मैं सब जानता हूं, आप चाहें तो परीक्षा ले लीजिये! मन चाहता था कि दौड़ कर बाजार की भीड़ में जाये और लोगों से पूछे—क्लर्क दोब्रोखोतोव को जानते हो ? सुनो, वह कपड़े की मिल खड़ी करेगा। देश के सब से पिछड़े हुये भाग में मिल बनायेगा। कम्युनिस्टों के सहयोग में, डाकुओं के सहयोग में मिल बनायेगा…।

सरगी के लिये निश्चल बैठ सकना कठिन हो गया था। कमरे में कभी इधर जाता कभी उधर। बड़बड़ाता जा रहा था—जनाब वर्नावस्की साहब, श्रीमती रीमा, नोवोगोरद के पेरिसवासियो कुछ सुना है·!

सरगी ने अपने एकाकीवास के कमरे में चारों ओर नज़र डाली—ढीली खाट खूब धंसी हुई थी। धूप रोकने के लिये खिड़की पर बिस्तर की मैली चादर का पर्दा लटक रहा था। सरगी ने अपने छोटे गन्दे कमरे के विषय में कुछ नहीं कहा था परन्तु जुलैखां को जाने कैसे मालूम था। सरगी ने झाड़ू ली और कमरे के कोनों से मकड़ी का जाला हटा कर दीवालें झाड़ दीं। अब जाला बुनती मकड़ी का चातुर्य सराहने के लिये समय नहीं था। कुछ ही घंटे में सरगी ने अपने कमरे को झाड़-बुहार कर सुथरा-चुस्त कर दिया। पुस्तकों को झाड़-पोंछ कर अंगीठी की चीन पर सजा दिया। धोबी को देने के लिये मैले कपड़ों की गठरी बांध दी। अपने औजारों को साफ करने लगा। उन के स्पर्श से उस का हृदय उमग-उमग उठता था। आइने के सामने खड़े होकर बहुत सावधानी से दाढ़ी बनायी। कनपटियों और माथे पर बन गये महीन झुर्रियों के जाले को उंगलियों से सहलाया—कोई परवाह नहीं। सब ठीक हो जायगा। दूसरे दिन सरगी प्रातः बिलकुल निश्चित समय नगर कमेटी के दफ्तर पहुंच गया। दफ्तर के प्रतीक्षालय में एक लड़की बहुत से अखबार लिये मेज के साथ बैठी थी। सरगी ने उसे पहले दिन भी देखा था—"मुझे कामरेड जुलैखां ने इस समय मिलने के लिये बुलाया है।" सरगी ने अभिवादन का संकेत करके निवेदन किया।

लड़की ने अभिवादन की उपेक्षा कर उत्तर दिया—"नहीं हैं, अभी नहीं आयी हैं।"

सरगी को लड़की के व्यवहार से बहुत निराशा हुई। यह भी नहीं कह सका कि जुलैखां ने उसे बुलावा था। मन पर आतंक सा छा गया···शायद यह लोग भूल ही गये! हो सकता है, इन का विचार बदल गया हो। सरगी के लिये फिर अन्धकार हो गया।

सरगी कमरे के एक कोने में हो गया। अकारण क्रुद्ध हो गयी लड़की से आंखे चुराये रहने के लिये कभी दीवाल को देखने लगता कभी दूसरी ओर ध्यान से देखने लगता। दीवालों पर कई जगह पलस्तर उखड़ा हुआ था और कई उगह सीलन से पीले धब्बे पड़ गये थे। मन में आशंका हो रही थी—लड़की बाहर निकल जाने के लिये न कह दे।

दफ्तर के बरोठे में भारी-भारी कदमों की आहट आयी। कमरे के अधमुंदे किवाड़ बहुत ज़ोर के धक्के से दिवालों से टकरा गये। एक नौजवान भीतर आया। वह सैनिक वर्दी का कोट पहने हुये था। कोट के ऊपर के बटन खुले थे। नौजवान अपने भारी बूट फर्श पर बहुत जोर से पटकता हुआ लड़की के सामने आकर बोला—

"आ गयीं कि नहीं?"

"कामरेड सुलतानोव, मैं बता चुकी हूं···।"

अरगाश की आंखों से चिन्गारियां फूट रही थीं। झुंझलाहट से कन्धे थिरक गये—

"क्या तमाशा है ! यहां तो बाबुओं का राज हो गया है। सब अपने-अपने मोर्चों पर अडिग बैठ गये हैं, मशीनगन से भी हिल नहीं सकते। इनके लिये तो तोप का गोला ही चाहिये…।"

"कामरेड सुलतानोव, शोर मत करो !" लड़की ने डांट दिया।

अरगाश ने दांत पीस लिये—"खैर देख लेंगे, इन हरामखोर नौकरशाहों को भी देख लेंगे। इन सब को निकाल कर बाहर न किया तो कहना…।"

"कामरेड सुलतानोव दफ्तर में शोर मत करो, चुप रहो !" लड़की ने फिर धमकाया।

"तुम चुप रहो !" अरगाश ने क्रोध से लाल आंखें निकाल कर उत्तर दिया, "तुम्हें मालूम भी है क्या हो रहा है ? यहां मज़े में कुर्सी पर पसरी बैठी हो ! तुम्हें काम से मतलब क्या है ? खूब ढोंग बना रखा है ?"

लड़की अपमान नहीं सह सकी, क्रोध में उठ कर कमरे से बाहर चली गयी।

अरगाश सरगी की ओर घूम कर बोला—"क्या तमाशा है ! …बाहर दाढ़ी वाले चपरासी का मिजाज़ देखा ? मुल्ला बना खड़ा है। वह किसी को दफ्तर में कदम ही नहीं रखने देना चाहता। लम्बी जिरह करने लगता है। हमारे जैसे आदमी चौकीदारों को ही जवाब देते रहें ! मैंने तो उसे धक्का देकर हटा दिया। भीतर आकर देखा तो एक क्लर्क गाढ़े के कपड़े पहने कुर्सी पर गद्दी लगाये मालिक बना बैठा है, जहां देखो गाढ़ा ही गाढ़ा दिखाई दे रहा है। मेजों पर गाढ़ा, दीवालों पर गाढ़ा, इनके दिमागों में भी गाढ़ा भरा है। जाने इतना गाढ़ा कहां से आ गया है ! जिस के पास जाओ—जवाब देने के लिये समय नहीं है ! …पूछो मिल बनाने जा रहे हो, तुम्हारे पास रुपया कितना है, कहां से मिलेगा ? कोई जवाब नहीं। मिल ! सुन कर सरगी के कान सतर्क हो गये—कपड़े की मिल का नाम सुन कर इन लोगों की आंखें विस्मय से खुली रह जाती हैं—कैसी मिल ? कैसा फण्ड ? शहर में बच्चे-बच्चे की जबान पर मिल की चर्चा है पर नयी व्यवस्था के इन गाढ़ाधारी महन्तों को कुछ मालूम नहीं। इन्हें जानने के लिये समय ही नहीं कि लोग क्या कहते हैं, क्या चाहते हैं ! इस बात से इन्हें कुछ मतलब ही नहीं। इन्हें केवल अपनी अफसरी की कुर्सी से मतलब है। उद्योग-समिति ने अभी विचार नहीं किया, अभी उद्योग समिति की रिपोर्ट तैयार नहीं हुई। मैंने कह दिया, हमें तुम्हारी उद्योग-समिति से मतलब नहीं। मैंने कहा—मैं अपने लिये तो कुछ मांग नहीं रहा हूं। मैं तो जनता की बात कह रहा हूं तो बोला लिख कर लाओ ! इन्हें तो रिपोर्ट चाहिये, कागज चाहिये। सीधी-सीधी बात क्यों नहीं सुन सकते ?"

"हां, आप ठीक कह रहे हैं।" सरगी ने धीमे से समर्थन किया।

सरगी को अरगाश की उत्तेजना, साहस और आत्मनिर्भरता का भाव अच्छा लगा

परन्तु मुंहफट ढंग भला नहीं लगा। सोचा, यह मुझे पहचानता नहीं कौन हूं वर्ना शायद ऐसे बात न करता।

अरगाश ने सरगी की दुविधा भांप ली और बोला—"मैं तो लोगों की शिथिलता से परेशान हो गया हूं। यह लोग नहीं समझते कि मिल खड़ी कर लेना कोई मज़ाक नहीं है? चुप रहने से काम कैसे चलेगा? पहले तो काम को समझने वाले इंजीनियर चाहिये। बिना समझे-बूझे धूल में लट्ठ मारते जाने से क्या होगा? हुशियार, अक्लमन्द आदमियों की जरूरत है। हम-तुम ऐसे कामों को क्या समझते हैं? हम तो इतने पढ़े-लिखे नहीं, जरा लिखना-पढ़ना सीख भी लिया तो इस से क्या होता है?" सरगी को हंसी आयी पर उस ने अपनी मुस्कान दबा ली, "हम लोगों को सीखने का अवसर ही कहां था। यह सब तो मोटे पेट वालों के लिये ही था। हम लोगों की जिन्दगियां तो उन लोगों के अस्तबल साफ करने के लिये ही थीं। अब तो हमें अपने पांव पर खड़े होना है। उन लोगों की गर्दन पकड़ कर उन लोगों से काम लेना है। उन लोगों के दिमाग से, उन के गुण से काम लेना है। उन साहब लोगों, इंजीनियरों और वैज्ञानिकों को जनता के काम के लिये नथिया कर जोतना है। यह लोग हमारा काम करेंगे कैसे नहीं?"

सरगी ने खुश्क गले से घूंट भरा, सूखे होठों पर जबान फेरी—साहब लोग! विशेषज्ञ! यह ताने वह पहले भी सुन चुका था। जुलैखां ने अलबत्ता जरूर दूसरे ढंग से बात की थी। अस्तु, नौजवान की उत्तेजना और क्षोभ में सच्चाई जरूर थी। नौजवान वास्तव में कुछ कर सकने के लिये तड़प रहा था। सरगी को उस पर क्रोध नहीं आया, वह ढोंगी नहीं था।

सरगी ने स्वीकार किया—"मैं तो समझता हूं, जो लोग ट्रेंड है, काम सीखे हुये हैं उन से काम ले सकने में कोई हर्ज नहीं।"

"यह बात नहीं भैया!" अरगाश ने जोर से कहा, "ऐसे लोगों से बहुत चौकन्ने रहने की जरूरत है...।"

दफ्तर के बरोठे की ओर से लोग बोलते सुनायी दिये। स्वर पहचाना हुआ था। अरगाश और सरगी दोनों उस ओर घूम गये।

जुलैखां गरमी में हलके कपड़े की फ्राक पहने थी। हाथ में रेशमी रूमाल था। उस के साथ-साथ एक खूब मोटा सा आदमी कदम दबाये चला आ रहा था। मर्द का सिर उस्तरे से घुटा हुआ था। कोट, पतलून, टोपी सब गाढ़े के थे।

सरगी ने मोटे को देख कर अनुमान कर लिया—उद्योग-समिति का अफसर ही होगा।

जुलैखां अपनी घनी काली भौंवें सिकोड़े चली आ रही थी। अरगाश और सरगी

को देख कर उस के चेहरे पर मुस्कान आ गयी। दोनों से हाथ मिलाया, "आप लोग आ भी गये ? दोनों का परिचय भी हो गया ?"

अरगाश और सरगी ने परस्पर विस्मय से अपरिचितों की तरह से देखा।

जुलैखां हंस पड़ी—"आप लोगों को तो सहयोग में एक साथ काम करना है। परिचय भी नहीं है। यह अरगाश सुलतानोव, मिल की योजना के मैनेजर हैं। नौकरशाह लोग इन के नाम से कांपते हैं। यह सरगी लवोविच दोब्रोखोतोव इंजीनियर हैं। हम ने इन्हें खोज ही निकाला। यह काम से डरने वाले नहीं हैं, यह तो मैं जान गयी। आप दोनों को मिल कर काम करना है इसलिये हाथ मिला लीजिये…।"

अरगाश और सरगी हंस पड़े। उन के हाथ मिल गये।

जुलैखां उन्हें अपने कमरे में ले गयी। अरगाश से नाराज होने वाली लड़की कमरे में आयी। जुलैखां ने उस से पूछ लिया—"दानिल नादेज़दिन नहीं आये ?"

"आ रहे हैं, रास्ते में हैं।" लड़की ने उत्तर दिया और अरगाश की ओर क्रोध से देख लिया।

"हां, तो क्या मामला है, क्या कठिनाई है, क्या आपत्ति की जा रही है।" जुलैखां की भौंवें फिर सिकुड़ गयीं। स्पष्ट था कि वह किस से बात कर रही थी।

"कामरेड जुलैखां !" गाढ़ाधारी मोटे ने उत्तर दिया, "मेरे पास तो यही रिपोर्ट आयी है। मेरे पास टेलीफोन है नहीं इसलिये काम का पूरा परिचय मिलने में विलम्ब हो जाता है।"

"आप इस समय कर क्या रहे हैं ?" जुलैखां ने टोक दिया।

"जी"

"आर्थिक समिति ने क्या कहा है ?"

"मैं पूरी रिपोर्ट आप को भेज दूंगा।"

"आप स्वयं बैठे हैं, अभी क्यों नहीं बता सकते ?"

"आप को तो मालूम है, हमारे सामने अनेक पूर्व निर्धारित योजनायें हैं। सहकारियों और कारखानों की सम्पत्ति का लेखा तैयार करवा लिया गया है।

"मैं मिल के एस्टीमेट की बात पूछ रही हूं।"

"निवेदन है, मैं केवल अपने अधिकार और उत्तरदायित्व के भीतर ही उत्तर दे सकता हूं। उद्योग-विकास-समिति के निर्देश के बिना हम कुछ भी नहीं कर सकते…।"

"उद्योग-विकास-समिति की बात बाद में होगी। आप अपनी निर्धारित योजना में मिल के लिये क्या कर रहे हैं ?"

"हम उद्योग-विकास-समिति के निर्देश पर ही चल रहे हैं।"

अरगाश के मुख से निकल गया—"मिल हवा में ही खड़ी हो जायगी ? फाइलें

ही फाइलें बनाते जाइये !"

उद्योग-विकास-समिति के अधिकारी के होंठ क्रोध से कांप गये—"आप समझते क्या हैं ? उद्योग-विकास-समिति का कितना उत्तरदायित्व है ? जनता की सम्पत्ति है ? मुझे आप की शिकायत करनी पड़ेगी। ऐसी परिस्थिति में काम करना मुश्किल हो गया है।"

"ठीक है, हम भी समझना चाहते हैं" जुलैखां ने बहुत शांति से कहा, "आप बताइये कि स्थानीय आय में से आप मिल के लिये क्या दे सकते हैं ? जितना भी, जो कुछ भी, जो कुछ भी आप के लिए सम्भव है निकालिये !"

"कामरेड जुलैखां, आप मेरी स्थिति में होकर सोचिये…!"

"कामरेड, अगर आप यह नहीं कर सकते तो टेलीफोन से भी कुछ नहीं होगा, आप से हमारा काम नहीं चल सकेगा !"

उद्योग-विकास-समिति का अधिकारी चला गया।

जुलैखां ने अरगाश और सरगी की ओर देखा—"आप सिगरेट पीते हैं ? सिगरेट लगा लीजिये ताकि सुविधा से बात हो सके।"

अरगाश ने मुस्कराकर जेब से डिब्बा निकाल लिया। डिब्बे में तम्बाकू की पत्ती और कागज भी था। अरगाश ने कागज में पत्ती लपेट कर अपने लिए एक मोटा ढीला सिगरेट बना लिया और डिब्बा सरगी की ओर बढ़ा दिया। सरगी ने गर्दन के संकेत से भद्रलोक की तरह धन्यवाद प्रकट कर डिब्बा ले लिया। बहुत सफाई से पतला सा सिगरेट बनाया। कश खींचा तो खांसी को दबाये रहा।

जुलैखां बताती गयी—"यह निश्चित है कि अगस्त में हमें काम अवश्य आरम्भ कर देना है। पूरा महीना भी नहीं है। इसी बीच सब तैयारी कर लेनी है। मैं स्पष्ट बता दूं, अभी पैसा हमारे पास बिलकुल नहीं है और आदमी भी नहीं हैं। अभी मशीन का भी कोई प्रबन्ध नहीं हुआ है। कह नहीं सकते—कहां से कैसे आयेंगी परन्तु मशीनों से पहले तो इमारत खड़ी करना आवश्यक है…।"

"क्षमा कीजिये, मैं तो कुछ भी नहीं समझ सका" सरगी ने झिझकते हुए कहा, "आप किस आधार पर चल रहे हैं ? आप के पास है क्या ?"

जुलैखां की दृष्टि अरगाश की ओर चली गयी। अरगाश आंख के कोने से सरगी की ओर संदेह से देख रहा था।

जुलैखां ने उत्तर दिया—"हम लोग—मतलब है, यहां की जनता ही सब कुछ करेगी। आप देखियेगा, आप के साथ कैसे लोग हैं ! असल बात है कि आप का मन क्या कहता है ? एक आदमी अभी आ रहा है, आप उस से बात कीजियेगा ! आप समझेंगे कि हम लोगों में कितनी शक्ति है, हमारी साधनहीनता और चारों ओर

फ़ैला हुआ विध्वंस भी हमारे रास्ते में रुकावट नहीं बन सकेगा।"

"मैं हाजिर हूं" याफिम दानिल कमरे में कदम रखते ही मुस्कराकर बोला, "मैंने सब कुछ सुन लिया है। रुपया और साधन न होने का क्या झगड़ा है? भैया, हमें जो करना है, हम करेंगे ही! पैसा हमें निकालना ही होगा! अपना पेट काट कर निकालेंगे! पैसे नहीं निकलेगा?" याफिम ने अरगाश की ओर देखा।

अरगाश उत्तेजना में उठ खड़ा हुआ—"कौन कहता है, नहीं निकलेगा!"

"पहले सुन तो लो!" याफिम ने अरगाश को बैठ जाने का संकेत किया, "उपाय मैं बता दूंगा।" याफिम ने अपनी लाल मूंछों पर हाथ फेरा—लाल मूंछें बहुत अधिक तम्बाकू पीने से काली पड़ गयी थीं—फिर सरगी की ओर देखा:

"आप दोब्रोखोतोव हैं न! आप के विषय में सुना है। एक बात का ध्यान रखिये, व्यर्थ की आशाओं पर भरोसा न कीजिये, अपने साहस पर ही भरोसा कीजिये। हमारे सामने बहुत कठिन काम है। ऐसा काम यहां पहले कभी नहीं हो सका है। हमारे विरोधी भी कम नहीं हैं। काम आरम्भ करने से पहले हीं हमें खूब-खूब समझ लेना चाहिए कि कितनी जोखिमें और अड़चनें हमारे सामने आ सकती हैं ताकि बाद में किसी नयी अड़चन से हमें घबराहट न हो। हमारे सामने केवल मिल खड़ी कर देने का ही लक्ष्य नहीं है। उस के लिए साधन जुटाने, परिस्थितियां अनुकूल बनाने का संघर्ष भी है। उस के लिये लड़ना होगा। अरगाश तो योद्धा आदमी है। वही हमारे इस काम का मुख्य प्रबंधक है।"

जुलैखां ने याफिम के कंधे पर हाथ रख कर कहा—"कामरेड हमारी योजना के अध्यक्ष हैं।"

सरगी चुप रहा। उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था, समझ में आयी थी तो केवल याफिम की असीम साहस की बात परन्तु उस से भी अधिक भरोसा नहीं हो सका। याफिम उसे भला आदमी जरूर लगा।

जुलैखां ने अचानक दूसरी ही बात छेड़ दी—"नगर कमेटी ने बुनाई का काम सीखने के लिये मास्को की त्रयोखगोरनाया मिल में बीस आदमी भेजने का निश्चय कर लिया है…।"

अरगाश, याफिम और जुलैखां चर्चा करने लगे कि निमांचा से किन को भेजना उचित होगा!

सरगी मन ही मन सोच रहा था—यह भी अजीब लोग हैं—सूत न कपास कोरियों से लट्ठम-लट्ठा!

× × ×

पन्द्रहवां परिच्छेद

सूर्य की निर्मम किरणें दिन भर धरती को झुलसाती रही थीं। घाम इतनी प्रचण्ड थी कि उस ओर आंख खुल ही नहीं पाती थी। संध्या समय सहसा घने काले मेघ उमड़ आये। बहुत जोर की आंधी आ गयी। आंधी के झोकों से सफेदे के ऊंचे-ऊंचे पेड़ दोहरे हुये जा रहे थे और पत्तों के पलटने से बिलकुल सफेद लगने लगते थे। आकाश धूल और सूखे पत्तों से भर गया था। बिजली इतनी जोर-जोर से कड़क जाती थी कि कान बहरे हो जाते और भयंकर गर्जन आकाश में बहुत देर तक लरजता रह जाता। वर्षा निमांचा से कुछ दूर हो रही थी परन्तु वर्षा का गंदला जल बह कर कूलों और नीची जगहों में चला आ रहा था।

तुरसाना बादल-बिजली और तूफान से सदा ही दहल जाती थी परन्तु उस दिन वह नहीं घबरायी। सुबह मां इतने दिन बाद खाट से उठ कर खड़ी हो गयी थी तो अब तुरसाना किस बात से डर सकती थी। लड़की के उत्साह और प्रसन्नता का अन्त नहीं था। तुरसाना बरामदे से आंगन में कूद गयी। बाहें आकाश की ओर उठा दीं जैसे वर्षा को ललकार रही हो। आंगन से गली में दौड़ गयी।

"लड़कियो! लड़कियो! आओ!" तुरसाना ने महीन आवाज़ में खूब ऊंचे स्वर में पुकारा, "सिर वर्षा में भिगो लो, बाल लम्बे होंगे!" तुरसाना सलवार को ऊपर खींचे नंगे पांव गली में बह कर आते वर्षा के जल में छप-छप करती दौड़ गयी।

गली की दूसरी लड़कियां भी दौड़ आयीं। खूब छींटें उड़ने लगे। गली लड़कियों की हंसी, कहकहों और किलकारियों से गूंज उठी।

वर्षा के जल की गंदली धार गली का कूड़ा और धूल बहाये लिये चली जा रही थी। तुरसाना बाल खोले गली की दूसरी छोटी-छोटी लड़कियों के आगे-आगे प्रसन्नता से चीखती चली जा रही थी।

मोटी-मोटी बूंदे टप-टप पड़ने लगीं। लड़कियां, बूंदों को पकड़ने के लिये हाथ फैलाये और भी जोर से किलकारियां मारने लगीं।

तुरसाना की नजर दौलत पर पड़ गयी। दौलत गिरती सी दीवाल में से झांक रही थी। दौलत बुन कर सलीम की बीवी के पहले पति से थी। दौलत ने हाथ के संकेत से लड़कियों को अपनी ओर बुला लिया। लड़कियां उस ओर दौड़ पड़ीं।

"चुप! शोर मत करो!" उस ने उचक कर कहा। वह लड़कियों में सब से बड़ी थी।

तुरसाना भी दीवाल के साथ-साथ कूल के किनारे फैले हुये पोदीने पर पांव पर बोझ देकर बैठ गयी। उस ने दौलत से पूछा—"क्या है, क्या देख रही हो?"

दौलत ने धीमे स्वर में बताया—"खुलबा मौसी फातिहा दे रही हैं। यह मुहम्मद उमर किपचक वाले का मकान है न, वही जो पिछले बरस मर गया…।"

"यहां क्या देख रही हो ?"

"अम्मा के साथ फातिहा में आयी हूं। यहां आकर देख, सचमुच बड़ा अजीब है ? तू ऊपर से हाथ बढ़ा मैं ऊपर खींच लूंगी। यहां से तुझे कोई नहीं देख पायेगा।"

तुरसाना ने पीछे घूम कर अपनी सहेलियों को भी आ जाने का संकेत किया और दौलत का हाथ पकड़ कर दीवाल पर चढ़ कर भीतर कूद गयीं। दौलत और तुरसाना एक दूसरी का हाथ पकड़े धरती पर खूब फैले हुये नाशपाती के पेड़ के पीछे छिप कर, कूल के साथ-साथ बरामदे से बचतीं ड्योढ़ी के पास हो गयीं। दूसरी लड़कियां बाहर ही रह गयीं।

ड्योढ़ी के सामने कई जोड़े जूते पड़े हुये थे। लड़कियां वहीं दुबक कर बैठ गयीं।

बरामदा स्त्रियों से भरा हुआ था। सब स्त्रियां सफेद मलमल के रूमालों से चेहरे ढके थीं। सब के हाथ घुटनों पर थे। हथेलियां ऊपर खुली थीं जैसे प्रार्थना के अन्त में 'आमीन' (तथास्तु) कहने को हों। स्त्रियां बहुत देर तक निश्चित मौन रहीं। एक प्रौढ़ा मुखिया जान पड़ती थी। प्रौढ़ा की नाक पतली, लम्बी और होंठ मोटे-मोटे थे। प्रौढ़ा ने अपने दोनों हाथ चेहरे पर फेर लिये तो दूसरी स्त्रियों ने भी प्रौढ़ा का अनुकरण किया। स्त्रियों की निश्चलता टूटी। धीमे-धीमे आपस में बोलने लगीं।

महफिल की स्तब्धता टूटने से लड़कियों का आतंक कुछ कम हुआ। आपस में बोलने से सुन लिये जाने का डर नहीं था।

"वह जो बीच में बैठी है न !" दौलत ने रहस्य से आंखें फैला कर धीमे स्वर में बताया, "वह सियानी है। तेशीकोपकोक से आयी है। क्या बताऊं, इतना जल्दी-जल्दी पढ़ लेती है—ऐसी बातें सुनाती है कि सब जनी बहुत रोयीं—बहुत रोयीं। सच कह रही हूं, अपनी कसम !"

"यह किस की अम्मा हैं ?" तुरसाना ने दौलत के कान में पूछा।

"वाह, तू कुछ भी नहीं जानती। किसी की मां थोड़े ही है, सियानी है। भूत-प्रेत, चुड़ैल झाड़ती है। जिन्नात, भूत-प्रेत-डाकिनी उस के बस में हैं। भूत-प्रेत से बिलकुल आमने-सामने बात कर लेती है।"

"भूत-प्रेत की बात सब झूठ है। अम्मा ने मुझे बताया है। बशारत…।"

"भूत-प्रेत की बात किताब में लिखी है।"

"किताब में झूठ लिखा है।"

"वाह री, तुझे नहीं मालूम कब्रिस्तान में भूत हैं, चुड़ैलें भी रहती हैं।"

"कौन कहता है ?" तुरसाना का चेहरा भय से पीला पड़ गया।

"तू चाहे जिस से पूछ ले ! सब को मालूम है…।" दौलत अपने पांव पर उछल पड़ी, "देख-देख उधर देख, क्या होता है ?"

तुरसाना का शरीर सिहर उठा । दौलत ने जिस ओर दिखाया था उस ओर देखने लगी ।

सियानी खड़ी हो गयी थी और लकुटी टेकती बराम्दे से आंगन में उतर रही थी । एक सफेद सिर वाली बुढ़िया दोनों हाथ फैलाये सियानी को आंगन के अन्त में बनी छोटी सी झोपड़ी की ओर ले चली ।

दौलत तुरसाना को बांह से पकड़ उसे अपने साथ उठा ले गयी । दोनों नाशपाती के पेड़ के पीछे छिप कर दीवाल के साथ-साथ झोपड़ी की खिड़की के नीचे पहुंच गयीं । पहले दौलत ने उचक कर खिड़की के भीतर देखा फिर तुरसाना ने भी देखा । झोपड़ी में बहुत धुंधला-धुंधला था । लड़कियां केवल सियानी के सिर पर मलमल का रूमाल ही देख पायीं ।

सफेद बाल वाली बुढ़िया ने बांस की अड़ेस लगा कर झोपड़ी के दरवाजे का टट्टर मूंद लिया ।

तुरसाना ने दौलत के कान में आतंक से पूछा—"यह क्या कर रही हैं, यहां क्या होगा ?"

"अभी देखना ! तू मन्नोव को जानती है न, वही पागल ! टेढ़ी टांगों और मुंह वाला । गली में दौड़ता-फिरता था । देखा नहीं, वही तो झोपड़ी में धरती पर पड़ा हुआ है ?"

"सियानी क्या उसे दवाई दे रही है ?"

"दवाई नहीं, उस का भूत झाड़ रही है । जादू जानती है । भूत-प्रेत को कील देती है…।"

"कहां है ?"

"कौन ?"

"भ-भूत" तुरसाना ने भय से थुथला कर पूछा, "भूत क्या लड़के के साथ है ?"

"अभी देखना !"

"मुझे बड़ा डर लग रहा है ।" तुरसाना ने दौलत से कहा ।

"अभी तो कह रही थी भूत नहीं होते, बस इतना ही जानती है ! भूत से तो सब डरते हैं ।"

बादल बिना बरसे ही उड़ गये । निमांचा में वर्षा नहीं हुयी । सूर्य की अन्तिम किरणों ने एक बार झांका और बिदा ले ली । बादल तो बिना बरसे उड़ गया पर आंधी आने से हवा ठंडी हो गयी थी परन्तु दिन भर की धूप से तपी हुयी दीवाल और झोपड़ी

के बीच अब भी बहुत घुटन और गरमी थी ।

सब ओर आतंकपूर्ण स्तब्धता थी ।

झोपड़ी से सियारों के रोने जैसी दबी-दबी 'ह्वां ! ह्वां !' सी सुनायी देने लगी । तुरसाना भय से पीछे हट गरम दीवार से चिपक गयी । दौलत खिड़की के भीतर देखती रही ।

सियानी बीमार लड़के के चारों ओर घूम-घूम कर नाक से अरबी में कुछ गुनगुनाती जा रही थी । कभी जान पड़ता दुआ-वजीफा पढ़ रही है, कभी लगता किसी से लड़ रही है :

"बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम, आमीन ''सुभान अल्लाह, लाइलाहाइलल्लाह, रहमतुल्लाह, बिस्मिल्लाह, कुरानशरीफ, अल्लाहोअकबर कादिरेमुतलक''पैगम्बर, फरिश्ते, पीरो-फकीर, इबलीस-किबलीस पाक-उल पाक, जिन्नात से निजात दे, अपनी रहमत दे, लोबान अगर'''।"

तुरसाना को बार-बार रोने की दबी हुयी आवाज सुनायी दे जाती थी, "खीं-खीं-खीं ।"

"क्या कर रही है ?" तुरसाना ने कांपते हुये दौलत से पूछ लिया ।

"लड़के को भूतों ने पकड़ा हुआ है । सियानी वजीफा पढ़ कर भूतों को भगा रही है । भूत भागेगा नहीं तो वह भूतों की ज़बान में बहुत जबरदस्त वज़ीफा पढ़ेगी ।"

सियानी झोपड़ी में बहुत तेज़ी से चारों ओर दौड़ने-भागने और उछलने लगी । चारों ओर थूक-थूक कर, चीख-चीख कर अपनी लकुटी हवा में चलाये जा रही थी जैसे पागल हो गयी हो । सियानी के सिर से मलमल का रूमाल गिर गया । उस के बाल खुल कर बिखर गये । सियानी एक ही पांव पर चकरघिन्नी की तरह बहुत ज़ोर से घूमने लगी । उस के मुख से झाग गिरने लगी ।

तुरसाना भय से कांप कर दौलत से चिपक गयी—"हाय, चल यहां से !"

"ठहर जा, गला घोंट रही है !"

"कौन गला घोंट रहा है ? भूत गला घोंट रहा है, तुझे दिखायी दे रहा है ?"

"नहीं, सियानी अपना गला घोंट रही है । मन्नोव की रूह को भूत से छुड़ा रही हैं ।"

"भूत नहीं छोड़ेगा तो मन्नोव मर जायेगा ?"

"क्या मालूम ? अभी देखना ।"

"जीजी, यहां से चलो ।"

"जरा तो ठहर, अभी जरा देख तो !"

"नहीं, मैं जाऊंगी ।"

"क्यों, डर रही है ? मेरी मां बैठी तो है । वह देख सामने !"

दौलत के सिवा सभी डरी हुयी थीं। बरामदे में बैठी हुयी स्त्रियां भय से निश्चल, स्तब्ध झोपड़ी की ओर टकटकी लगाये हुये थीं।

सियानी झोपड़ी के फर्श पर लेट-लेट कर तड़प रही थी जैसे उसे बहुत से बिच्छुओं ने डंक मार दिये हों। उस के बाल सामने लटक आये थे। कभी अपना सिर धरती पर पटकने लगती, कभी अपनी लकुटी से धरती को पीटने लगती। भर्राये हुये गले से लगातार चिल्लाये जा रही थी। स्वयं ही चुड़ैल-डाकिनी की तरह लग रही थी।

तुरसाना ने बहुत साहस कर खिड़की से भीतर झांका। पहले तो अंधेरे में कुछ दिखायी नहीं दिया। नज़र टिकी तो दिखायी दिया—मन्नोव ने फर्श पर बिछे कम्बल से अपना सिर उठाया। लड़के का रक्तहीन चेहरा बिलकुल पीला हो रहा था, भयार्त आंखें बाहर निकली पड़ रही थीं। भय से तुरसाना की चीख निकल गयी।

दौलत डर गयी। उस ने तुरसाना को खींच लिया और पीछे हट गयी। बराम्दे के समीप आकर दोनों जरा सम्भलीं। दौलत ने कहा—"मर जा, तू भी क्या है, अभी तो असली खेल होने वाला था। मुझे देखने नहीं दिया।"

"अभी क्या होगा?" तुरसाना भय से कांप रही थी।

"अभी तो सियानी भूत को कीलेगी।"

"तू तो कह रही थी कि मुहम्मद उमर का फातिहा हो रहा है।"

"तू मरी कुछ समझती तो है नहीं। फातिहा ही तो है। सियानी आयी है तो मन्नोव को भी ले आये हैं।"

"नहीं, यहां से चल, मुझे डर लगता है।" तुरसाना ने कहा, "मन्नोव भी डर रहा है। विचारे को मार रहे हैं।"

"धत्त! उस का भूत झाड़ रहे हैं। सुन-सुन, यह सुन।"

झोपड़ी में सियानी घिघियायी और भर्राई हुई आवाज में बहुत जोर-जोर से बोली जैसे पागल सियार जोर से रो रहा हो।

"हट्ट-फट्ट मार दूं। झट-पट्ट गाड़ दूं। झिज्ज़-मिज्ज़ खीह, नापाक रूह भाग। भूत-बैताल, गाड़ दूं पाताल। दूर हट्ट, भाग जा—हुश्श। हुश्श।"

सफेद बालों वाली बुढ़िया झोपड़ी से बराम्दे में आ गयी। बराम्दे में बैठी हुई स्त्रियां दोनों हाथों की अंजली बांधे दुआ मांगने लगीं। तुरसाना भय के मारे दौलत से चिपट गयी—"हाय जीजी, यहां से चलो। मुझे बड़ा डर लग रहा है।"

"सियानी ने भूत को कील दिया।"

तुरसाना ने डरते-डरते दम रोके झोपड़ी के दरवाजे की ओर आंखें उठायीं। उस का हृदय कांप रहा था—अभी दरवाज़ा खुल जायगा और सैकड़ों भूत-प्रेत, डाकिनी-चुड़ैलें दौड़ पड़ेंगे। तुरसाना उठ कर भाग जाना चाहती थी परन्तु दौलत के बिना

अकेले कदम उठाने का साहस नहीं था। डर रही थी, अंधेरे में भूत-प्रेत, डाकिनी उसे पकड़ लेंगी। अब घर कैसे पहुंचेगी!"

झोपड़ी में सन्नाटा छा गया था। धौले सिर वाली बुढ़िया ने झोपड़ी के दरवाज़े से बांस की अड़ेस हटाकर टट्टर हटा दिया। सियानी हांफती हुई, लकुटी टेकती बराम्दे की ओर चली आयी। उस के होठों पर झाग लगी हुई थी।

सियानी ने बुढ़िया के हाथ में कुछ रख कर उस की मुट्ठी बन्द कर दी और हांफती हुई बोली—"यह कीलें अपनी दहलीज में गाड़ देना। फरिश्तों की नाराज़गी दूर हो जायगी।"

सियानी बराम्दे में लौटकर औरतों के बीच में बैठ गयी। दोनों हाथ आकाश की तरफ उठा कर कातर स्वर में प्रार्थना करने लगी—"आमीन! लाइलाहाइलल्लाह! मुहम्मदुर्रसूलअल्लाह! अल्लाहोअकबर! रसूल जन्नत-नशीन, पीरो-पैगम्बर अपने गुलामों के गुनाह बख्श कर रहम करे, आमीन!"

सियानी बहुत ही निढाल और रुआंसी लग रही थी। तुरसाना को उस की अवस्था देख कर दया आयी—"बेचारी भूत को न भगा पाती, कील पाती तो उस का क्या होता…?"

उस ने दौलत से पूछ लिया—"कीला हुआ भूत कहां है?"

"चुप रह!"

मुहम्मद उमर की विधवा सब स्त्रियों को चाय देने लगी। एक जवान स्त्री सियानी के समीप आकर रूमाल से उसके चेहरे पर हवा करने लगी। सब स्त्रियां सियानी से पूछने लगीं:

"लड़के को क्या तकलीफ़ थी?"

"नज़र लगी होगी, कोई बीमारी थी?"

"हाय मुई नज़र कैसे लग गयी?"

सियानी ने दुआ पढ़कर चाय का प्याला ले लिया। घूंट भर कर अपने मोटे-मोटे होंठ चाट लिये और बहुत गम्भीरता से उत्तर दिया:

"तुम ने अपनी आंखों नहीं देख लिया क्या तकलीफ़ थी! बिटिया, तुम जानती हो जिन्नात नाराज हो जायं तो…।"

"तुम तो कह रही थीं भूत था।" तुरसाना ने दौलत से पूछा।

"चुप्प!"

सियानी ने मखमली जिल्द की एक मोटी सी पुस्तक अपने घुटनों पर रख ली और बोली—"अब मैं तुम्हें हकीकत सुनाती हूं। पीर अरबी मुहिउद्दीन ने जो जलवे ख्वाब में देखे उन की हकीकत इस पाक किताब में है। इस किताब में लिखा है कि पीर

पाक दरगाह में कयामत तक आराम करेंगे। इन मज़ारों पर यह शर्फ़ हासिल है कि अलीम, खुदावन्द करीम इन मज़ारों पर खुद नज़र रखते हैं। निमांचा में ऐसा मज़ार है। पीर ख़िज्र शेख के कदम शरीफ इस खुशकिस्मत ज़मीन पर पड़े थे। उन्हें निमांचा में ही इलहाम (ईश्वरीय प्रेरणा) हुआ था और खुदावन्दताला के रहम से यहां ही जन्नत-नशीन हुये थे। उन की मुताबर्रिक मज़ार निमांचा में ही है।"

"हां, हां पीर खिज्र शेख का मज़ार यहां ही तो है!" सब स्त्रियों ने समर्थन किया।

सियानी ने किताब खोल ली और रेंगते से नक्की स्वर में पढ़ने लगी—"ऐ गुनाहगारो सुनो, अल्लाह के प्यारे पीरों की रूहें कयामत तक अपने मज़ारगाहों में आराम करेंगी। जो गुनाहगार शैतान के बहकावे में आकर पीरफकीर के पाक मज़ार की तोहीन करेंगे उन्हें जिब्राइल के फरिश्ते सजा देंगे!"

"अल्लाहो अकबर!"

"ऐ गुनाहगारो सुनो, जो लोग शैतान के बहकावे में आयेंगे काफ़िर करार दिये जायंगे, उन्हें कफन नसीब नहीं होगा। वह दोज़ख की आग में जलाये जायंगे। एक के बाद दूसरे दोज़ख की आग में जलते रहेंगे। उन्हें सात दोज़खों की आग में जलना पड़ेगा। जहन्नुम में काफिरों के लिये भट्ठियों में इतनी तेज़ आंच होगी कि दहकती भट्ठियां चूने की तरह सफेद दिखाई देंगी!"

"अल्लाहो अकबर! रहमते अल्लाह!"

सियानी चेतावनी के लिये तर्जनी उठा कर किताब में से पढ़ती गयी—"शरियत का हुक्म है कि मुसलमान का मुसलमान के खिलाफ हथियार उठाना गुनाह है। क्या तुम लोगों को पीरों-पैगम्बरों के करिश्मे (चमत्कार) में अकीदत नहीं रही कि मुसलमान को खुदा का खौफ नहीं रहा कि मुसलमान मुसलमान का दुश्मन बन रहा है। या पाक परवरदिगार, अपने बन्दों को नेक राह पर रख···!"

धौले सिर वाली बुढ़िया ने हाथ जोड़ कर पूछा—"लड़का तो मासूम है। अल्लाह जानता है उसे क्या समझ, उस से क्या कसूर हो गया?"

सियानी ने क्रोध से सिर झटक कर कहा—"पूछती हो क्या गुनाह हुआ? मैं बताती हूं, हमारे पीर मोअज्जिज खिज्र शेख की पैदायश के वक्त आसमान से आवाज़ हुई थी—लोगों को नेक रास्ता दिखाओ। जो लोग इस दुनियाएफानी में राहे नेक पर चलेंगे उन्हें कयामत के बाद जन्नत के दरवाज़े खुले मिलेंगे। ज्यों ही पीर ख़िज्र शेख बोलने लगे, उन के मुंह से निकलता था—यह जिन्दगानी कितने रोज की है? इस दुनिया में सिर्फ चन्द रोज का कयाम है···।

"पीर शेख बचपन से ही दुनिया की नियामतों और प्रलोभनों की तरफ नज़र नहीं करते थे। उन की नज़र हमेशा जमीन की तरफ झुकी रहती थी। उन्होंने रेशम और

जरी का लिबास कभी कबूल नहीं किया। सिर्फ जली हुई रोटी का एक टुकड़ा और एक घूंट शोरवे से बसर करते थे। बचपन में ही जंगलों में चले गये और तनहाई में रहने लगे। उन्होंने दो बार मक्का की हज की। हमेशा गरीबों और बेआसरा लोगों पर रहम करते थे। भीख मांग कर जो कुछ मिलता था वह अपने दस्तेमुबारक से दूसरों को दान दे देते थे। गरीब और बीमार को देख कर उन का दिल रहम से पानी-पानी हो जाता था। कह देते थे—"तुम्हारी मुसीबत और परेशानी मुझ पर आ जाये !"

"बड़े-बड़े ज़ीशान, इमाम, मुल्ला उन के मुरीद थे। सब उन के हुक्म में चलते थे और सब उन्हें अपना पीर मानते थे। दुनिया के सातों मुल्कों में उन के मुरीद थे लेकिन पीर शेख हमेशा तनहाई में इबादत करते रहते थे।"

सियानी ने पुस्तक धप्प से बन्द कर दी—"पीर साहब की ज़िन्दगी का इखतिमाम निमांचा में ही आकर हुआ। खुदावन्दताला भी इस धरती को देखने आते हैं। पीर शेख के बहुत से दूसरे मुरीद भी क़यामत की इन्तज़ार में इसी धरती में आराम कर रहे हैं। निमांचा की ज़मीन क़यामत तक पवित्र रहेगी। मुमकिन है कि इस वक्त भी पीर ख़िज्र शेख़ और उनके रक्षक फ़रिश्तों की रूहें यहां मौजूद हों।

"अल्लाहो अकबर !"

"ऐ कादिरेमुतलक, या रसूलअल्लाह हम गुनाहगारों पर रहम कर !"

भक्ति के उद्गार से सियानी की आंखों से आंसुओं की धारायें बह चलीं। दूसरी स्त्रियों ने भी आंखों पर रूमाल और आस्तीनें लगा लीं।

धौले सिर वाली बुढ़िया ने फिर पूछ लिया—"इस मासूम लड़के से क्या गुनाह हो गया ?"

सियानी ने बहुत गहरी सांस खींची—"लड़का कब्रिस्तान में से जा रहा था। पीर ख़िज्र शेख के एक मुरीद की कब्र से उसके पांव का अंगूठा छू गया। उसी का यह नतीजा है।"

"अल्लाहो अकबर !"

"जो पीर-फ़क़ीर की मुताबर्रिक कब्र को नापाक करेगा उस पर ख़ुदा का कहर नाज़िल होगा। आधी रात के सन्नाटे में पीर अपनी क़ब्र से निकलते हैं और चिराग लेकर अपने मज़ार को देखते हैं। उस वक्त जिब्राइल (मौत का फ़रिश्ता) उस चिराग को सिजदा करने के लिये हाज़िर होता है।"

"दैया रे !"

किसी बच्चे की चीख सुनायी दे गयी। स्त्रियों ने घूम कर पीछे देखा और उठ खड़ी हुई।

तुरसाना बेहोश हो गयी थी और दौलत उसके पास खड़ी भय से कांप रही थी।

दौलत की मां लड़कियों की ओर दौड़ गयी। सियानी के संकेत पर वह दोनों लड़कियों को बाहर ले गयी।

दादी शुक्र अल्लाह बरामदे में बिलकुल किनारे सीढ़ी पर बैठी हुई सियानी की बातों को बहुत आतंक से सुन रही थीं। उसके हाथ बार-बार दुआ में उठ जाते, सिर हिल जाता और मुख से आह सी निकल जाती, सियानी के समर्थन में उसके अन्तिम शब्दों को दुहरा देती।

दादी शुक्र अल्लाह अपने मन का आतंक, क्षोभ और कौतूहल दबा नहीं सकी। बोल पड़ी—"लोग कहते हैं, कब्रिस्तान खोद कर कपड़े का कारखाना लगाया जायेगा। एक मासूम लड़के का पांव पीर के मुरीद की कब्र पर लग गया तो लड़का उस गुनाह से पागल हो गया। जो लोग खुद पीर का मज़ार तोड़कर कारखाना बनायेंगे उनका क्या अंजाम होगा! पूरा शहर ही गारत नहीं हो जायेगा?"

सियानी ने चौंक कर शुक्र अल्लाह दादी की तरफ देखा और दोनों हाथ उठा कर बोली—"अल्लाह, रसूल अल्लाह ही जानता है, वही जानता है।"

सियानी ने दोनों हाथ अपने चेहरे पर फेरे और अंजली बांध कर दुआ मांगने लगी—"या अल्लाह रहमत, गुनाहगारों को पीर के क्रोध के अंजाम से बचा। हम अज्ञानी कुछ नहीं जानते। हमें तेरा ही भरोसा है। हमें तुझ पर ही अकीदत है। हमें गुनाहगारों से क्या वास्ता है? मैं वही कहती हूं जो शरीयत में पैगम्बर ने फरमाया है। मैं क्या जानूं? जब घर लौटूंगी, सिर में राख डाल कर अपने गुनाहों के लिये रोऊंगी। या अल्लाह, मुझे गुनाह से बचा! गुनाहगारों और काफिरों के लिये ज़िल्लत और अज़ाब है, मोमिनों को गुनाह से बचा।"

सियानी ने फिर किताब खोल ली:

"जो मैं कहता हूं, वह अल्लाहताला का इलहाम है। मेरे लफ्ज़ खुदा का हुक्म है। खुदा के दीनदार बन्दों और मज़हब के पाबन्द लोगों का फ़र्ज़ है कि मज़हब और दीन के खिलाफ़ बोलने वाले को संगसाज़ (पत्थरों की चोट से क़त्ल) कर दें। क़यामत के रोज़ काफिर, नापाक और गुनाहगार जहन्नुम में जायेंगे। क़यामत में आसमान से तारे इस तरह से टूट-टूट कर गिरेंगे जैसे ओला बरसता है। धरती पलट जायेगी। लोग दहशत से इतने बेसुध हो जायेंगे कि उन्हें अपना तन-बदन ढांकना भी याद नहीं रहेगा और रो-रो कर खुदा को याद करेंगे।"

सियानी का चेहरा व्यथा और पीड़ा से विकृत हो गया था। वह हिचकियां ले-ले कर रो रही थी, रोते-रोते फ़कीरों की तरह गाने लगी:

"जिसे खौफ़े खुदा नहीं, होगा जहन्नुम रसीद!"

सियानी के साथ-साथ सभी स्त्रियां रोने लगीं। रोते-रोते, होठों ही होठों में दुआ

पढ़ती जा रही थीं।

अंधेरा घना हो गया तो बादल फिर घिर आये। बादल इतने नीचे झुक आये थे कि हाथ उठायें तो छू लें।

उमर किपचक की विधवा खुलबा बुआ जानती थी कि रात में फ़रिश्ते पीर की मज़ार का सिजदा करने के लिये कब्रिस्तान में आते थे। बेचारी ने डर के मारे घर में चिराग नहीं जलाया। बिजली की कौंद से उसका दिल बार-बार दहल जाता था।

अंजीरत दादी बार-बार कहे जा रही थी—शुक्र अल्लाह! शुक्र अल्लाह! शुक्र अल्लाह का!

सोलहवां परिच्छेद

अनाखां कन्धे का जख्म भरने के बाद खाट से उठी तो उस के लिये काम ही काम थे। काम थे तो साथ चिन्ताएं भी थीं परन्तु अब अपनी शक्ति और सामर्थ्य के लिये सन्देह या झिझकने का अवसर नहीं था, जानती थी निमांचा की कितनी स्त्रियों के भविष्य का उत्तरदायित्व उस पर था।

घाव चंगा हो जाने के बाद अनाखां घर से निकली तो जीवन में पहली बार नकाब के बिना घर से बाहिर निकली थी। जान पड़ता था, पांव के नीचे धरती हिली जा रही थी। लगता था, स्त्री-पुरुष ही नहीं दीवारें भी आंखें फाड़-फाड़ कर उस की ओर देख रही थीं। नकाब के बिना गर्दन सीधी उठा कर सामने देख सकना कठिन जान पड़ता था। कभी कदम बहुत तेज हो जाते, कभी ठिठकने लगते। कभी बहुत गर्मी लगती, कभी हवा में ठिठुरन जान पड़ती परन्तु अनाखां के कदम स्थिर और दृढ़ थे।

पुराने अभ्यासों की जड़ें मनुष्य के रक्त, मांस और अस्थियों तक में गहरी समाई रहती हैं…। अनाखां ने निश्चय कर लिया था कि अब बुरका नहीं ओढ़ेगी। इस निश्चय के बावजूद हृदय भीतर ही भीतर कांप उठता था। लोग मुझे कैसे घूर-घूर कर देखा करेंगे, विस्मय और घृणा से मुंह फेर लेंगे जैसे मैं बन्दर हूं। यह भी गनीमत थी कि गली-बाज़ार में लोग उसे पहचान नहीं सकते थे। उस से पहिले अनाखां का खुला चेहरा कब, किस ने देखा था?

अनाखां प्रातः बिना बुरके के 'जनाना सहकारी' तक गयी थी तो उस कठिन काम के लिये बहुत ही दृढ़ निश्चय और साहस की आवश्यकता हुई थी। संध्या समय घर

लौट रही थी तो गली-बाजार में बिना बुरके के चलना उतना कठिन और साहस का काम नहीं जान पड़ रहा था बल्कि जीवन में पहली बार, संध्या की सुहावनी हवा का स्पर्श चेहरे पर बहुत भला लग रहा था। दूर सामने आकाश में दिखाई देता दूज का चांद भले शगुन की तरह सान्त्वना दे रहा था। अपने घर के दरवाज़े पर पहुंच कर उस ने चारों ओर नज़र डाली, अपने आप को स्वतंत्र अनुभव किया। अपना निश्चय पूरा कर लेने का संतोष और गर्व अनुभव हुआ।

अनाखां को याद आया, सहकारी में सहेलियां कह रही थीं: हाय तुम तो बड़ी अच्छी लग रही हो, बिलकुल लड़की जैसी! बिलकुल नहीं लगता कि इतनी उमर है! अनाखां लड़कियों की तरह शरमा गयी थी।

अनाखां को मास्को जाना था, विराटनगर मास्को! सोचती—मास्को की स्त्रियों ने कभी बुरके का नाम भी नहीं सुना होगा। मास्को में उसे 'त्रयोखगोरनाया' मिल में काम सीखना था। उस मिल में सैकड़ों बहुत कुशल और चतुर रूसी बहनें काम करती थीं। बहुत बड़ी-बड़ी और चमत्कारपूर्ण मशीनें थीं। वैसी ही मशीनें निमांचा में भी आने वाली थीं। निमांचा के बुनकरों को भी वैसी मशीनें चलाना सीख लेना जरूरी था।

अनाखां अपने नगर से बाहर पहिले कभी नहीं गयी थी। सहकारी में ऐसी भी स्त्रियां आ रही थीं जिन्होंने पहिले कभी अपनी गली के बाहिर कदम नहीं रखा था। दो-चार बरस पहले अनाखां और निमांचा की दूसरी स्त्रियां चौके और घर के आंगन के अतिरिक्त और जानती ही क्या थीं? सुदूर मास्को तक जाने की कल्पना से उन्हें सिहरन क्यों न अनुभव होती?

अनाखां मन ही मन सोच रही थी—हम लोग इन काले-काले भद्दे कपड़ों में मास्को जायंगी तो वहां के लोग हमें देख कर क्या कहेंगे?

रज़िया बार-बार अनाखां से पूछती रहती—"...जाने कैसी-कैसी मशीनें होंगी! हम लोग उन्हें सम्भाल भी पायेंगी? मेरे तो लक्कड़ जैसे हाथ हैं, इतना बारीक, महीन काम मुझ से कैसे हो सकेगा!" कठिन काम की चिन्ता और शंका तो स्वयं अनाखां के मन में भी थी परन्तु रज़िया को वह साहस बंधाती रहती। अपनी बेटियों की चिन्ता भी थी। उन्हें इतने दिन के लिये अकेली कहां कैसे छोड़ जायगी? बशारत के लिये चिन्ता नहीं थी। वह अपने पांव खड़ी हो सकती थी। वह अपने से बड़ी लड़कियों की अपेक्षा भी साहसी और आत्म-निर्भर जान पड़ती थी। उस ने स्वयं ही पता लगा लिया था कि 'फोरमैनों' के लिये स्कूल खोला जा रहा था। उस ने सोफिया से बात की। जुलैखां से भी मिल आयी। वह सब कुछ जान गयी थी कि स्कूल में क्या सिखाया जायगा, दाखिला कैसे मिल सकेगा। मां से कुछ कहे बिना ही वह प्रार्थना-पत्र लिख रही थी। तुरसाना समीप बैठी बहिन के कंधे के ऊपर से झांक कर उस का लिखना

देख रही थी। बशारत बहुत सावधानी से, बना-बना कर लिख रही थी जैसे कसीदा काढ़ रही हो—किशोर कम्युनिस्ट संघ के निर्देश के अनुसार ।

"फोरमैन स्कूल में दाखिल होना चाहती है ? अनाखां ने पूछा, "बेटी, मुझ से तो बात कर ली होती ?"

"अम्मा लिख तो लूं, फिर तुम्हें दिखा दूंगी।"

बशारत ने इमारती काम की फोरमैन बनने का निश्चय कर लिया था। इस विषय में किसी को आपत्ति हो सकती है, ऐसी उसे कोई आशंका नहीं थी।

अनाखां को तुरसाना की ही अधिक चिन्ता थी। लड़की फिर सहमी-सहमी सी रहने लगी थी, बात-बात पर डर जाती थी। अंधेरे में अकेले कदम रखते उसे डर लगता था। रात बहुत जल्दी सो जाती परन्तु नींद उस की उचटती रहती थी। बार-बार मां या बहिन को पुकार लेती।

"अम्मा, सो गयीं ?"

"बशारत, सुना तुमने ? लगता है बाहिर किसी के कदमों की आहट है।"

तुरसाना कभी अपने ख्याल में खोई हुई लगतीं या किसी की बात ध्यान से सुन रही होती तो सहसा अजीब सा प्रश्न पूछ लेती।

"कुदरतुल्ला क्या खिज्र शेख का भक्त है ?"

"तूने शुक्र अल्लाह दादी से जाने क्या-क्या ऊट-पटांग सीख लिया है।" बशारत बहिन को झिड़क देती, "क्या जाहिल बुढ़ियों जैसी बातें सीखती जा रही है। और फातिहा देखने जा ! और तमाशा देख ! ऊटपटांग वहम सीख ले ! तुझे 'किशोर-कम्युनिस्ट-संघ में कौन लेगा ?"

"हाय मैं अब कभी भी न जाऊंगी।" तुरसाना ने सहम कर कहा।

कुछ दिन से लड़की पीली पड़ती जा रही थी और काफी दुबला गयी थी। मां बार-बार चिन्ता प्रकट करती रहती—"तुझे क्या होता जा रहा है ?...कहीं दरद तो नहीं मालूम होता ?"

"नहीं अम्मा !"

"तू इतना डरती क्यों है ? बार-बार चौंक क्यों उठती है ?"

"पता नहीं अम्मा।"

"कुछ तो बता !"

तुरसाना मां से चिपट जाती वा घबराकर रो पड़ती—"अम्मा, मैं कहां डरतीं हूं, मैं नहीं डरती" परन्तु लड़की की आंखों से कातरता और उदासी दूर न हो पाती।

अनाखां बेटी के कारण चिन्ता में डूब जाती। चिन्ता को बढ़ा देने के लिये और कारण भी थे। नगर में कपड़े की मिल के सम्बन्ध में सैकड़ों बेसिर-पैर की अजीब-

अजीब आतंकपूर्ण अफवाहें फैली हुई थीं। अनाखां उन के बारे में भी सोचने लगती। वह सब अफवाहें कौन फैला रहा था। इन अफवाहों के बावजूद मिल के प्रति जनता का उत्साह और उमंग बढ़ती ही जा रही थी।

आंगन के किवाड़ों की आहट पाकर अनाखां की नज़र उधर गयी। देखा, कुलनिसा लाल बुरके में चली आ रही थी। चेहरे पर नकाब नहीं था। उस के साथ चार-पांच दूसरीं स्त्रियां भी थीं। स्त्रियां बहुत पुराने धूप से बदरंग बुरके ओढ़े थीं। पांव में मूंज से बुनी चट्टियां और हाथों में छोटी-छोटी गठरियां लिये थीं।

कुलनिसा ने बराम्दे में आकर अपना बुरका एक ओर फेंक दिया। बोल पड़ीं—"अनाखां बहिन, यह मेरे गांव की है। मेरी यह सहेली बेचारी खेत में मजदूरी करती थी। इस की भी मेरी जैसी ही कहानी है। हम लोग जुलैखां जज साहबा को सलाम करने आयी हैं।"

"सलाम करने ?"

"हम ने कहा कि हम भी उन्हें देख लें।" स्त्रियों में सब से बूढ़ी ने चेहरे से नकाब हटा कर कहा। उस का पसीने से भीगे चेहरे का रंग धूप से पका हुआ था, "हम ने उनकी बहुत बातें सुनी हैं। सुना है बड़ी भागवान हैं। उन्हों ने लेनिन के——अल्लाह उन की उम्र हजारी करे——दर्शन किये हैं। हम इन के ही दर्शन कर लें !"

"ज़रूर-ज़रूर !" जुलैखां बहिन तुम से जरूर मिलेंगी, वह बेचारी तो खुद गांव-गांव घूमती फिरती हैं। तुम्हारे गांव में नहीं गयी ?"

"नहीं बिटिया ! अल्ला रखे, तू कुलनिसा से पूछ, हमारा गांव तो दूर बीहड़ पहाड़ में है। बड़ा खराब रास्ता है। अल्लाह की रहमत है, हम ही यहां पहुंच गयीं। कुलनिसा ने जज साहबा की बात बतायी कि उन्हों ने उस की जान बचा ली। भला कौन सच मान लेता पर खुद आंखों देख लिया ! हमारे गांव वाली ने इतनी इज्जत पायीं, सोचो तो एक औरत ने !"

"हम ने तो सुना है, जुलैखां जज साहबा ने तुम्हारी भीं बहुत मदद की है।" दूसरी ने अनाखां से पूछ लिया।

"हां, जरूर !"

"बहिना सुना है, तुम मास्को जा रहीं हो !"

"हां, तैयारी तो कर रही हूं।"

"सुना है, किसी ने तुम्हें क़त्ल करने के लिये हमला किया था, तुम्हें डर नहीं लगता ?"

"मैं क्यों डरूंगी ? डर तो उसे ही था जिसने पीछे से हमला किया, अब भी डर से छिपा बैठा है। हौंसला है तो सामने आये !"

स्त्रियां अनाखां की बात सुनकर हैरान थीं।

खोजिया ने अनाखां के आंगन में कदम रखते ही बुरका उतार लिया। बशारत और तुरसाना उसे देख कर दौड़ गयीं और उससे लिपट गयीं। खोजिया ने दोनों को चूम लिया और उतावली में पूछा—"जुलैखां बहिन हैं न ?"

जुलैखां गली में दीवाल के साथ-साथ छाया में चली आ रही थी। सामने गली के कोने पर चायखाना था। जुलैखां कुछ दिन पहले चायखाने के सामने आकर लोगों की नज़रों से बचने के लिये गली की दूसरी ओर हो जाती थी परन्तु वह अब निःशंक चायखाने के सामने पानी छिड़क कर ठंडी की हुई जगह में से निकल गयी। हाथ के रूमाल से चेहरे पर हवा लेती जा रही थी। अब उसे चायखाने से बोली-ठोली या ताने-मेहने सुनने का डर नहीं रहा था। अब तो सुनायी पड़ता था—"जज साहबा हैं ! तुम्हारी कसम वही हैं···।"

एक समय था, जुलैखां निमाचां में कदम रखते सहमती थी। सूर्यास्त के बाद अंधेरे में उधर आने का साहस तो कर ही नहीं सकती थी। राव क़ुदरतुल्ला के पंजों में दबा, गरीबी और ज़हालत से असहाय निमांचा धीरे-धीरे रंग बदल रहा था। मुहल्ले के अमीर दुकानदार अपने घरों पर ताले डाल कर भाग गये थे। राव क़ुदरतुल्ला का कारखाना उजड़ गया था—पुराने मुहल्ले में अब सबसे पहले नज़र पड़ती थी तो 'जनाना सहकारी बुनकर संघ' के मकान पर और 'जनाना सहकारी दुकान' पर। दोनों ही इमारतों की मरम्मत कर दी गयी थी। सहकारी दुकान पर खूब शोख नीला रंग पोत दिया गया था। शहर भर की स्त्रियों की भीड़ वहां लगी रहती थी। मुहल्ले में नये स्कूल की इमारत भी खड़ी हो गयी थी। कपड़े की मिल के लिये निश्चित जगह करके दागबेल डाल दी जा चुकी थी। सभी ओर चर्चा थी कि कपड़े की मिल बन जाय तो शहर में सबसे अधिक रौनक निमांचा में ही हो जायेगी।

उस समय अनाखां के मकान के सामने गली सूनी थी, सन्नाटा था। बच्चों की आवाज़ें भी नहीं आ रही थीं। जुलैखां मकान के दरवाज़े के सामने आकर पल भर के लिये ठिठक गयी। जहां अनाखां चोट खाकर गिरी थी, उस स्थान पर दृष्टि चली गयी। अनाखां पर आक्रमण करने वाला व्यक्ति अभी तक पकड़ा नहीं जा सका था। जुलैखां ने मन में सोचा—यह तो चिन्ता की बात है। इस का अर्थ है कि अभी यहां हत्यारों और डाकुओं के लिये शरण के स्थान हैं, उन से सहानुभूति रखने वाले लोग मौजूद हैं···।

जुलैखां को अनाखां के दरवाज़े के नीचे कुछ सफेद-सफेद सा दिखायी दिया जैसे किसी स्त्री का छोटा तहाया हुआ रूमाल गिर गया हो। जुलैखां ने झुक कर देखा

रूमाल नहीं तहाया हुआ कागज़ था। तहाया हुआ कागज़ एक कंकड़ से दबा कर रखा हुआ था। गली में खूब धूल थी पर कागज पर धूल नहीं पड़ी थी, उसे कोई अभी ही रख कर गया था।

जुलैखां ने झुक कर कागज़ उठा लिया। खोल कर देखा, पेन्सिल से अरबी में दो पंक्तियां लिखी हुई थीं। जुलैखां ने पढ़ा और चौंक कर घूम कर पीछे देखा। उसे लगा जैसे उसके पीछे कोई खड़ा था। गली बिलकुल सूनी थी। वहां दूसरा कोई भी नहीं था। जुलैखां ने देखा, गली में धूल पर अनाखां के दरवाज़े से मर्दाने पांव के स्पष्ट चिन्ह् गली के दूसरी ओर चले गये थे।

जुलैखां को कंपकपी आ गयी। उसने अनाखां की चौखट का सहारा ले लिया। मन आशंका से डूबने लगा था। उसने फिर कागज़ को पढ़ा और साहस से गर्दन सीधी की। लगा, शत्रु कहीं छिप कर उसे देख रहा था। सोचा—देख लेने दो, मैं डरती नहीं।

किवाड़ खुले। अनाखां और खोजिया बाहर आयीं। जुलैखां का चेहरा देख दोनों को विस्मय हुआ :

"क्यों क्या बात है बहिन ?"

"क्या हुआ ?"

"खोजिया, तुम यहां कब आयीं ?" जुलैखां ने पूछा।

"मैं···मैं तो अभी आयी।"

"तुम ने यह कागज यहां देखा था ?" जुलैखां ने पुर्जा दिखलाया।

"नहीं, नहीं तो !"

"गली में कोई दिखायी दिया था ?"

"नहीं, कोई भी नहीं था।"

"ठीक याद है ?"

"हां, यहां तो कोई नहीं था।"

"अनाखाँ तुम ने भी किसी को नहीं देखा ?"

"मैंने तो किसी को नहीं देखा। क्या बात है ?"

"हमारे दोस्त हम लोगों के आने-जाने पर काफी नज़र रखते हैं।" जुलैखां ने कहा और कागज़ अनाखां को दे दिया।

तीनों आंगन के भीतर हो गयी थीं। अनाखां ने कागज़ पढ़ा तो उस का दिल धक्क से रह गया। उस ने कागज़ खोजिया के सामने कर दिया खोजिया ने कागज़ ऊंचे स्वर में पढ़ दिया :

"इस बार तुम्हारी जान बख्शी जाती है लेकिन निमांचा में फिर कदम रखा तो यहां से तुम्हारी लाश ही जायेगी।"

"हाय यह किस ने लिखा ?" कुलनिसा ने घबरा कर पूछ लिया।

अनाखां क्रोध से लाल आंखों से अपने दरवाज़े की ओर देख रही थी।

"जिस आदमी ने तुम पर हमला किया था उसी की यह करतूत है।"

देहात से आयी स्त्रियां घबरा कर रोने लगीं। एक ने अपना बुरका उठा कर जल्दी से ओढ़ लिया। दूसरी ने अपनी कुर्ती का गला खींच कर सीने पर थूक कर अनिष्ट की आशंका के लिये टोना कर लिया।

"या अल्लाह, रहम ! लाइलाहाइल्लल्लाह।"

सब से बूढ़ी ने माथे से पसीना पोंछ कर दूसरियों को डांट दिया—"चुप रहो ! क्या काओं-काओं कर रही हो, कौन मर गया ? कुछ सुनने भी दोगी···?"

बुढ़िया ज़ुलैखां की ओर घूम गयी—"बिटिया डरो नहीं, हौंसला रखो ! अल्लाह करे ऐसा लिखने वाले जालिम के हाथों में कीड़े पड़ें, उस के हाथ टूट कर गिर जायें। किस की हिम्मत है कि तेरी जैसी पाक जात पर हाथ उठायेगा। तू डरती क्यों है, ऐसी बात है तो तू बुरका ओढ़ लेना। तू मेरा बुरका ले जा, फिर कौन पहचानेगा !"

ज़ुलैखां ने मुस्करा कर देहात से आयी स्त्रियों की ओर देखा।

"मौसी कहां से आयी हो ?"

उत्तर में बशारत बोल पड़ी—"मौसी जी, ये बहुत दूर गांव से आयी हैं। आप को सलाम करने के लिये आयी हैं।"

तुरसाना अपनी मां से चिपटी खोजिया के हाथ में थमे कागज़ पर टकटकी लगाये थी। ज़ुलैखां ने देखा और खोजिया को आंख से इशारा किया। खोजिया ने तुरन्त कागज़ को मोड़ कर जेब में रख लिया।

ज़ुलैखां ने देहात से आयी सब स्त्रियों से हाथ मिलाया, फिर तुरसाना को अपनी बाहों में ले लड़की के मुंह पर प्यार किया। तुरसाना भय से सुन्न हो गयी थी। कातर सी मुस्कान उस के होठों पर आयी। उस की आंखें खोजिया की जेब पर से हट नहीं पा रही थीं।

ज़ुलैखां ने तुरसाना को खींच कर गोद में ले लिया और चारों ओर घिर आयी स्त्रियों से बात करने लगी :

"नहीं-नहीं मौसी, ऐसा नहीं हो सकता था ! बहिनों, यह कैसे हो सकता है ? मैंने बुरका इसलिये तो नहीं छोड़ा था कि डर लगे तो मुंह छिपा लूं। हमारे दुश्मन, बेईमान गुण्डे तो यही चाहते हैं। मैं तो एक बार सूरज की रोशनी पाकर फिर बुरके और नकाब में लिपटने से रही। मैं धमकियों और घुड़कियों से नहीं डरती। ऐसी घुड़कियां और धमकियां मैं बहुत सुन चुकी हूं। मुझे डराने के लिये बहुत कुछ किया जा चुका है। मैं तो अपना बुर्का और नकाब सदा के लिये जला चुकी···। कम्युनिस्ट

लोग और किशोर कम्युनिस्ट संघ के बच्चे···।" जुलैखां ने तुरसाना की आंखों में देख कर कहा, "कभी नहीं डरते। हम लोग न अंधेरे से डरते हैं, न ऐसी धमकियों से डरते हैं और न धोखा और फरेब करने वाली 'सियानी' बुढ़ियों से डरते हैं। ठीक है न नन्हीं !"

"हां" तुरसाना ने होठों ही होठों में कहा। विश्वास और भरोसे से जुलैखां की ओर देख लिया। उस का पीला चेहरा पल भर के लिये गुलाबी हो गया।

जुलैखां की गर्दन सीधी हो गयी। वह अध-मुंदी आंखों से बोलती गयी, "कोई बता सकती है, जब हम पैदा हुईं, जब संसार के प्रकाश में पहली बार हमारी आंखें खुलीं तब हमारे मन में क्या आया होगा, हम ने क्या सोचा होगा, कोई नहीं बता सकती परन्तु मुझे लगता है, मुझे याद है। मैं वह बात भूल ही नहीं सकती। जब तक जिन्दा रहूंगी कभी नहीं भूल सकूंगी। वह बात मैं कई बार बता चुकी हूं और जब तक जिन्दा रहूंगी सदा बताती रहूंगी···।"

देहात से आयी स्त्रियों की आंखें विस्मय से आपस में मिलीं और फिर वे उत्सुकता से जुलैखां की ओर देखने लगीं।

बुढ़िया ने पूछ लिया—"उस समय की बात भला कोई कैसे बता सकता है ?"

"मैं तुम्हें बताऊंगी, मुझे कैसे याद है। चार साल पहले सन् १९२१ की बात है। मैं सच कह रही हूं, मेरा जन्म चार वर्ष पहले ही हुआ। उसी समय मेरी आंखें पहली बार खुली थीं और मैंने प्रकाश पाया। हम सत्तर स्त्रियां कान्फ्रेंस के लिये मास्को गयी थीं। हमारे साथ उज़बेक स्त्रियां, ताजिकिस्तान और तुर्कमानिस्तान की स्त्रियां भी थीं। हम लोग यह सीखने के लिये मास्को गयी थीं कि जिन्दा रहने का कौन तरीका है ? जीवन का वह कौन-सा नया मार्ग है जो सब को सुखी और सन्तुष्ट बना सकता है। बड़ी लम्बी यात्रा थी। मास्को पहुंचीं तो हमारी आंखें चकाचौंध रह गयीं। सब ओर नयी-नयी इतनी चीज़ें और बातें थीं कि हम भौंचक रह गयीं। शुरू में हमें गली, बाज़ार में चलते भी डर लगता था। मकान इतने ऊंचे थे कि ऊंची से ऊंची मीनारें भी नीची रह जायें। कदम उठाते हमारा कलेजा दहलता था, जाने कब कोई ऊंचा मकान धड़धड़ा कर सिर पर आ पड़े···।"

विस्मय की बेसुधी में खोजिया के मुंह से निकल गया—"हाय !"

जुलैखां कहती गयी—"हम लोगों को एक बहुत बड़े सफेद हाल में खड़ा कर दिया गया था और बताया कि लेनिन हमारा स्वागत करने के लिये आ रहे हैं। मैं बुरका पहने थी। रास्ते में आते समय बाज़ार में मैंने देखा था कि रास्ता चलती स्त्रियां हमें देख कर ठिठक जाती थीं और हमारी ओर विस्मय से ऐसे देखती थीं जैसे हम कोई अजूबा हों या किसी दूसरे संसार से आयी हों। स्त्रियां हमारी ओर बहुत दया से देखती

थीं। हम से ऐसे बात करती थीं जैसे हम बिलकुल असहाय-अबोध बच्ची हों—हम बुरका पहनें थीं तो बड़ों की बात कैसे समझ सकती होंगी। पहले तो मुझे उन स्त्रियों पर क्रोध आया फिर स्वयं ही लज्जा अनुभव हुई। लगा मैं स्वयं अपना तिरस्कार कर रही हूं। स्वयं अपना हनन कर रही हूं। मुझे ऐसा लगा कि मुंह में चुसनी लेकर चल रही हूं...।

"हाल में खड़ी थी तो सोचा लेनिन हम लोगों से मिलने के लिये आ रहे हैं। वे आकर अपना हाथ हमारी ओर बढ़ायेंगे तो मैं क्या करूंगी ? उन्हें नकाब के भीतर से देखूंगी ! नकाब के भीतर से उनसे बात करूंगी ! उन्हें मुझ पर दया आयेगी ! उन्हें कैसा लगेगा ! मुझे अपने प्रति बहुत घृणा अनुभव हुई। रक्त खौल उठा। जैसे-तैसे अपने को वश में किये थी।

लेनिन आये। आकर वे सब स्त्रियों से हाथ मिलाने लगे। मेरे सामने आ गये तो मैं रह न सकी। मैंने अपना बुरका खींच कर नीचे गिरा दिया। बुरका उनके पांव पर गिर पड़ा। ऐसा न करती तो या तो वहीं मेरा दम घुट जाता या मन में ऐसी वेदना उठती कि जीवन भर उस से त्राण न पा सकती।

"तुम्हें मालूम है लेनिन ने क्या किया ? एकदम झुक गये। मेरा बुरका उठा कर मुझे देने लगे। उन्होंने समझा बुरका मुझ से घबराहट में गिर गया था। मुझ में जाने कहां से साहस और शक्ति आ गयी थी। मैंने बुरके को पांव से दबा दिया जैसे सांप को कुचल रही हूं। मुख से कुछ बोल न सकी।

"लेनिन समझ गये, उन्होंने मुस्करा कर अपना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया।

"सलाम, खुश हैं ! आप का क्या नाम है ?" उन्होंने पूछ लिया।

"मुझे कुछ याद नहीं मैंने क्या कहा ? लेनिन बोले—

"कामरेड जुलैखां, शाबास ! आपको बधाई देता हूं।"

"मैंने उन्हें धन्यवाद दिया।

"कामरेड, धन्यवाद तो मुझे आप को देना चाहिये" उन्होंने कहा, "मैं आप को बोलशेविक पार्टी की ओर से धन्यवाद देता हूं।"

"लेनिन बोले :

"मेरी ओर से उजबेकिस्तान की स्त्रियों को सलाम दीजियेगा। जो लोग मानवता और नागरिकता के अधिकारों के लिये लड़ रहे हैं उन सब लोगों को मेरी ओर से सलाम दीजियेगा। इस संघर्ष में सोवियत सरकार पूरी शक्ति से आपको सहायता देगी।

• "उस समय मैं उनका पूरा अभिप्राय समझ नहीं सकी थी इसलिये केवल यही कह दिया था—धन्यवाद, बहुत धन्यवाद। दूसरी स्त्रियों ने भी उस समय ऐसे ही कहा था। हम उनका पूरा-पूरा अभिप्राय समझ नहीं सकी थीं। उस समय तक हम ने केवल यही

पढ़ा और सुना था कि लेनिन महान योद्धा थे। देखने से वे योद्धा या सिपाही नहीं लगते थे, बिलकुल सीधे-सादे, साधारण भले आदमी जान पड़ते थे परन्तु उन्होंने किस तरह आत्मीयता से हम सबसे हाथ मिलाया, वह मैं कभी भूल नहीं सकती…।"

जुलैखां ने अपना दाहिना हाथ स्त्रियों को दिखाने के लिये ऊपर उठा लिया था। उस हाथ को बहुत श्रद्धा से अपने हृदय पर रख लिया। सभी स्त्रियां एकटक उस हाथ को देख रही थीं मानो उस हाथ में से कोई चमत्कार प्रकट हो जायगा।

जुलैखां ने सब से बूढ़ी स्त्री की ओर घूम कर पूछा—"मौसी, तुम्हीं बताओ अब मैं बुरके में कैसे छिप जाऊं ?"

"मैं अनपढ़, अनजान गवईं-गांव की बुढ़िया। बिटिया, तू मेरी बात का बुरा मान गयी ? तुझे मेरी बात बुरी लगी तो माफ कर दे।" बुढ़िया ने कहा, "सुभान अल्लाह ! उसकी कुदरत ! उसने तेरे जैसे भी दुनिया में पैदा किये हैं।"

"मौसी, अल्लाह ने तो ऐसे खत लिखने वाले लोगों को भी पैदा किया है" जुलैखां ने सुझाया।

गांव से आयीं सब स्त्रियां एक साथ बोल पड़ीं—"अल्लाह करे उस निगोड़े के हाथों में कीड़े पड़ें…। उसका बेड़ा गरक हो…वह जहन्नुम में जाये।"

सूर्यास्त हो गया था। सब स्त्रियां जुलैखां को उस के घर तक पहुंचा आने के लिये तैयार हो गयीं। स्त्रियां आंगन के दरवाजे पर ठिठकी हुई थीं। खोजिया बोल पड़ी—"क्या इंतजार है ? चलो न, देर हो रही है।"

"तुम भी हमारे साथ चल रही हो ?" जुलैखां ने पूछ लिया।

"नगर कमेटी के दफ्तर तक तुम्हारे साथ ही चलूंगी।"

"तो फिर जल्दी करो न !"

"मैं तो तैयार हूं।" खोजिया ने उत्तर दिया।

खोजिया ने बुरका नहीं ओढ़ा था। जुलैखां ने विस्मय से घूम कर देखा। खोजिया ने अपना बुरका लपेट कर किवाड़ की ओट में डाल दिया था।

खोजिया जुलैखां का विस्मय देख कर हंस पड़ी।

जुलैखां ने खोजिया को प्यार में सीने से लगा लिया। अनाखां और बशारत भी दौड़ी आयीं। उन्हों ने भी उसे आलिंगन में लेकर चूम लिया। तुरसाना ने भी बांहें खोजिया के गले में डाल दीं।

"मैं तो कभी बुरका नहीं पहनूंगी" तुरसाना किवाड़ के नीचे से निकले बुरके के पल्ले को कूद-कूद कर कुचलने लगी।

× × ×

खोजिया अपने घर के सामने पहुंची तो प्रायः आधी रात हो रही थी। अरगाश उस के घर के समीप शहतूत के पेड़ के नीचे प्रतीक्षा में खड़ा था।

"कितने दिन हो गये, तुम दिखायी ही नहीं पड़ीं।" अरगाश खोजिया को देखकर बोला। खोजिया पर बुरका नहीं था। नज़र मिली तो वह लड़की के चेहरे का भाव देखकर चुप रह गया।

'हां, कहो न, क्या कहते हो!" खोजिया ने पूछ लिया। उसे अरगाश का विस्मय और चुप हो जाना अच्छा नहीं लगा।

"क्या दिन में···क्या तुम दिन में भी ऐसे ही बाहर चली जाती हो?" अरगाश ने पूछ लिया।

"क्यों, तुम्हें विस्मय हो रहा है? तुम्हें बुरा लगता है?" खोजिया का स्वर कुछ तीखा हो गया।

"वाह, क्या बात है!" अरगाश ने सराहना में धीरे से कहा, "क्या कहना है खोजिया!"

खोजिया की आंखें लाज से झुक गयीं।

अरगाश ने खोजिया का हाथ थाम लिया और भावुकता से रुंधे स्वर में बोला—"सच, मुझे इतनी आशा तो कभी नहीं थी। कभी नहीं सोचा था कि तुम—निमांचा की स्त्रियां इतना साहस कर सकेंगी, इतना आगे बढ़ जायेंगी। तुम फूल न उठना कि खुशामद कर रहा हूं पर तुम्हारी दुकान ने तो कमाल कर दिया है। शहर भर में तुम्हारी ही चर्चा है।"

"सब जुलैखां आपा (बड़ी बहिन) की ही बदौलत है।" खोजिया बहुत धीमे से बोली।

अरगाश ने गर्दन झुका कर खोजिया की आंखों में देखा—"हां-हां, मैं भी समझता हूं। मैं भी सब कुछ सुनता-देखता हूं। मैं क्या नहीं जानता? तुम्हारी मेहनत और लगन किस से छिपी है। सच कहता हूं, मैं तो तुम्हारा बहुत आदर करता हूं।"

"सब जुलैखां आपा की बदौलत है" खोजिया ने अपनी बात दोहराई।

"तुम मास्को जा रही हो! वहां से लिख-पढ़ कर लौटोगी तो हमसे क्यों बात करोगी! तुम्हारा दिमाग आसमान पर चढ़ जायेगा, हमारी तरफ तो देखोगी भी नहीं!"

खोजिया सिर झुकाये मौन रह गयी।

अरगाश की आंखें चमक उठीं—"याद रखना पीछे मैं भी नहीं रहूंगा। तुम्हारे मुकाबिल होने के लिये चाहे आसमान के तारे तोड़ने पड़ें।"

खोजिया की गर्दन सीधी हो गई। अरगाश की ओर आंखें उठा कर दृढ़ता से

बोली—"मुकाबिला करोगे ? अच्छी बात है, देख लेंगे कौन, क्या, कितना कर पाता है ?"

"ओह, इतना साहस ?" अरगाश का स्वर प्यार से रुंधने लगा। उस ने खोजिया का कोमल हाथ अपने हाथों में जोर से दबा लिया।

सत्रहवां परिच्छेद

निमांचा के कब्रिस्तान के साथ युगों से ऊसर धरती का अच्छा बड़ा किता खाली पड़ा था। उस धरती का न कोई उपयोग था, न उस का कोई नाम ही था। दूर ऊंचाई से वह धरती फटे हुये, सूख कर ऐंठ गये, धूल भरे जूते जैसी जान पड़ती थी। वसंत में उस धरती पर तरह-तरह की कंटीली झाड़ियां उग कर कसैली गंध भरी हरियावल छा जाती थी। गर्मी खूब बढ़ जाती तो झाड़ियां सूख कर झाड़-झंखार बन जातीं और कांटे ही कांटे हो जाते। स्थान-स्थान पर लोनी की सफेदी छा जाने से बड़े-बड़े चटाक पड़ जाते। जगह-जगह भिटे और गड्ढे और कहीं ढोके उघड़ आते। ऐसा लगता कि धरती पर कोढ़ फूट आया हो। न जाने कब से शहर भर का कूड़ा और मैला उस धरती पर फेंका जा रहा था और वहां ही समा जाता था। निमांचा की ओर के किनारे पर गोबर और बिनौले की राख के ढेर खड़े रहते थे। गंधाते कूड़े-कचड़े के इन ढेरों पर लावारिस कुत्तों की किल्लोलें और संग्राम चलते रहते थे। मक्खी और मच्छरों के भनभनाते बादल उस धरती पर निरन्तर उमड़ते-घुमड़ते रहते।

उस ऊसर धरती से ऊपर ढलवान पर निमांचा की पुरानी बस्ती की धूल से भरी गलियां और आंगन, टेढ़ी-मेढ़ी, ऊंची-नीची, गिरी-धचकी दीवारें, दबी-झुकी झोपड़ियां और काठ के चौबारों का समूह बहुत बड़ी परन्तु पुरानी उजड़ी माखी जैसा लगता था। उस उजाड़-वीरान में दो ही स्थान अलग-अलग और स्वस्थ दिखाई देते थे। बस्ती में सब से ऊंची जगह पर बनी नीले गुम्बद वाली बड़ी मस्जिद और दूसरी खूब सरसब्ज बाग-बगीचों से घिरी राव कुदरतुल्ला की बड़ी हवेली।

ऊसर के एक ओर, फटे जूते की तरह उठा हुआ एक गंजा टीला था। लोग उसे बाघ का टीला पुकारते थे। कभी टीले में बाघ के निवास या उस के रूप का कुछ आभास मिलता होगा परन्तु युगों की वर्षा और आंधी से अब वैसा कोई चिह्न शेष गया था। टीला मिट्टी की नीची दीवाल से घिरा हुआ था। किसी ज़माने

में वहां भट्ठा बनाने का यत्न किया गया होगा ।

टीले के एक ओर ऊसर धरती में कब्रिस्तान की लम्बी नोक घुस आयी थी । कब्रिस्तान की गिरी-पड़ी, बिखरी कब्रों के विस्तार में सब से ऊंची कब्र ख़्विज्र शेख़ की थी । शेख़ की कब्र पत्थर से बनी थी । कब्र का गुम्बद और गुम्बद में झरोखे अब भी शेष थे । कब्र के कोनों पर लम्बे-लम्बे बांस गड़े थे । मन्नत मानने वाले लोग इन बांसों पर अपनी श्रद्धा के प्रतीक झंडे बांध जाते थे । आंधी-पानी से झंडों के रंग उड़ कर धज्जियां हो जातीं । कभी लोग मन्नत में घोड़े की पूंछ के चंवर भी बांध जाते थे । हवा से उलझे, रूखे चंवर झाड़ुओं जैसे लगते थे ।

अरगाश, याफिम दानिलोविच और इंजीनियर सरगी दोब्रोखोतोव सुबह ख़ूब तड़के ही बाध के टीले पर पहुंच गये थे । ऊसर में चारों ओर सर्वे की तिपाइयां लिये आदमी दिखायी दे रहे थे ।

अरगाश लगातार सिगरेट से कश पर कश खींचता जा रहा था । सरगी अपनी पुरानी पिलपिली टोपी के किनारे से आंखों को धूप से बचाये, दूर देख सकने के लिये आंखों को सिकोड़े इधर-उधर नज़र दौड़ा रहा था । कभी उन की आंखें चार हो जातीं तो दोनों मुंह फेर लेते । याफिम उन दोनों को देख कर अपनी मूछों में मुस्करा रहा था ।

याफिम ने अपनी टोपी का छज्जा भौंवों पर खींच लिया और सरगी की ओर घूम गया--"कहो भाई इंजीनियर, क्या राय है ? जगह कैसी लगी ?"

"बहुत वीरान सी लगती है ।" सरगी ने उत्तर दिया ।

"ख़ुदा ने कयामत के बाद दोज़ख बनाने के लिये ही यह जगह बचा रखी थी ।" अरगाश बोला ।

"मेरा ख्याल है, मिल के लिये कुछ अच्छी जगह चुनते तो बेहतर होता ।" सरगी ने मन की विरक्ति दबा कर कहा ।

"ऊसर वीरान जगह का भी तो कोई उपयोग होना चाहिये । अच्छी धरती पर तो कपास भी बोई जा सकती है ।"

"कपास ?" सरगी ने मन ही मन कहा, कपास बोयेंगे ? यह लोग तो मिस्र से होड़ करना चाहते हैं ।

"चिढ़ क्यों रहे हो" याफिम ने कहा, "हौंसला रखो । इस नरक का उद्धार हो जायगा ।" लोग हाथ बंटायेंगे । हम शहर भर को इस काम में लगा लेंगे ।"

"लोग सौ बरस से यहां कूड़ा फेंक रहे हैं । वह सब इतनी जल्दी साफ हो जायगा ?"

"तुम ने समुद्र पर पुल बांधने की कहानी नहीं सुनी ? उस युग में बिना साधनों के भी लोगों ने समुद्र पर पुल बांध लिये । हमारे पास तो बहुत साधन हैं । लोग जुट

जायें तो क्या न कर डालें ?"

इंजीनियर सरगी मुस्कराकर रह गया।

एक खूब बड़ा गिरगिट कटीली झाड़ी में से उन लोगों की ओर ऐसे दौड़ा कि अपनी शांति भंग होने से नाराज हो गया हो। गिरगिट कुछ सोच कर एक पत्थर की छांह में रुक गया और कुछ देर तक—अधिक समीप खड़े आदमियों की ओर देखता रहा। सूर्य ऊंचा उठ आया था। रात की ओस धूप से वाष्प बन कर हवा में भर गयी थी। गर्मी और घुटन अनुभव होने लगी थी।

सरगी झुक कर अपनी पतलून के पौंचों पर चिपक गये कांटे छुड़ाने लगा। अरगाश ने याफिम को संकेत से एक ओर ले जाकर दबे हुये स्वर में कहा—"इंजीनियर साहब घबरा रहे हैं।"

"घबरा रहा है, अपना उत्तरदायित्व समझता है न !"

"पुराना भद्रलोक आदमी है। बहुत मंहगा पड़ेगा।"

"मंहगा ?" याफिम ने अपनी जेब से एक छोटी सी पुस्तक खींच ली। एक पृष्ठ खोल कर अरगाश को दिखाया, "पढ़ो, इस में क्या लिखा है।"

अरगाश ने पढ़ा :

"कम्युनिस्टों को पूंजीपति विशेषज्ञों से शिक्षा लेने और सीखने में किसी प्रकार की झिझक और संकोच नहीं होना चहिये....। सीखने के लिये कुछ भी न उठा रखना चाहिये। इस काम के लिये जो दाम देने पड़ें, कितनी भी मेहनत करनी पड़े, कम्युनिस्टों को पीछे नहीं रहना चाहिये। ज्ञान और कला को सतर्क हो कर पा सकना किसी भी दामों मंहगा नहीं है।" अरगाश ने कंधे उचकाये, "ठीक है इंजीनियर सरगी भी इसी सत्य को प्रमाणित कर रहा है।"

"इसी सत्य को, ठीक कह रहे हो, यह लेनिन के शब्द हैं।"

अरगाश ने जीभ दांत तले दबा ली। आंखें पुस्तक के पृष्ठ पर झुक गयीं। वह विचार में मौन हो गया।

"यदि शत्रु हम से अधिक चतुर है तो हमें उस से भी सीख लेना चाहिये।" याफिम बोला।

सरगी ने मिल की योजना के मुखिया और मैनेजर को धीमे-धीमे बात करते देखा तो उन्हें सुविधा से बात कर लेने का अवसर देने के लिये स्वयं ही टीले से नीचे उतर गया। अरगाश और याफिम टीले से उतर कर उस के साथ हो गये। टीले के नीचे से ऊसर का दृश्य और भी स्पष्ट था। कब्रिस्तान की नोक में कब्रें स्पष्ट दिखायी दे रही थीं। पवन-चक्की को जाती सड़क और उस के पीछे खुरमानी का छोटा सा बाग भी दिखायी दे रहा था।

याफिम ने पूछ लिया—"क्यों इंजीनियर भाई, क्या ख्याल है ? बांध के टीले से ही काम शुरू करना ठीक नहीं होगा ? टीले को डाइनामाइट से उड़ा दें। मलबा साफ करने के लिये किशोर कम्युनिस्टों के दो दल दोनों ओर से लगा दिये जायं।"

"क्यों, यह क्या कह रहे हो ?" अरगाश ने विस्मय से पूछा, "टीले को उड़ाने की क्या जरूरत है ? साफ चौरस जगह क्या कम है ?"

"कहां है चौरस जगह ?"

"क्यों, देख नहीं रहे ? वह सामने क्या है ?"

"वह तो कब्रिस्तान है। भैया, वहां मुर्दे सो रहे हैं।"

"तो क्या मुर्दों से मी डर लगता है ? कब्रिस्तान तो है पर जाने कितना पुराना है...।"

"बहुत पुराना है तो इसे छेड़ना और भी खतरनाक है। मैनेजर, तुम ने इस बात पर कभी गौर किया ?"

अरगाश के होंठ विद्रूप की मुस्कान में सिकुड़ गये—"याफिम दादा, इस्लाम की बात कहो तो मैं खुद मुसलामान हूं, मुझे ही ज्यादा ख्याल होना चाहिए लेकिन जब सामने अच्छा भला रास्ता दिखायी दे रहा है तो उसे छोड़ कर दीवाल में सिर मारने क्यों जाऊं ?" अरगाश ने टीले की ओर संकेत किया, "मैं क्या पागल हूं !"

"मान लिया तुम मुसलमान हो लेकिन यह क्यों भूल गये कि तुम कम्युनिस्ट भी हो !" याफिम ने मुस्कराकर टीले की ओर संकेत किया, "तुम्हें वह दीवाल तो दिखायी दे रही है पर लोगों के विश्वास की, सैकड़ों वर्ष पुरानी दीवाल नहीं दिखाई देती ?"

अरगाश भभक उठा—"तुम्हारे डर की कोई हद है ! बात-बात में दुम दबाते जाने से कैसे काम चलेगा ? निमांचा के चार-पांच दढ़ियल, पग्गड़ मौलवियों का इतना डर ? तेशिकोपकोक की सियानी बुढ़िया के सामने सिजदा करो (माथा टेको) ! कोई नयी कब्र है भी इस भाग में ? केवल गिरी हुई कब्रों का मलबा ही पड़ा है।" अरगाश ने ख़िज्र शेख की कब्र की ओर संकेत किया, "वह भूतों का अड्डा नही, गिरगिटों की मांद है। कम से कम हजार साल तो पुरानी होगी ही। अब तक तो हड्डियों का भी चिन्ह नहीं रहा होगा। लोग इतने समय तक इन पत्थरों से सिर मार-मार कर काफी बेवकूफ बन चुके। तुम भी क्या इस की पूजा करना चाहते हो ! अगर दस-पांच सिर फिरे कट्टर जाहिलों ने तूफान खड़ा करने की कोशिश की तो कसम है मूली की, उन गधों की गर्दनें मूली की तरह तोड़ कर रख दूंगा।"

याफिम ने चारों ओर नज़र डाल कर गहरी सांस खींची—"तुम्हारी इन धमकियों से ही लोग तुम्हारा साथ देने को तैयार हो जायेंगे ? तुम्हारा दिल अभी लड़-लड़ कर भरा नहीं। लोग तो अब काम करना चाहते हैं। तुम अब भी बात-बात पर तलवार

खींचने के लिये तैयार हो। तुम किसी की नाक मैली देखो तो नाक ही काट डालो। लोग ऐसे आदमी का भरोसा कैसे करेंगे ? तुम नेता बनने लायक हो ?"

सरगी याफिम की बात बहुत ध्यान से सुन रहा था। पहले उसे अरगाश की ही बात ठीक लगी थी परन्तु याफिम के तर्क से बात समझ में आ गयी। अच्छा ही हुआ, वह अब तक दोनों की बात में नहीं बोला था। कपड़े की मिल की योजना कोई छोटी-मोटी चीज नहीं थी। इंजीनियर पर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व था। सरगी बहुत ध्यान से सोचने लगा—आरम्भ में ही लोगों का विरोध खड़ा कर लेने से क्या फायदा !

अरगाश ने इंजीनियर की चिन्तित, गम्भीर मुद्रा भांपी। माथे पर त्योरियां पड़ गयीं। तम्बाकू की डिबिया के लिये जेब में हाथ डाल कर बोला—"मेरी बात ठीक नहीं ?"

"हरगिज नहीं" याफिम ने गम्भीरता से उत्तर दिया।

"मैं तो जुलैखां को धमकी देने वाले लोगों को कभी माफ नहीं कर सकता ! मैं तो इसे कभी बरदाश्त नहीं कर सकता !"

"यह बात बिलकुल ठीक है। मैं भी कहता हूं कि उस स्थिति का उपाय तुरन्त होना चाहिए।" याफिम ने अरगाश के डिब्बे से तम्बाकू ले लिया और सिगरेट बनाते हुए सरगी की ओर देखा, 'क्यों इंजीनियर भाई, तुम्हारी क्या राय है ?"

प्रश्न सरगी के लिये अप्रत्याशित था परन्तु उस ने दृढ़ता से उत्तर दिया :

"मिल का काम जल्दी से जल्दी शुरू हो जाना चाहिये। निश्चित समय से भी सप्ताह भर या कम से कम एक दिन ही पहले अवश्य आरम्भ करके दिखा देना चाहिये। उन की धमकी का यही उचित उत्तर होगा। आप का क्या ख्याल है ?"

याफिम ने अरगाश की ओर कनखी से देख लिया।

अरगाश को अच्छा नहीं लगा। वह इंजीनियर की ओर घूम गया—"ठीक-ठीक कहिये, कितने दिन पहले हो सकता है ?"

सरगी ने विचार में आंखें सिकोड़ कर उत्तर दिया—"जगह को चौरस करने का काम तो आरम्भ किया ही जा सकता है। मैं जितनी जल्दी हो सकेगा, करूंगा। पन्द्रह दिन में एस्टीमेट दे दूंगा।"

उत्साह से अरगाश का सीना फूल उठा परन्तु प्रसन्नता छिपा कर कड़ाई से बोला—"यह बात लिख कर दे दीजिये···।"

तीनों आदमी कदम मिलाये बाघ के टीले से चल दिये।

× × ×

राव कुदरतुल्ला बैठक की खुली हुई खिड़की में झुका बाहर देख रहा था। उस

के चेहरे पर क्रोध और हृदय में आतंक था। बहुत ज़ोर का एक और धमाका हुआ। वातावरण धमाके की गरज से कांप उठा। राव की खिड़की के कांच बज उठे। हरम से राव की बेगम खोजा बीबी की आतंक से रोते-रोते दुआ पढ़ने की आवाज़ सुनायी दे रही थी।

"यह लोग नहीं मानेंगे, बढ़ते ही जा रहे हैं।" कुदरतुल्ला स्वतः भुनभुनाया, "इतनी जल्दी तो उम्मीद नहीं थी। इतना पैसा इन के हाथ में कहां से आ रहा है ?"

"राव साहब, यह लोग तो सब धरती उड़ाये दे रहे हैं! आप के खड़े रहने के लिये बित्ता भर जगह भी नहीं छोड़ेंगे !" राव को पीठ पीछे से परिहास का स्वर सुनायी दिया, "वक्त रहते अपनी आखिरी नमाज़ पढ़ लीजिये !"

कुदरतुल्ला खिड़की से नीचे सरक कर मसनद पर बैठ गया। चायवाले के खूब काले चेहरे में से दो लाल-लाल आंखें उसे बेंध रही थीं।

"अब तो होश कीजिये ! जब तक सिर सलामत है, जो कुछ हो सकता है कर डालिये या अब भी सोचते ही रहियेगा ?"

"बक देने में क्या लगता है ?" कुदरतुल्ला ने फुंकार छोड़ी, "तुम्हारा यहां है क्या ? अपना लटा-पटा चाय के एक डिब्बे में लेकर चल दोगे ! उम्र भर आवारागर्दी करते रहे हो, अब फिर चल दोगे ! जहां सींग समायेंगे छिप रहोगे।"

"क्या बुज़दिलों की बातें करते हो ?" चायवाले ने दांत पीस लिये।

मखुनिया मखसूम दरवाजे के साथ बाहों को सीने पर लपेटे बैठा था। बात में साथ देने के लिये समीप सरक आया। दीन आत्मीयता और स्वामी-भक्ति के विनय से बोला :

"गरीब परवर, मौलाना नईम ने क्या किया ? अपनी जान बचाना तो खुदा के बन्दों का फर्ज़ है। खुद मौत के मुंह में जाना तो गुनाह बताया गया है। सब लोगों ने देखा है, मौलाना ने अपनी पगड़ी उतार कर फेंक दी और चाय के सन्दूक में छिप कर निकल गये....।"

"चाय के सन्दूक में ?"

"सरकार, झूठ बोले सो मुसलमान नहीं, झूठे पर सातों मिल्लतों में लानत है....। मौलाना अब अल्लाह के फजल से मौज कर रहे हैं। अब फिर मौलाना बन गये हैं। उस मुल्क में अल्लाह की ऐसी कुदरत है कि कांटे भी दीनदारों के पांव को छू नहीं सकते।"

अफ़वाह कुदरतुल्ला ने भी सुनी थी कि शहर का सब से बड़ा आलिम और सम्मानित मौलाना नईम सन्दूक में छिप कर—कोई लोग कहते थे मश्क में छिप कर—मुल्क से भाग गया था। वह निराशा के दृढ़ निश्चय से बोला :

"नहीं, कभी नहीं ! राव कुदरतुल्ला मौलाना की तरह नहीं भागेगा। मैं इन लोगों का मुंह तोड़ कर छोड़ूंगा, चाहे सब जायदाद और रियासत फूंक दूं। इन सोवियत वालों के गले में हड्डी की तरह अटक कर इनकी जान न ले ली तो कहना ! अभी तो हजारों कुरबाशी हैं। मैं खूनी कुरबाशी डाकुओं को इकट्ठा करके इन लोगों की आंतें न निकलवा दूं तो कहना ! शाही मरदाना में अभी दीनदार, जांबाज़ बहादुरों की कमी नहीं है। वे लोग मेरी इंतजार कर रहे हैं।"

"ठीक है राव साहब ! सही फरमा रहे हैं सरकार !" चाय वाले ने मुस्कान दबा ली।

कुदरतुल्ला चायवाले की ओर कनखी से देखकर चुप रह गया। जानता था कि चायवाले को सब बातों की खबर रहती थी। वह सब भेद जानता था।

कुदरतुल्ला का स्वर कातर हो गया—"मैं क्या करूं, अपनी मुसीबत को क्या करूं ? नामुराद लड़का फिर मेरी नाक कटाये बिना नहीं रहेगा। मैंने 'चार बाजार' का बाग बेचने की बात की थी तो भी उस ने मुसीबत खड़ी कर दी थी। मैं तो उस की वजह से परेशान हूं। उसे कभी अक्ल नहीं आयेगी।"

"ठीक है, राव साहब बिलकुल ठीक है !" चायवाले ने मुस्कान से राव के समर्थन में कहा, "घुड़साल में आग लग जाय तो गधा डर के मारे बाहर नहीं भागता कि जलते दरवाजे में से कैसे निकलेगा।"

कुदरतुल्ला ने निढाल होकर पीठ मसनद से लगा ली—"लड़के को किसी औरत ने कुछ कर दिया है। बिलकुल होश-हवास खो बैठा है, बिलकुल पागल हो रहा है।"

"आहा, बहू चाहिये लड़के को ! हां कुछ सुना तो था !" चायवाले ने कहा।

राव का चेहरा सुर्ख हो गया। उत्तेजना से आंखों के नीचे पपोटे फूल आये। लड़के के मन की बहू का ख्याल आने से उस का अपना मन डूबने लगता था जैसे उस का सर्वस्व दांव पर लग गया हो।

चायवाले ने पीठ पीछे गद्दी को जरा ऊंचा कर लिया—"राव साहब, व्यर्थ की फिक्र में पड़े हैं आप तो ! लड़कपन की बातों से इतना परेशान होने की क्या जरूरत ? इस उमर में यह सब होता ही है। लड़कों से गलतियां होती ही हैं, कुछ नुकसान भी हो ही जाता है। सब उम्र और समझ की बात है। मेरी तो इस वक्त यही राय है कि आप लड़के को अभी यहां ही छोड़ जाइये।"

"क्या कहा ?"

"आप लड़के की वजह से परेशान ही तो हैं। मेरा यही ख्याल है कि वह यहां अकेला होगा तो सरकारी लोग उसे आप से अलग समझ कर उस का भरोसा और विश्वास करने लगेंगे। समझ लेंगे, लड़का इश्क में पागल हो रहा है। जालिम बाप

ने बेचारे लड़के को घर से निकाल दिया है । लड़के को अपने तजुर्बे से सीखने-समझ लेने का मौका दीजिये । उसे अपने आप समझ आ जायगी । उस का यहां रहना ही ठीक है । वह आप की तरफ से यहां रहे । मैं भी उसे समझाता-बुझाता रहूंगा । आप मुझ पर भरोसा कीजिये । उसे तकलीफ नहीं होने दूंगा । आप के पीछे लड़के को गुजर-बसर की तकलीफ नहीं होगी परन्तु यह भेद किसी पर न खुले । फिलहाल इस विषय में बेगम से कुछ न कहियेगा । लड़के को छोड़ कर जाते घबरायेगी तो और अच्छा, उस से पर्दा बना रहेगा ।"

"यही ठीक समझते हो ?" कुदरतुल्ला ने धीमे से कहा । उस का दिल घबराहट से डूब रहा था ।

"मुझे तो यही मुनासिब जंचता है । आप जैसा समझें !"

राव कुदरतुल्ला मौन रहा ।

× × ×

बैठक में राव कुदरतुल्ला चायवाले से बात कर रहा था और मास्टर नैमी पोखर के समीप नये बने कमरे में नसरतुल्ला से गुप्त मंत्रणा कर रहा था ।

नसरतुल्ला ढीले से चोगे में लिपटा बड़े तकिये पर लुढ़का हुआ था । नैमी का चेहरा बहुत गम्भीर और उदास था । बात करते हुये अपनी बेंत पर हड्डी की मूंठ को हाथ में घुमाये जा रहा था । अपनी बात का प्रभाव जांचने के लिये नसरतुल्ला के चेचक के दागों से चलनी चेहरे पर कनखियों से नज़र डाल लेता था । जवान का चेहरा कभी तमतमा उठता कभी उस पर छाया सी आ जाती ।

"क्या जमाना आ गया है भैया, हमारे तुम्हारे जैसे सीधे लोगों की गुजर मुश्किल है । मेरा बस चले तो तुम्हारी खुशी के लिये सब कुछ करने को तैयार हूं । मेरी खुशी तो उसी में है लेकिन इस जमाने में किसी का भरोसा नहीं । सब दगा देते जा रहे हैं । मुसलमानों में ईमान रह ही नहीं गया । बाप को बेटे का ख्याल नहीं रहा……।"

"फिजूल रोये जा रहे हो !" नसरतुल्ला झुँझला उठा, "तुम्हारी गंजी खोपड़ी पर एक बाल तो टिक नहीं पाता, वहां मुसीबत के लिये कहां जगह है ? अमां, मुसीबत और परेशानी तो हमारे लिये है । राव के घर में पैदा न हुआ होता तो उस से ब्याह होने में झंझट क्यों होता, वह मेरी ही थी । इस घर में पैदा हुआ, इसी से ही सब मुसीबत है, सब झंझट है….।"

"भैया, तुम्हें क्या कहूं ? हमारे बाप ने हमारे साथ जो-जो किया, हमने जो-जो सहा, हम ही जानते हैं । तुम्हें नहीं मालूम राव जायदाद को बेच डालने की तिकड़म कर रहे हैं । इस जायदाद पर तो तुम्हारा हक है । मियां, सिर छिपाने को भी जगह

नहीं रहेगी तो व्याह करके बहू को बाजार, मैदान में खड़ी कर दोगे ? भैया, इसीलिये मैं तुम्हें समझा रहा हूं। वक्त पर चूक गये तो उम्र भर के लिये मोहताज-लाचार हो जाओगे। बांके अपने हक के लिये जान पर खेल जाते हैं। बाप तुम्हें घर से निकाल देने की धमकी दे रहा है, तुम खुद ही लात मार कर अलग हो जाओ ! भैया, अब पुरानी बातों को लेकर बैठे रहने का समय नहीं है। सच, तुम्हारा खयाल आता है तो मेरा दिल डूबने लगता है। तुम्हारी सब जायदाद लुटी जा रही है, ऐसी हालत में ब्याह-शादी खाक होगी ! मैं तो परेशान हूं, तुम्हारा होगा क्या…?"

"क्या होगा ?" नसरतुल्ला उछल कर खड़ा हो गया और चोगा परे फेंक दिया, "मुझे अल्लाह का भरोसा है, इस का भरोसा है !" उस ने अपने घुटने तक ऊंचे बूट में से खंजर खींच कर अपनी आस्तीन में रख लिया।

नैमी अचकचा कर पीछे सरक गया और आत्म-रक्षा के लिये उस के हाथों ने बेंत को सिर पर उठा लिया—"क्या, क्या कह रहे हो, भैया ! होश करो ! जरा सोच कर बोलो ! हर बात की हद्द होती है ! मान लिया बेवकूफी कर रहा है, बुजदिल है पर है तो तुम्हारा बाप ! दो झांपड़ लग जायें तो उस की अक्ल ठीक हो जायेगी !"

नसरतुल्ला ने खंजर कालीन पर फेंक दिया और तकिये पर बाहों में मुंह छिपा-कर फफक-फफक कर रो उठा।

"मेरा कोई नहीं !" न बाप, न घरवाली, न दोस्त ! मैं लुट गया, हाय-हाय मेरा सब लुट गया। कोई ठिकाना नहीं ! दो रोटी का भी सहारा नहीं ! अल्लाह मुझे उठा ले ! मैं किसी लायक नहीं…।"

"क्या हो रहा है तुम्हें, होश करो भैया !" नैमी ने पुकारा, "रोते हो ? जवान मर्द हो कर रोते हो ? शेर मर्दों के यह तरीके हैं ? हौसला करो। मैं मदद के लिये हूं। आखिरी दम तक तुम्हारी मदद करूंगा। तुम्हारे लिये रोज़ी-रोटी की क्या कमी है ? हौसला रखो, तुम्हारी इज्जत और काबलियत के मुताबिक रोज़गार मिल जायेगा, यह मेरी जिम्मेदारी है। आखिर तुम बांके हो…।"

नसरतुल्ला ने आंसू पोंछ कर दांत पीस लिये :

"मैं भी ऐसा बदला लूंगा कि याद करेंगे। ऐसा मुंह काला कराऊंगा कि याद करेंगे। घर से भाग जाऊंगा, रो-रोक कर ढूंढते फिरेंगे। नाक रगड़वा कर छोड़ूंगा…।"

नसरतुल्ला चीख कर कमरे से भाग निकला। नैमी घबराकर उस के पीछे भागा। बेंत थामे दोनों हाथ आकाश की तरफ उठा कर पुकारने लगा :

"भैया नसरतुल्ला ! मुल्ला नसरतुल्ला क्या कर रहे हो ? खुदा का खौफ करो ! अपने मां-बाप की इज्जत का ख्याल करो ! मा-बाप की इज्जत सब से बड़ी इबादत है !"

नैमी ने बैठक से धमकियां, चीख़-चिल्लाहट और बर्तनों के टूटने-पटकने की आहट सुनी।

"खबरदार, कदम बढ़ाया! नमक हराम कुत्ते, निकल जा यहां से!"

"मुझे सब मालूम है! मुझे भिखारी बना कर छोड़ोगे!"

"तुझे एक दमड़ी नहीं दूंगा! तेरे मुंह पर थूकूंगा भी नहीं!"

"याद रखना जो कहा है!"

"निकल जा यहां से पागल कुत्ते! सिर तोड़ दूंगा!"

"हाय मुझे बरबाद कर दिया, लूट लिया।"

ऊपर-नीचे दो धमाकों से कान बहरे हो गये। धमाकों की दहशत से बैठक में मचा कुहराम दब गया। दूर बाघ के टीले से धूल के पीले-पीले बादल आकाश की ओर उठ कर कब्रिस्तान की ओर फैल रहे थे।

बैठक में सन्नाटा हो गया। राव और उस के बेटे की नजरें धमाके की ओर उठ गयी थीं। दोनों विस्मय से स्तब्ध, मुंह बाये रह गये थे। बैठक के दरवाज़े में अरगाश दिखायी दिया। वह भी कालीन पर बिखरे टूटे प्यालों और रकाबियों को देख कर हैरान रह गया था।

नैमी ने अरगाश को पीठ-पीछे से देखा तो तुरन्त मुंह मोड़, सिर पर पांव रख एक दम भाग गया। चायवाले ने चेहरा बांह में छिपा कर मसनद पर लगा लिया और कालीन पर पसर गया जैसे नशे में बेहोश हो। मखुनिया का सिर भय और आदर से झुक गया। चेहरा ऐसे सफेद हो गया कि बदन में खून की बूंद न रही हो।

"असलामअलेकुम मालिक!" कह कर अरगाश ने बैठक में चारों ओर नज़र घुमायी और बोला, "क्या झगड़ा चल रहा है?" उस ने मखसूम की ओर देखा, "कहो भैया, क्यों? क्या पेट में मरोड़ उठ रहा है? ऐसे ऐंठ क्यों रहे हो?"

मखसूम वैसे ही निश्चल दुबका रहा! उस के होंठ हिले परन्तु शब्द न सुनायी दिया।

कुदरतुल्ला अरगाश को देख सम्भल कर बोला—"आओ, आओ अरगाश बेटा! तशरीफ रखो! मुद्दतों बाद दीदार मिला। बरस बीत गये। देखो, तब से क्या-क्या हो गया? बड़ी खुशी हुई तुम्हें देख कर। जब गये थे तो बिलकुल लड़के से थे। बच्चे लायक बन जायं तो बहुत खुशी होती है। तुम्हारी बहुत तारीफ सुनी है। बेटा, हम तो बुड्ढे हो गये। तुम्हारी लियाकत और तारीफ देख कर खुशी होती है। एक हमारा नामुराद नसरतुल्ला है, कुछ भी नहीं कर पाया। अफसोस होता है, क्या करें! उस का तुम्हारा क्या मुकाबिला। अल्लाह ने ऐसी औलाद देकर जाने किन गुनाहों की सजा दी है।"

"आप भी क्या फरमा रहे हैं ?" अरगाश ने राव के विनय के उत्तर में कहा, "ऐसी क्या बात है, ऐसा क्या हो गया ? मैं कौन बड़ा आदमी बन गया हूं ! ऐसा क्या परिवर्तन आ गया ! मैं किस लायक हूं ! आप की कुछ भी खिदमत नहीं कर सका। मुझ से तो पिता अच्छे थे, आप की खिदमत में ही खत्म हो गये।"

"सुभान अल्लाह, सुभान अल्लाह ! क्या बक रहे हो। तौबा ! तौबा ! यह तुम ने क्या कह दिया ?" राव ने स्नेह के उपालम्भ से कहा।

"मैंने गलत क्या कहा ?" अरगाश ने पूछा। उस ने मखसूम की ओर संकेत किया, "इन से पूछ लो ! इन्होंने सब देखा है, यह गवाह हैं।"

मख़सूम ने बहुत जोर से गर्दन झटक कर हामी भरी :

"सही है, सही है" उस ने उत्साह से समर्थन किया, "जरूर हम गवाह हैं। सब याद है, कल ही की तो बात है, अल्लाह उन्हें जन्नत नसीब करे। बहिश्त से हम पर उन की नजरे-इनायत बनी रहे।"

अरगाश ने घृणा से एक ओर थूक दिया।

चायवाले की नाक, मुंह मसनद पर दबे हुए थे। दम घुटने लगा तो उस ने करवट ले ली। चेहरे को बांह में छिपाये रहा और नशे में बेसुध की तरह गुनगुनाने लगा :

"देखो-देखो कागा की डार,

"सैयां कागा की डार चली पहाड़।"

अरगाश ने रुखाई से कहा, "सुनिये, मुझे यह कहना है कि आप लोगों ने निठल्ले बैठ कर बहुत आराम कर लिया। बाप-बेटे निठल्ले बैठें-बैठे आपस में ही सिर फुटौअल करेंगे। आप लोगों ने नोटिस नहीं देखा ! नोटिस तो शहर के सब लोगों के लिये है, आप लोगों के लिये भी है। कपड़े की मिल के लिये जगह साफ करने के लिये, मलबा हटाने के काम में सब लोगों को हाथ बटाना होगा। दस जुलाई को सब लोगों को बाघ के टीले पर हाजिर होना होगा। खुद नहीं जाओगे तो गिरफ्तार हो कर, बेइज्ज़ती कराकर जाओगे। जिन्दगी में किसी दिन तुम्हें भी कुछ मेहनत करनी चाहिये। जरा पसीना आयेगा तो दिमाग ठंडा हो कर सुलझ सकेगा। दूसरों को धमकियां देने की गुण्डागर्दी से जरा बाज आओगे।"

कुदरतुल्ला चौंका—"कैसी धमकी ? किस ने धमकी दी ? क्या कह रहे हो ? हम तो कुछ नहीं समझे...।"

चायवाले ने हिचकी ली और कालीन पर और अधिक पसर गया पर अपना चेहरा बांह में छिपाये रहा।

"वह कौन है ?" अरगाश ने पूछ लिया।

"उस की तबियत ठीक नहीं है, हालत खराब है...।"

"है कौन ?" अरगाश ने मखसूम की ओर देखा ।

मखुनिया चुप खड़ा रह गया जैसे काठ मार गया हो । अरगाश की ओर उठी उस की आंखों में मार खाये कुत्ते का दैन्य और कातरता आ गयी । मखुनिया चायवाले का नाम बोल देने को ही था कि अरगाश विरक्ति से भौवें चढ़ा कर घूम गया—"कोई भी हो, दस जुलाई को इसे भी साथ लाओ ! तुम लोगों पर मैं खुद नजर रखूंगा !"

नसरतुल्ला अरगाश की ओर एक कदम बढ़ गया और बोल पड़ा—"मैं तो तैयार हूं कहिये तो अभी चलूं !"

"अभी चलोगे ?" अरगाश ने माथे पर त्योरियां चढ़ाये नसरतुल्ला को सिर से पांव तक देखा ।

"मैं काम करना चाहता हूं मुझे काम दीजिये !" नसरतुल्ला ने कहा ।

"काम करना चाहते हो ? ऐसा ख्याल कब से आया ? कितने दिन करोगे ? होश में हो, सच कह रहे हो !"

"सच कह रहा हूं । खुदा की कसम ।"

"कसमों का मुझे इतबार नहीं" अरगाश ने कुदरतुल्ला की ओर देखा ।

राव मौन निश्चल था ।

अरगाश ने कन्धे उचकाकर दरवाजे की ओर घूमते नसरतुल्ला को उत्तर दिया—"अच्छा आओ, मेरे साथ चलो !"

नसरतुल्ला अरगाश के पीछे चल दिया । उस ने चलते-चलते झुक कर बूट में छिपाये खंजर को सीधा कर लिया ।

अठारहवां परिच्छेद

सूर्यास्त हो चुका था परन्तु क्षितिज की आड़ से आकाश में बिखरी हुयी शेष किरणें झीने बादलों में अब भी अनेक रंगों की धारियों से मोरपंखियां बनाये थीं ।

बशारत और तुरसाना रेलवे के क्वाटरों से लौट रही थीं । दोनों साथ-साथ चलतीं, आपस में अपनी उंगलियां उलझाये प्रसन्नता में बाहों को खूब जोर से झूले की तरह झुलाती चल रही थीं ।

कूल के किनारे दिन में धूप से मुरझा गयी पोदीना की पत्तियां संध्या की शीतलता पाकर खड़ी हो गयी थीं । तुरसाना की नजर एक फूली हुई टहनी पर पड़ी । उस ने

झुक कर टहनी उंगलियों में उलझा कर तोड़ ली। फूलों को फूंक से फुला कर खूब जोर से हंसी फिर गीत गुनगुनाने लगी। उस की कोमल आवाज खूब स्पष्ट थी और उस में मिठास भी था।

पहले बशारत तुरसाना के गाने की कुछ खास कद्र नहीं करती थी न उस की सराहना ही करती थी। उसे समझ नहीं आता था कि बड़े लोग तुरसाना के स्वर और गाने पर इतने मुग्ध क्यों हो जाते थे परन्तु अब तुरसाना के गुण को मान गयी तो बहिन का ख्याल और भी चौकसी से रखती थी कि बहिन लाड़ से बिगड़ न जाय...।

बशारत उस दिन जाने क्यों तुरसाना के गीत से बहुत मुग्ध हो गयी थी। वह खुद नहीं समझ पा रही थी कि गीत सुन कर उस के मन को क्या हो गया था? एक अपरिचित सा स्पंदन अनुभव हुआ था। चाहती थी––आंखें आकाश की ओर ही उठाये रहे, पहले तारे की पहली झलक को चूक न जाय। मन चाहता था—तुरसाना को सीने से लगा ले...।

"हाय तू बहुत ही अच्छा गा रही है। ऐसा तो तूने क्लब में भी नहीं गाया था।" बशारत ने कहा।

तुरसाना ने मुस्कराकर आंखें अपने छोटे-छोटे लाल स्लीपरों की ओर झुका लीं, शरीर को हल्की लचक देती, लाज से गम्भीर, बड़ी लड़कियों की तरह चलने लगी।

"तुझे एक बात बताऊं?" बशारत ने धीमे से कहा।

ऐसे रहस्यमय प्रश्न से छोटी बहिन प्रायः ही एक नौजवान की बात आरम्भ कर देती थी—"अब्दुस्समद भाई की बात है न?" उस ने पूछ लिया।

बशारत ने चौंक कर उस की ओर देखा—"तुझे कैसे मालूम?"

"अच्छा बताओ-बताओ!"

"पहले तू बता, तुझे कैसे मालूम है!"

"मुझे क्या मालूम? सच, मुझे कुछ नहीं मालूम!"

"बताओ न बशो!"

"सुन, अम्मा मास्को जायंगी तो हमारा ख्याल सोफिया मौसी रखेंगी।" बशारत ने स्वर गम्भीर बनाकर कहा, "तू गाने की प्रेक्टिस के लिये गयी थी तो मौसी आयी थीं। उन के साथ समद भाई भी आये थे...।"

तुरसाना सुनने के लिये मौन रही।

"उन्होंने अम्मा से कहा—हम किशोर-कम्युनिस्ट-संघ की ओर से आप को एक काम दे रहे हैं।"

"समद भाई अम्मा को कैसे काम दे सकते हैं?"

"हां, हां यही कहा उन्होंने किशोर कम्युनिस्ट-संघ का काम है।" बशारत ने बहुत जोर से कन्धे झकोर कर आग्रह किया, "उन्होंने अम्मा को ऐसे फौजी सैल्यूट किया, ऐसे !" बशारत ने सैल्यूट कर के दिखाया, 'अम्मा हंस पड़ी।"

तुरसाना भी जोर से हंस दी। बशारत ने समद की नकल में भौवें सिकोड़ कर कहा—"जब आप ताशकन्द पहुंचेंगी तो कृपया वहां संगीत विद्यालय में जाकर पता लीजियेगा कि हमारे एक विद्यार्थी को वहां जगह मिल सकती है या नहीं ? यदि ताशकन्द के संगीत-विद्यालय में स्थान न हो तो मास्को के संगीत विद्यालय में पता कीजियेगा। हमारे यहां एक प्रतिभाशाली लड़की है। हम उसे संगीत की शिक्षा के लिये भेजना चाहते हैं……।"

"प्रतिभा कौन है ?"

"प्रतिभा ? तू तो बिलकुल गधी है। तेरे लिये ही तो कह रहे थे। अब समझी !" समद भाई ने अम्मा को एक पत्र तेरी सिफारिश के लिये बूढ़े प्रोफेसर से भी लिखाकर दिया है।

"मैं तो अपने यहां के नये स्कूल में जाऊंगी। कितना सुन्दर स्कूल बना है।"

"सुन्दर, हां सुन्दर तो है परन्तु समद भाई ने तो अम्मा को किशोर-कम्युनिस्ट-संघ की ओर से आदेश दिया है, तू इतना भी नहीं जानती ? समद भाई ने यह भी बताया कि प्रोफेसर साहब ने अम्मा को तेरे लिये एक ऊनी स्वेटर खरीदने के लिये भी कहा है। उन्हों ने अम्मा को दाम भी दे दिये हैं और कहा है कि यह किशोर-कम्युनिस्ट-संघ का निर्णय है।

"हाय दीदी, तुम बड़ी अच्छी हो ! सच बताओ !" तुरसाना किलक कर बहिन से चिपट गयी, "सच्ची, स्वेटर ?"

"अच्छा अम्मा जायगी तो तू रोओगी तो नहीं ?"

"नहीं, मैं नहीं रोऊंगी।"

"अंधेरे में तो नहीं डरेगी !"

तुरसाना ने बशारत से अलग खड़ी होकर कहा—"नहीं, मैं नहीं डरूंगी।"

बशारत ने बहिन को बांह से खींच कर कहा—"आ अब जल्दी-जल्दी चल, अम्मा कल मास्को जायंगी।"

अंधेरा हो गया था पर चांद अभी नहीं चढ़ा था। तारों की झलमल में लड़कियां रास्ते को स्पष्ट नहीं देख पा रही थीं। तुरसाना सहसा डर कर ठिठकी और बहिन की बांह से चिपट गयी। उसे सामने कुछ काला-काला दिखाई दे गया था।

"हाय हम कहां आ गये ?"

"आजा-आजा, पगडंडी से जल्दी घर पहुंच जायंगे।"

"हाय, यह तो कब्रिस्तान है। वहां मैं नहीं जाऊंगी।"

"पागल है। घूम कर जाने से बहुत दूर पड़ेगा। तुझे नहीं मालूम अम्मा इंतजार कर रही हैं!"

"नहीं, नहीं उधर से ही चलो!"

"क्यों जिद्द कर रही है? क्या कब्रिस्तान कभी नहीं देखा! रास्ता दिखायी तो दे रहा है, देख!"

"हां"

'शाबास! आ, संभल के चलना!"

"क्यों क्या है?"

"कुछ नहीं है। पत्थर से ठोकर न लग जाय।"

"पत्थर, कब्र का पत्थर?"

"हट पागल, यहां तो पत्थर ही पत्थर हैं। आ मेरा हाथ पकड़ ले, शाबास!"

"पगडंडी कब्रों में से बलखाती हुई बनी थी। रात के सन्नाटे में लड़कियों के पांव के तले दबते रोड़े-कंकड़ों की आहट दूर तक सुनायी दे रही थी। निमांचा की ओर दूर तक कोई भी दीया या प्रकाश दिखाई नहीं दे रहा था। बशारत अनुमान से और पांव के स्पर्श से पगडंडी को टटोलती चली जा रही थी।

तुरसाना को न कुछ दिखायी दे रहा था न वह कुछ सुन पा रही थी। बिलकुल सुन्न चली जा रही थी। उसे केवल अपने हृदय की धड़कन सुनाई दे रही थी और बशारत के हाथ की गरमी अनुभव हो रही थी। भय से आंख मूंद लेना चाहती थी परन्तु मूंद नहीं पा रही थी। उसे फिर कुछ काला-काला दिखायी दे गया।

तुरसाना डरना नहीं चाहती थी। भय की बात भी नहीं सोचना चाहती थी। वह भय से जितना ही बचना चाहती थी भय उतने ही वेग से उस के हृदय में उमड़ा चला आ रहा था। उसे स्पष्ट दिखायी देने लगा—मिर्गी वाला मन्नोव धरती पर चित्त पड़ा था। लड़के का मुंह पीड़ा से ऐंठा हुआ था। सब ओर से मुनमुनाने और रोने के स्वर सुनाई दे रहे थे।

छोटी बहिन का साहस बढ़ाने के लिये बशारत ने खांस कर गला साफ किया और चलते-चलते लड़कों की तरह सीटी बजाने लगी।

तुरसाना भय के मारे बहिन को चुप रहने के लिये कह देना चाहती थी परन्तु होठों से शब्द न निकल सके।

तुरसाना को अंधेरे में फिर कुछ ऊंचे कूबड़ जैसा काला-काला दिखायी दिया, कब्र जैसा नहीं बल्कि सिमिट कर उकड़ूं बैठे आदमी जैसा। आदमी बिलकुल निश्चल था। तुरसाना भय से कांप गयी। बशारत उस का हाथ पकड़े सामने बैठे कुबड़े की ओर

बढ़ती जा रही थी। तुरसाना आगे बढ़ी तो कुबड़े की छाया ऊंची होने लगी, मीनार जितनी ऊंची हो गयी।

"अम्मा!" तुरसाना ने पुकारने का यत्न किया परन्तु उस के गले ने साथ न दिया।

"यह देख बड़ी कब्र आ गयी!" बशारत ने कहा, "घर तो पास आ गया।"

तुरसाना ने धीमे से परन्तु लम्बा साँस लिया। ऊंची छाया बड़ी कब्र थी, छोटी छाया एक नीची फैली हुई झाड़ी थी।

"कब्र के पास कैसे जायेंगे ?" तुरसाना को याद आ गया। पगडंडी शेख की बड़ी कब्र से बिलकुल लग कर जाती थी। कब्र के साथ ऊंचे-ऊंचे बांसों पर चीथड़े और घोड़ों की पूछों के झाड़ू लटके रहते थे। तुरसाना बहिन की बांह से बहुत जोर से चिपक गयी। दूसरे हाथ में फ्राक का किनारा पकड़ लिया। बहिन के कंधे के ऊपर नज़र गयी तो उस का हृदय धक्क से रह गया। उसे एक बहुत अद्भुत सी छाया जान पड़ी। कुछ कल्पना नहीं कर सकी कि कैसी छाया थी।

लड़कियां कब्र के साथ गड़े बांस के पास से जा रही थीं तो अचानक बड़ी जोर की चीख सुनायी दे गयी। चीख इतनी ऊंची थी कि पल भर को बशारत भी बहरी हो गयी। तुरसाना बहिन की बांहों में गिर पड़ी। उस का शरीर पसीना-पसीना हो गया। छोटी बहिन का बोझ आ पड़ने से बशारत के पांव भी लड़खड़ा गये। उस ने कुछ डर कर चारों ओर देखा, प्रकाश की छोटी सी लौ दिखायी दी पर समझ नहीं सकी—लौ समीप थी या कितनी दूर थी ?

बशारत के लिये और उपाय नहीं था। उसने साहस कर तुरसाना को गोद में उठा लिया और कब्रिस्तान से भाग चली। तुरसाना के लटके हुये पांव पत्थरों से ठुकराते जा रहे थे। बशारत को रास्ता दिखायी नहीं दे रहा था। बहिन को भय और संकट से बचा सकने के लिये उस के शरीर में न जाने कितनी शक्ति आ गयी थी। वह तुरसाना को उठाये कब्रों पर पांव रख कर कूदती और झाड़ियों को फांदती चली जा रही थी। बहिन को बचाने की चिंता में उसे स्वयं चोट खा जाने का डर नहीं रहा था। सांस लेने के लिये भी न रुकी। उस का पांव एक भिटे में चला गया तो ठिठकना पड़ा। उसने पांव भिटे में से खींचा तो जूती भिटे में ही रह गयी। नंगा पांव धरती पर पड़ते ही पांव में कांटा गड़ गया। बशारत ने कांटे और पीड़ा की ओर ध्यान नहीं दिया। बहिन को गोद में उठाये फिर भागने लगी परन्तु लड़की की शक्ति की सीमा थी। सांस चढ़ जाने से निढाल और चकनाचूर होकर बहिन के बोझ से गिर पड़ी। तुरसाना को उठाये गिर जाने पर उसने अपनी चिंता न कर बहिन के सीने और चेहरे पर हाथ फेर कर देखा।

तुरसाना का माथा और चेहरा पसीने से तर थे परन्तु हृदय में धड़कन थी। वह

जीवित थी।

बशारत कब्रिस्तान से निकल आयी थी।

"तुरसी नन्हीं, सुनो! मेरी नन्हीं बहिन सुनो! बोलो, जरा बोलो तो!" बशारत ने हांफते हुये तुरसाना का चेहरा चूम-चूम कर उसे बुलाया।

बशारत को कोई उत्तर नहीं मिला।

बशारत को लगा अंधेरा उतना घना नहीं रहा था। उस ने तुरसाना के चेहरे पर आंखें गढ़ा कर देखा। बच्ची की आंखें खुली हुई थीं। तुरसाना बहुत जोर से कांपी और सहसा चीख उठी—"वो है! वो है! मौत का फरिश्ता!" वह बहिन की गोदी से भागने लगी।

बशारत को छोटी बहिन की आवाज बदली हुई लगी। उस ने तुरसाना को अपने शरीर के नीचे छिपा लिया और भय से चारों ओर देखा।

सफेदे के ऊंचे पेड़ों की चोंटियों पर चांद की पीली सी कोर दिखाई दी जैसे मुरझाया, कुड़मुड़ाया सा पत्ता हो।

बशारत ने अपनी पूरी शक्ति से बहिन को बांहों में उठा लिया और घर की ओर चल पड़ी। कांटे से बिधे नंगे पांव में बहुत पीड़ा हो रही थी। बशारत बोझ से झुकी, लंगड़ाती हुई आगे बढ़ती जा रही थी। सिर में चक्कर आ रहा था, कानों में सायं-सायं हो रही थी परन्तु वह मूर्छित बहिन को उठाये आगे बढ़ती जा रही थी। उसे कुछ सुध नहीं थी कि बहिन को उठाये कितनी देर तक चलती रही। चारों ओर घटाटोप अंधेरा और सन्नाटा था। एक अवारा कुत्ता लड़कियों की ओर बढ़ आया और फिर स्वयं ही डर कर भाग गया और अंधेरे में विलीन हो गया।

बशारत की नाक ने अंधेरे में पोदीने की गंध अनुभव की तो उसे कूल भी दिखायी दे गयी। थकावट से उस का मस्तिष्क जड़ हो रहा था। ख्याल नहीं आया कि दो अंजुली जल पी ले और बहिन के चेहरे पर ठंडे जल के छींटे दे दे। ख्याल तो आया परन्तु तब कूल से सौ कदम आगे बढ़ चुकी थी। जल के लिये लौट सकने की सामर्थ्य नहीं रही थी।

बशारत तुरसाना को उठाये अपने मकान के दरवाज़े तक पहुंची तो थकावट, बोझ और पांव की पीड़ा से स्वयं भी गिर पड़ी। मां को पुकारने का यत्न किया परन्तु खुष्क होकर चिपक गये गले से आवाज न निकल सकी।

लड़कियों के लौटने में बिलम्ब होने के कारण अनाखां का मां का हृदय बेटियों के प्रति अनिष्ट की आशंका से तड़प उठा था। रह न सकी। बेटियों को देखने के लिये चल पड़ी। दरवाज़ा खोलते ही लड़कियों को सामने पड़ी पाया।

बशारत की मूर्छा टूटी तो घर में स्त्रियों की भीड़ लगी हुई थी।

अनाखां आतंक और उपालम्भ से जुलैखां को कह रही थी :

"बहिन, यह तुम क्या करती हो ? तुम रात के ऐसे अंधेरे में अकेली क्यों आयीं ? तुम किसी की नहीं सुनती हो ? जाने तुम क्या चाहती हो ? तुम्हारा इस तरह खतरा झेलना ठीक है ?"

"चुप ! चुप रहो बहिन !" जुलैखां ने धीमे से कहा ।

खोजिया बशारत के पांव पर पट्टी बांध रही थी ।

बशारत के पांव में अब दर्द नहीं था । वह समझ नहीं पायी, पट्टी क्यों बांधी जा रही है ।

अंजीरत दादी खाट के समीप बैठी थी । उसके हाथ में दियासलाई जैसा लम्बा-मोटा कांटा था । बुढ़िया कांटे को बहुत कौतूहल और विस्मय से देख रही थी । धीमे से फुसफुसाई—"मुझे तो यही लगता है, शेख खिज्र के मुकद्दस मजार पर खुदा की रहमत···!"

तुरसाना के कपड़े बदल दिये गये थे । वह बशारत की खाट पर ही कम्बल में लिपटी सो रही थी । पलकें मुंदी हुई थीं और चेहरा चाक की तरह बिलकुल रक्तहीन लग रहा था ।

"अब जी कैसा है !" जुलैखां ने बशारत के सिर पर हाथ रख कर पूछ लिया ।

बशारत बहिन की तरफ ही देखती रही—"सो रही है ?"

"बिटिया, तुम कहां चली गयी थी ।" अनाखां ने पूछा ।

"अम्मा, मुझ से बड़ी गलती हुई । हम कब्रिस्तान की पगडण्डी से आयी थीं ।"

अंजीरत दादी की आह निकल गयी—"शुक्र अल्लाह ! शुक्र अल्लाह !"

उस समय ऐसा लगा कि तुरसाना ने बहुत जोर लगा कर पलकें उघार लीं । पुतलियां नींद से भरी सुस्त-सुस्त लग रही थीं । मां बेटी पर झुक गयी । तुरसाना की शून्य दृष्टि छत की ओर लगी रही । मां ने बेटी का मुख हाथों में ले लिया परन्तु लड़की के चेहरे पर कोई परिवर्तन नहीं आया । मां ने लड़की को उठा कर सीने से चिपका लिया । तुरसाना तब भी जड़वत बनी रही ।

अनाखां ने बेटी का चेहरा उठा कर चूम लिया—"नन्हीं ! मेरी नन्हीं ! हाय तुझे क्या हो गया ? अपनी मां को नहीं पहचानती । अपनी अम्मा को देख ! तुझे अम्मा की बात नहीं सुनायी दे रही ? मैं तेरी अम्मा हूं···!"

तुरसाना ने कोई उत्तर नहीं दिया । आंखें निष्पलक शून्य बनी रहीं जैसे आंखें खोले नींद में बेसुध हो ।

बशारत सांस रोके सहमी-सिमटी बहिन के पास उकड़ूं बैठी सोच रही थी । उसने भी पुकारा—नन्हीं बहिन, मेरी तुरसी ? क्या अम्मा को नहीं पुकारेगी ? क्या हम

अपनी नन्हीं की प्यारी चहक फिर नहीं सुन पायेंगी…!"

बशारत रो पड़ी—"यह बोल क्यों नहीं रही ? अम्मा, इसे क्या हो गया है ? इसकी आवाज़ क्यों नहीं निकल रही है !"

अनाखां ने बेटी को सीने पर चिपटा लिया और ज़ोर से रो पड़ी :

"हाय मैंने क्या कसूर किया ? यह मेरे किस पाप का फल है ? हाय मैंने क्या किया ?…हाय मेरी नन्हीं बिटिया ! हाय मेरी नन्हीं जान ! हाय मेरी नन्हीं चिड़िया ! हाय मेरा भाग फूट गया। मैंने क्या किया ? हाय मेरा क्या कसूर था…" अनाखां सिर और सीना पीट लेना चाहती थी। जुलैखां और दूसरी स्त्रियों ने उसे पकड़ लिया।

अंजीरत दादी बुढ़ापे के शैथिल्य के बावजूद तड़प कर घुटनों पर उठ गयी। झुर्रियों से भरे हाथ फैला कर अनाखां और उसकी बेटी को सीने पर लगा लिया। बुढ़िया सभी को असंतोष और क्षोभ से बचे रहने के लिये उपदेश देती रहती थी परन्तु इस समय स्वयं अपने क्षोभ को दबा नहीं सकी :

"अनाखां बेटी मैं क्या समझूं ! मैं जाहिल बुढ़िया, मेरी चार दिन की ज़िन्दगी और है। कब्र में पांव लटकाये बैठी हूं पर सच तो ज़रूर कहूंगी। पीर शेख खिज्र का मज़ार क़यामत तक पाक है। उसका इक़बाल क़यामत तक रहे लेकिन मज़ार के रखवाले बच्चों पर चोट क्यों करें ? बच्चे भी तो फ़रिश्ते होते है। मां बच्चों के लिये जान दे देती है। बच्चों के लिये मां क्या नहीं करती, कौन दुःख नहीं उठाती। बच्चों के गुनाह और कसूर मां पर पड़ें तो एक बात है। मां के गुनाह और कसूर की सज़ा बच्चों पर नहीं पड़ सकती। मां जो कुछ करती है, बच्चों की भलाई के लिये करती है। कोई कह दे मैं गलत कह रही हूं…।"

जुलैखां बुढ़िया की ओर बढ़ गयी। बुढ़िया को सहारा देकर धरती पर बैठा दिया। दादी शुक्र अल्लाह धरती पर बैठ गयी तो बताने लगी कि तेशीकोपकोक की सियानी किपचक के फातिहा में आयी थी तो क्या-क्या कह रही थी ?

"यह कैसा फातिहा हुआ दादी ?" जुलैखां ने पूछ लिया।

अंजीरत दादी कुछ उत्तर न दे सकी। कुछ सोच कर बोली—"बेटी, मैं यह सब क्या जानूं ?" उसने फिर अपना जाप शुरू कर दिया, "शुक्र अल्लाह ! शुक्र अल्लाह !"

जुलैखां ने अनाखां के साथ खाट पर बैठ कर तुरसाना को उसकी गोद से ले लिया। लड़की को खाट पर लिटा, कम्बल में लपेट कर दर्द भरे परन्तु दृढ़ स्वर में बोली :

"कल तुम मास्को नहीं जाओगी। क्या किया जाय, मजबूरी है। जब तक बिटिया की तबियत ठीक न हो जाये, तुम उसे छोड़ कर नहीं जा सकती। तुम परवाह न करो खोजिया तो जा ही रही है। अभी उसकी उम्र कम है पर वह सब सम्भाल लेगी।"

खोजिया ने आपत्ति करने के लिये दोनों हाथों से संकेत किया। जुलैखां ने उस

का संकेत अनदेखा कर दिया और बोली—"अब मैं जा रही हूं। क्या करूं, जरूरी काम है। खोजिया को साथ लिये जा रही हूं।"

जुलैखां जाने लगी तो अनाखां को होश आया। उस ने जुलैखां का हाथ पकड़ लिया—"नहीं, अभी नहीं जाने दूंगी! सवेरा हो जाने दो! मैं तुम्हें ऐसे नहीं जाने दूंगी! वह लोग तो ऐसे ही अवसर की ताक में हैं!"

जुलैखां ने अनाखां को सीने से लगा कर चूम लिया—"क्या कर रही हो, पागल हो! मुझे सब के सामने लज्जित कर रही हो! आंखें पोंछो!"

अनाखां जुलैखां और खोजिया को दरवाजे तक छोड़ने गयी। जुलैखां और खोजिया धुंधली चांदनी में गली के मोड़ की ओर बढ़ती जा रही थीं। अनाखां उन की ओर टकटकी लगाये रही। वे गली के मोड़ से अदृश्य हो गयीं तब भी अनाखां के कान आहट के लिये चौकन्ने बने रहे।

× × ×

सुबह अब्दुस्समद और क्लब की संगीत मंडली के कई लड़के तुरसाना को देखने के लिये आये। तुरसाना बिस्तर में थी। उस ने अपने साथियों के आने पर कोई उत्साह नहीं दिखाया। बुलायी जाने पर कोई उत्तर भी नहीं दिया।

तुरसाना की आंखों में धुंधलका दूर होकर पुतलियों में कुछ चमक आ गयी थी परन्तु आंखें अब भी बिलकुल निरपेक्ष थीं, जैसे कुछ पहचानती न हों। आंखों में कभी-कभी पीड़ा की झलक आ जाती थी। कभी लगता किसी गहरे विचार में खोई हुयी हो या जैसे दूसरों के लिये अदृश्य चीज को देख रही हो।

तुरसाना के साथी उस की खाट के समीप खड़े थे। उस की नजर पल भर के लिये अब्दुस्समद पर अटकी। होंठ जरा हिले परन्तु एक गहरी सांस लेकर रह गयी। आंखों में कातरता और असामर्थ्य का भाव आ गया।

अब्दुस्समद ने अपने साथियों को संकेत किया। तुरसाना को घेर कर उन लोगों ने दबे हुये स्वर में एक गीत आरम्भ कर दिया—तुरसाना का मन पसन्द, हमजा का सब से अच्छा गीत।

तुरसाना के चेहरे पर चमक आ गयी—पुतलियां भी सचेत हो गयीं। उस ने सिर उठा लिया और कोहनी के सहारे उठ गयी। बहुत ध्यान से सुनने लगी, फिर सहसा उस ने दोनों हाथों से कान मूंद लिये। घुटने सिकोड़ कर सिमिट गयी। अपना मुख तकिये में छिपा लिया। उस के आंसू तकिये पर फैलने लगे। चेहरे पर पीड़ा का ऐसा भाव आ गया मानो व्यथा से चीख पड़ेगी परन्तु होंठ न हिल सके।

गाने वाले चुप हो कर स्तब्ध रह गये, उन्होंने अब्दुस्समद की ओर देखा। सब

की आंखें समवेदना से गीली हो गयीं।

उन्नीसवां परिच्छेद

मास्टर नैमी पुराने शहर की बस्ती की एक बहुत छोटी-सी कोठरी में चायवाले के साथ बैठा था। कोठरी की अवस्था ऐसी दीन-हीन थी कि कोई भिखमंगा भी उस के द्वार पर पुकार न लगता। तंग कोठरी में दिन में भी अंधेरा था। कोठरी क्या, लोमड़ी की मांद ही लगती थी। कुछ दिन से नैमी उसी जगह में था। यहां भी उसे शान्ति नहीं थी।

नैमी मास्टर गहरी निराशा और चिन्ता में डूबा मौन खूब गरम चाय के घूंट ले रहा था। प्याला चुक गया तो चायवाले ने थर्मस से प्याले में और चाय डाल दी। कीमती थर्मस सुअर के चमड़े से मढ़ी हुयी थी। चमड़े पर किसी विलायती कम्पनी का ट्रेड मार्क छपा हुआ था। चायवाला स्वयं केसरिया-सुनहरी बरांडी की चुस्कियां ले रहा था। चुस्की लेकर होठों को भी चाट लेता था। चायवाला अपनी बरांडी बहुत बचा-बचा कर खर्च कर रहा था। उस की बोतलें खत्म होती जा रही थीं और अब वैसी चीज़ बहुत दुर्लभ हो गयी थी।

किसी समय मास्टर नैमी का बहुत आदर-मान था, वह राजनीतिज्ञ और दार्शनिक समझा जाता था। वह पारलौकिक और आध्यात्मिक जगत का नेता और निर्देशक था। अब वह दो टके के परदेसी चायवाले के सामने असहाय था, बिल्कुल उस के वश में था। मास्टर नैमी उस परदेसी के सामने ऐसे कातर हो जाता जैसे कबूतर की अवस्था बिल्ली के सामने हो जाती है। मास्टर उस चायवाले के भय से थरथराता रहता। इतना ही नहीं, चायवाला मास्टर की कातरता और उस के भय की खिल्ली उड़ा-उड़ा कर उसे कोंचता भी रहता।

मास्टर को चायवाले का भय था परन्तु चायवाला ही अब उस का गम्भीर, विश्वास योग्य और एकमात्र हितू था इसलिये उस का आदर भी करता था। नैमी पर चायवाले का आतंक था और उस के प्रति श्रद्धा और विश्वास भी था। सोचता—मेरी तरह यह भी अकेला है। इस के सिर पर कितनी जोखिम है? चायवाले ने प्याले में चाय और अपने लिये बरांडी डाली तो नैमी को लगा, चायवाले के हाथ कांप रहे थे। मास्टर को संतोष अनुभव हुआ, वह भी निर्भय और निश्चिन्त नहीं है।

"आज कौन दिन है ?" चायवाले ने चांदी की छोटी प्याली दबे हुये होठों से लगाते हुये पूछा ।

नैमी चायवाले का निरर्थक प्रश्न समझ नहीं पाया परन्तु तुरन्त उस का अभिप्राय ताड़ गया । चायवाले के होंठ विद्रूप की मुस्कान में सिकुड़े थे । मास्टर ने सोचा—हंसने को है क्या, अब यह किस का क्या मजाक बनायेगा ? ख्वामुख्वाह् बन रहा है···।

नैमी ने उत्तर में चायवाले की ओर देख कर विनय से आंखें झुका लीं । चायवाले से निधड़क आंखें चार कर सकने का साहस उसे नहीं था ।

"नसरतुल्ला को ढंग से लगा दिया ।" चायवाले ने उपेक्षा से कहा, "मुझे उस से उम्मीद तो नहीं थी । है तो गधा ही परन्तु इस समय तो बहुत से समझदारों से अच्छा काम कर रहा हैं । मैंने उस पर संदेह और शक के सूराग भी मिटा दिये हैं । अभी तो उस के फंस जाने की कोई आशंका नहीं परन्तु एक और मुसीबत हो गयी है, उन लोगों को दूसरी बात पर संदेह हो गया है । बहुत गहरी खोज-पड़ताल कर रहे हैं, जाने कब छापा मार दें !"

नैमी का चेहरा पीला पड़ गया । प्याला हाथ से रख दिया—"ऐसी क्या बात हो गयी ?"

"क्या कह सकते हैं ? उस चुड़ैल तेशीकोपकोक वाली सियानी की वजह से है ।"

"क्यों, उसे क्या हो गया ? उसे क्या डर है ? मुसीबत तो बेचारे मास्टरों की है । वह जो चाहे करती सिरे । प्रकट में तो जाहिल, मूर्खों के अंध-विश्वास की ही बात है । लोग चाहते हैं तो वह झाड़-फूंक कर देती है ।"

चायवाले ने बरांडी की बोतल को देखने के लिये प्रकाश में उठाया और बोला—"चुड़ैल अपने आप को बहुत समझने लगी है, बहुत चालाक बनती है । बात की हद्द होती है, बच्चों पर भी हाथ चलाने लगी है···।"

"हां, ठीक है ।" नैमी ने अनुमोदन किया, "कुछ दिन के लिये गायब हो जाये तो ठीक है ।"

"गायब क्या हो जाये, बच भी पायेगी ! जानते नहीं हो, रूसी भेड़िया का शिकार कैसे करते है ? उन लोगों ने सब ओर से टोह कर उसे घेर लिया है । कम्बख्त दूसरों को भी ले न मरे !"

"तो फिर क्या किया जाये ?"

चायवाला मौन रहा । नैमी ने उस के मौन से आतंकित हो कर पूछ लिया—"कहो तो उसे खबर पहुंचा कर चौकस कर दूँ ?"

"रहने दो !" चायवाले ने बात काट दी, "मैं खुद निबट लूंगा । दूसरों को बीच में पड़ने की जरूरत नहीं है । अपने आदमियों से खुद ही निबटता हूं ।" उस ने अपनी

प्याली बोतल से ठनका दी, "निवटा दूंगा।"

"क्या निबटा दोगे ?"

"जिस सूराग का पीछा वे लोग कर रहे हैं।"

नैमी आतंक से मौन रह गया। सोचा, चायवाला खुद ही बता देगा परन्तु उसने व्यर्थ बात की आवश्यकता नहीं समझी।

"दस जुलाई का ख्याल रखना !" चायवाले ने नैमी को चेतावनी दी और फिर होठों-होठों में बोला, "वहां तक पहुंचना और किसी के वश का नहीं है। यह नाजुक काम दूसरा कोई नहीं कर सकेगा। देखो, अपनी बेंत मत ले जाना। बेंत कहीं हाथ से रह गयी तो वही सूराग बन जायेगी।"

मास्टर चायवाले की ओर कातरता से देखता चुप रहा।

मास्टर को रात भर नींद नहीं आयी। कम्बल में सिर-मुंह ढके करवटें लेता रहा। असमर्थ क्रोध में मुट्ठियां बांध दात पीस लेता—क्षोभ में अपने सीने के बाल नोंच लिये, किसी दिन इस आवारा परदेसी से ऐसा बदला लूंगा···। चायवाले के शब्द बार-बार याद आ जाते—दूसरों को बीच में पड़ने की जरूरत नहीं। मैं अपने आदमियों से खुद ही निबटता हूं।···निबटा दूंगा।

मास्टर नैमी को दूसरे दिन ही उत्तर मिल गया।

मास्टर जनाना सहकारी की दूकान के सामने से जा रहा था। दूकान के आस-पास शहर भर के मुहल्लों से आयी स्त्रियों की भीड़ थी। नित्य की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही कोलाहल था। स्त्रियां दूकान के सामने चलती, बातचीत सुन पाने के लिये उत्तेजना में, अपने नकाब-उठा कर दूकान की ओर भीड़ में धंसने के लिये ठेलमठेल कर रही थीं। सभी बोल रही थीं। ऐसा शोर मचा हुआ था जैसे जंगली मैनाओं का दंगल हो रहा हो। कुछ भी स्पष्ट सुन पाना सम्भव नहीं था।

भीड़ के एक किनारे खड़ी लम्बी सी औरत बच्चे को कंधे से लगाये थी। होंठ के नीचे सुर्ती मुंह में घुमाकर, नचा-नचा कर चुनौती दे रही थी :

"हमें क्या मतलब, बाघ के टीले पर जिन्हें जाना हो जायें ! हम तो नहीं जायेंगी। देखें, कोई क्या कर लेगा ?"

अंजीरत दादी ने उसके बच्चे को ले लिया और बोली—"हां-हां, हमें सब मालूम है। जब जनाना सहकारी शुरू हुई थी तब भी तुमने कहा था, तुम कभी नहीं आओगी। फिर चार ही दिन में बच्चे को गोद में लिये आ पहुंची।"

"वाह उस से क्या ! हम आ गयीं तो क्या हुआ ? हमारा मन ! सहकारी एक बात है। हम मुतार्बरिक कब्रों को, अपने बाप-दादा की कब्रों को उखाड़ने थोड़े ही जायेंगी !"

अंजीरत दादी ने बच्चे की लटकती नाक अपनी अस्तीन से पोंछ दी और फिर अपनी नाक पोंछ कर बोली—"मैं एक बात कहूं ? देखो, अपने ऊपर समझकर नाराज मत हो जाना !"

स्त्रियों ने अंजीरत को चारों ओर से घेर लिया—"बताओ ! हां दादी कहो !··· बताओ न !"

अंजीरत झुर्रियों से सिकुड़े होंठ उल्टे हाथ से पोंछ कर बोली—'कहते हैं, एक बार दरिन्दों और परिन्दों में लड़ाई हो गयी। चमगादड़ अपने पंख समेट एक ओर बैठ कर देखने लगा, लड़ाई में कौन जीतता है। दरिन्दों को जोर पकड़ते देखा तो चमगादड़ उन की ओर चला गया। मुंह खोल कर दांत दिखा दिये, अपने कान हिलाये और छातियां दिखाकर बोला—देखो-देखो हम तो पशु हैं। पशुओं ने उसे अपना साथी मान लिया। थोड़ी देर बाद यह हुआ कि परिन्दे जीत गये। चमगादड़ उड़ कर उन की पाली में आ गया और बोला, हमारे पंख देखो, हम तो पंछी हैं !"

अंजीरत दादी ने गहरी सांस खींची—"चमगादड़ बिचारा कभी इधर जाय, कभी उधर। उस पर दोनों तरफ से मार पड़ने लगी। जानती हो, तब से चमगादड़ दिन में किसी को मुंह दिखाने लायक नहीं रहा···।"

स्त्रियां कहकहे लगा कर हंस पड़ीं !

"दादी शुक्र अल्लाह ने खूब कहा !"

"दादी ने खूब जवाब दिया !"

"कलवा मौसी चमगादड़ बनोगी ?"

"हां-हां बहिना, इन्हें अभी देख लेने दो, ऊंट किस करवट बैठता है !"

कलवा नाराज हो गयी। अपना बच्चा अंजीरत की गोद से छीन लिया। बच्चा बहुत खुश था। अपनी बटन जैसी काली-काली आंखें और बिना दांत का मुंह फैलाये सब की हंसी से किलक रहा था। कलवा ने चिढ़ कर उसे एक धौल दे दिया।

दूकान के दरवाजे से आवाज सुन कर सब स्त्रियां उस ओर घूम गयीं। एक जवान स्त्री बहुत उत्तेजित हो रही थी। उस के घुंघराले, खूब काले बाल और कनपटियां पसीने से चकचक हो रही थीं। स्त्री उत्तेजना में कभी दूकान की कुर्सी की ऊपर की सीढ़ी पर चढ़ जाती और कभी नीचे की सीढ़ी पर उतर जाती।

"···मैंने अपनी सास को अपने हाथों वहां दफनाया है। अब मैं जाकर अपने हाथों उस की कब्र को गिराऊं ? मेरी जान ले लें, तो भी मैं ऐसा नहीं करने की। जो मुये मेरी सास की कब्र को छुएं, अल्लाह करे उन के हाथ टूट जायें, उन के बदन में कोढ़ फूटे ··!"

"या अल्लाह, हमारे गुनाह बख्शना ! कैसा बुरा जमाना आ गया है ! क्या कह

रही है…!"

"क्या बुरा कह रही है ? अपनी सास की बेइज्ज़ती कराये !"

अंजीरत दादी भीड़ में धंस कर दूकान की कुर्सी की सीढ़ियों पर चढ़ गयी और नौजवान स्त्री की आस्तीन पकड़ कर बोली—क्या बक रही हो ? तुझे सास की कब्र गिराने के लिये कौन कह रहा है ?"

जवान स्त्री ने अंजीरत दादी का निर्बल हाथ झटक दिया और ऊपर की सीढ़ी पर उचक कर बोली :

"रहने दो, रहने दो ! अल्लाह ने हमें भी आंख-कान दिये हैं। कब्रिस्तान को उखाड़ कर सपाट कर देना चाहते हैं, उस पाक जगह पर नापाक काम के लिये दीवारें बनायेंगे। तौबा, औरतों का कारखाना बनायेंगे। यह सब अनाखां की करतूत है। उस ने शरियत के हुक्म के खिलाफ, औरतों को बेपरदा करके उन की सहकारी बनायी। उस पर पीर-फकीर का कहर पड़ा। रोज-रोज उस पर मुसीबतें आ रही हैं किसे नहीं मालूम, सब जानते हैं ! खुदा ने रहम किया तो मौत से बाल-बाल बची है। अब भी उसे होश नहीं आया। उस के गुनाहों की सज़ा उस की बेटी पर पड़ी है। लड़की गूंगी हो गयी है। जैसी मां वैसी बेटी। लड़की ने खिज्र शेख के मज़ार पर जाकर गन्दे गीत बेशर्मी से गाये। तभी तो उस का बोल जाता रहा। खुदा ने उस की नापाक ज़बान खत्म कर दी !"

एक लंगड़ी बुढ़िया बोल पड़ी—"या अल्लाह करीम ! अपने बन्दों पर रहम कर, उन के गुनाहों को बख्श दे ! सब लोग शरियते-पाक के हुक्म को याद रखो ! देख लो, सियानी ने जो कुछ कहा था…सामने आ रहा है, सब सही उतर रहा है।"

अंजीरत दादी हांफती हुई फिर दुकान पर चढ़ गयी। जवान औरत को एक ओर धकेल कर बोली :

"खबरदार, अनाखां को कुछ कहा तो ! कहे देती हूं, ऐसी बात कोई न कहे, झूठ है, सब झूठ है। मैं सब जानती हूं। जालियों ने अनाखां पर छुरा चलाया। मैं सब जानती हूं, उसी सियानी ने अनाखां की बिटिया को डरा कर बच्ची का दिमाग हिला दिया। वह बुढ़िया खुद गुनाहगार है। अल्लाह उसे गारत करे !"

स्त्रियों में शोर मच गया। अंजीरत का निर्बल स्वर शोर में दब गया :

"हाय बेचारी…!"

"अरी क्या कह रही हो, अल्लाह तुम्हें बख्शे !"

"खबरदार, सियानी को कुछ कहा तो !"

"खुदा का खौफ कर, ज़बान संभाल…!"

"बुढ़िया पागल है।"

"इसे अनाखां ने सिखा कर भेजा है।"

"वह खुद क्यों नहीं सामने आती ? खुद तो डरती है।"

"खुद भी मरी और लड़की को भी ले डूबी…।"

"अच्छा हुआ, उस के साथ यही होना चाहिये था !"

अंजीरत दादी हांफ गयी थी परन्तु उस का मन झूठे प्रचार और अन्याय के प्रति विरोध में खौल रहा था। वह जरा दम लेकर फिर आगे बढ़ आयी !

"मैं पूछती हूं, तुम बताओ, सियानी का क्या अंजाम हुआ। तुम्हीं बताओ, उस की करनी का क्या फल मिला ? सामने आकर सब को बता दे !"

सब स्त्रियां चुप हो गयीं तो अंजीरत की चेंचियाती-भर्राती आवाज़ स्पष्ट सुनायी देने लगी। नैमी दुकान से कई कदम दूर बाजार के दूसरी ओर खड़ा था। वह भी बुढ़िया की बात स्पष्ट सुन पा रहा था।

अंजीरत बोली—"सियानी ने तो कोई कब्र नहीं तोड़ी। न उस ने कोई कारखाना बनाया। उस ने तो कोई सहकारी भी नहीं बनायी कि गरीबों की रोजी का सहारा हो जाता और उन के बच्चों का पेट भरता। वह तो पीरों-फकीरों, और अल्लाह-दीन की ही बातें करती थी। वज्द में ऐसी बन जाती है। मुंह सेझाग गिरने लगता था पर उस का क्या अंजाम हुआ ? मैं सब जानती हूं। मुझ से क्या छिपा है ? उस की ऐसी गति क्यों हुई ?"

सब स्त्रियां सन्नाटे में रह गयीं।

"तुम कहती हो, अनाखां पर पीरों का गुस्सा पड़ा ? कोई यह बताये कि सियानी का क्या हुआ ? अरे कोई बोलती क्यों नहीं ?"

"क्या ?…क्या हुआ ? हाय सियानी को क्या हो गया ?"

"पूछती हो क्या हुआ ? नहीं जानती, वह कत्ल हो गई। कुत्ते की मौत मरी। नींद में खाट पर गला कट गया। अपनी करनी का फल पाया !" अंजीरत दादी ने क्रोध से कहा।

नैमी के पांव कौतूहल से ठिठक गये थे, सांस रोके स्त्रियों की बातें सुन रहा था। अंजीरत की बात सुन कर बेसुधी में कदम उस की ओर बढ़ गये।

अंजीरत फिर चीख उठी—"कुत्ते की मौत मरी। उस जैसा ही कोई खाट पर पड़ी के गले पर छुरा फेर गया। शुक्र अल्लाह का ! और जानती हो, उस की कोठरी से तीन पाव अफीम निकली। यह करतूत थी उस की। मैं पूछती हूं, वह औलिया-फकीर थी तो उसे अफीम से या मतलब क्या ? क्या औलिया-फकीर अफीम बेचते फिरते हैं ?"

स्त्रियों की भीड़ में फिर चें-चें, चिड़-चिड़ शुरू हो गयी जैसे संध्या बसेरे के लिये

इकट्ठी हुई चिड़ियों के झुण्ड में स्थान के लिये होता है ।

"अफीम !"

"अरे बाबा ! तीन पाव अफीम !"

"अब जानी तुम ने उस की हकीकत ?" अंजीरत ने पूछा ।

"हाय अल्लाह, हमें क्या मालूम था ?"

"हमारी जूती से, हम क्या जानती थी ?"

"हाय मैं मर गयी, बेढ़ा गरक हो चुड़ैल का !"

"वह हमें कैसे बहकाती रही, हम उसे औलिया-फकीर मान कर एतबार करते रहे । हमें धोखा देती रही, नेक-शरीफ, औरतों पर तोहमतें लगाती रही । मासूम बच्चों को हौआ दिखा कर उन के दिमाग खराब कर दिये । उसी का अंजाम उस ने पाया । यह फकीर-औलियों के काम हैं ! खाट पर उस का कत्ल हुआ । कैसे लोगों से उस के ताल्लुक रहे होंगे …!"

नैमी के पांव लड़खड़ा गये । वह एक दम भाग चला । घूम कर देखने का भी साहस नहीं हुआ । कोने के मकान से एक छोटी-सी लड़की गली कूद आयी । नैमी को देख कर पुकार उठी—"सलाम मास्टर साहब ! सलाम !"

नैमी अपने नाम की पुकार सुन कर आतंक से उछल पड़ा । वह और भी तेज भागा जैसे कुत्ते से डरा हुआ भिखमंगा भागे । उस के मुंह से गाली निकल गयी—"लानत है, लानत है ! तुम्हारे बाप-दादा की कब्रों पर लानत है…।"

मास्टर नैमी शाम तक गलियों-बाजारों के चक्कर काटता रहा । गला सूख रहा था और शरीर पसीने से लथ-पथ था । वह सियानी की कोठरी के आस-पास की गलियों के चक्कर लगा रहा था ।

नैमी जानता था, सियानी बहुत चालाक थी । सियानी के घर से सेर-डेढ़ सेर सोना निकलता तो मास्टर को कुछ विस्मय न होता परन्तु निकली अफ़ीम !…पर चायवाला इतनी अफ़ीम क्यों छोड़ गया ?…गुण्डा घबराहट में ढूंढ़ नहीं पाया होगा । ऐसा तो कोई चिन्ह नहीं छोड़ गया होगा कि उसके खिलाफ सुराग मिल सके । पक्का गुण्डा है, खुद जाल में कभी नहीं फंसेगा ।

नैमीं ने मन को समझाया—व्यर्थ घबराने से क्या बनेगा, क्षोभ से क्या लाभ ? संकट में दिमाग शान्त रहना चाहिये ।…अरे क्या हो गया ! …औरत ही तो थी । अपने को उससे क्या लेना-देना…कमबख्त से कभी चाय के प्याले की भी तो उम्मीद नहीं थी । उसकी वजह से दूसरों पर मुसीबत आ जाती तो ? अच्छा ही हुआ, उस का निबटारा हो गया ।

नैमी का दुनिया में कौन था ? वह स्वयं भी अपना नहीं रह गया था ? इन्सान

की अपनी मर्ज़ी से हो क्या सकता है ? इन्सान तो किस्मत के हाथ का खिलौना है। जब तक ज़िन्दगी है, होशियार रहना ही चाहिये। अपने को इन सब झगड़ों से क्या मतलब, हमें क्या मालूम…!

बीसवां परिच्छेद

१० जुलाई को प्रातः नगर में लोगों की नींद नगाड़ों और भेरियों के गर्जन से टूटी। वातावरण शहनाइयों और नरसिंघों की तीखी गूंज से भरा हुआ था। पौ फटते-फटते गली-बाज़ार लोगों की भीड़ से भर गये। गाने-बजाने, हंसी-कहकहे और चीखो-पुकार के कारण कानों पड़ी बात समझ पाना कठिन हो रहा था। बच्चे किलकारियां मारते और पिपनियां बजाते इधर-उधर भाग रहे थे। सभी ओर से नागरिकों की भीड़ झण्डे, ध्वजायें और बड़े-बड़े इश्तहार उठाये निमांचा की ओर बढ़ी आ रही थी। भीड़ के साथ बेलचों, कुदालों, फावड़ों और टोकरियों से लदी बैलगाड़ियां थीं। उत्साह से उफ़नते इस जुलूस को बाजारों में देख कर, मखमली गोल टोपियां पहनने वाले पुराने दुकानदार अपनी छोटी-छोटी दुकानों में दुबक गये। कुछ लोग उत्साहपूर्ण नारे सुन कर झांकने के लिये गलियों में निकल आये। दूसरे सुबह-सुबह एक प्याला चाय ले लेने के लिये बाज़ार में निकल गये थे वे भी भीड़ के धक्कों के साथ बहते चले जा रहे थे।

बाघ का टीला ऊसर धरती से लोप हो चुका था। बड़ा टीला और आस-पास के छोटे टीले और चट्टानें, सुरंगों से उड़ा-उड़ा कर समतल कर दिये जा चुके थे। घण्टे भर में जहां तक दृष्टि जाती ऊसर धरती पर आदमी ही आदमी दिखायी देने लगे। जिस ओर नज़र चली जाती भड़कीले लाल-नीले रूमाल सिरों पर बांधे स्त्रियां दिखायी दे रहीं थीं। मर्दों के पुष्ट नंगे कन्धे धूप में चमक रहे थे। उन्होंने कठिन परिश्रम के उत्साह में कोट, कुर्ते उतार दिये थे और कमरबन्द कस लिये थे। मर्दों के हाथों में कुदालें, गदेले, फावड़े और बेलचे सुबह की धूप में चमचमा रहे थे। कब्रिस्तान की ओर लाल सेना के सिपाहियों की पंक्तियां खड़ी थीं। वे लोग भी मिल के लिये धरती तैयार करने में सहयोग देने के लिये आ गये थे। अब भी लोग चले आ रहे थे। कोला-हल बढ़ता ही जा रहा था।

"खूब-खूब ! अजब तमाशा है ?" इंजीनियर सरगी मुंह ही मुंह में बड़बड़ा रहा था। उसे उत्साह परन्तु चिन्ता का बोझ भी अनुभव का हो रहा था—यह बात तो ज़िन्दगी में पहली बार ही देख रहा हूं । यह ऐसा तो ज़िन्दगी में पहली बार ही देखा है !"

"यह पंचायती काम है; राष्ट्रीय योजना में सब लोग मेहनत की ज़कात (दान) देने के लिये उमड़ पड़े हैं।" अरगाश ने इंजीनियर के समीप आकर कहा, "मेहनत की ज़कात या पंचायती काम का तरीका तो बहुत पुराना है परन्तु उद्देश्य नया है।"

भीड़ के बीचोंबीच इंजीनियर मैनेजर और योजना के प्रधान को घेरे हुये अनेक दलों के नेता खड़े हुये थे। सभी को उतावली थी। सब लोग काम बांट दिये जाने या अपने लिये निश्चित काम बता दिये जाने के लिये इंजीनियर के पीछे पड़े हुये थे। बहुत उतावले लोग इंजीनियर की आस्तीन खींच-खींच कर बोलते जा रहे थे।

"बारी-बारी से एक-एक आदमी बोले।" सरगी बार-बार समझा रहा था। उसे हाथ में लिये नक्शों पर नज़र डाल सकने का भी अवसर नहीं था।

"हम सबसे पहले आये थे। हम आये तब तो यहां कोई भी नहीं था...।"

"तुम्हारी टोली में सब नौजवान हैं न ? तुम्हारे साथी तो सब तगड़े हैं...।"

"हां-हां ! हमें काम तो बताइये !"

"जरा हौंसला रखो ! तुम्हारे लायक ही काम बताया जायगा।"

"हां, तुम्हारी जवानी और तुम्हारी शक्ति के योग्य !" याफिम ने कहा।

"वाह, इस का क्या मतलब हुआ ? यह कौन बड़े तीसमारखां हैं, हम इन से किस बात में कम हैं ?" मोचियों की टोली के नौजवान नेता ने धमकी दी।

"घबराइये नहीं ! घबराइये नहीं ! सभी को काम मिलेगा। सभी को अवसर मिलेगा। काम की कमी नहीं है, जो जितना कर सकेगा काम मिलेगा किसी को शिकायत नहीं रहेगी।"

"शिकायत तो यही है कि मोचियों को खुद भी जूता पहनने को मिलेगा ?"

शीघ्र ही कोलाहल दब गया। भीड़ छूट गयी। जगह-जगह काम शुरू हो गया। गीत बन्द हो गये। पत्थरों पर लोहे की खनखनाहट सुनाई देने लगी।

"कामरेड सुल्तान !" जुलैखां ने पुकार लिया।

"सुनो, तुम ने पत्र लिख दिया ?"

"हां, हां ! ताशकन्द न; सीमेन्ट के लिये ?"

"ताशकन्द नहीं, मास्को !"

अरगाश क्षण भर के लिये चुप रह गया—"क्या बताऊं कल रात घर लौट ही नहीं सका। रात दफ्तर में मेज़ पर ही सो गया। खाने के लिये भी नहीं जा सका। विश्वास रखिये, आज जरूर लिख दूंगा।"

जुलैखां ने उपालम्भ के स्वर में कहा—"जाने दो, मैं न पूछती तो तुम्हें याद भी नहीं आता। तुम मां की परवाह नहीं करते; घर भी नहीं लौटते। अरगाश, यह बुरी बात है। जानती हूं, तुम मैनेजर हो, तुम पर बहुत उत्तरदायित्व है लेकिन मां तो मां है। उस की उपेक्षा ठीक नहीं!"

अरगाश के चेहरे पर मुस्कान आ गयी। आंख से भीड़ की ओर संकेत कर बोला—"जुलैखां दीदी, एक नहीं यहां तो सैकड़ों मातायें मौजूद हैं। देखो तो, मुझे तो कभी स्वप्न में भी ऐसी आशा नहीं थी।"

जुलैखां गद-गद हो गयी—"देख लो, स्त्रियां आधोआध, मर्दों के बराबर ही आयी हैं।"

याकिम बोल पड़ा—"अभी तो बुरके की कैद उन्हें रोके है, नहीं तो स्त्रियां मर्दों से आगे बढ़ गयी होतीं।"

"कम्बख्त राव तो भाग गया।" अरगाश ने मुंह बनाकर कहा, "उसे यहां बेलचा चलाते नहीं देख सका। खैर, रावज़ादा तो मौजूद है। देखिये न, बैल की तरह जुटा है।"

ऊसर धरती के ऊपर महीन धूल का बादल छा गया था। बेलचों से गाड़ियों और ठेलों में सब ओर छपा-छप! छपा-छप! मिट्टी फेंके जाने की आवाज़ सुनायी दे रही थी। किसी तरफ कंकड़ या मिट्टी समेटे और भरे जाने की खड़-खड़ हो रही थी, कहीं बैलगाड़ियों के बिना तेल सूखे पहियों की चर्र-मर्र और पत्थरों पर खड़-खड़ाहट हो रही थी। कब्रिस्तान की ओर एक गधा जोर से हिचकियां लेकर रेंक उठा। सारे मैदान में कहकहों की लहरें दौड़ गयीं।

"दो साले को एक डण्डा…!"

"शाबास! ज़ोर से…!"

अब्दुस्समद की टोली ने अपने भाग में इकट्ठे किये सूखे झाड़-झंखाड़ के ढेर में आग दे दी। आग में चरमराती, झाड़ियों से लपलपाती, ऊंची-ऊंची लपटें महाकाय अजगरों की तरह हिस्स-हिस्स कर, फुंकारों से तीखी गन्ध भरा खूब काला-काला धुआं आकाश की ओर फेंकने लगीं। आग के चटाखों से दूर-दूर तक चिन्गारियां फुलझड़ियों की तरह उड़ने लगीं।

ताजे चिरे खूब लम्बे-लम्बे पटरों से लदी छः गाड़ियां आ गयीं। पटरे बहुत लम्बे थे इसलिये गाड़ियों के पीछे धरती पर कढ़िरते आ रहे थे। पटरे ऊंची-नीची धरती पर बिछाकर ठेलों और रेढ़ियों के लिये सुविधा से चलने लायक रास्ता बना देने के प्रयोजन से लाये गये थे।

पटरों से भरी गाड़ियां सदियों से जमे कूड़े के टीलों के पास आकर खड़ी हो गयी थीं। गाड़ीवान असहाय विस्मय से कूड़े के टीलों को देख रहे थे, अपना बोझ कहां उतारें?

"तुम्हें गदेले चाहिये ?···बेलचे ले लो ?" किसी ने सुझाया ।

"गदेलों और बेलचों से क्या होगा ? यह तो बिलकुल चट्टान हो रहे हैं ।"

"इन सालों में आग दे दो ! जलेंगे भी, बिलकुल पत्थर हो रहे हैं ।"

कुछ लोग बेलचे और गदेले लेकर जमे हुये कूड़े की चट्टानों की ओर बढ़े परन्तु कूड़े की विकट दुर्गन्ध ने उन्हें पीछे धकेल दिया ।

निमांचा का एक बिलकुल धौले सिर, खूब तगड़ा प्रौढ़ एक लम्बा गदेला ले कूड़े के टीलों की ओर लपका । उसने दुर्गन्ध की परवाह नहीं की—"लाहौल बिला ! लानत खुदा की ! हमारे सिरों पर यह नापाक दोज़ख कब तक रहेगा ! ज़िन्दगी भर के इस अजाब को खत्म करो !" प्रौढ़ दम रोके पत्थर की तरह जमी गन्दगी पर गदेले से चोट पर चोट करने लगा ।

प्रौढ़ को देख कर गाड़ीवान और दूसरे लोग भी गदेले और बेलचे लेकर गन्दगी की चट्टानों पर टूट पड़े ।

स्त्रियां, कुल्हाड़ियां, गंड़ासे ओर हंसियों से झाड़ियां काट रहीं थीं । कटी झाड़ियों के बोझ उठा-उठा कर अबदुस्समद की टोली की होली में डालती जा रही थीं । होली की लपटें ज़रा नीची होतीं तो और ईंधन पाकर फिर लपक उठतीं ।

गरने की एक झाड़ी की जड़ें बहुत गहरी थीं । उसे उखाड़ सकना किसी एक के बस का न था । चार स्त्रियों ने एक दूसरी की कमर में बांहें डाल कर झाड़ी पर एक साथ जोर लगाया परन्तु झाड़ी की जड़ें नहीं हिलीं । एक खूब तगड़ी युवती उन में आ मिली । पांचों ने फिर एक साथ मिल कर एक दूसरे की कमर में बांहें डाल झाड़ी को खींचा तो झाड़ी की जड़ मूली की तरह उखड़ आई । पांचों स्त्रियां अपने ज़ोर में एक दूसरी पर गिर पड़ीं तो कहकहों और किलकारियों से चीख उठीं । युवती उछल कर खड़ी हो गई और दूसरी स्त्रियों के उठ पाने से पहिले उन्हें गुदगुदा कर फिर धरती पर लोट-पोट होने लगी ।

जुलैखां युवतियों का खेल और विनोद देख रही थी । उसे बहुत अच्छा लग रहा था—यहां मिलजुल कर कितनी खुश हैं, कैसी किलक रही हैं । अलग-अलग, अपनी-अपनी कोठरियों में बन्द बेचारी कैसी असहाय और उदास रहती हैं···।

बुरके में उलझती एक प्रौढ़ा हरी झाड़ियों का बोझ उठाये जुलैखां के सामने से जा रही थी । जुलैखां ने कह दिया :

"माशा अल्लाह (अल्लाह सलामत रखे) !"

बुढ़िया झाड़ियों का बोझ एक ओर डाल कर जुलैखां की ओर घूम गई । जुलैखां ने पहचाना कुमरी थी । उस की बांहें खरोचों और हरी पत्तियों के रस के दागों से भरी थीं पर उस के पसीने और गर्द से भरे चेहरे पर मुस्कान थी ।

कुमरी ने जुलैखां के मन की बात भांप कर किलोल और विनोद में धरती पर लोटती युवतियों की ओर संकेत किया—"देखो तो उन्हें ! देखो तो कैसे खुश हो रही हैं; कितनी अच्छी लग रही हैं ! ..."

"हां मौसी, ये बेचारी क्यों खुश न हों, क्यों न खेलें ? ये बेचारी भी तो इन्सान हैं। मौसी तुम किस की टोली में हो ?"

"बशारत की, अनाखां की बिटिया बशारत की टोली में। बहुत होशियार लड़की है। बहुत दाना है। अल्लाह उस की उमर हज़ारी करे, जवानी और हुस्न दे। अभी क्या उम्र है पर उस ने बड़ी लियाकत से सब को काम बांट दिया है, बारह-बारह सोलह-सोलह हाथ जगह बांट दी है।"

"मौसी, तुम्हें कितनी जगह दी ?"

"सोलह हाथ ! मैं तो निमांचा की हूं। सुनो, मुझे कम जगह कैसे दे सकती थी !" कुमरी ने अपना अधिकार प्रकट किया, "लड़की समझदार है; सब का ख्याल रख कर बात करती है। हाय, बेचारी अनाखां यहां नहीं है; अपनी लड़की की लियाकत देखती तो कितनी खुश होती ! अल्लाह उस पर रहम करे ! लड़की आ तो रही है...।"

बशारत पांव में अपने पिता के बहुत भारी-भारी बूट पहने थी। हाथ में फीता था, कान पर मुंशियों की तरह पेंसिल लगाये थी। चेहरा धूप और उत्साह से गुलाबी हो रहा था।

जुलैखां ने बशारत की ओर हाथ बढ़ा दिया जैसे अपने बराबर की हो और पूछा—"तुरसाना अब कैसी है; अब तो तबियत ठीक है न ?"

"नहीं मौसी जी, मैं तो कुछ समझ नहीं पा रही हूं; क्या करूं ? रात अम्मा ने समझा कि मैं सो गई तो तुरसाना के पास बैठ कर बहुत रोई। इतना रोईं कि क्या बताऊं !" बशारत का गला रुंध गया। कुमरी ने मुंह फेर कर उमड़ आये आंसू पोंछ लिये।

"आज सांझ समद भाई और किशोर-कम्यूनिस्ट संघ की टोली यहां गाना सुनायेंगे। तुरसाना भी आ सकती तो कितना अच्छा होता !" मन की व्यथा से बशारत की गरदन झुक गई।

दूर से किसी मर्द ने बशारत को पुकार लिया। बशारत ने बांह उठा कर पुकारने वाले को संकेत किया और मुस्करा कर जुलैखां की ओर घूम गई—"मैं तो मर्दों और स्त्रियों के बीच टेलीफून बनी हुई हूं। उन की बातें इन्हें और इन की बातें उन को बतानी पड़ती हैं।" बशारत हंसती हुई भाग गई।

जुलैखां ने कुमरी के कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"मौसी, आज तुम ज़रा अनाखां के घर हो आना। क्या करूं, मैं तो जा नहीं पाऊंगी।"

"ज़रूर, मैं तो खुद ही जाती।"

जुलैखां को अपने पीछे अंज़ीरत दादी बेलचा चलाती दिखाई दे गई। जुलैखां आस्तीने समेटती हुई उस ओर बढ़ गई। बेलचा बुढ़िया के हाथ से ले लिया और खुद खोदने लगी :

"दादी थक गई हो न ?"

"शुक्र अल्लाह का ! हाय बेटी, तुम क्यों खोदने लगी ? इस काम के लिये दूसरे क्या कम हैं ?"

"कुछ बुरा काम कर रही हूं ?"

"सुभान अल्लाह ! तुम क्यों बुरा काम करोगी ? तुम तो हज़ारों का भला कर रही हो। निमांचा में हज़ारों आदमी हैं। हमारी इतनी उमर हो गयी, अब तक तो किसी को ख्याल न आया। तुम्हारी हिम्मत है कि मक्खी-मच्छरों के इस दोज़ख को दूर कर रही हो। शुक्र अल्लाह का, मैंने यह मुबारक दिन देखा। इंशा-अल्लाह, उसके रहम से मिल भी जल्दी बन जाय तो देख लूं !"

"दादी याद है, तुम तो कहती थीं अल्लाह तुम्हें जल्दी उठा ले ?"

"हां बेटी, अल्लाह मेरे गुनाह बख्शे···। मैं ही जानती हूं कैसे दिन करेढ़ रही थी। याद करते दिल डूबता है। अल्लाह करे उन लोगों का मुंह कभी न देखूं, उनके नाम पर थूकूं भी नहीं। मैं तो कहती हूं, उमर से लाचार न होती तो जवान लड़कियों के साथ मैं भी सफर पर जाती। हमारे ज़माने में तो सिर्फ मर्द और फकीर ही मक्का शरीफ की हज के लिये सफर करते थे। शुक्र अल्लाह का, उसके रहम से हमारी जैसी औरतें भी मास्को गयी हैं। बिटिया, उनकी कोई खैर-खबर नहीं मिली ? मुझे उन लोगों की बहुत याद आती रहती है।"

"दादी, पत्र की प्रतीक्षा तो बहुत है, आज-कल में आना ही चाहिये !"

"तुम जानती हो, रज़िया बेचारी बहुत सीधी है। मुझे उसकी बहुत फिक्र रहती है। मास्को जाकर कहीं चुड़ैल का दिमाग ही न बिगड़ जाये ! सोचो तो सही, लौटेगी तो मिल की कारीगर होकर लौटेगी। हैं; जरा सोचो तो सही ! सच्ची मुझे उसकी बड़ी याद आती है। अल्लाह जानता है, मैं उसे छोटी बहिन मानती हूं और सच कहूं, वह मुझ से नाराज़ हो गयी थी··"

"हाय तो तुम ने बेचारी को क्या कह दिया था ?"

"बिटिया तू जानती है, मैं तो मूरख गंवार ठहरी। तुझ से क्या कहूं; मैं जो कुछ सियानी से सुनती, उसे भी कहती रहती थी। अरे वही सियानी, अफीम बेचने वाली, जिसका कत्ल हो गया। आन गांव से आकर हम लोगों को बहकाती थी। उससे हमारा क्या रिश्ता-नाता था ? मुझे तो खुद उस चुड़ैल पर विश्वास नहीं था। सच

कहती हूं, एक दिन सुबह मुंह-अंधेरे देखा कि उसके घर से कुदरतुल्ला निकला—वेईमान पर खुदा की लानत ! अल्लाह करे जब तक जिये, उसे सुख न मिले ! शुक्र अल्लाह का ! या परवरदिगार, अपने बन्दों पर रहम कर ! अल्लाह करे, ऐसे वेईमानों का मुंह न देखना पड़े…। ला बिटिया, बेलचा मुझे दे !"

"दादी, तुम दम ले लो, जरा सुस्ता लो ! तुम्हें तो लोगों को समझाना चाहिये। सच दादी, तुम्हारी बात में बड़ा जोर है। तुम्हारी बात लोगों के मन में बैठ जाती है।

"बिटिया क्या करूं, मेरी आदत ऐसी है। बात पेट में नहीं रख पाती सब कुछ कह देती हूं।" बुढ़िया ने क्षमा सी मांगी, "शुक्र अल्लाह का !"

जुलैखां को लगा जैसे किसी की नज़रें उसकी पीठ में बिंधी जा रही थीं। आशंका हुई कोई उस पर आंखें गड़ाये था। घूम कर देख लेना चाहा परन्तु अपने आप को रोक लिया। बेलचे पर झुके-झुके अपनी बांह के नीचे से उसने कनखियों से देख लिया।

मास्टर नैमी, बीच में खुदाई करते एक आदमी की आड़ में अपने कुदाल के हत्थे पर झुका जुलैखां की ओर देख रहा था। जुलैखां ने नैमी की आंखों में ऐसी हिंसा कभी नहीं देखी थी। वह उसे बहुत सभ्य, शिष्ट स्कूल मास्टर समझती थी। नैमी की आंखें आतंकित, वार करने के लिये पीठ सिकोड़े बिलाव की आंखों की तरह चमक रही थीं।

जुलैखां सीधी खड़ी हो गई। उस से आंखें चार होते ही नैमी ने मुंह फेर लिया और गरदन झुका कर जल्दी-जल्दी कुदाल चलाने लगा जैसे बहुत उत्साह से काम करने लगा हो। नैमी की सहसा चुस्ती और तत्परता देखकर उसके आस-पास काम करते लोगों को भी विस्मय हुआ। नैमी की कुदाल धरती पर इतने जोर से पड़ने लगी कि उसकी चोट से ढेले और कंकड़-पत्थर बहुत दूर-दूर गिरने लगे। उसकी रेशमी कमीज़ पसीने से भीगकर शरीर से चिपक गई थी। नैमी कुलियों और नहर खुदाई करने वाले मजदूरों की तरह-अवसर पर उपयोग के लिये कमर पर एक रस्सी लपेटे था।

मास्टर नैमी धूल से भरा, धूल की बिल्कुल परवाह न कर बहुत उत्साह और लगन से काम में लगा रहा। जुलैखां ने सोचा—उसकी भूल थी। मास्टर की दृष्टि पर उसका संदेह ठीक नहीं था।

जुलैखां नैमी की ओर बढ़ गई—"मास्टर साहब धन्यवाद, आप भी हमारी सहायता के लिये आये हैं ?"

नैमी ने सीधे खड़े होकर माथे का पसीना पोंछा—"मेरी कई शागिर्द यहाँ मौजूद हैं। नैमी ने जुलैखां के उपालम्भ का उत्तर दे दिया, "मुआफ कीजिये, अभी मैं अपना काम पूरा नहीं कर पाया हूं। अनुमति दें तो काम के बाद कुछ निवेदन करूंगा।"

"चाहें तो अभी कहिये !"

"नहीं-नहीं पहिले काम ! और मैं आप से अकेले में बात करना चाहता हूं।"

"अच्छा, जैसा चाहें।"

नैमी सलाम में झुक गया।

मखुनिया मखसूस भी समीप ही था। वह उकड़ूं बैठा अपने जूते में भर गई धूल झाड़ रहा था। पत्थरों और धरती पर पड़ते कुदालों और बेलचों की गूंज में उसकी चेंचियाती सी आवाज़ सुनाई दी :

"हमारी अपनी जिन्दगी चाहे जैसी गुजरी पर कोई हम से पूछ ले, मुहब्बत तो पाक चीज़ है। मर्द को वाजिब है कि औरत के साथ वफादार रहे और औरत में हया होनी चाहिये, समझे···! यह नहीं हुआ तो सब बेकार है। ब्याह-शादी में, घर-गिरस्थी में, जिन्दगी में कोई मजा नहीं···।"

मखसूम के पास न कुदाल थी न बेलचा न कोई टोकरी। वह खुद मेहनत नहीं कर रहा था मेहनत करने वालों का मन बहला रहा था।

"एक बार एक खस्सी मुर्गा मुर्गियों में मुर्गे की एवज़ी करने जा पहुंचा।" कोई मज़ाक में बोल उठा।

"और मुर्गियों ने खस्सी की कलगी नोच डाली !" दूसरे ने बात पूरी कर दी।

मखुनिया मज़ाक अनसुना कर अपनी बात कहता गया :

"हम तो अपनी ही कहते हैं। हमारी औरत ने क्या किया ? हमें उस से कितनी मुहब्बत थी। हम उस पर जान देते थे। निकाह हुआ तो निकाह के दूसरे दिन ही भाग गयी। पहली रात ही बिस्तर से निकल भागी लेकिन फिर भी हम ने उस पर गुस्सा-गिला नहीं किया। मर्द को तो लाजिम है कि औरत पर रहम करे, हम ने तो फिर शादी की। हमें कोई कसम दिला ले, हम ने किसी दूसरी औरत की तरफ़ बुरी नज़र की हो ! वह जाकर दूसरे मर्द के साथ रहने लगी। हम ने समझ लिया वही आदमी उस की किस्मत का था। खुदापाक को यही मंजूर था। हम तो अब भी उस का ख्याल करते हैं। कभी-कभी देख आते हैं। उस के बच्चों को अपना ही ख्याल करते हैं। सुभान अल्लाह, हम ने तो औरत के साथ दगा नहीं किया और···।"

"अरे मखुनिया, तुम्हारी जोरू की किस्मत का आदमी तुम्हारी कैसी खातिर करता है ?"

"गाली से खातिर करता है कि लात से ?"

"हम तो उस से ऐसे ही बोलते-चालते हैं जैसे तुम से बात कर रहे हैं।" मखसूम ने गम्भीरता से उत्तर दिया।

जुलैखां मुंह फेर दूसरी ओर चल दी। उसे दूर पगडंडी पर एक जवान साइकिल ठेलते चलता दिखाई दे गया। जवान धूप में भी अपनी टोपी का छज्जा गर्दन की ओर

किये था। साइकिल को हाथ से थामे आस-पास काम में लगे लोगों से बोलता-चालता जा रहा था। लोगों ने उसे अरगाश और याफिम की ओर दिखा दिया। वे दोनों और जुलैखां भी डाकिये की प्रतीक्षा में थे।

डाकिये ने एक लिफाफा अरगाश की ओर बढ़ा दिया। अरगाश लिफाफा पाते ही तुरन्त खोलने लगा। याफिम ने अरगाश की पीठ पर थापी दी, "मुबारक है! मुबारक है!" जुलैखां भी उत्सुकता से बढ़ आयी। पत्र मास्को से आया था।

अरगाश ने पत्र खोल कर ऊपर को पंक्ति पढ़ी तो माथे पर त्योरियां पड़ गयीं—"मिल योजना के मैनेजर, कामरेड अरगाश सुलतानोव!"

अरगाश ने पत्र के नीचे हस्ताक्षर पर नज़र डाली। पत्र खोजिया ने लिखा था। अरगाश ने सोचा—वहुत सरकारी ढंग से लिखा है। इस से पहले तो खोजिया सदा—प्यारे भाई अरगाश साहब···! लिखा करती थी।

अरगाश ने एक सांस में पूरा पत्र पढ़ लिया। पत्र में फिर कहीं उस का नाम नहीं आया, प्यार की कोई बात नहीं थी—हम लोग इस महानगरी में सकुशल पहुंच गयी हैं। हम···हम सब स्त्रियां···स्थानीय महिलाओं ने···। पूरा पत्र ऐसा ही था।

हस्ताक्षर के ऊपर की पंक्ति लिख कर काट दी गई थी। अरगाश कटे हुये अक्षरों को ध्यान से देख कर अनुमान कर रहा था, खोजिया ने क्या लिखा होगा और फिर क्या सोच कर काट दिया।

याफिम ने पत्र उस के हाथ से ले लिया और पढ़ने लगा।

"बहुत अच्छा पत्र लिखा है। बहुत समझदार लड़की है। तुम्हारा मुंह क्यों बन गया?"

"कहां मुंह बना रहा हूं। मुझे तो पत्र बहुत अच्छा लगा पर यह लाइन क्यों काट दी है उस ने?"

"कहां?"

अरगाश ने कटी हुई लाइन पर उंगली रख कर बताया।

"यह?" याफिम ने पंक्ति को ध्यान से देखा, "परन्तु पढ़ा तो जाता है? तुम नहीं पढ़ पाये!"

"नहीं; तुम ने पढ़ लिया?"

याफिम ने मुस्कान छिपाने के लिये भौवें चढ़ा लीं, "तुम भी क्या आदमी हो, निरे गंवार हो। इतना नही समझ सकते? बेचारी भूल से कुछ लिख बैठी थी।"

"भूल से?"

"और नहीं तो क्या? खुद देख लो!"

अरगाश ने फिर झुक कर अन्तिम पंक्ति को पढ़ने का यत्न किया। याफिम ने

उसे उंगली से दिखाया—"पढ़ो !"

"प्रियतम···तुम्हारी···बहुत···ही याद···आती है। तुम्हें भी मेरी याद आती होगी ! यदि यहां अचानक तुम्हारे दर्शन कर पाती तो निहाल हो जाती।"

अरगाश का चेहरा संकोच से लाल हो गया—"याफिम चाचा, अब उसका पत्र आयेगा तो तुम्हीं से पढ़वाऊंगा। मैं तो ठीक से पढ़ नहीं पाता।"

"लड़की ने लजा कर पत्र में लिखी लाइन तो काट दी है परन्तु अपने मन की बात को कैसे काट देगी ?" याफिम हंस दिया, "मन की बात छिपानी ही पड़ती है।"

अरगाश गम्भीर हो गया—"इंजीनियर की बात कह रहे हैं न ? सुना है आपने, क्या कह रहा था ? खामुखाह इतनी भीड़ जोड़ ली है ! हमारे आदमी खामुखाह की भीड़ हैं ?"

"हां ! सब सुना है।" याफिम ने उत्तर दिया, "अरगाश, केवल शब्द ही मत सुना करो ! शब्दों और कटी हुई पंक्तियों का भाव भी समझा करो !"

"क्या, कैसा भाव ?"

"तुम स्वयं समझने का यत्न करो।"

इंजीनियर सरगी बाघ के टीले से उनकी ओर चला आ रहा था। चोटी से एड़ी तक धूल से भरा, कमीज़ की आस्तीन कोहनी पर फट गयी थी। सरगी ने अपनी घड़ी चांदी की छोटी सी चैन से लटका कर याफिम के सामने कर दी।

"समय हो गया ?" याफिम ने पूछ कर अपनी घड़ी की ओर नज़र डाली।

"इन लोगों को समझा पाना कठिन है" सरगी बोला, "मज़दूर कहीं इस तरह काम कर सकते हैं ? यह तो शेर और शेरनियां हैं। जरा धूप का ख्याल करो, छाया भी पांव के नीचे छिप रही है। इन लोगों को भी दम लेने देना चाहिये। स्त्रियों को बच्चों की भी फिक्र होगी ! ओह, बच्चों को तो साथ ही उठा लायी हैं।"

याफिम ने मुस्कराकर अरगाश की ओर देखा। अरगाश अपने कन्धे सिकोड़ कर गम्भीर बना रहा। ज़ुलैखां आ गयी थी। उसने पत्र के लिये हाथ बढ़ा दिया।

"मुंह मीठा कराओ तो पत्र दिखायें !" याफिम बोला।

अरगाश ने हाथ उठा कर संकेत किया। रेल की लाइन के टुकड़े पर लोहे की चोट से बजी घण्टी का स्वर ऊसर धरती में दूर-दूर तक गूंज गया।

"बस ! रोक दो ! दम ले लो ?" कब्रिस्तान की ओर से रूसी में सुनायी दिया। वहां लाल सेना के जवान काम कर रहे थे।

अब्दुस्समद की टोली की ओर से गीत की धुन उठने लगी। जिसको जहां, जैसी-जितनी छाया दिखायी दे गयी विश्राम के लिये उसी में बैठ गया। कुछ लोग जहां काम कर रहे थे वहीं धूप में ही बैठ गये। कोई कागज में तम्बाकू लपेट कर सिगरेट

बनाने लगा, कोई चिलम भरने लगा, किसी ने रोटी, प्याज और नमक लिया। बहुत कम लोग अपने मकानों को लौटे।

जुलैखां पत्र लेकर स्त्रियों की ओर चली गयी।

स्त्रियों ने पत्थर रख कर चूल्हा बना लिया था। कुमरी खूब बड़ी काली-काली केतली साथ लेती आयी थी। पानी खौल गया। केतली का ढकना भाप से खनखनाने लगा था।

एक बूढ़े गाड़ीवान ने दूर से आवाज दी—'चाय हम भी लेंगे।"

"चुल्लू में पियो तो दूं! हाथ और होंठ दोनों ही सिक जायेंगे!" कुमरी ने उसकी ओर देखे बिना उत्तर दे दिया।

जुलैखां समीप आकर बोली—"बहनो, हमारी सहेलियों ने मास्को से पत्र भेजा है, तुम्हें सुना दूं।"

"मास्को से पत्र? हमारी अपनी बहनों ने लिखा है?" स्त्रियां विस्मय और पुलक से चहक उठीं। उन्होंने जुलैखां को घेर लिया। समीप बैठे मर्द भी पत्र सुनने की उत्सुकता में चले आये परन्तु स्त्रियों को परेशान न करने के लिये कुछ दूर ही बैठ गये या खड़े रहे।

"मरी रजिया को मेरी याद तो आयी!" अंजीरत दादी की गर्दन गर्व से उठ गयी। जुलैखां के बिलकुल समीप आ बैठी। चेहरे पर नकाब नहीं डाला। दूसरी स्त्रियां भी सिमिट आयीं, उन्होंने समीप खड़े मर्दों की परवाह नहीं की। अपने बुरके धरती पर पड़े रहने दिये। केवल सिर के रूमाल से मर्दों की ओर आड़ कर ली।

जुलैखां पत्र पढ़ रही थी तो सब स्त्रियां उत्सुकता से सांस रोके स्तब्ध थीं। कभी-कभी कोई बात सुन कर किसी के मुंह से 'वाह! वाह!' निकल जाती:

"हम सब यहां खूब आराम से हैं। रूसी बहिनों के साथ होस्टल में रहती हैं। हम सबके साथ एक-एक रूसी बहिन काम सिखाने और सहायता के लिये है। रूसी बहिनें हमारी बहुत प्यारी सहेलियां बन गयी हैं। हम लोग दिन-रात साथ-साथ रहती हैं, साथ-साथ काम करती हैं और मिल के भोजनालय में साथ-साथ खाती हैं।

"रूसी बहिनें हम लोगों के घर-बार, माता-पिता, सास-ससुर और बाल-बच्चों के विषय में बहुत कुछ पूछती रहती हैं। उन्होंने सब बहिनों-भाइयों को सलाम, बुजुर्गों को आदाब और बच्चों को प्यार कहा है।

"हम लोग जब इस मिल में पहले पहल आयीं तो मिल को देख कर भौंचक रह गयी थीं। ऐसा लगता था, स्वप्न देख रही हों। मिल क्या है, पूरा शहर समझो! मिल में ऊंची-ऊंची इमारतों के ब्लाक हैं। ऊंचे-ऊंचे मकानों के सामने फूल-फुलवाड़ियां और बगीचे हैं। यहां के लूम देखो तो हैरान रह जाओ। आरम्भ में हमें जरूर बहुत

घबराहट हुई थी लेकिन ध्यान देने पर सब समझ में आने लगा है। समझ में आ जाय तो कुछ भी कठिन नहीं रहता। हमारे यहां भी ऐसे ही लूम और मशीनें लगेंगी। हमें अपनी मिल में सब कुछ मास्को की तरह बनाना और करना है।"

सरगी भी स्त्रियों की टोली से कुछ दूर बैठा जुलैखां को पत्र पढ़ते सुन रहा था। पत्र की सरलता और लिखने वाले के आत्म-विश्वास ने उस के मन को छू लिया। स्त्रियां खोजिया के पत्र में कई शब्द होस्टल, ब्लाक, बिल्डिंग, लूम आदि को समझ नहीं पा रही थीं। जुलैखां उन को समझाती जा रही थी। सरगी के मन में ख्याल आया—यही लोग जो होस्टल, ब्लाक, बिल्डिंग, लूम शब्दों से अपरिचित हैं, उन्हीं चीज़ों को बनाने का यत्न कर रहे हैं। इस में आश्चर्य क्या है ? रूसी मजदूर आज लेनिन और मार्क्स की पुस्तकें पढ़ कर तर्क करते हैं। कल तक वे लोग भी क्या और कितना समझ पाते थे ?

खोजिया ने निमांचा के साथियों की योजना के लिये शीघ्र सफलता की शुभ-कामना का संदेश भेजा था। सुनने वालों के हृदय गद्‌गद् हो गये। स्त्रियां और पुरुष उमंग कर किलकारियां मारने और तालियां बजाने लगे। कुछ जवान उत्साह में उछलने और अपनी टोपियां उछालने लगे। सरगी भी अपनी उमंग और उत्साह न रोक सका। उछल कर खड़ा हो गया और चिल्ला उठा—"ज़िन्दाबाद ! ज़िन्दाबाद !"

सरगी के कन्धे पर किसी की बांह आ पड़ी। उस ने घूम कर देखा। अरगाश ने उसे आलिंगन में ले लिया और गद्‌गद् स्वर में बोला—"भैया, कभी-कभी मैं झुंझलाहट में कुछ ऊटपटांग कह बैठता हूं। तुम बुरा नहीं मानना।"

"ऐसा तो सब से हो जाता है। क्या मैं नहीं कभी बक देता ?" सरगी का हृदय उमड़ आया था।

दोपहर के विश्राम के बाद काम आरम्भ हुआ तो लोगों में दूना उत्साह था। अब्दुस्समद की टोली के लड़के तो काम की घंटी बजने से पहले ही बेलचे, कुदालें और टोकरियां लेकर जुट गये थे।"

सूर्यास्त के बाद भी ऊसर धरती पर गर्द के बादल छाये रहे। लोगों के कपड़े और चेहरे भी गर्द से भरे पसीने से तर थे। अंधेरा हो जाने तक काम चलता रहा।

अंधेरा हो गया तो रेल के कारखाने के 'किशोर-कम्युनिस्ट-संघ' के लोगों ने बाघ के टीले की धरती को आनन-फानन में साफ कर डाला। लम्बे-लम्बे पटरे चारों ओर बिछा कर लोगों के बैठने के लिये बेंचें बना दीं। सब ओर अफवाह फैल गयी कि एक्टर-लोग आये हैं। बहुत बढ़िया गाना-बजाना होगा।

कुमरी ने अपने भाग की सोलह हाथ जमीन चौरस कर ली थी। दौड़ी-दौड़ी गयी और अपने दोनों लड़कों को ले आयी और उन्हें पटरों पर सब से आगे बैठा दिया।

बाघ के टीले पर बांस और तख्ते बांध कर छोटा सा रंगमंच तैयार कर दिया गया था। रंगमंच के चारों ओर मशालें जला दी गयी थीं। मशालों से चटर-चटर चिनगारियां फूट रहीं थीं। मिट्टी के तेल और चिथड़े जलने की गंध सांस में अनुभव हो रही थी। बूढ़े-जवान दर्शक कंधे से कंधे भिड़ाये पटरों पर जम गये थे। सब से आगे बच्चे रंगमंच को घेर कर चींटियों की तरह एक दूसरे से चिपके बैठे थे। गाने-बजाने और अभिनय करने वालों को बच्चों के ऊपर से उछल-उछल कर रंगमंच पर जाना पड़ा।

सरगी एक ओर दुविधा में खड़ा था। चाहता था, कि दिन भर में हुये काम की जांच-पड़ताल कर ले परन्तु साथी मजदूरों के समारोह में भाग लेना भी उचित जान पड़ रहा था। दिन भर की थकान के बाद विश्राम और थोड़े दिल-बहलाव के लिये रुचि भी स्वाभाविक थी। लोगों ने उसे बुला कर उस की दुविधा का अंत का दिया। एक ठेले पर आराम से बैठ सकने के लायक जगह दे दी। वह ठेले पर थकी हुई टांगें पसार कर बैठ गया।

किशोर-कम्युनिस्ट-संघ के साथी नीली कमीजें पहने मंच पर आ गये। वे अब भी दिन में काम के समय पहने हुये कपड़ों में ही थे। अलबत्ता कपड़ों से धूल झाड़ ली थी और हाथ-मुंह धो लिये थे। कार्य-क्रम में भाग लेने वाले गायक और अभिनेता लड़के-लड़कियों ने सीने पर लाल फीते टांक लिये थे। यह अभिनेताओं का चिन्ह था।

भीड़ उत्सुकता में स्तब्ध हो गयी। दो बच्चों का झगड़ा स्पष्ट सुनाई देने लगा :

"गीत गायेंगे।"

"हट्ट, पहले नाच होगा।"

"हिश-हिश ! चुप !"

पूर्ण सन्नाटा हो गया।

मंच पर खड़े अभिनेता फिर भी चुप रहे। लड़के दर्शकों से आंखें चुरा कर कभी इधर देखते, कभी आंखें दूसरी ओर घुमा लेते। कभी इस पांव का बोझ उस पांव पर बदल लेते। कुछ लड़कियां गर्दन झुकाये थीं, कुछ ने मशालों की चकाचौंध के बहाने चेहरा आस्तीन से छिपा लिया था। अभिनेताओं के संकोच और असुविधा से कई दर्शकों को हंसी आने लगी।

अब्दुस्समद रंगमंच पर आगे बढ़ आया। दूसरे अभिनेता भी उसके पीछे अध-गोले में सिमिट आये। अब्दुस्समद भी चुप था जैसे भूल गया हो कि दर्शक किस आशा में बैठे थे। अब्दुस्समद ने अपने साथियों से बहुत धीमे से कुछ बात की। उत्तर में साथियों में से किसी की गर्दन झुक गयी, किसी की गर्दन इनकार में हिली और किसी ने कन्धे सिकोड़ लिये।

सरगी को अभिनेताओं की परेशानी से असुविधा हो रही थी। सोच रहा था,

क्या बात है, क्या हो गया ? सरगी अपने कन्धे पर स्पर्श अनुभव कर घूम गया। अरगाश ने संकेत से उसे एक ओर बुला लिया। अरगाश के चेहरे पर परेशानी और माथे पर तेवर थे। सरगी ने आशंका की सिहरन अनुभव की।

"जुलैखां दीदी को कहीं देखा है ?" अरगाश ने सरगी से पूछा।

"नहीं तो।"

"उनका कुछ पता नहीं चल रहा। अजीब बात है। कहीं दिखायी नहीं दे रहीं। जाने कहां चली गयीं।"

अरगाश और सरगी स्वर दबा कर बहुत धीमे-धीमे बात कर रहे थे फिर भी लोगों ने उनकी बात सुन ली। सहसा सब ओर आतंक की लहर दौड़ गयी। मशालों के कांपते हुये मैले लाल प्रकाश में लोगों के चेहरों पर चिन्ता और आतंक झलकने लगा। अब्दुस्समद मंच के किनारे खड़ा था। मशालों का प्रकाश उसके मुख और आंखों पर पड़ रहा था। उसकी फैली हुई आंखें मशालों के प्रकाश को बेंध कर अंधेरे में देखने का यत्न कर रही थीं, कान कुछ सुन पाने के लिये थिरक रहे थे। भीड़ में बात-चीत और हंसी बिलकुल रुक गयी। सब ओर आशंकापूर्ण स्तब्धता छा गयी।

"जुलैखां कहां है ? कोई बताता क्यों नहीं ?" एक स्त्री का ऊंचा व्याकुल स्वर सुनाई दे गया।

याफिम भीड़ में दिखायी दिया। याफिम का चेहरा, उसकी आंखें, मूंछें सब पत्थर की मूर्ति जैसे कठोर लग रही थीं। हाथों की मुट्ठियां बंधी थीं। सब कुछ सुन्न, पत्थर की तरह निःस्पन्द।

याफिम यन्त्रवत कदम रखता भीड़ के बीच से मंच की ओर बढ़ गया। अभिनेता मंच पर से चले गये थे। याफिम मंच पर बिलकुल स्तब्ध अकेला खड़ा था। दर्शक भी उसकी ओर टकटकी बांधे स्तब्ध थे।

मशालों के कांपते हुये प्रकाश में दिखायी दिया—याफिम के गालों पर आंसू बह आये।

"भाइयो और बहनो !" याफिम का रुंधा हुआ स्वर सुनायी दिया, "दुश्मन ने हमारी जुलैखां दीदी को क़त्ल कर दिया है।

इक्कीसवां परिच्छेद

दूसरे दिन भी सूर्योदय से पहले ही लोगों की भीड़ मिल के लिये तैयार की जा

रही धरती की ओर चली जा रही थी। गली-बाजार सभी जगह घनी भीड़ परन्तु उदास और स्तब्ध थी। मौन भीड़ की टोलियां चुपचाप हवा में उड़ते बादलों की तरह ऊसर धरती की ओर बढ़ती जा रही थीं। उनके हाथों में शोक सूचक काले झण्डे थे।

बाघ के टीले में मंच पर एक बड़ा ताबूत रखा था। ताबूत पर फूल और मालाओं के ढेर थे। फूलों के बीच में जुलैखां का रक्तहीन सफेद चेहरा दिखाई दे रहा था। पलकें मुंदी हुई थीं परन्तु चेहरा सजीव जान पड़ता था। ज़रा खुले हुये होंठों से लगता था कि अभी बोल पड़ेगी। महीन भौंवें ज़रा उठी थीं, जैसे कुछ सुन रही हों। चेहरे पर अब भी सहायता और करुणा की झलक, किसी को सांत्वना देते-देते मौन हो गयी हो।

जुलैखां के ताबूत के सिरहाने जुलैखां की वृद्धा माता और अनाखां बैठी थीं। बुढ़िया के श्वेत बर्फ जैसे सफेद बालों पर काला रुमाल बंधा था। वह अनाखां की गर्दन में बांह डाले सहारा लिये थी। अनाखां बुढ़िया का सिर अपने सीने पर दबाये बांह से उसकी पीठ को सहारा दिये थी। खुश्क लाल आखें जुलैखां के चेहरे पर लगी थीं। होंठों को बार-बार दांतों से दबा लेती जैसे हृदय में उठती टीस को वश किये हो। ताबूत के पैताने बशारत खड़ी थी, उसका सिर बिलकुल उघाड़ा था। चेहरा बहुत दृढ़ और गम्भीर। रात भर में ही उसका सब शैशव समाप्त होकर कठोरता आ गयी।

अन्तिम सलाम करने के लिये मौन लोगों की पंक्तियां जुलैखां के ताबूत के सामने से गुजरती जा रही थीं। मौन भीड़ आदर से सिर झुका कर श्रद्धा के फूल चढ़ाती जा रहीं। आस-पास की धरती फूलों से भर गयी थी। बाघ के टीले के चारों ओर भीड़ का समुद्र बढ़ता ही जा रहा था। भीड़ के आगे स्त्रियों की बहुत बड़ी संख्या थी। स्त्रियों में से कभी-कभी सिसकियां और दबे-दबे रोने का स्वर सुनाई दे जाता और फिर सन्नाटा छा जाता। बच्चे भी उदासी से मौन और सुन्न अपने बड़े-बूढ़ों से चिपके हुये थे।

आपस में कन्धे जोड़े सिमिटी हुई स्त्रियों का एक दल ताबूत के समीप आकर खड़ा हो गया। पांचों स्त्रियां बुरकों में थीं। अनाखां ने पहचाना, किसी दूर गांव की वह स्त्रियां एक बार जुलैखां से मिलने के लिये उस के घर पर आयी थीं। स्त्रियों में से सब से बूढ़ी ने अपनी नकाब हटा दी और बाहें फैला कर ताबूत पर गिर पड़ी। बुढ़िया दहाड़ मार कर रो पड़ी। अपना विलाप रोक नहीं पा रही थी। बहुत देर तक रोती रही। किसी को उसे रोकने का हौंसला नहीं हुआ।

दूसरा पहर जा रहा था। सूर्य ठीक सिर पर पहुंच गया था। याफिम और अरगाश आकर अनाखां के पीछे खड़े हो गये।

अनाखां उठ कर सीधी खड़ी हो गयी। अपने सिर का रूमाल उतार कर हाथ में

ले लिया। सन्नाटा मारे भीड़ में सिहरन की लहर दौड़ गयी।

"साथियो, मज़दूरो, ईमानदार भाइयो और बहनो!" अनाखां ने साधारण स्वर में सम्बोधन किया। सन्नाटे में उस की आवाज स्पष्ट थी, "प्यारी बहनो देख लो, आज कितने लोग हमारी प्यारी, निर्भय बहिन जुलैखां को आखिरी सलाम देने आये हैं। आज तो मालूम हो गया कि लोग हमारी बहन का कितना आदर करते थे? उन्हें कितना प्यार करते थे? आप अपनी आंखों देख रहे हैं। जुलैखां बहिन ने किस की मदद नहीं की? वह मज़दूर भाई-बहनो, सच्चे और ईमानदार लोगों की सब से बड़ी सहायक थीं। हमारे यहां के लोग सब कुछ जानते हैं। उन्हों ने ही सरकारी कारखाने बनाये, सहकारी दुकानें खुलवाईं, नया स्कूल बनवाया और इस मिल का भी काम आरम्भ किया। उन्हों ने इस नगर के लिये क्या नहीं किया? आज निमांचा का मालिक राव कुदरतुल्ला कहां है? सेठ मतकौअल कहां गया? हम गरीबों का खून चूसने वाले दूसरे लोग आज कहां हैं? बच्चा-बच्चा जानता है कि हमारी अवस्था कितनी सुधर गयी है। अब चोरों और बेईमानों का ज़ोर नहीं रहा है और यह सब जुलैखां बहिन के साहस और सहायता से हुआ। उन्हों ने हम लोगों के लिये अपना तन-मन दे दिया था और आखिर में अपनी जान भी हमारे लिये दे दी।" अनाखां एक कदम आगे बढ़ गई, "दुश्मन ने हमारी उस बहिन को कत्ल कर दिया है।"

भीड़ से मिली हुई एक गहरी आह उठी मानो पूरी भीड़ ने एक सांस में आह भर ली हो।

अनाखां ने अपना सिर ताबूत के ऊपर झुका दिया :

"प्यारी बहिन, तुम्हारे लिये हमारा आदर और प्यार सदा बना रहेगा। तुम्हारे सामने प्रतिज्ञा करती हूं···साथियो, हम सब प्रतिज्ञा करते हैं कि जुलैखां बहिन ने जिस काम को आरम्भ किया है, उसे हम जी-जान से पूरा करेंगे। हम इस मिल को पूरा बनायेंगे। हम अपना जीवन बदल डालेंगे!" अनाखां ने क्षण भर आंख मूंद कर गहरा सांस लिया, "प्यारी बहिन, हमारा मन शोक में उदास है। बहिन हमें क्षमा करो हम तुम्हारी रक्षा नहीं कर सके परन्तु हम तुम्हारी कुर्बानी से डरेंगे नहीं। हम पीछे कभी नहीं हटेंगे। विश्वास रखो, हम तुम्हारे काम को पूरा करेंगे। हमें सदा ध्यान रहेगा कि तुम हमारे काम को देख रही हो, तुम हमारे साथ हो, हमारी सहायता कर रही हो। हमारा आखिरी सलाम कबूल करो।" अनाखां ने भीड़ की ओर नज़र उठाई, हम अपनी मां जुलैखां को, प्यारी बहिन जुलैखां को आखिरी सलाम करते हैं।"

अनाखां सीधी खड़ी हो गयी। उस ने बंधी हुई मुट्ठी ऊपर उठा ली। उस का स्वर ऊंचा हो गया—"कातिलों पर लानत! हमारी बहिन जुलैखां जिन्दाबाद!"

"ज़िन्दाबाद।" भीड़ ने सहस्रों कंठों से अनाखां की ललकार को दोहरा कर उस

का समर्थन किया।

बुरके में लिपटी एक स्त्री तावूत की ओर बढ़ गई। स्त्री ने चेहरे से नकाब खींच कर फेंक दी। लोगों ने पहचाना कुमरी थी। कुमरी का चेहरा आंसुओं से भीगा हुआ था। कुमरी ने अनाखां की ओर बांहें फैला दीं और बोल उठी :

"अनाखां बहिन, हम जानते हैं, हमारे दुश्मनों ने दीदी जुलैखां का कत्ल किया है। उन्होंने हमारी सब से प्यारी, लायक बहिन का कत्ल किया है। हम सब समझते हैं। अल्लाह करे जालिमों की आंखें फूटें, वह निर्बंस हो जायें! कौन नहीं जानती कि उसने ज़ालिमों के डर से अपना मुंह नहीं छिपाया! तुम सबको क्यों नहीं बताती कि जुलैखां बहिन ने निर्भय, मुंह उघाड़ कर मौत का सामना किया।

"दुश्मन को ही डर कर अपना मुंह छिपाना पड़ा। मैं भी नकाब और बुरका फेंकती हूं, जिसमें हिम्मत हो मुझे कत्ल करे!" कुमरी ने अपना बुरका सबके सामने फाड़ डाला और लपेट कर धरती पर पटक दिया। उसके आधे सफेद आधे काले खिचड़ी बाल फैल गये। खुले बाल और आंसुओं से भरी आंखें भयंकर लग रही थीं। कुमरी ने ललकारा, "ज़ालिमों में हिम्मत है तो सामने आयें! जिसमें हिम्मत हो मुझे कत्ल करे!"

"बहिन!" एक और स्त्री की आंसू भरी आवाज़ सुनायी दी, "मैंने भी बुरका छोड़ा!" कुलनिसा हांफती हुई कुमरी के साथ जा खड़ी हुई, "बहिनो, सबको मालूम है, जुलैखां बहिन ने मेरे लिये क्या-क्या किया! मैं अपढ़-गंवार! मैंने उसकी बात नहीं सुनी हाय बहिन हमें छोड़ गयी। अब हमारी फिक्र कौन करेगा! उन्होंने मेरी जान मतकौअल से बचाई तो समझाया था—कुलनिसा, अब तुझे किसका डर है! तू अपना मुंह क्यों छिपाये है! तब मेरी हिम्मत नहीं पड़ी। मैं बुरके में मुंह ढक कर उन्हें कैसे सलाम करूं? मैं अब भी उनका कहना नहीं मानूंगी?"

कुलनिसा ने अपना बुरका और नकाब उतार कर कुमरी के बुरके पर फेंक दिया और क्रोध में उस पर थूक दिया—"लानत! लानत!"

कुलनिसा ने क्रोध और आवेश में अपना बुरका और नकाब तो फेंक दिये परन्तु बुरका पहिने स्त्रियों की ओर लौटी तो जीवन भर के अभ्यास के कारण लज्जा और संकोच से सिमिट गयी, उस की गर्दन झुक गयी। उसी समय उस के गांव की बुढ़िया ने कुलनिसा को बांहों में लेकर सब लोगों के सामने उस का सिर चूम लिया। कुलनिसा को फिर तावूत की ओर ले गई। बुढ़िया ने तावूत को सिर झुका कर सलाम किया। फिर गर्दन झुका कर सब लोगों को सलाम करके बोली :

"मैं इतनी बूढ़ी हो गई, आप लोग मेरे बेटे-बेटियों की तरह हैं। मैंने एक दिन जुलैखां की बात सुनी थी। उस में बहुत हौसला था। वह सच कहती थी। जुलैखां ने

लेनिन के दर्शन किये थे, लेनिन से हाथ मिलाया था। उस ने हमें लेनिन की बात बताई थी। आज उस की मुताबरिक आंखें बन्द हो गयीं, उस का मुताबरिक हाथ भी ठंडा हो गया है। मेरी इतनी उमर हो गयी। मुझे क्या लालच है, मुझे किस का डर है ? मैं आज उसे आखिरी सलाम कर रही हूं तो मौत से नहीं डरूंगी !"

बुढ़िया ने अपना धूल से भरा छीजा हुआ, पुराना बुरका उतार कर धरती पर फेंक दिया। बुढ़िया के चेहरे पर अब भी बीते हुये सौन्दर्य का ओज था। उसने अपना सिर ताबूत में जुलैखां के पांव पर रख दिया और आंसूओं का घूंट निगल कर बोली :

"बेटी, तू भरी जवानी में जा रही है। तेरे इकबाल का सितारा बुलन्द रहेगा ! हम तेरी बातें सदा याद रखेंगे !"

भीड़ में से बहुत सी स्त्रियां अपने बुरके और नकाब गोल-मोल करके जुलैखां के ताबूत की ओर फेंकने लगीं। देखते-देखते काले बुरकों का ढेर लग गया। चारों ओर से ललकारें सुनायी देने लगीं :

"जला दो, आग लगा दो !"

'इस कूड़े में, इन काले कफनों में आग लगा दो !"

"अभी जलाओ इन्हें, हमारे सामने जलाओ !"

"लानत है इस जुल्म पर ! इस में आग लगाओ !"

नज़ाकत ताबूत के पास आ गयी। उसके सिर पर बुरका नहीं था। उसकी चुटिया में गुंथे घुंघरू धूप में चमक रहे थे।

"बहिनो !" नज़ाकत की महीन आवाज़ भीड़ के शोर में सुनायी दी ! नज़ाकत अनाखां की बांहों में सिमटी हुई जुलैखां की मां के पांवों पर झुक गयी, "अम्मा, मैं तुम्हें सलाम करती हूं ! अम्मा, हौसला रखना, घबराना नहीं ! जुलैखां बहिन हम सबकी बड़ी बहिन थी। हम सब तुम्हारी बेटियां हैं। हम सब तुम्हारी देख-भाल और खिदमत करेंगी। जो जुलैखां बहन ने किया है हम भी करेंगी !"

अब्दुस्समद ने एक मशाल जला कर बुरकों के ढेर पर फेंक दी। बशारत ने भी एक मशाल जलाई और बुरकों पर फेंक दी। किसी ने ढेर पर बहुत सा मिट्टी का तेल छोड़ दिया। बुरकों और नकाबों के ढेर से बहुत ऊंची ज्वालाएं लपकने लगीं। काला-काला धुआं आकाश की ओर उठ चला। दूसरी स्त्रियों का भी साहस बढ़ा। जलते हुये ढेर में और भी बुरके और नकाब पड़ने लगे।

बुरके और नकाब फेंक देने वाली स्त्रियां उघाड़े मुंह आगे बढ़ गयीं। जिन स्त्रियों ने बुरके और नकाब नहीं फेंके थे पीछे ही रहीं परन्तु वे भी पंजों पर उचक-उचक कर बुरकों की होली का तमाशा देख रही थीं।

कई स्त्रियों को जुलैखां से और घटना से कोई मतलब नहीं था। वे सहानुभूति में

नहीं कौतूहल में आ गयी थीं। वे चुपचाप भीड़ से खिसक कर अपने घरों की ओर चल दीं। कुछ कट्टर विश्वासी लोग एक ओर खड़े इस दृश्य से क्रोध में उबल रहे थे परन्तु उस समय उन्हें बोलने का साहस नहीं हुआ।

बुरकों के ढेर की आग प्रायः समाप्त हो रही थी तो अकस्मात मास्टर नैमी तावूत की ओर बढ़ आया। उस का बेंत हाथ में नहीं था। दोनों हाथों से आग से उड़ती राख को आंखों के सामने से हटाता जा रहा था।

"भाइयो और बहनो!" नैमी ने भर्राये हुये तीखे स्वर में गम्भीरता से कहा, "आज हम ने यहां बुरके और नकाब जला दिये हैं। इस का मतलब है, आज हम ने अपनी रूढ़ियों और परम्पराओं को भी जला दिया है।"

अनाखां ने मन में असह्य ग्लानि अनुभव की। वह नैमी से परे हट गयी। अरगाश ने दांत पीस लिये—दगाबाज सांप!

नैमी ने सुन लिया था। उस ने घूम कर पीछे देखा। उसे कंपकंपी आ गयी। उस ने खांस कर अपने आप को संभाला:

"भाइयो और बहनो, मैं कहना चाहता हूं कि दुश्मनों पर लानत है। वे बरबाद होंगे। स्वतंत्रता और ज्ञान का प्रकाश बढ़ता जायेगा।" नैमी तुरन्त भीड़ में से अदृश्य हो गया।

बुरकों की होली की आग बुझ गयी और बुरकों की राख हवा से इधर-उधर फैलने लगी। भीड़ तावूत के चारों ओर सिमिट गयी। लोगों ने जुलैखां को आदर और श्रद्धा से कन्धों पर उठा लिया। सब ओर स्तब्धता थी। सब लोग शोक में गर्दनें झुकाये धीमे-धीमे चल रहे थे परन्तु एकता के नये सूत्र ने उन्हें एक साथ बांध दिया था। निमांचा में यह दृश्य अभूतपूर्व था।

इंजीनियर सरगी ने भावी मिल के बड़े द्वार के सम्मुख एक स्थान पर चिन्ह बना दिया था। उसी स्थान पर जुलैखां को समाधि दे दी गयी। सूर्य जुलैखां के अंतिम दर्शन के लिये ही क्षितिज पर अटका हुआ था। लोग जुलैखां को समाधि देकर लौटने लगे तो सूर्य भी नीचे उतर गया।

बाइसवां परिच्छेद

तुरसाना की हालत वैसी ही चली जा रही थी, कोई सुधार नहीं जान पड़ता था। उस के शरीर में पीड़ा तो कहीं नहीं थी परन्तु मुख से कोई शब्द नहीं निकल पाता

था। अनाखां के धैर्य का सूत्र क्षीण होता जा रहा था।

अनाखां अब भी समय मिलने पर घर में टोपियों पर कसीदा करती थी। तुरसाना कभी मां के पास बैठ उस के हाथ से टोपी और सुई-धागा लेकर कढ़ाई करने लगती। ऐसा महीन सुन्दर फूल काढ़ देती कि देखने वाले प्रशंसा किये बिना न रह सकते। उस के काढ़े फूल भी उस के गीतों की लय की तरह सूक्ष्म और मर्मस्पर्शी होते थे। कसीदे में उस का मन खूब लगता था परन्तु कभी अपने कसीदे की ओर आंखें लगाये निश्चल रह जाती और उस की आंखें भर आतीं। लड़की अपने आंसू मां से छिपाये रहती थी इसलिये अनाखां बेटी के आंसू देख भी लेती तो अनदेखा कर देने के लिये मुंह फेर लेती। मां अपने आप को वश न कर पाती तो आंगन में निकल जाती या रसोई में जाकर खूब फूट-फूट कर रो लेती। मां को बेटी का सिसकियां और आहें दबा कर मौन रोते रहना कैसे सह्य होता! बच्ची बड़े बुजुर्गों से भी अधिक सह रही थी—जाने कितने गहरे दुःख और चिन्ता में डूबी रहती थी। अनाखां व्याकुल हो जाती—इसे क्या हो गया है!

तुरसाना घर से प्रायः ही नहीं निकलती थी, न किसी के सामने होती थी। किशोर-कम्युनिस्ट-संघ के लड़के-लड़कियां उसे देखने के लिये आ जाते तो वे भी अधिक नहीं ठहर पाते थे। वे उस के मौन से आतंकित हो जाते। उस का दुःख उन के लिये असह्य हो जाता। तुरसाना को अपने साथियों की याद तो आती थी परन्तु उन के आने पर अपने विवश मौन से संकोच और असुविधा भी अनुभव करती। बशारत बहिन की अवस्था से दुःखी होकर किसी न किसी बहाने घर से चल देती। उसे छोटी बहिन की आंखों में कातर उपालम्भ की वेदना दिखाई देती—तुम तो खूब स्वस्थ, प्रसन्न, उत्साह से भरी हो परन्तु मैं…। बशारत छोटी बहिन के लिये अपना दुःख उस के सामने प्रकट हो जाने के डर में उसे प्यार से पुचकार भी न पाती। तुरसाना यह सब समझती थी।

तुरसाना की चिन्ता में अनाखां बिलकुल खोई-खोई सी रहने लगी। सहकारी में काम करते समय भी मस्तिष्क में बेटी की चिन्ता समाई रहती। मन व्याकुल हो उठता तो रह न पाती, घर की ओर चल देती। मन की गहराई में कहीं अब भी आशा बनी हुई थी कि घर के दरवाज़े में कदम रखते ही, तुरसाना की प्यारी-मीठी आवाज़ 'मां' सुन पाये।

बशारत मिल के इमारती काम से खूब थकी हुई, धूल से भरी लौटती। हाथ-पांव पर खरोंचें लगी रहतीं। आते ही बोलने लगती। बशारत को सदा ही कहने के लिये बहुत कुछ रहता था। आधी रात तक बात करती रह सकती थी परन्तु तुरसाना के सामने बशारत और मां अधिक न बोलतीं। तुरसाना मां और बहिन की बातें बहुत उत्सुकता और ध्यान से सुनती थी। सुनते-सुनते स्वयं न बोल सकने की वेदना से उस

की आंखें कातर हो जातीं। कभी-कभी तो घर में घंटों सन्नाटा बना रह जाता।

खोजिया का पत्र आया था। बूढ़े प्रोफेसर साहब की सिफारिश पर ताशकंद के संगीत-विद्यालय ने तुरसाना को स्थान देना स्वीकार कर लिया था। अनाखां और बशारत का मन कट-कट कर रह जाता। तुरसाना को यह समाचार कैसे सुनायें? उसे कैसा लगेगा? दोनों ने चुप रहने का ही निश्चय कर लिया।

तुरसाना ने अपनी एक पुरानी गुड़िया ढूंढ़ निकाली थी। उस गुड़िया को वह बहुत दिन पहले भूल चुकी थी। उस गुड़िया के लिये नये कपड़े सीने लगी। गुड़िया गूदड़ भर कर सी हुई खूब मोटी-गदबदी थी। कांच के मनकों की मोटी-मोटी आंखें टकी हुई थीं। गाल लाल सेब जैसे खूब फूले हुये थे। तुरसाना का चेहरा पीला था और दुबले-दुबले हाथ-पांव पर महीन-महीन नीली नसें झलकती रहती थीं। तुरसाना अपनी गुड़िया में व्यस्त रहती। गुड़िया को नयी पोशाक पहना दी। गुड़िया के कहना न मानने या शरारत करने पर उसे थप्पड़-चांटा लगा देती। उसे धमकाती और समझाती भी थी। लड़की के होंठ निशब्द धीमे-धीमे हिल जाते थे। गुड़िया अपनी गोल-गोल आंखों से लड़की की ओर टक-टकी लगाये सतत् मुस्कान से हंसती रहती। गुड़िया और उस की छोटी मां दोनों ही गूंगी थीं।

एक दिन अनाखां का धैर्य टूट गया, अपने आपको रोक न सकी। बेटी को सीने पर दबा कर जोर से रो पड़ी।

"बोल-बोल! मेरी नन्हीं बोल! एक बार कह दे मां! मेरी बात सुन, एक बार मां कह दे! जरा कोशिश तो कर! मेरी नन्हीं बुलबुल एक बार तो बोल दे!"

तुरसाना मौन मां की ओर देखती रह गयी। उस की आंखों में भय और कातरता आ गयी। पसीना आ गया। सांस तेज हो गयी। लगा कि बहुत यत्न कर रही थी। उस के होंठ हिले परन्तु शब्द न निकल सका। लड़की की आंखों से मोटे-मोटे आंसू टपकने लगे।

अनाखां ने अपने आप को सम्भाला। बेटी को घुटने पर बैठा कर उस के आंसू पोंछ दिये और बोली।

"वाह-वाह रोने की क्या बात है? तू जल्दी ही बिल्कुल ठीक हो जायेगी मेरी बिटिया! खूब बोलेगी, चहकेगी, खूब गायेगी! मेरी नन्ही अब नये स्कूल में जायेगी। वहां तेरी सहेलियां और तेरे दोस्त तुझे देख कर कितने खुश होंगे!" अनाखां बिना किसी आशा के बेटी को विश्वास दिलाने लगी। बच्चा मां का विश्वास कैसे नहीं करेगा!

तुरसाना बचपन से ही बड़ी बहिन की अपेक्षा अधिक नाजुक थी। मां के भावों और चिन्ताओं को बड़ी बहिन की अपेक्षा जल्दी भांप लेती थी। अनाखां के लिये यह

भी चिन्ता का कारण था। उसे बहुत सावधान रहना पड़ता। तुरसाना का ढंग अपनी आयु की अपेक्षा अधिक दाना था। जरा-जरा सी बात उसे लग जाती थी और मन की बात को छिपाये रहती थी इसलिये अनाखां और भी अधिक चिन्तित रहती—लड़की जाने क्या-क्या सोचा करती है ? कितनी व्यथा मन में लिये है ?

जिस दिन जुलैखां का कत्ल हुआ और जुलैखां को समाधि दी जाने के बाद अनाखां घर लौटी तो तुरसाना ऐसी नजरों से मां की आंखों में देखती रही कि उस से बात छिपाये रहना असम्भव हो रहा था। अनाखां घर में जिधर जाती तुरसाना उस के पीछे हो लेती और मौन प्रश्न से मां की आंखों में देखने लगती। अनाखां ने बेटी की नज़रों से बच सकने के लिये उसे गोद में लेकर सीने पर चिपका लिया। लड़की मां की बांहों को धीरे से हटा कर मां के सामने हो गयी और फिर मां की आंखों में देखने लगी। उस की आंखों का मौन प्रश्न और भी गहरा हो गया था :

"तुम बताती क्यों नहीं ? मुझसे क्यों छिपा रही हो ? मैं जानती हूं कि कुछ बहुत ही अनिष्ट हो गया है।"

अनाखां बेटी को बहकाने का साहस न कर सकी परन्तु वह सत्य भी लड़की को कैसे बता दिया जा सकता था।

अनाखां के लिये वह रातें असह्य यंत्रणा की थीं। उसे नींद नहीं आ रही थी। कुछ देर के लिये आंख लग भी जाती तो झटका सा पाकर नींद टूट जाती। वह अधमुंदी आखों से साथ सोई बेटी की ओर देखने लगती। तुरसाना भी निश्चल थी, सांस समगति से चल रही थी। अनाखां सांत्वना से बेटी की सांस सुनती रही। दूसरी रात मां को पता लगा—तुरसाना भी सो नहीं रही थी। बीच-बीच में आंखें खोल कर मां को देख लेती थी।

अनाखां ने बेटी को बहलाने के लिये बात बनाई—नन्हीं, मेरा जी अच्छा नहीं है। सहकारी कारखाने में मुझे सर्दी लग गयी थी। अनाखां यह झूठ बोल कर भी पछतायी। समझ गयी, तुरसाना मां का मन रखने के लिये बन गयी थी कि उसने मां का विश्वास कर लिया था।

अनाखां अतल भय और चिन्ता में डूबी जा रही थी। लड़की भांप गयी थी कि उससे स्थिति छिपायी जाती थी, उसे बहकाया जाता था। अनाखां छिप कर बहुत रोयी—इस लड़की का क्या करूं ?

तुरसाना के मन में सन्देह बैठ गया था। घर में जो भी कोई आता तुरसाना उस की ओर सन्देह से देखती। एक दिन याफिम उसे देखने के लिये आया। उसने तुरसाना को अपने सामने बैठा लिया और बहुत उत्साह से बताने लगा—"जानती हो कब्रिस्तान के सामने की धरती में क्या हो गया है ! सब धरती चौरस हो गयी है। बड़ी भारी

इमारत बनायी जाने की तैयारी है। स्त्रियों की टोली की मेट बशारत है। वह बहुत जोर से काम कर रही है।" तुरसाना टकटकी बांधे याफिम की ओर देखती रही। उसकी आंखों में अविश्वास था। उसकी आंखें कह रही थीं—सच बताओ! सच बताओ!

अनाखां बेटी का भाव समझ रही थी। बेटी की पीठ पीछे होकर उसने उंगली होंठों पर रख कर बेटी के बोल न सकने के प्रति संकेत किया और अपनी असहाय विवशता प्रकट करने के लिये हाथ फैला दिये। तुरसाना सहसा घूम गयी, उसने मां का संकेत देख लिया और सहम गयी।

एक संध्या काफी विलम्ब हो चुका था। अनाखां तुरसाना को बिस्तर में लिटा रही थी तो इंजीनियर सरगी अकस्मात आ गया। एक दूसरा आदमी भी उसके साथ था। सरगी के साथ आये आदमी की दाढ़ी खूब घनी, बड़ी और खूब काली थी।

बशारत ने मां को बताया—"यह हमारे इंजीनियर सरगी लवोविच हैं।"

सरगी ने गर्दन के संकेत से सलाम कर अपने साथी का परिचय दिया—"यह मेरे मित्र डाक्टर विकेन्ती फियोदोरोविच हैं। यह स्नायविक रोगों के खास डाक्टर हैं। मैं इन्हें तुरसाना को दिखाने के लिये ले आया हूं।"

अनाखां को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने डाक्टर को बहुत आदर से बैठने के लिये कहा। डाक्टर ने अनाखां को संकेत से चुप करा दिया :

"नहीं-नहीं माफ कीजिये, मैं बैठूंगा नहीं।" डाक्टर ने आते ही एक नज़र में तुरसाना को देख लिया था। तुरसाना की ओर से आंखें हटा, उसे सुना कर बहुत साधारण ढंग में बोला, "मैं बैठूंगा नहीं। मेरे पास समय नहीं है। मैं तो बहुत जल्दी ही बीमारी दूर कर देता हूं। दर्द भी नहीं होती है। बीमार को कुछ पता भी नहीं चलता। मैं बैठना नहीं चाहता। मैं बैठता हूं तो मेरी दाढ़ी बढ़ने लगती है। अच्छा थोड़ी देर बैठ जाता हूं, जरा बढ़ जायगी तो क्या!"

अनाखां मुस्करा दी। बशारत को हंसी आ गयी। उसने मुंह छिपा लिया।

तुरसाना टकटकी लगाये डाक्टर की ओर देख रही थी। उसकी आंखों में कौतूहल की चमक आ गयी थी।

डाक्टर उठ कर बोला—"मैं तो उन्हीं लोगों का इलाज करता हूं जो बहुत दिन से बीमार होते हैं, जिनका इलाज दूसरे डाक्टर नहीं कर पाते। तुम ने यह किताब देखी है?" डाक्टर ने अपनी जेब से एक मोटी चमड़े की जिल्द में बंधी पुस्तक निकाल ली। पुस्तक के पृष्ठों के किनारे सुनहरी थे, "मैंने जिनका इलाज किया है उनके नाम इस पुस्तक में लिखे हैं। एक-एक पृष्ठ पर दस-दस के नाम हैं। सौ पृष्ठ हैं। तुम गिन सकती हो, मैंने कितने आदमियों का इलाज किया है?"

तुरसाना उठकर अपने बिस्तर पर बैठ गयी थी और संकोचपूर्ण कौतूहल से डाक्टर की विचित्र पुस्तक की ओर देख रही थी। चेहरे से स्पष्ट था कि मन ही मन गिनने का यत्न कर रही थी। गिन लिया तो उसने डाक्टर की ओर विस्मय और आदर से देखा।

डाक्टर ने पुस्तक का एक पृष्ठ खोल कर कहा—"अच्छा पहले मैं लड़की का नाम लिख लूं तो इसका इलाज करूं। क्या नाम है इसका ?"

"तुरसाना" बशारत ने बताया।

"पूरा नाम बताओ, किसकी लड़की है।"

"तुरसाना साबिरा।"

"सा-बि-रा" डाक्टर ने बोल कर लिख लिया, "अच्छा, साबिरा ! वही बहादुर साबिर जिसने क्रान्ति में शत्रुओं को मार भगाया था। उसकी तो बहुत बहादुरी सुनी है। साबिर की बेटी बीमार है ? अरे भाई तो जल्दी करो ! कहां है लड़की ?"

"डाक्टर साहब यही तो है। सामने बिस्तर पर बैठी है।"

डाक्टर ने विस्मय से तुरसाना की ओर देखा और सिर हिला कर बशारत से कहा—"यह तुरसाना साबिरा है ? तुम ने खामुखाह इसका नाम लिखा दिया; क्या जरूरत थी ?"

"क्यों डाक्टर साहब !"

"अरे यह तो बिलकुल चंगी है।" डाक्टर झुंझलाया, "इसे तो कोई तकलीफ नहीं है। तुम लोग खामुखाह झूठ बोलते हो !"

अनाखां और बशारत की आंखें मिलीं। दोनों कुछ समझ नहीं पा रही थीं।

"डाक्टर साहब जरा देख तो लीजिये !"

"क्या देख लूं ? सब साफ दिखाई दे रहा है। बेचारी बहुत डर गयी थी। साफ दिखाई दे रहा है। मैं इतना सा था तो मैं भी एक बार बहुत डर गया था। डर जाने से कोई बीमार हो जाता है ? डर तो कभी-कभी सभी को लगता है।"

डाक्टर ने अपनी किताब जेब में रख ली। तुरसाना बहुत ध्यान से डाक्टर की ओर देख रही थी। साधारण अभ्यास के कारण डाक्टर भीतर आया था तो तुरसाना दढ़ियल को देख कर जरा डर गयी थी। उसे कनखियों से देख रही थी। अब उस का दूसरा ही भाव था—मैं बीमार न सही। चाहे मैं बिना बीमार के ही पड़ी हूं परन्तु यह आदमी ठहरे, अभी न जाये।

सरगी ने डाक्टर से कहा—"भैया डाक्टर, अब तुम आये हो तो लड़की को देख तो लो !"

"क्या देख लूं ? मैं ने सब देख लिया है। इसे कुछ नहीं है। बहुत दिन से बोली

नहीं है इसलिये बोलती नहीं है।"

तुरसाना के होंठ खुल गये, उस की जीभ जरा हिली।

डाक्टर ने कुछ सोच कर कहा—"अच्छा, आ गया हूं, तुम लोग बार-बार कह रहे हो तो मैं इसे देख लेता हूं। लड़की को सब लोगों के सामने परेशानी होगी। मैं किसी के सामने इलाज नहीं करता। तुम लोग बाहर चले जाओ! हम बुलायेंगे तो आ जाना।"

अनाखां, बशारत और सरगी बाहर चले गये। सरगी ने अपनी नयी कमीज़ का कालर सीधा करते हुये बहुत विनय से अनाखां से बात की—"आप का परिचय पाने की बहुत इच्छा थी। आप के विषय में बहुत कुछ सुना है। जुलैखां बहन की अर्थी ले जाते समय आप ने जो कुछ कहा, बहुत ही प्रभावशाली था।"

अनाखां के कान भीतर डाक्टर की ओर लगे थे। उस ने संकोच से कह दिया—"नहीं इंजीनियर साहब, मैंने तो कोई खास बात नहीं कही।"

"आप ने जो कुछ कहा, कभी भूल नहीं सकता।" इंजीनियर ने आदर से आग्रह किया, "जुलैखां बहिन को हम कभी नहीं भूल सकते। आप भी उन्हीं की तरह काम कर रही हैं।"

अनाखां उत्सुकता में देखने के लिये खिड़की की ओर बढ़ गयी।

सरगी ने अनाखां को रोक लिया—"आप कोई चिन्ता न कीजिये। डाक्टर बहुत ही लायक और भला आदमी है। मुझे तो इसी ने बचा लिया वरना मैं अकेलेपन और उदासी से पागल हो जाता। फिर मुझे बचा लेने वाली थीं, जुलैखां। खैर, उन्हें आप से अधिक कौन जानता था।"

अनाखां बोली—"धन्यवाद है इंजीनियर साहब! सब से आप की प्रशंसा ही सुनी है। आप के मित्र डाक्टर साहब मेरी लड़की को बचा लें तो मैं जन्म भर आप की कृतज्ञ रहूंगी। मैंने भी आप की बहुत प्रशंसा सुनी है।"

सरगी के चेहरे पर संकोच की मुस्कान आ गयी—"मैं तो प्रशंसा के लायक नहीं हूं। बिलकुल पुराने ढंग का आदमी हूं परन्तु मुझे जुलैखां, याकिम भाई और आप जैसे लोगों की संगति मिल गई है इस के लिये मैं अपने भाग्य की सराहना करता हूं। मैं भाग्य के प्रति अकृतज्ञ नहीं हूं।"

इंजीनियर की आत्मीयता भरी सरलता अनाखां के मन को छू गयी। उस ने कह दिया—"मुझे तो आप के प्रति अरगाश का व्यवहार अच्छा नहीं लगता।"

"नहीं-नहीं यह बात नहीं है।" सरगी तुरन्त बोला, "पहले मुझे भी ऐसा लगता था, मुझे भी खटकता था। अरगाश में अभी जवानी की गरमी है परन्तु आदमी बहुत सच्चा है। मैं जरा सुस्त, ढिलमिल सा आदमी हूं परन्तु मजबूत आदमियों का बहुत

आदर करता हूं। वह जरा जल्दबाज है पर दिमाग अच्छा पाया है। हड़बड़ी में न हो तो बात को खूब समझ भी लेता है। उस में बहुत गुण हैं। आप की बड़ी लड़की भी तो बिलकुल वैसी ही है। बहुत मेहनती है, इसीलिये लोग उस का आदर करते हैं। आप का ही प्रभाव है।"

अनाखां ने मुस्करा कर बशारत की ओर देखा। लड़की का चेहरा लज्जा से लाल हो गया था।

अनाखां ने कहा—"सब कुछ आप लोगों की कृपा से है। सब से अधिक उत्तरदायित्व तो आप पर ही है।"

सरगी भी झेंप गया। संकोच से बोला—"यह केवल आप का अनुग्रह ही है। बशारत भी मुझे बहुत मानती है।"

"अच्छा ही है, शिकायत का अवसर नहीं देती।" अनाखां ने संतोष से बेटी की ओर देख लिया।

डाक्टर ने बरामदे में कदम रक्खा तो अनाखां उस ओर दौड़ पड़ी।

"आहिस्ता-आहिस्ता, घबराइये नहीं!" डाक्टर अपनी दाढ़ी हाथ में लेकर बोला, "आप भीतर लड़की के पास जाइये। इस प्रकार उत्तेजित होना ठीक नहीं है। आप ने देखा, मैं उस से कैसे बोल रहा था? आप भी उस से वैसे ही बात कीजियेगा। आप तो बहुत समझदार हैं।"

"डाक्टर साहब, सच बताइये उसे क्या तकलीफ है?"

डाक्टर हंस दिया—"आइये, मेरे साथ आइये!"

तुरसाना ने बांहें मां की ओर फैला दीं। उस की आंखें कुछ सहमी हुई सी पर प्रसन्नता से चमक रही थीं। उसके होंठ हिले। धीमी आह सी सुनायी—"अम्म···।"

अनाखां वश में न रह सकी, डाक्टर का परामर्श भूल गयी। आंखों से आंसू टपक पड़े। दौड़ कर लड़की को उठा लिया, पागलों की तरह उसकी आंखें, हाथ, सिर, पीठ, पांव चूमने लगी। बशारत भी रो पड़ी और मां और बहिन को चूमने लगी।

सरगी और डाक्टर दरवाज़े में रुक गये थे। वे आंखें फिराये रहे।

डाक्टर और सरगी दो बार और आये। उनके आने पर तुरसाना ने फिर मां को धीमे से 'अम्म' कह कर पुकार लिया पर मुख मां के सीने में छिपाये रही।

डाक्टर लौटते समय बहुत दृढ़ता से तुरसाना से बोला—"अब मेरे आने की कोई ज़रूरत नहीं है। धीरे-धीरे स्वयं ही बातें करने लगोगी। तुम्हारा क्या ख्याल है?"

तुरसाना ने पल भर सोचा। गर्दन झुका कर हामी भरी। उसके मुख से निकला—"हां।"

"ठीक है न; वायदा करती हो न?"

"हां" तुरसाना ने और स्पष्ट कहा ।

'शाबाश ! शाबाश ! अच्छा सलाम !"

डाक्टर और इंजीनियर के घर से निकलते ही तुरसाना ने बहुत स्पष्ट स्वर में पुकार लिया—"अम्म-आ !" उसके बाद से तुरसाना जो भी बोलती विशेष स्पष्ट बोलती थी—बश-शो, जुलै-खां मौ-सी, न-हीं आ-यीं ?

× × ×

सूर्य पश्चिम में क्षितिज पर पहुंच चुका था। मीनार की छाया दूर तक टूटी गिरी दीवालों पर ऊंची-नीची फैली हुई थी। बाज़ार उठ चुका था। सब ओर कूड़ा-करकट फैला था। तरबूज़ के छिलके के ढेरों पर कसाइयों की दुकानों पर मक्खियों और भिड़ों के भंवर गूंज रहे थे। नैमी मास्टर दो दुकानों के बीच की ज़रा सी जगह में धरती पर उकड़ूं दुबका हुआ था।

नैमी ने कुछ देर पहले अपना पिस्तौल कूड़े के एक ढेर में खोंस दिया था। नैमी ने पिस्तौल को शराब में लत्ता भिगो कर अच्छी तरह से पोंछ दिया था और उसे रूमाल में सावधानी से लपेटते समय छुआ नहीं था कि उसकी उंगलियों के निशान पिस्तौल पर न बन जायें। पिस्तौल रूमाल में लपेटने से पहले रूमाल पर अरबी में 'आदरणीय' राव कुदरतुल्ला के नाम के अक्षर काट दिये थे। पिस्तौल पुलिस के हाथ पड़ जाने पर भी उसे अपने पर सन्देह होने की आशंका नहीं थी।

नैमी अंधेरा घना हो जाने तक दुबका बैठा रहा। तीखी सड़ांध और दुर्गन्ध से बोझल हवा से आंखें चरचरा रही थीं और छींक आ जाना चाहती थी। नैमी बहुत निग्रह से दम साधे बैठा रहा। छींक न आने देने के लिये नाक को पकड़ कर सांस रोक लेता था। समीप या दूर ज़रा सी भी आहट से उसके रोंगटे खड़े हो जाते थे।

जुलैखां की अर्थी का भयंकर दृश्य बार-बार नैमी की कल्पना में सजीव हो जाता था। चाय वाले को भी उस सब की क्या कल्पना हो सकती थी ? कोई भी क्या कल्पना कर सकता था ! नैमी के कान में अरगाश की आवाज़ बार-बार गूंज जाती थी—सांप ! उसका क्या मतलब होगा ? यों ही बक दिया होगा !" नहीं तो वह कमीन, जुलाहे का लौंडा ऐसे छोड़ देता ? फिर भी रात में अपने घर सो सकने का साहस नैमी को नहीं हुआ था। उसे शत्रु और मित्र दोनों से भय था। क्या मालूम, चाय वाला सियानी की तरह उसे भी निबटा देने के लिये ढंढ़ रहा हो।

• अंधेरा खूब घना हो गया तो नैमी आड़ में से निकल कर दबे पांव स्टेशन की ओर चल दिया। चांदनी भी नहीं थी। दिखायी दे जाने का कोई भय नहीं था फिर भी नैमी के कान चौकन्ने थे—कोई पीछा तो नहीं कर रहा था। नैमी स्टेशन पर

पहुंचा तो फरगना की गाड़ी छूट ही रही थी। नैमी ने उछल कर गाड़ी के दरवाजे के साथ का डण्डा पकड़ लिया और पटरे पर खड़ा हो गया। प्लेटफार्म पीछे छूट गया। गाड़ी की चाल तेज़ हो गयी। नैमी ने बच जाने की सांत्वना का सांस लिया। वह शाहेमर्दान की ओर चला जा रहा था, ज़ुलैखां की समाधि से दूर, जितना दूर सम्भव था, भाग जाना चाहता था।

तेइसवां परिच्छेद

शहर में अरगाश को सभी लोग पहचानने लगे थे। कमेटी और नगर सोवियत में ही नहीं सहकारी कारखानों-दूकानों, रेलवे स्टेशन और कर-विभाग के दफ्तरों में भी लोग टेलीफोन पर अरगाश की आवाज़ पहचान लेते थे।

औद्योगिक विकास की योजना के दफ्तर में भी टेलीफोन लग गया था और दफ्तर के अफसरों के लिये अरगाश की पुकार निरन्तर आतंक बन गयी थी। अरगाश विभाग की स्थानीय आय का आधे से अधिक मिल के लिये समेट चुका था, फिर दूसरे-तीसरे उनके सिर पर जा धमकता। अफसर उसके अक्खड़पन से परेशान थे। वह उनसे मनमानी करवा कर रहता और फिर ताने से धन्यवाद दे देता—"जिओ, शाबास! हज़ार बरस जियो!"

उसके काम में ज़रा भी देर होती या कल-परसों तक कर देने के लिये कह दिया जाता तो उसकी गरज से भूकम्प हो जाता, अफसरों को कंपकपी आ जाती।

मिल की योजना का दफ्तर राव कुदरतुल्ला की हवेली में बना लिया गया था। अरगाश दफ्तरों में अफसरों के ठाठ-बाट पर ताने कसता रहता परन्तु वास्तव में सब से अधिक ठाठ-बाट मिल के दफ्तर में, स्वयं अरगाश के यहां हो गया था।

राव कुदरतुल्ला शहर से भाग गया था। निमांचा में अफवाह थी कि राव के बेटे नसरतुल्ला ने हवेली स्वयं ही मिल का दफ्तर बनाने के लिये अरगाश को सौंप दी थी। अरगाश ने राव के निजी, खूब शानदार कमरे में अपना दफ्तर बना लिया था। उद्योग-विस्तार-विभाग के दफ्तर से अपनी मेज़ वहीं उठा लाया था। मेज़ पर बढ़िया हरी बनात बिछा ली थी। पोखर के पास नसरतुल्ला के लिये बनाये गये कमरों में उसने मिल के हिसाब-किताब का विभाग कायम कर लिया था। वहां दिन भर रजिस्टरों और फाइलों के पटकने-मूंदने की आहट होती रहती थी। बाग की ओर खुलती खिड़की पर खजांचों का बोर्ड लटक गया था।

हवेली की नक्काशीदार ड्योढ़ी में बहुत से इश्तिहार लगे रहते थे। इश्तिहारों के सामने प्रायः ही अनपढ़ लोगों की भीड़ प्रतीक्षा में खड़ी रहती कि कोई पढ़ा-लिखा आये तो उन्हें पढ़ कर बता सके। बहुत देर तक प्रतीक्षा कर लेने पर भी पढ़कर बता सकने वाला कोई न आता तो लोग भीतर चले जाते और खजांची की खिड़की पर जाकर खट-खट करने लगते।

मिल के मैनेजर के दफ्तर की ओर से बहुत ऊंची, आत्मीयता की झुंझलाहट भरी डांट सुनायी दे जाती—"ए, दिमाग खराब हो गया है! ए, बेड़ा गरक, पागल हो गये हो क्या?"

अरगाश प्रायः ही अपने कमरे में खुद बनाया मोटा सा सिगरेट दांतों में दबाये अपने मेज़ के चक्कर काटता रहता। फिर सहसा पुराने ढंग के टेलीफोन के सामने रुक कर घंटी के लिये हत्थी घुमा देता :

"हल्लो! तमारा?⋯कौन है?⋯तमारा? अरे क्या मर गयी, क्या हो गया तुझे? कब से घण्टी बजा रहा हूं। तेरे कानों में क्या काई जम गयी है! हल्लो-हल्लो! बोलती क्यों नहीं तमारा? क्या सैर करने चली गयी? सुनो मेरी जान, इवानोवोवोजनेसेंस्क से हमारे माल की गाड़ियां चल चुकी हैं। सुनो, पांच बन्द गाड़ियां हैं और तीन ठेले हैं। गाड़ियां समारा जंकशन पर अटकी हुई हैं। देख तो तेरे लिये कितना दहेज आ रहा है। शाबाश, जरा समारा जंकशन के स्टेशन मास्टर से लाइन मिला दे!"

टेलीफोन पर हंसी का स्वर सुनायी दिया। अरगाश भी हंस पड़ा। तमारा दिन भर समारा जंकशन की लाइन मिलाने का यत्न करती रही। अरगाश आधे-आधे घंटे बाद पूछ लेता था।

दूसरे दिन—"तमारा, जरा पूछ के तो बता, हमारा सीमेन्ट किस स्टेशन पर अटक गया है⋯⋯। तमारा, किसी तरह हमारी खराद की मशीन जल्दी पहुंचवा दे तो तुम्हें मिठाई खिला दूंगा। अच्छा वायदा रहा, मिल चलेगी तो सब से पहले तुझे तीन गज छींट फ्राक के लिये दिला दूंगा।⋯क्या? अरे तू इतनी लम्बी है? अच्छा साढ़े तीन गज सही।⋯ वाह, यह भी मुहब्बत का तरीका है। तूने तो मेरे दिल का कबाब बना दिया⋯⋯।"

अरगाश को समाचार मिला कि माल की बहुत सी गाड़ियां पहुंच रही थीं। अब उस के सामने दूसरी समस्यायें आ गयी थीं। इतना भारी बोझ और मशीनें स्टेशन से बाघँ के टीले तक पहुंचाना सरल नहीं था। दो गाड़ी तख्ते, सीमेन्ट और मनों कांच भी स्टेशन पर ही पड़ा था। माल उठाने और ले जाने के उपयुक्त साधन नहीं थे। ढुलाई के काम का पुराना मेट बहुत सुस्त आदमी था। रेल की रसीदें मिलती तो उन्हें

ऐसे देखता जैसे उस के नाम वारंट आ गये हों। रेल के बाबुओं से बात करते उसे डर लगता था। उम्र भी काफी थी। इससे पहले बेचारे ने इतने काम की कल्पना नहीं की थी। गुण उस में एक ही था कि कुछ पढ़ा-लिखा था, दस्तखत कर लेता था। उस की सहायता के लिये एक चुस्त नौजवान की जरूरत थी।

अरगाश ने बढ़इयों, पत्थर काटने वालों, पेन्टरों में से कोई आदमी ढूंढना चाहा। अप्रेंटिस नौजवानों के नाम भी सोच डाले परन्तु कोई ढंग का आदमी नहीं सूझा। सभी अनपढ़ थे। अरगाश इसी चिन्ता में बाघ के टीले की ओर चल पड़ा।

बाग के टीले के चारों ओर की ऊसर धरती का रूप-रंग बहुत बदल गया था। दूर-दूर तक झाड़ियों और कूड़े-करकट का नाम नहीं था। धरती थाली की तरह चौरस और साफ हो गयी थी। टीले के स्थान पर मिल की इमारत के लिये नींवें खुद गयी थीं। जगह-जगह मजदूर काम में लगे थे। पक्की लाल ईंटों और इमारती लकड़ी के ऊंचे-ऊंचे चट्टे धूप में चमक रहे थे। चूना, रेत, सीमेन्ट, बजरी की सफेद, नीली, पीली नोकीली सुथरी पहाड़ियां बनी हुई थीं। इंजीनियर ने इमारती सामान को इस तरह अलग-अलग लगवाया था कि आवश्यकतानुसार रेढ़ियों पर या बेलचों से उठा लिया जा सकता था।

जगह-जगह तिरपाल के छप्पर डाल कर लोहे और लकड़ी के काम के लिये कार-खाने बना दिये गये थे।

छप्परों में धौकनियां चल रही थीं, भट्ठियों में आग सरसरा रही थी। पसीने से लथ-पथ कारीगर हथौड़े, आरी, वसूले और रेती चला रहे थे। लकड़ी की छीलन और बुरादे के ढेरों से सोंधी-सोंधी गंध उठ रही थी। सब ओर खट-पट और आरा मशीनों की गूंज भरी थी। भट्ठियों के समीप बैठी स्त्रियां लकड़ी की छीलन और बुरादा झोंक कर ताव को ठीक रखे थीं। यहां इंजीनियर सरगी का राज था। सब काम उस के नकशों के अनुसार बहुत शांति और करीने से, बिना शोर-झंझट के चल रहा था।

पत्थर का काम करने वाले राज-मिस्त्रियों में अरगाश को दो ठलुये दिखाई दे ही गये। दोनों उत्तेजना में हाथ-पांव चला-चला कर, चिल्ला-चिल्ला कार आपस में झगड़ रहे थे। अरगाश ने पहचान लिया, एक मखुनिया मखसूम था और दूसरा धौली दाढ़ी वाला निमांचा का मामजान। मामजान पहले पल्लेदारी किया करता था। अरगाश उन की ओर बढ़ गया।

मामजान चिल्ला रहा था—"कल तू आया नहीं, दिन भर के काम का हर्जा हुआ और अब दो घंटे से मौलवियों की तरह कान खाये जा रहा है···वफादारी · मुहब्बत ! तेरी वफादारी और मुहब्बत की बकवास से हमें क्या मतलब ?"

"अरे तू जाहिल इन बातों को क्या समझे ?"

"तू अपना इलम मत झाड़ ! सीधी तरह काम कर ! तू मुझे भी मरवा देगा ?" मामजान झुंझलाया ।

मखुनिया ने अपनी रोयें झड़ी पलकों में से चुन्दी लाल-लाल आंखें सिकोड़ कर और पर नुचीं मुर्गी जैसी, कौआ निकली गर्दन उठा कर धमकाया—"तू किसे रोब दिखा रहा है ? तू क्या मेरा मेट है ? अब मेटी के रोब के दिन गये !"

"मैं काहे को मेट हूं । तू ही कुदरतुल्ला के टुकड़ों का कुत्ता बन कर मेटी का रोब झाड़ता था ।"

"जबान सम्भाल, गाली मत देना ! अब मैं किसी का गुलाम नहीं हूं । तीस बरस कुदरतुल्ला की गुलामी की पर गुलाम नहीं हूं । तू अपने आप को समझता क्या है ? मुझे क्या रोब दिखाता है ? जो मन में आयेगा सो कहूंगा-करूंगा, तू कौन होता है ?"

"दफा हो यहां से परे हट्ट, नहीं तो सिर तोड़ दूंगा ! न काम करता है न करने देता है ! तुझ से राव का बेटा भला । उस में ज़रा मिजाज़ नहीं । बेचारे ने सुबह से पूरा चट्टा साफ कर डाला ।"

नसरतुल्ला समीप ही बेलचा लिये रोड़ी उठा रहा था । उसका चोगा सीने पर खुला था । एक आस्तीन खाली झूल रही थी । बेलचे को पूरा भर कर उठाता । मखुनिया ने कुछ लाल आंखों से एक नज़र नसरतुल्ला की ओर देखा और फिर मामजान को धमकाया—'तू मुझे उस रईस के बेटे से मिला रहा है, खबरदार ! मेरा उस का क्या मुकाबिला ? मैं मजदूर हूं, मैंने उम्र भर राव के जुल्म सहे हैं । अगर ऐसा बकवास किया तो तेरे खिलाफ नालिश कर दूंगा !"

मामजान मखुनिया की धमकी से सहम कर बोला—"वाह, उल्टा चोर कोतवाल को डांटे । एक तो काम नहीं करता । ऊपर से नालिश की धमकी दे रहा है ।"

"तू कौन है मुझ से काम लेने वाला ! जैसे मन होगा वैसे करूंगा । तू क्या मेरा मेट है, तू क्या मेरा मालिक है ? मैं क्या आजाद नहीं हूं ? तेरा नौकर हूं ? कह दे मैं तेरा नौकर हूं ?"

मामजान चुप हो गया । मखुनिया शेखी में रोड़ी के चट्टे पर जा बैठा और दोनों हाथ घुटनों पर रख लिये ।

मखुनिया की गर्दन पर जबरजस्त पंजा आ पड़ा । झटके से खिच कर खड़ा हो गया । उस के पांव धरती से उठ गये । घूम कर देखा, अरगाश था ।

"'क्या बक रहा है ? तुझ से कोई काम लेने वाला नहीं है ? तू बैठा बकवास करता रहे, बेलचे, कुदाल अपने आप काम करते रहेंगे ? हम ने और हमारे बुजुर्गों ने तेरे जैसे हरामखोरों के लिये ही आज़ादी ली है ? उल्टा हम मज़दूरों को नालिश की धमकी देता है ?"

'स–स–सलाम । म–म–मालिक···कामरेड साहब सलाम ! मखुनिया की गर्दन कंधों में सिकुड़ गई, "कामरेड साहब मज़े में हैं ?"

"मैं बहुत मज़े में हूं" अरगाश ने उत्तर दिया, "और तुम खूब समझ लो, जो खटेगा नहीं खायेगा भी नहीं । मामजान चाचा, इसे अच्छी तरह सब समझा दो ।"

"सच कह रहे हो अरगाश भाई !" मामजान के बिना दांत के जबड़े मुस्कान में फैल गये ।

मखुनिया बेलचा लेकर काम में लग गया था ।

अरगाश नसरतुल्ला की ओर बढ़ गया—"कहो भाई, क्या हाल है ?"

नसरतुल्ला ने घूम कर देखा । कमर सीधी कर खड़ा हो गया । आस्तीन से चेहरे का पसीना पोंछ लिया । उस ने कई दिन से दाढ़ी नहीं बनवायी थी । दाढ़ी बढ़ कर चेचक के दाग छिप गये थे । बिलकुल साधारण मजदूरों जैसा लग रहा था । धूल से भरी बाहें खूब मजबूत लग रही थीं परन्तु आंखों में वही पुरानी उदासी मौजूद थी ।

"कहो क्या हाल है ?" अरगाश ने फिर पूछा ।

"देख ही रहे हो ।" नसरतुल्ला ने उत्तर दिया ।

"कमर में दर्द तो नहीं है ?"

"भैया, दर्द तो सीने में है ।"

"सीने में ? मन लगा कर मेहनत करो । पसीने के साथ दर्द बह जायेगा ।"

"वही तो कर कर रहा हूं ।"

"कैसा दर्द है सीने में ? पिता की याद आती है या अपनी हवेली दे देने का गम है ?"

"नहीं ऐसी कोई बात नहीं है । मुझे उन से क्या लेना-देना है । मेरे लिये दुनिया में क्या है ?"

"क्यों ?"

"ठीक ही कह रहा हूं ।"

"आखिर कुछ कहो तो !"

"कहने को क्या है ? तुम नहीं जानते ?"

"मैं तो नहीं जानता । कह देने में क्या हरज़ है ?"

नसरतुल्ला ने सीने पर हाथ मारा और अरगाश की तरफ एक कदम बढ़ कर बोला—"मैंने अपनी हवेली दे डाली । मजदूरों की तरह काम कर रहा हूं । अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्ति सहायक कोष में भी पूरी सहायता दी है फिर भी लोग मुझे रईसज़ादा समझ कर संदेह कर रहे हैं । तुम भी मुझे रईसाज़ादा समझते हो । यह तोहमत तो जिन्दगी भर के लिये है ।"

"यह बात नहीं है।" अरगाश ने विश्वास दिलाया, "जैसा व्यवहार करोगे, लोग वैसा ही समझेंगे।"

"मैं तो सब कुछ करने को तैयार हूं परन्तु अपने जन्म को कैसे बदल दूं?" नसरतुल्ला की गर्दन लटक गयी।

"सुनो! "अरगाश ने पल भर सोच कर पूछा, "तुम तो पढ़-लिख लेते हो?"

"जी हां"

"रूसी भी जानते हो?"

नसुरतुल्ला के चेहरे पर विद्रूप की मुस्कान आ गई—"पिता की महत्वाकांक्षा थी कि मैं मास्को और सिम्बरिस्क से तिजारत करूंगा।"

अरगाश ने अपनी मुट्ठी ऊपर उठाई—"मेरे साथ बोलो, संसार के मजदूरो एक हो।"

नसरतुल्ला ने भी मुट्ठी उठा ली और अरगाश की बात दुहराई।

अरगाश ने दांत से होंठ काट कर कहा—"तुम स्वयं सब भेद समझते हो। खैर, मैं तुम्हारी जोड़ी मिला देने का प्रबन्ध कर दूंगा।"

"जोड़ी?" नसरतुल्ला ने विस्मय से पूछा। चेहरा बिलकुल फक पड़ गया।

अरगाश ने नसरतुल्ला का कंधा पकड़कर खूब जोर से झकझोर दिया—"समझ लो, तुम अपनी भावी पत्नी से कह रहे हो। मन की बात ठीक-ठीक कहना! तुम सोवियत सरकार की सहायता करोगे!"

"जरूर करूंगा!"

"तो बेलचा यहीं रहने दो। ढुलाई के मुन्शी को बुला लाओ। उसे पहचाते हो न?"

"हां पहचानता हूं।"

"अच्छा, तो उसे लेकर मेरे दफ्तर में आ जाओ। तुम अभी चलो जाओ। देखो अभी तुम्हारी जोड़ी मिलाये देता हूं।"

नसरतुल्ला ने हाथ का बेलचा रोड़ी के चट्टे के साथ टिका दिया। हाथ-मुंह धोने के लिये दवाई मिले जल के ड्रम की ओर बढ़ गया। ड्रम में लगी रबड़ की नाली से जल ले मुंह और हाथों पर छोड़कर धो लिया और बिना पोंछे ही गोदाम की ओर चल दिया।

मखुनिया नसरतुल्ला की ओर विस्मय से मुंह खोले देखता रहा।

रेल की पटरी की घंटी की आवाज पूरी धरती पर गूंज उठी। गहरी नींवों में खुदाई करने वाले मजदूर बाहर निकल आये और विश्राम के लिये छांव ढूंढ़ते चल दिये।

याफिम और अनाखां अरगाश की ओर चले आ रहे थे। अनाखां प्रायः नित्य ही इमारती काम में लगी स्त्रियों के यहां एक बार हो जाती थी। पंचायती काम के दिन के बाद निमांचा की बहुत सी स्त्रियां वहां नियमित मजदूरी करने लगी थीं। जो काम

करने के तैयार थीं, उन सब को काम दे दिया गया गया था । स्त्रियां दोपहर के खाने के लिये एक जगह बैठतीं तो चाय भी जरूर बनाती थीं ।

याफिम ने अरगाश को पुकार लिया—"मैनेजर, कुछ देखा तुमने ?"

जगह-जगह पत्थर-ईंटें रख बनाये चूल्हे सुलगाये जाने लगे । खाने के साथ एक प्याला चाय बिना लोगों को संतोष कैसे होता । बहुत जोर की घाम के कारण काम करने वालों को प्यास भी बहुत सताती थी । अब्दुस्समद तांबे की केतली हाथ में लटकाए लम्बे-लम्बे कदमों से जल के ड्रम की ओर दौड़ा चला आ रहा था । जल के ड्रम के पास बहुत से लोग क्यू बांधे खड़े थे । समद की पुकार सुनाई दी :

"यहां जल कब मिलेगा ? अभी तो इतने आदमी खड़े हैं । कब पानी उबलेगा ? इतने आदमियों को चाय कैसे मिलेगी ?"

अरगाश ने मुस्कराकर याफिम से पूछा—" क्या है, मैंने क्या नहीं देखा ?"

"खुद ही देखो !"

"मुझे तो नहीं मालूम, आप ही बता दीजिये न !"

"तुम खुद नहीं देख सकते; क्या तमाशा दिखाई दे रहा है ? पचासों चूल्हे जगह-जगह सुलगाये जा रहे हैं । यह कोई मेला है या कंजड़ों के कबीलों की भीड़ ने पड़ाव डाला है । लोग कटोरे ओर मग्गे लिये घूम रहे हैं । कोई ढंग की कैन्टीन नहीं, जहां छप्पर की छाया में बेंच ही पड़े हों । थके हुये लोग चाय का प्याला ले लें या कटोरा भर शोरवा मिल जाये । पन्द्रह-बीस मिनिट बैठकर आराम से सिगरेट ही पी लें ।"

अनाखां ने समर्थन किया—"भाई साहब ठीक कह रहे हैं । स्त्रियों ने मुझ से बात की थी । कह रही थीं, आटे का प्रबन्ध हो जाये तो वे मर्दों के लिये भी चपातियां बना दिया करें । चार-पांच जवान लड़कियां तंदूर में सब के लिये रोटी सेंक सकती हैं । थकी हुई आती हैं तो चूल्हे फूंकना तो बहुत मुसीबत लगता है ।"

अरगाश ने मुस्कराकर भूल की स्वीकृति में गर्दन झुका ली और गर्दन को हाथ से खुजाता हुआ बोला—"दीदी ठीक कहती हैं । आटे का प्रबन्ध तो हो जायगा परन्तु स्त्रियां यह तो नहीं कहेंगी कि उन पर खामुखाह की बेगार पड़ गई है ?"

"नहीं-नहीं, ऐसा क्यों कहेंगी, ऐसी क्या बात है !"

याफिम ने आंखों को धूप से बचाने के लिये अपनी टोपी नीचे खींचकर कहा—"नहीं-नहीं । क्या सोचते हो···स्त्रियां तो बहुत साहस से काम कर रही हैं ।"

"भैया, इन लोगों की तुमने खूब कही ।" अनाखां ने होंठ पर उंगली रख कर विस्मय प्रकट किया, "मुझ से कहती हैं कि जुलैखां बहिन पार्टी की मेम्बर थीं तो मैं पार्टी का मेम्बर क्यों नहीं हूं ?"

"बिल्कुल ठीक कहती हैं ।" याफिम ने आग्रह से कहा, "मैं भी यही कहता हूं

बल्कि बताओ कि तुमने अभी तक मेम्बरी के लिये प्रार्थना-पत्र क्यों नहीं दिया ?"

अनाखां की मुट्ठियां बंध गयीं। उत्तेजना वश में रखने के लिये बाहों को आपस में लपेट कर पूछा—"याफिम भाई, मुझे कौन मेम्बर बना लेगा ? मेरा जुलैखां बहिन से क्या मुकाबिला ? मैं अनपढ़, करघा चलाने के सिवा और क्या जानती हूं ? भैया, आप कैसी बात कह रहे हैं !"

"वाह, तुम भी क्या कहती हो।" याफिम ने स्नेह से उपालम्भ दिया, "तुम्हारा समर्थन करने वाले सामने ही खड़े हैं। अरगाश और मैं, हम दोनों ही समर्थन करेंगे। तुम खुद नहीं जानती कि तुम्हें पार्टी में होना चाहिये ? पार्टी के सम्बन्ध से बड़ा दूसरा कौन सम्बन्ध हो सकता है ! तुम्हें जुलैखां बहिन का स्थान लेना है। तुम अपना कर्तव्य नहीं पहचानती ?"

'हां तो···।" अनाखां अपने नाखूनों की ओर देखती मौन रह गयी।

चौबीसवां परिच्छेद

उस रात नगर में शरद का पहला, खूब जोर का लहरा पड़ गया था। प्रातः बादल कुछ समय के लिये फट गये परन्तु फिर खूब घटाटोप हो गया।

बाघ के टीले पर मिल की इमारत की खुदी हुई नीवों में गंदला जल भर गया था। जगह-जगह छोटे-छोटे ताल-तलैया बन गये थे। पिछली रात की आंधी में दूर-दूर से उड़ कर आये पीले पत्ते गंदले जल पर तैर रहे थे।

कुछ लोग सीमेन्ट और चूने के गोदामों में पानी न जाने देने का प्रबन्ध करने के लिये उन के चारों ओर नालियां खोद रहे थे। स्त्रियां छोटे-बड़े टीन लेकर नीवों में से पानी उलीच रही थीं।

मिल के लिये करघों और दूसरी मशीनों से भरी मालगाड़ी स्टेशन पर पहुंच गयी थी। अधिकांश कारीगर और मजदूर गाड़ी से सामान उतारने के लिये स्टेशन पर चले गये थे। भारी सामान को स्टेशन से मिल की जगह तक पहुंचाने का काम धीरे-धीरे चल रहा था। शहर में केवल एक ट्रक था और एक ट्रैक्टर। अरगाश ने दोनों ले लिये थे। ट्रैक्टर बहुत पुराना था, उस के अंजर-पंजर ढीले हो चुके थे। ट्रैक्टर सामान से भरे ठेलों को पहले पुल पर से तो घसीट ले गया परन्तु दूसरा पुल पार कर रहा था तो ट्रैक्टर ने दम तोड़ दिया। भारी सामान पुल के ऊपर रह जाने से रास्ता भी रुक गया। तब ठेलों को खींचने के लिये घोड़े जोते गये।

एक ठेले पर तख्ते तारों से बांध कर बनाये बहुत ही विशाल बक्से में एक बहुत बड़ी मशीन लदी थी, जैसे कोई अच्छा बड़ा मकान हो। तीन घोड़े पूरी शक्ति लगा कर हांफ-हांफ कर ठेले को खींचने के लिये जोर लगा रहे थे। वर्षा से कीचड़ हो गया था। घोड़ों के सुम बार-बार फिसल जाते थे। सामने के घोड़े पर मखुनिया मखसूम सवार था। वह चेंचियाती आवाज़ में गालियों से घोड़ों को ललकार-ललकार कर उन के पसीने से लथपथ पुट्ठों पर तड़ा-तड़ छड़ी चलाये जा रहा था। मामजान और नरमत छैला कीचड़ में सने ठेले के दोनों ओर पहियों को बढ़ाने के लिये सहारा दे रहे थे। पहियों के आरों में बांस और बल्ली की लग्गी लगा कर ज़ोर लगा रहे थे। सब कुछ करके भी वे घंटे भर में आध मील से आगे न बढ़ सके। स्टेशन से मिल की जगह लगभग तीन मील थी।

वर्षा से गच्च कच्चे रास्ते पर बहुत भारी ठेले खींचे जाने से रास्ता और भी खराब हो गया था, जैसे गहरे हल चला दिये गये हों। घोड़े चार कदम चलते तो दम लेने के लिये रुक जाते। घोड़ों के पसीने से खूब भाप उठ रही थी परन्तु मखुनिया घोड़ों पर छड़ी बरसाये ही जा रहा था। घोड़े बार-बार पिछली टांगों पर उठ कर जोर लगाते परन्तु कीचड़ में फंसे पहिये हिल नहीं रहे थे। बहुत ज़ोर पड़ने से, ठेले से घोड़ों की जोत में बंधी तार बहुत जोर की झंकार से टूट गयी। मामजान और नरमत दोनों भय से उछल पड़े। वे भी अपना क्रोध घोड़ों की पीठ पर उतारने लगे।

समीप की बस्ती के बच्चे तमाशा देखने के लिये सड़क के दोनों ओर आ खड़े हुये थे। बच्चे सूर्यमुखी के सूखे फूलों में से बीज निकाल-निकाल कर खाते जा रहे थे। बीजों की सफेद भूसी उन के होठों पर चिपकी हुई थी। बच्चों के पीछे कुछ स्त्रियां आ गयीं और फिर कुछ बूढ़े भी आ खड़े हुये। पुल से आगे रास्ता चढ़ाई पर था। चढ़ाई पर आकर घोड़े निश्चल हो गये मानों पत्थर की मूर्तियां बन गये हों। बहुत भारी बोझ से ठेले का एक पहिया धंस गया था। ठेला उलार हो गया था। थकान से कांपते हुये घोड़े जोर लगाते तो धंसा हुआ पहिया और धस जाता था। ठेले पर लदा बक्सा इतना बड़ा था कि ठेला उस के नीचे छिप गया था। पहिया धंस जाने से बक्सा धरती पर आ लगा।

कौतूहल से किलकारियां भरते बच्चों ने बक्स को घेर लिया। कुछ ने साहस दिखाने के लिये आगे बढ़ कर बक्स को छू लिया। छूकर ऐसे पीछे कूदे की उंगलियां जल गयी हों।

"इस में बैल बन्द हैं।" एक बच्चे ने अनुमान प्रकट किया।

"चार बैल हैं।" दूसरा बोला, "हट्ट, इसमें मिल है, जैसी मिल कल गयी थी। सब लोहा ही लोहा है।"

"धत्त, तू बहुत जानता है। इतना लोहा कहां खड़ा होगा ? चार बैलों जितना बड़ा लोहा धरती में धंस नहीं जायेगा ?"

"चल-चल तुझे क्या मालूम। इस से बड़ी-बड़ी मशीनें लोहे की होती हैं।"

"क्या धरती पर लगायी हैं..."

दो प्रौढ़ आगे बढ़ आये। उन्होंने शोर मचाते बच्चों को डांट कर पीछे हटा दिया। दो बल्लियों की लग्गी लगा कर मामजान और नरमत के साथ जोर लगाया और बक्से को धरती से उठा दिया और पहिये को निकालने में मदद देने लगे।

बूढ़ों को भी बच्चों से कम कौतूहल नहीं था। एक बोला—"या अल्लाह, आखिर यह इतना बड़ा बोझ है क्या ? यह धरती में धंसेगा नहीं तो क्या होगा ?"

"तेरी आंखें क्यों फटी जा रही हैं, ऐसी क्या बात है। मशीन है।" नरमत ने कहा।

"भैया मास्को से आयी हैं !" मामजान बोला, "क्या बोझा है, प्राण ले लिये।"

"कैसी मशीन है, क्या होगा इस से ?"

"सूत कातने की मशीन है।"

"क्या घास खा ली है ? यह तो लोहा है। लोहे से सूत कतेगा ? उंगली छू जाये तो सूत टूट जाता है।"

"अरे इस में पेंच हैं। अपने आप सूत कातती है। आदमी की तरह काम करती है।"

नरमत विज्ञता से बोला—"जानता है इसमें कितने पेंच हैं ? सात सैकड़ा और सात हजार पेचों वाली मशीन हैं। मिल में लगाई जायेगी। दिन भर में पच्चीस-तीस करघों के बराबर कपड़ा बुन कर फेंक देगी।"

"या अल्लाह इसमें आदमी फंस जाय तो उसका पता न चले !"

"जाहिलों, मूर्खों का क्या है। मक्खी भी चाहे तो उनकी नाक काट ले।"

"क्या निमांचा की मिल में लगेगी।"

"तो और कौन सी मिल है ?"

एक प्रौढ़ ने समीप की बस्ती से कुछ मर्दों को बुला लिया। वे लोग कुछ और बल्लियां ले आये। सब ने मिल कर कंधा लगाया। मखुनिया ने घोड़ों की रास झटक कर उन्हें ललकारा। बच्चे घोड़ों को सीटियों और किलकारियों से बढ़ावा देने लगे।

ललकार सुनाई दी—"जोर न लगाय सो हरामी !"

"हैय्या !"

"हैय्या !"

ठेला कदम-कदम चढ़ाई पर बढ़ने लगा।

"अबे किधर जा रहा है ? घोड़ों को मारेगा !" एक प्रौढ़ ने मखुनिया को चेतावनी दी।

"चुप रह गंवार ! तू क्या जाने !" मखुनिया ने डांट दिया, 'हम क्या रात इस पुल पर काटेंगे ।" मखुनिया घोड़ों पर तड़ातड़ चाबुक चलाता रहा ।

"रास्ता खराब है । कल सांझ ही मरम्मत हुई है ।"

मखुनिया ने चेतावनी की परवाह नहीं की । ठेला कीचड़ से निकल कर धीमे-धीमे आगे बढ़ने लगा था । मामजान, नरमत और दूसरे लोग पीछे रह गये से । रास्ता खराब होने के कारण ठेले पर लदा ऊंचा बक्सा कभी इस ओर झूल जाता कभी दूसरी ओर । लोग चिल्ला उठते—"गिरा-गिरा !" बक्सा फिर संभल जाता ।

"शाबाश !" मामजान के साथ चलते एक प्रौढ़ ने मखुनिया की सराहना में कहा, "देखने में तो पिल्ले जैसा लगता है पर हौंसला बहुत है ।"

"हौंसला क्या है, आंख मूंद कर हांक रहा है ।" दूसरा बोला, "इस रास्ते पर तो कोई खाली गाड़ी को न ले जाय !"

"देखो-देखो !" बच्चे चिल्ला उठे, "गिर रहा है, गिर रहा है, दौड़ो ! पकड़ो !"

ठेला ढलवान की ओर बहुत झुक रहा था परन्तु चाल में आगे बढ़ता जा रहा था । जरा भी अटक लगती तो नीचे नाले में जा गिरता । घोड़े मखसूम की ललकारों और चाबुक के आतंक से दम तोड़कर खींचे जा रहे थे ।

ठेले का पहिया रास्ते के बिलकुल किनारे ढलवान पर आकर नीचे खिसक रहा था । प्रौढ़ ने देखा तो बहुत ज़ोर से चिल्लाया—'चाबुक दे, चाबुक ! ज़ोर से चाबुक दे !"

पल मारते में ठेला और घोड़े ढलवान पर लुढ़क गये । मखुनिया ठोकर से उछली गठरी की तरह हवा में कलाबाजी लगाता ढाल पर जा पड़ा ।

बक्से को ठेले पर कसे तार तड़क कर झंकार उठे । बक्सा ठेले से खिसक कर ढलवान पर खूब ज़ोर से फिसला और नाले में उस का एक कोना खूब गहरा धंस गया । तार टूट न जाते तो ठेला और घोड़े साथ घसिट कर कुचले जाते । कीचड़ में गठरी की तरह पड़ा मखुनिया सहायता के लिये ज़ोर से कराह उठा । मामजान और नरमत ने दौड़ कर उसे उठाया । टूटी हुई तार की नोक लग कर उस का पाजामा फट गया था । बाईं टांग और दोनों चूतड़ों पर लम्बी गहरी खरोंच लग गयीं थी ।

बच्चे आतंक से स्तब्ध हो गये । पौढ़ ने दांत पीस कर गाली दी—"ऐसे काम में ...ऐसे गधे को किसने लगा दिया ! इस साले के गधे जैसे तो कान हैं ! इस में क्या अकल होगी ? इतने भारी लोहे को नाले से कौन निकालेगा ? बेवकूफ खुद मरा, घोड़ों को मारा और हजारों का नुक्सान कर दिया ।"

पीछे आता हुआ ठेला पुल के पास रुक गया था । अरगाश, नसरतुल्ला और दो आदमी दौड़े हुये आ गये ।

अरगाश की नज़र नाले में लुढ़क गये बक्से की ओर थी—"शाब्बास, बहुत लायक हो ! मशीन को बरबाद कर दिया ।"

मामजान और नरमत मौन रह गये ।

"इन बेचारों का क्या कसूर है । यह तो पीछे थे" एक प्रौढ़ ने कहा ।

अरगाश ने नसरतुल्ला की ओर देखा—"यह सब तुम्हारी करतूत है। उल्लू की तरह आंखें झपक रहे हो ! तुम ने यहां आदमी क्यों नहीं तैनात किये ? बताने के लिये आदमी नहीं रखने चाहिये थे कि कल ही सड़क की मरम्मत हुई है ? ठेलों को ऊपर से ले जाना चाहिये था । मशीन तुम्हारी नहीं है न, तुम्हें क्या दरद होता ?"

मखुनिया जोर से कराह उठा, अरगाश उसकी ओर बढ़ गया । मखुनिया को घेरे लोग परे हट गये ।

"इसे क्या हुआ है ?"

बच्चे और सब लोग एक साथ बताने लगे ।

"एक घोड़ी खोलो, तुरन्त डाक्टर को लाओ !" अरगाश ने नसरतुल्ला को हुक्म दिया ।

कई आदमी घोड़ों की ओर लपक कर उस की रास-जोत खोलने लगे ।

प्रौढ़ ने अरगाश की ओर संकेत कर अपने साथी से कहा—"यह है तगड़ा आदमी निमांचा का असली बांका ।"

× × ×

गली में खूब घना अंधेरा था । नसरतुल्ला अपनी हवेली के सामने पिछली रात की वर्षा से भीगी दीवार से पीठ टेके खड़ा था । हवेली की दूसरी मंजिल की एक खिड़की से नीचे प्रकाश पड़ रहा था । पहले उस कमरे में राव कुदरतुल्ला स्वयं रहता था । खिड़की से अरगाश की अस्पष्ट सी झुंझलाहट सुनाई दे जाती थी । नसरतुल्ला अब हवेली के जनाने भाग के एक कमरे में रहता था । वह उस ओर न जाकर दुविधा में बाहर ही खड़ा था। उसे याद आया—सब तुम्हारी कारतूत है । मशीन तुम्हारी थोड़े ही है·· परन्तु उस का तो कोई दोष नहीं था । क्या मुझ पर सन्देह किया जा रहा है ?

एक दिन पहले लगभग उसी समय नसरतुल्ला स्टेशन से लौट रहा था तो चायखाने के समीप चायवाले ने उसे रोक लिया था और अपने साथ एक कोठरी में ले गया था। कोठरी में शराब की तीखी गन्ध भरी थी । चायवाले ने स्वयं पी और नसरतुल्ला को भी दी । नसरतुल्ला को खूब चढ़ गयी और वह चायवाले के सामने हाथ पांव मार-मार कर बकने लगा था । चायवाला बिलकुल मौन, सिकुड़ा-सिमिटा नसरतुल्ला का बकवास सुनता रहा और फिर सहसा उसके लोहे की उंगलियों का पंजा नसरतुल्ला की गर्दन पर जा पड़ा ।

नसरतुल्ला की आंखें निकल आयीं। उसने चायवाले के कड़े हाथ से अपनी गर्दन छुड़ाने का बहुत यत्न किया परन्तु छूट न सका तो गिड़गिड़ाने लगा। चायवाले ने उसकी गर्दन छोड़ दी और मुस्कराया—"पिल्ले की तरह कों-कों क्यों किये जा रहा है; सुनता क्यों नहीं ? चायवाले ने नसरतुल्ला को छोड़ कर चांदी की प्याली में बरांडी ले ली और प्याली हाथ में लिये बहुत स्नेह से बोला—"याद है, तुम्हारे वालिद साहब मुझे तुम्हारा ख्याल रखने के लिये कह गये हैं ?"

नसरतुल्ला ने हकला कर कह दिया—"मुझे उन से कोई मतलब नहीं।"

बरखुरदार, मैं तुम्हारे बाप की जगह हूं" चायवाले ने कहा, "मेरा कहा मानो तो कुछ बन जाओ !"

नसरतुल्ला ज़रा खांसा और नज़र घुटने पर रखे हाथ की मुट्ठी पर लगाये रहा।

चायवाले ने दूसरी प्याली में नसरतुल्ला के लिये बरांडी दे दी। नसरतुल्ला ने और नहीं ली। कनखियों से चायवाले की ओर देखता रहा। गर्दन पर लगे मरोड़ की दर्द अब भी अनुभव हो रही थी और गला घुटने से मुंह में लार भरी आ रही थी।

"तुम तो मिल मैनेजर के दफ्तर की बगल में ही रहते हो !" चायवाले ने धीमे से कहा, "इस से अच्छा और क्या मौका होगा ? मैनेजर तो बहुत ऊंचा बोलता है लेकिन वह धीमे-धीमे बात करे तो भी तुम्हारे कमरे में सुनाई दे सकता है। मैनेजर की हर एक हरकत की खबर रखनी चाहिये।"

"मुझे क्या मतलब ?" नसरतुल्ला ने कह दिया।

"तुम्हारे सिवा हमें दूसरा कौन खबर दे सकता है ! भैया, तुम्हारा ही भरोसा है। मैं व्यापारी आदमी हूं। मुझे तो सब बातों की खबर चाहिये।"

नसरतुल्ला चाहता था कि उठ कर चल दे परन्तु चायवाला उस के समीप सरक आया। नसरतुल्ला ने आशंका में दोनों हाथ अपनी गर्दन पर रख लिये। उसे नसरतुल्ला ने अपनी हवेली में बीसियों बार देखा था परन्तु उस की ओर कभी खास ध्यान नहीं दिया था। नैमी मास्टर से भी चायवाले के बारे में कोई खास बात नही सुनी थी। नसरतुल्ला उसे आवारा, टुटपुंजिया चाय बेचने वाला ही समझता था—हवेली में चाय बेचने आ जाता होगा परन्तु अब उसे चायवाले के भुसभुसे चेहरे और अधमुंदी आखों की ओर नजर उठाने का साहस नहीं हो रहा था। चायवाला उसे कल्लू कुलमत जैसा ही भयंकर लग रहा था।

नसरतुल्ला ने साहस किया—"मुहम्मद सैय्यद, तुम्हें मुझ से क्या मतलब ? मुझे यहां क्यों ले आये हो ?"

"बरखुरदार, तुम से जरूरी बात करनी है। तुम साबिर मजदूर की लड़की से ब्याह करना चाहते हो न ?"

नसरतुल्ला उत्तेजित हो गया। हाथ सीने पर मार कर बोला—"चाहता हूं और करूंगा !"

"शाबास, शाबास ! तुम्हें उम्मीद होगी कि सोवियत की वफादारी दिखाकर लड़की को पा लोगे ?"

"तुम्हें इस से क्या मतलब ? मैं जो चाहे करूं ! तुम्हें इस से क्या लेना-देना है ? खामुखाह मुझे यहां ले आये हो ! तुम्हें मेरे मामले से क्या मतलब ? तुम अपनी फिक्र करो ! मुझे जो करना होगा करूंगा।"

"बरखुरदार" चायवाले ने शांति से समझाया, "तुम ने उस की मां पर खंजर चलाया था, भूल गये ? वह भी तो इसीलिये किया था।"

चायवाले की बात से नसरतुल्ला को लगा जैसे उस की गर्दन फिर दुश्मन के हाथ में दब गयी हो। रोंगटे खड़े हो गये और पीठ पर फुरफुरी दौड़ गयी। नसरतुल्ला के मन में डर बैठा हुआ था कि वह मुसीबत किसी न किसी दिन आयेगी परन्तु उसने आत्म-रक्षा के लिये विरोध किया—"कौन कहता है ?"

चायवाला विनय से मुस्कराया :

"इतने घबराते क्यों हो ? शहर-गांव की खबर तो तुम्हें भी रहती है। व्यापारी के लिये तो यह जरूरी है। तुम कारोबार करो तो बहुत अच्छा कर सकोगे। उस मौके पर तुम्हारा वार जमकर नहीं बैठा, नहीं तो झगड़ा खतम हो गया होता, लड़की तुम्हारी थी। क्या गलत कह रहा हूं ?"

नसरतुल्ला के शरीर में भय की सिहरन दौड़ गयी।

"बस एक शख्स को और मालूम है" चायवाले के चेहरे पर मुस्कान बनी थी, "सिर्फ एक ही शख्स को ! है तो बहुत बातूनी लेकिन चला गया है, यहां से बहुत दूर चला गया है। मुझ से तुम्हारा बुरा नहीं हो सकता। मैं तो तुम्हें सब तरह से मदद ही दूंगा।"

नसरतुल्ला ने साहस कर दृढ़ता से कहना चाहा, इन बातों से मुझे कोई मतलब नहीं।

चायवाले ने नसरतुल्ला को आस्तीन से अपनी ओर खींच लिया :

"तुम बिलकुल गधे हो ! गौर से सुनो, लौंडिया का क्या है ? वह तो डाल में लगा बेर है। जब चाहो हाथ बढ़ा कर तोड़ लो। जरूरत तो झाड़ी को काटने की है। यों मत घबराओ, हौंसला करो। मेरी बात सुनो, तुम्हें खंजर चलाने को नहीं कह रहा हूं। जानता हूं, वह तुम्हारे बस का नहीं है। हथियार भी मौके के मुताबिक होने चाहिये। मेरा ख्याल है, लूम स्टेशन से कल ही उठाये जायंगे, ठीक है न ? माल तो तुम्हें ही लाना है। रास्ते में नाले पर दूसरा पुल है न, पुल बहुत पुराना है। भारी

बोझ से जरूर धचक जायगा…।"

नसरतुल्ला ने अपनी आस्तीन चायवाले के हाथ से झटक ली। आंसू रोकने के लिये होंठ काट लिये और दांत पीस कर स्वर दबाये बोला :

"मैंने कह दिया, मुझे ऐसी बातों से कोई मतलब नहीं। मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, तुम मेरे पीछे क्यों पड़े हो ? मेरा सब कुछ गया। मेरा दुनिया में कौन है ? मुझे किसी से कुछ मतलब नहीं …." नसरतुल्ला घबराहट में बदहवास हो गया।

चायवाले ने नसरतुल्ला को संभल सकने का अवसर देने के लिये अपनी प्याली में थोड़ी सी बरांडी डाल ली और चुस्कियां लेता रहा। नसरतुल्ला की सिसकियां जारी रहीं तो चायवाले ने चिढ़ कर डांट दिया :

"अच्छा, यह सूं-सूं बन्द कर ! तुझ से नहीं हो सकता तो रहने दे ! तुझ से और कुछ नहीं हो सकता तो इतना करना कि सब से बड़ी मशीन को पहले लदवा देना। ठेले में सब से अच्छे मजबूत घोड़े जुतवाना। अपने पुराने गुलाम मखसूम को उस के साथ कर देना। समझ ले ऐसा नहीं किया तो फिर तेरी खैर नहीं ! और बात से कोई मतलब नहीं।"

उस रात नसरतुल्ला अपना सिर दोनों हाथों में पकड़े बहुत देर तक सुबकता रहा। बार-बार आस्तीन से आंसू पोंछ लेता था।

उस संध्या नसरतुल्ला अरगाश के दफ्तर की खिड़की के नीचे अंधेरे में खड़ा रहा। अरगाश की झुंझलाहट और गुर्राहट नीचे सुनाई दे रही थी। नसरतुल्ला निराशा से सोच रहा था :

मुझ से नाराज हो गया है, अब मेरा ब्याह नहीं करायगा।

पच्चीसवां परिच्छेद

मिल की नींव एक दिन खूब तड़के ही कड़ी सर्दी में रखी गयी। मजदूरों की खूब बड़ी भीड़ नींव के गढ़ों को घेरे खड़ी थी। तेज ठंडी हवा में झण्डे फरफरा रहे थे। गणतंत्र की राजधानी से भी प्रतिनिधि आये हुए थे। प्रभात के सूर्य की ओस मिली किरणें पीतल के चमचमाते बाजों पर पड़ रही थीं।

नींव की पहली ईंट रखने का गौरव अनाखां को दिया गया था। उसे कमर में बांधने के लिये एक खूब चटक सफेद 'एप्रेन' दिया गया। याफिम ने स्वयं एप्रेन की

तनी अनाखां की पीठ के पीछे बांधी। मजदूरों की साझी सम्पत्ति—मिल के दस्तावेज के कागज लोहे की नाली में बन्द कर दिये गये थे। नाली के दोनों सिरों पर लोहे की नाली से अब भी हल्की-हल्की भाप उड़ रही थी। इंजीनियर सरगी एक खूब सुथरी लाल ईंट और कन्नी पर सीमेन्ट लिये तैयार था।

अनाखां ने सरगी के हाथ से ईंट लेकर आकाश की ओर उठा दी और उत्साह भरे गद्गद् स्वर में बोली—"साथियो……।" हवा के तेज झोंकों से अनाखां के शब्द निमांचा में दूर-दूर तक पहुंच रहे थे।

"मिल की इमारत की यह पहली ईंट है" अनाखां ने कहा, "यह ईंट जुलैखां बहिन के हाथों से रखी जानी चाहिये थी। मिल की आधार शिला के सामने उन की समाधि मौजूद है। मैं विरोधियों को बता देना चाहती हूं कि मेरा हाथ वास्तव में जुलैखां बहिन का ही हाथ है। मजदूर साथियो और बहिनो, मेरा यह हाथ आप का ही हाथ है। मैं आप की ओर से ही अपने गणतंत्र में कपड़े की पहली मिल की नींव रख रही हूं। हमारे सौभाग्य से यह दिन आया है। हम इस दिन को कभी नहीं भूलेंगे।" अनाखां की आंखें छलक आयीं, "साथियो और बहिनो, मैं इस से अधिक और क्या कह सकती हूं।"

"शाबास-शाबास ! खूब, बहुत खूब !" सरगी के मुंह से निकल गया।

"देखो-देखो, होश करो ! कहीं खुशी में हाथ से सीमेन्ट न गिरा देना।" याफिम ने किलक से चेतावनी दी।

अरगाश मौन खड़ा उत्साहित भीड़ की ओर देखता मौन सोच रहा था—यदि आज पिता जीवित होते तो इस समय क्या कहते ?

अनाखां ने लाल ईंट को प्यार से चूम लिया और ईंट लगाने के लिये नींव में उतर गयी। नींव में दस्तावेज़ की नाली के लिये जगह बना दी गयी थी। अनाखां ने नाली रख कर उस पर सीमेन्ट डाल कर कन्नी से बराबर किया। फिर अपने हाथ से भी सीमेन्ट को बराबर किया। ईंट को दोनों हाथों में लेकर सावधानी से उठाया और सीमेन्ट पर जमा दिया जैसे नवजात शिशु को पलने में लिटा दिया हो।

अनाखां गहरी नींव से बाहर निकली तो भीड़ में गीत गूंज उठा। गीत का भाव था :

"नहीं दरकार अब प्रजापालक, देश के भाग्यविधाता !
अब हम नहीं किसी के न्याय-दया के भिखारी !
अब हम स्वयं बने निर्णायक……"

अनाखां के लिये यह दिन बहुत शुभ था। सन्ध्या समय उसे शुभ सन्देश मिला। वह पार्टी की मेम्बर बना ली गयी थी।

संध्या मिल में काम करने वाले लोगों की कमेटी की बैठक अरगाश के दफ्तर में हो रही थी। कमेटी में एक ही स्त्री थी, अनाखां। उस का हृदय गर्व से उमग रहा था। उस गर्व में एक बहुत सूक्ष्म सी पीड़ा भी थी :

"नारी, तेरा यह साहस ? तू घर की दहलीज लांघ कर बाहर खड़ी है ! इस अनैतिक दुस्साहस के लिये तुझे लोग संगसार नहीं कर देंगे !"

अनाखां बहुत दिन से इस अवसर की प्रतीक्षा में थी—यह देख कर लोग क्या कहेंगे। अपने आप को चेतावनी देती रहती थी :

नारी, ओ नारी ! जिस दिन तू मां के गर्भ से इस संसार में आयी थी, तुझे देख कर तेरे माता और पिता के चेहरे भी निराशा से लटक गये थे। वे उदास हो गये थे। तुझे देख कर उन का उत्साह मिट्टी हो गया था। उन के हृदय से आह निकल गयी थी—'लड़की !' वह उन के हृदय की पीड़ा की आह थी।

तुझे नारी कह दिया गया था। धर्म और खुदा के प्रतिनिधि पैगम्बरों ने नारी को हेय और तिरस्कृत कर दिया था। पीरों-पैगम्बरों और धर्म ने नारी को लांछित और अभिशप्त बना दिया था। पीर, पैगम्बर और धर्म को बनाने वाले भूल गये कि वे स्वयं नारी के गर्भ से उत्पन्न हुये थे। धर्म और समाज के नियमों ने नारी को जन्म भर के लिये दासता के बन्धनों में जकड़ दिया था। उन्हों ने मृत्यु के बाद नारी को पुरुष की उपेक्षा धरती में एक हाथ गहरा दफनाने की व्यवस्था दे दी थी।

नारी, तेरे दुर्भाग्य की सीमा यहीं तक नहीं थी। अरब से इस्लाम का प्रचारक खूनी इब्नबतूता इस देश में आया। उस ने स्त्री के चेहरे को जन्म भर, घोड़े की पूंछ से बने नकाब से ढके रखने का अनुशासन बना दिया। मदीना का जहरीला प्रचार हजारों वर्षों तक मनुष्य समाज में नारी के विरुद्ध मनुष्य के मस्तिष्क को जड़ बनाता रहा।

"औरत—लम्बी चोटी-अक्ल छोटी ! बिना बेटे के स्वर्ग और जन्नत नहीं, बिना बेटी के फिक्र नहीं। इन सिद्धान्तों और आदर्शों से तेरा भाग्य निर्धारित होता था और तेरी क्या कल्पनाएं थीं :

जिस गली तुम आओ प्रियतम, बुहारूं अपने केशों से।
जिस गली तुम जाओ प्रियतम, शीतल करूं नैनन जल से ॥"

नारी तू रो-रो कर अपनी श्रद्धा और स्नेह अर्पित करती थी और जीवन के सब साधन समेट लेने वाले अभिमानी पुरुषों का उत्तर था :

स्त्री पाप का कीचड़ है।
स्त्री भ्रमजाल है।
स्त्री छल की मूर्ति है।

नारी, पुरुष की दृष्टि में घोड़े और बैल भी तेरी अपेक्षा अधिक मूल्यवान थे। टकों में तेरा सौदा होता था, तू चार-दिन की मौज-बहार का खिलौना समझी जाती थी। तेरे यौवन की चिन्ता किसी को नहीं थी। पुरुष को पुरानी छोड़ कर नयी नारी की चाह बनी रहती थी।

नारी, तू अपनी दासता में दया के भिक्षा के अतिरिक्त दूसरी कल्पना ही नहीं कर सकती थी। कभी परियों की कहानी में भी नारी स्वामिनी नहीं बन सकी। तुझे खुदा का खौफ था, तुझे शैतान का भी खौफ़ था। तू विश्वासों से बंधी हुई थी। तुझे विश्वास नहीं था तो स्वयं अपने में ! नारी, तूने यह कभी क्यों नहीं सोचा कि धर्म और समाज के सब नियम पुरुष के ही बनाये हुये थे···

अनाखां नारी थी, हजारों स्त्रियों में से एक, उन्हीं हजारों स्त्रियों जैसी एक नारी थी जो मेहनत और काम-काज से लौटे पुरुषों के चरण पखार कर उन्हें दबाती रहती थी परन्तु अब पुरुष उस की बातों को ध्यान से और आदर से सुनते थे।

अनाखां ने साथियों को अपनी पूरी कहानी, बचपन से जितनी भी याद थी, सुना दी। अनाखां की कहानी बहुत साधारण थी, सर्वसाधारण स्त्रियों जैसी—जिन की ओर कोई ध्यान नहीं देता, जिन का जीवन पाओं तले रौंदी जाती और हवा में उड़ती धूल की तरह उपेक्षित रहता है। साथी उस की कहानी बहुत ध्यान से सुन रहे थे जैसे किसी मार्ग-दर्शक वीर की गाथा सुन रहे हों। अनाखां की कहानी समाप्त हुई तो साथी उस के जीवन की घटनाओं के बारे में चर्चा करने लगे। सब लोग बहुत सहानुभूति और चिंता से बात कर रहे थे। अपनी संवेदना और स्त्रियों के जीवन की समस्याओं पर चिन्ता प्रकट कर रहे थे।

सब साथियों ने हाथ उठा कर अनाखां का अभिनन्दन किया और अनाखां भी उन के संगठन का अंग और उन के समान बन गयी।

अनाखां बहिन को सर्व-सम्मति से सदस्य स्वीकार किया जाता है।" याफिम ने खड़े हो कर कहा, "कामरेड अनाखां, मैं आप को बधाई देता हूं। मुझे पूरा विश्वास है कि आप सच्चे कम्युनिस्ट की तरह श्रम-जीवी श्रेणी को सशक्त और सबल बनाने में कुछ उठा नहीं रखेंगी। हमें पूर्ण विश्वास है कि अपनी बेटी को भी अपनी ही तरह योग्य बनायेंगी और वह आप का अनुकरण करेगी···।"

सभी साथियों ने अनाखां से हाथ मिलाये। अनाखां ने एक-एक से हाथ मिला कर धन्यवाद दिया और उन के लिये शुभ कामना प्रकट की।

अनाखां का अनुमान था कि उसे भविष्य में व्यवहार के लिये उपदेश दिया जायगा परन्तु साथी अपने-अपने स्थानों पर बैठ कर सभापति की ओर घूम गये। याफिम ने सब को सम्बोधित किया।

"साथियो, आज हमारे कार्यक्रम में संगठन और कार्य में चौकसी की आवश्यकता के सम्बन्ध में एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न है।"

अनाखां ने समझा कि अब पुरुष साथी आपस में गम्भीर महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करेंगे। उस का बैठे रहना उचित नहीं। वह उठ कर दबे पांव द्वार की ओर चल दी।

याफिम ने कुछ विस्मय से अनाखां की ओर देखा और फिर सरलता से हंस पड़ा—"अन्ना, कहां जा रही हो? मीटिंग तो समाप्त नहीं हुई। अपने सेल की मीटिंग में प्रत्येक को रहना चाहिये।"

अरगाश भी विद्रूप से बोला—"शायद, घर में कोई जरूरी काम होगा। दीदी को घर का काम याद आ गया।"

याफिम और दूसरे साथियों की नज़रें अरगाश की ओर उठ गयीं। उन्हें यह विद्रूप अच्छा नहीं लगा था। अनाखां दरवाज़े पर ठिठक तो गयी परन्तु सहसा समझ नहीं पायी कि उसे रोका क्यों गया था। समझी तो चेहरा लड़कियों की तरह झेंप से लाल हो गया।

याफिम ने अरगाश की ओर तीखी नजर से देख लिया और कहा—"अन्ना, बैठो! बातचीत में भाग लो। तुम भी अपनी राय देना।"

अनाखां गर्दन झुकाये अपने स्थान पर बैठ गयी। झेंप से मरी जा रही थी—साथी अरगाश पर क्यों बिगड़ें? भूल तो उस की ही थी, पार्टी में उसे केवल धन्यवाद देने के लिये ही तो नहीं भर्ती किया था। पार्टी के काम और पार्टी की समस्याओं से उस का भी तो सम्बन्ध था। वह उठ कर चल क्यों दी थी; स्त्रियों की तरह लहंगा समेट कर चुपचाप, दबे पांव चल देने का क्या मतलब था?

अनाखां सोच रही थी कि अब क्या होगा—"बैठो, बातचीत में भाग लो, अपनी राय देना! मुझे यहां व्याख्यान देना पड़ेगा; कैसा व्याख्यान? क्या बोलूंगी? वह बहुत सहम गयी—सेल की मीटिंग में जाने किस तरह बैठा जाता है, किस तरह बात की जाती है!

अनाखां सम्भल भी नहीं पाई थी कि देखा याफिम और दूसरे साथी फिर अरगाश पर बिगड़ रहे थे। ट्रेक्टर के बिगड़ जाने और बहुमूल्य मशीन के नाले में गिर पड़ने और दूसरी दुर्घटनाओं के लिये अरगाश से जवाब-तलब किया जा रहा था।

अनाखां को वह अच्छा नहीं लगा। उसने बात समझी तो सोचा यह तो अन्याय है। सब दुर्घटनाओं और भूलों का उत्तरदायित्व एक साथी पर क्यों डाला जा रहा है—जुलैखां की मृत्यु के लिये भी सब से अधिक उत्तरदायित्व अरगाश पर ही डाला जा रहा था। अरगाश के दफ्तर के सामने ही दुश्मनों ने जुलैखां के सिर में गोली मार दी थी। कम्युनिस्ट अरगाश के विरुद्ध आरोप लगा रहे थे कि जुलैखां की मृत्यु के लिये

ही जिम्मेवार था ।

' अरगाश की ओर से कुछ बोलना ही चाहती थी पर विस्मय में स्तब्ध ारगाश ने अपने विरुद्ध सब आरोप स्वीकार कर लिये और बोला :

ो, आपका कहना ठीक है, मैंने जल्दबाजी तो बहुत की परन्तु काम में हुआ ।" अरगाश ने स्वयं बनाये खूब मोटे से सिगरेट से बहुत सा धुआं "हम लोग, खास कर मैं, जल्दी में बावला हो रहा था । परिणाम में हम े चौकस नहीं रह सके और शत्रु हम पर बार-बार चोट करने का अवसर ा । मैं आप से बिलकुल सहमत हूं कि दृढ़ संगठन के लिये कड़ी चौकसी ' आवश्यकता है ।"

्म्हें चौकस रहना चाहिये" याफिम ने कह दिया, "और हम सब को भी ा चाहिये ।"

यही मतलब है" अरगाश ने स्वीकार किया, "परन्तु याफिम साहब, आपने ाया था कि लोगों को समझने का यत्न, उनका भरोसा करना चाहिये । सी आपसी सहयोग द्वारा ही हो सकती है । जनता ही वास्तविक चौकसी है...।"

ीक है ।"

; यह बताइये, आप इंजीनियर सरगी की सभी बातों का समर्थन क्यों करते

' समर्थन करता हूं ।"

सदा इंजीनियर की सहायता के लिये, उसे बचाने के लिये ही चौकन्ने रहते ' बोलता गया, "लेकिन मैं पूछता हूं कि उसमें और नसरतुल्ला में अन्तर ाह राव का बेटा है तो यह ज़मींदार का बेटा है !"

ो पर मुझे विश्वास है ।"

मतमब है कि नसरतुल्ला की ड्यूटी मैंने लगायी थी ।" अरगाश ने दृढ़ता से ड्यूटी पर रखने या हटाने का अधिकार मुझे ही होना चाहिये । मैं यदि ुन नहीं सकता, उन्हें ड्यूटी पर नहीं लगा सकता तो मैं मैनेजर क्या हुआ ?"

रेड मैनेजर, मैं यह जानना चाहता हूं" याफिम ने अरगाश को वैसे ही कड़े ार दिया, "तुम्हारी कसौटी क्या है ? तुम लोगों को कैसे परखते हो ? ति भरोसे और आस्था से या अपने अहंकार और महत्वाकांक्षा से ? याद ोनों बातें अलग-अलग हैं ।"

ा निर्णय ठीक है ।" अरगाश ने कहा, "पार्टी को और आप को भी मेरे निर्णय ा करना चाहिये । पार्टी को मेरे सम्मान की रक्षा करनी चाहिये ।"

याफिम ने अपनी मूंछ को सहलाया—"अरगाश, सम्मान ठीक निर्णय का होना चाहिये मैं तो यही उचित समझता हूं। तुम लोगों की पुरानी बातों को ही ज्यादा महत्व देते हो। वह राव का लड़का है या जमींदार का लड़का है, यही बात मुख्य नहीं है। इसी बात से उनकी उपयोगिता तय की जायगी ? हम उनका काम नहीं देख सकते ?"

अरगाश विद्रूप से बोला—"मैंने तो इंजीनियर को राव के लड़के की तरह पसीने में लथ-पथ काम में डूबे कभी नहीं देखा।"

अनाखां के मुंह से निकल गया—"इंजीनियर साहब तो बहुत भले आदमी हैं।" उसने झेंप कर तुरन्त क्षमा मांग ली, "क्षमा कीजिये, मैं ऐसे ही बोल पड़ी।"

याफिम ने उसकी ओर देखा—"ऐसा क्यों समझती हो ? तुम्हारा बोलना बिलकुल ठीक है। भले आदमियों और अच्छे काम से ही हमारी शक्ति और आदर बढ़ता है। कम्युनिस्टों के लिये सबसे अधिक महत्व इसी बात का है। क्या मेरी बात ठीक नहीं है ?"

"इस बात से कौन इनकार करता है" अरगाश बोला।

याफिम के माथे पर फिर से तेवर पड़ गये।

"साथियो, क्या हम इतनी जल्दी भूल गये कि जुलैखां बहिन को हम ने कैसे खो दिया ! हम ने कितनी बड़ी हानि उठाई है। हम से कैसा व्यक्ति, कितने बहुमूल्य व्यक्ति का जीवन छीन लिया गया है ! मैं मानता हूं कि उस घटना से बहुत से लोगों की आंखें खुली हैं। हमें बहुत से लोगों का सहयोग मिल सका है परन्तु बात इतनी ही नहीं है, हमें दूसरा पहलू भी देखना चाहिये।"

"हां, अवश्य !" अनाखां ने उदास स्वर में स्वीकार किया। बात उसके मुख से अनायास निकल गयी थी। सब लोगो की आंखें उसकी ओर उठ गयी थीं तो बोली :

"उस को, मेरा मतलब अंजीरत दादी को तो आप सब लोग जानते हैं। दादी पंचायतीं काम में आयी थी और अपने साथ दूसरी स्त्रियों को भी लायी थी। उस दिन तो दादी ने बेलचा लेकर खूब मेहनत से काम किया था। शुक्र अल्लाह ! शुक्रअल्लाह ! कहती जा रही थी और काम भी करती जा रही थी परन्तु दादी जुलैखां बहिन की अर्थी उठाने के दिन नहीं आयी। तब से कहीं दिखायी ही नहीं दी। दूसरी भी कई स्त्रियां जो हमारा साथ देने लगीं थीं, खिच गयी हैं। अब मिल के काम पर नहीं आतीं।"

अरगाश के होंठ मुस्कान में सिकुड़ गये—"आप ठीक कहती हैं, उस बुढ़िया का ध्यान मुझे नहीं आया।" अरगाश ने अन्तिम कश लेकर सिगरेट खिड़की से बाहर फेंक दिया और बोला, "अनाखां दीदी, ऐसे लोग तो आते-जाते ही रहते हैं।"

अनाखां की गर्दन उठ गयी। स्वर गम्भीर हो गया—"अरगाश भाई, यह बात तो ठीक नहीं है। इन लोगों को इकट्ठा करके तुम तो नहीं लाये थे! उन के आने न आने की उपयोगिता के बारे में भी तुम निर्णय कैसे दे सकते हो?"

अरगाश ने तीखे प्रश्न का आतंक दिखाने के लिये मुस्कान से कन्धे उचका दिये—"नही, मैं कोई निर्णय नही कर रहा हूं। साथी, क्षमा कीजिये! मेरे लिये काफी काम है। आप एक सहकारी की प्रधान हैं तो मुझ पर भी एक काफी बड़े सहकारी का उत्तरदायित्व है।"

अनाखां को अरगाश की बात अच्छी नहीं लगी। उस के विरोध में अनाखां की झेंप भी दब गयी। फिर अरगाश उत्तेजित होता गया और अनाखां गम्भीर होती गयी। बिना सोचे ही वह ठीक ढंग पर चल रही थी। शांत स्वर में बोली:

साथी मैनेजर, बुरा न मानना। मैं आप के काम की बात भी कहूंगी। मैं बताना चाहती थी…।"

"कहिये, कहिये मैं सुन रहा हूं। सब कुछ कह डालिये।" अरगाश मुस्करा दिया।

अनाखां कहती गयी—"खोजिया का तार आया है। वे लोग मास्को से लौट रही हैं।"

"खोजिया? इतनी जल्दी लौट रही है?" अरगाश को विस्मय हुआ।

अरगाश मन की बात—अपना क्रोध और उत्साह छिपा नहीं पाता था। लोगों को कभी उस की बात कड़वी लग भी जाती थी तो भी उस की सच्चाई पर विश्वास कर परवाह न करते।

अरगाश ने पूछ लिया—"वे लोग काम सीख गईं?"

"हां-हां!"

"यहां कब पहुंच रही हैं?"

"मास्को से चल पड़ी हैं। हम लोगों को भी तैयार रहना चाहिये। लड़कियां यहां से गयी थीं तो काम सीखने के लिये गयी थीं परन्तु अब उस्ताद बन कर लौट रही हैं। हमें भी अवसर के लिये तैयार रहना चाहिये।"

"यह कौन चिन्ता की बात है। दो टोकरी फूल तोड़ लेने में क्या लगता है? अब्दुस्समद अपना बैण्ड लाकर बाजा बजा देगा।"

"तुम क्या कह रहे हो?" अनाखां ने अरगाश की ओर उलझन से देखा, "यह नहीं समझते कि दूसरे लोगों को काम सिखाने के लिये औद्योगिक स्कूल आरम्भ किया जाना चाहिये?"

"स्कूल के लिये जगह कहां है?"

"हमारे पास सामान तो है। मूल चीज तो वही है।"

"पर कोई जगह, मकान भी तो चाहिये। नगर में लोग हम से यों ही परेशान हो रहे हैं कि हम ने चंगेज खां की तरह पूरे नगर पर कब्जा कर लिया है।"

"क्यों, कुदरतुल्ला का पुराना कारखाना तो खाली पड़ा है।" अनाखां ने याद दिलाया, "छप्पर के बीच की दीवारें निकाल दें तो खूब बड़ा हाल बन सकता है। दीवारों में खिड़कियां लग सकती हैं। जगह साफ कर दी जायगी। वहां मिल के करघों, मशीनों के लिये जगह हो जायगी। मशीनें गोदाम में पड़ी रहेंगी तो जंग ही लगेगा। मैंने इंजीनियर भाई से बात की थी। उन्हें जगह दिखाई थी। उन का तो ख्याल है कि यहां मज़े में काम हो सकता है।"

अरगाश को अनाखां का सुझाव तो अच्छा लगा था परन्तु बीच में इंजीनियर की चर्चा उसे नहीं सुहाई। इस का तो मतलब था कि अनाखां और इंजीनियर उस से पूछे बिना जो चाहे तय कर डालें। अरगाश बनावटी मुस्कान से बोला।

"मेरी बात सुनिये, आप इस फिक्र में क्यों परेशान हैं। आप को जनाना सहकारी की प्रधान के रूप में यह चिन्ता है या आप स्त्रियों के लिये काम का अवसर बनाना चाहती हैं?"

अनाखां ने गहरी सांस लेकर अरगाश की ओर देखा—"अरगाश भाई, तुम ने मुझे पार्टी की सदस्य बनाने का समर्थन किया है। आप नहीं जानते कि मैं पार्टी के सदस्य के रूप में बोल रही हूं!"

सब साथी अरगाश पर हंस पड़े। अनाखां ने बहुत शांति से कहा—"और सुना है कि जुलैखां दीदी के स्थान पर स्त्रियों के विभाग का काम भी मुझे सौंपा जायगा।"

"वह काम जब आप को सौंप दिया जायगा तब उस पर विचार कर लेंगे।"

"लेकिन उस काम के लिये तैयार रहने में क्या हर्ज है? अनाखां ने मुस्कराकर पूछा, "क्या दृढ़ संगठन के लिये ऐसी चौकसी आवश्यक नहीं है?"

अरगाश ने सिगरेट बनाने के बहाने आंखें चुरा लीं।

याफिम ने अरगाश की डिबिया से चुटकी भर तम्बाकू लेकर पूछ लिया—"क्यों अरगाश, तुम ने अन्ना बहिन को सदस्य बनाने का समर्थन किया था, सो उचित ही था न?"

अरगाश विद्रूप से मुस्करा दिया—"अगर पहले जानता तो जरा सोच समझ लेता।"

छब्बीसवां परिच्छेद

"चल-चल ! तुझे मौत आये !"

छोटा सा पेट फूला टट्टू धीमे-धीमे गाड़ी को खींचे लिये जा रहा था। क्षितिज पर उतर आये सूर्य की किरणों से टट्टू के पेट के भूरे रोयें चमक रहे थे। रास्ता बहुत ऊबड़-खाबड़ था। पुरानी, खचड़ा गाड़ी के दोनों पहिये धचकते-लहराते सूखी धुरी पर रगड़ से अपने-अपने स्वर बजाये जा रहे थे। ठेले की पटिया पर नसरतुल्ला पांव लटकाये बैठा था।

नसरतुल्ला खूब थका हुआ था। ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर झटकों से झूलता सोचता जा रहा था—दसवां फेरा है, रजिस्टर में दसवां फेरा लिख दिया है, सूरज डूब रहा है, दस फेरे हो गये; काफी काम हो गया···।

ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर गाड़ी झटके-झकोले लेती चल रही थी। वैसे ही नसरतुल्ला के विचार भी ऊंचे-नीचे भटक रहे थे। उस की नज़र रास्ते के दोनों ओर फैले मक्का के खेतों पर तैर जाती थी। जाड़ा आरम्भ हो गया था। मक्का के पत्ते पक कर गिरने लगे थे। डंठल से पत्ते टूट कर गिरने की धीमी सी आहट हो जाती थी। दूर बाघ के टीले से आरा मशीन की गूंज सुनाई दे रही थी।

नसरतुल्ला अजीब सी मानसिक अवस्था में था। उसे कोई आशंका या भय नहीं था और मन में कोई उमंग भी नहीं थी। अरगाश उसे कुछ नहीं कहता था, यही बहुत था। यह भी संतोष था कि रोज एक न एक बार बशारत की झलक मिल जाती थी। अब चायवाला भी उसे परेशान नहीं कर रहा था। चायवाले के यहां शराब तो जरूर मिल सकती थी परन्तु उस के यहां न जाना ही बेहतर था। ऐसे आदमी से दूर ही भला था, उस से क्या लेना-देना था। नसरतुल्ला की ड्युटी सीमेन्ट उठाने पर लगी हुई थी। स्टेशन से ठेला भरता था और उसे बाघ के टीले पर गिरा देता था। दिन भर में दस फेरे कर दिये थे। यह कुछ कम नहीं था। सांझ पड़ गयी थी अब विश्राम का समय था।

नसरतुल्ला को कल्पना में ठंडी, झाग उठी बूज़ा (बियर) का कटोरा दिखाई दे गया। होंठ चाट लिये। इस समय एक कटोरा बूज़ा मिल जाती तो मज़ा आ जाता। याद आने लगा—दलाल तुर्दिमत के यहां उमर के साथ कितनी पी जाता था ! क्या मज़े के दिन थे···? उमर जाने कहां गया ? सिड़ी आदमी था !···नसरतुल्ला की ही तरह कभी कुछ नहीं कर पाया। बस लड़कियों की बातें खूब मज़े ले-लेकर सुनाता था।···बशारत के हुस्न की क्या तारीफें करता था, '···सत्तर परदों के पीछे छिपी हों, बस एक परदा हटा दो तो उस के जमाल से अंधेरी रात में घर जगमगा जाये, चालीस

रात तक रोशनी बनी रहे, चिराग-बत्ती की जरूरत नहीं…।' हरामखोर बड़ा बातूनी था। बातों में उस का मुक़ाबिला नहीं था। वल्लाह, दुनिया में कैसी-कैसी औरतें हैं…।

नसरतुल्ला ने सीमेन्ट की बोरियों से पीठ लगा ली और बांह से गर्दन को सहारा दे लिया। आकाश में घने होते जाते अंधेरे की ओर आंखें लगाये गाने लगा :

हम उन्हें याद करें, वह हमें याद करें।
दोनों याद कर-कर रोयें…"

ठेले का एक पहिया ज़ोर से चर्राया और झुक गया। नसरतुल्ला ने चौंक कर उस ओर देखा। नसरतुल्ला की बगल में चायवाला आ बैठा था और उस ने नसरतुल्ला के कन्धे अपनी कड़ी बांह में दबा लिये थे। चायवाला मुस्करा रहा था :

"घबरा क्यों गये, तुम्हारे लिए अच्छी खबर लाया हूं" चायवाले ने धीमे से कहा, "बहुत अच्छे वक्त पर मिल गये।"

"मैं क्यों घबराऊंगा ?" नसरतुल्ला ने अपना आतंक छिपा कर कहा। चायवाले ने फिर चारों ओर देख लिया और बोला—"बहुत अच्छा मौका है। क्या शान्ति है ! बहुत अच्छा मौसम है। मुझे ऐसा समय बहुत प्यारा लगता है। मैंने दूर से देखा तुम सुपने में खोए चले जा रहे थे। ख्याल और सुपने में डूब जाने में ही बहुत मज़ा है। जवानी में हम भी हुस्न के लिए बहुत तड़पे हैं। दोस्त, सच कह दूं—हुस्न के ख्याल और उस के विरह में ही असली मज़ा है। हसीनों की मुहब्बत और उन के फिराक में जो मज़ा है, वह खुद उन की सोहबत में नहीं। सच कहो, मानते हो या नहीं ?"

नसरतुल्ला के मुख से आह निकल गयी। टट्टू की रास हाथ से छूट गयी। बोला—"सच कह रहे हो दोस्त मुहम्मद सैयद, बिलकुल सच कह रहे हो ! उस पर क्या हुस्न आया है, ओफ ! दूर से एक झलक देख लेता हूं तो नशा हो जाता है।"

चाय वाला दांत निकाल कर हंस दिया—"बिलकुल सही कह रहे हो। तुम तो हम से छिपते फिरते हो। दोस्ती का क्या यह तरीका है ? दिल की बात हमारे सिवा और किस से कह सकोगे ! तुम्हारे दिल की बात कोई दूसरा समझ भी क्या पायगा ?"

नसरतुल्ला ने अंधेरे में ध्यान से चाय वाले के चेहरे की ओर देखा। चाय वाला मज़ाक नहीं कर रहा था। नसरतुल्ला और किस का भरोसा कर सकता था ? बस वही तो उसका अपना था।

नसरतुल्ला की गर्दन झुक गयी। धीमे से बोला—"आज दोपहर की छुट्टी में दिखायी दे गयी थी। कई लड़के सामने खड़े उस से बात कर रहे थे। तुम्हारी कसम, अगर यह न जानता कि नकाब हटाये वही थी और क्या बात कर रही थी तो यकीन हो जाता कि सुपने में परी को देख रहा था। क्या कहूं किब्ला, इस वख्त भी उसका

हुस्न मेरी आंखों के सामने है—चकाचौंध हो जाता हूं। मेरी तो जान उसके कदमों पर निसार है।"

"चच-चच !" चाय वाले ने खेद प्रकट किया—"बरखुरदार, क्या मालूम; किसी छोकरे ने उसे फंसा भी लिया हो ?"

नसरतुल्ला ने मुस्कराकर विश्वास प्रकट किया—"किब्ला, अब वह ज़माना नहीं है। उस पर कौन हाथ डाल सकता है ? वह किसी से डरती नहीं है। खुद जवानों की तरह निधड़क है, निधड़क काम करती है। कभी उसे बेलचे से सीमेन्ट उठाते देखो तो···।"

"सीमेन्ट ? तो फिर मेरा ख्याल ठीक है।" चाय वाले ने कहा, "मेरी बात ध्यान से सुनो ! तुम्हारे भले के लिये कह रहा हूं। बातें बनाने से कुछ फायदा नहीं। जो मैं कहता हूं, करो।"

नसरतुल्ला आशंका से पीछे हट गया। चाय वाला अपनी बात कहता गया :

"बरखुरदार, मेरे पास एक चीज है, बहुत पुरानी अजमाई हुई चीज है। बुजुर्ग उसका इस्तेमाल करते रहे हैं। जवानी के दिनों में खुद भी उसे अज़मा चुका हूं। आज़मूदा है। बेचूक चीज़ है !" चाय वाले ने अपने कमर-पट्टे में इधर-उधर टटोल कर, कई छोटी-छोटी, काली-काली शीशियां निकाल लीं, "यह लो तुम से कीमत क्या मांगें भेंट ही सही।"

नसरतुल्ला ने शीशियों की ओर हाथ नहीं बढ़ाया। पूछ लिया—"यह है क्या ?"

चायवाले ने हंसी दबा कर धीरे से कहा—"तुम्हें नहीं चाहिये तो रहने दो। यह वशीकरण का जादू है। एक फकीर ने दिया था। तुम्हें जरूरत नहीं है तो नाले में डाल दो। मैं खामुखाह ही तुम्हारे लिये परेशान हो रहा था।"

चाय वाले ने शीशियां मुट्ठी में लेकर फेंक देने के लिये हाथ उठाया तो नसरतुल्ला ने उसकी बांह पकड़ ली—"ठहरो ! ठहरो !"

"क्या फायदा ? तुम लोग दोस्ती की कद्र नहीं जानते। यही बात राव साहब में थी।" चाय वाले ने ताने से कहा, "उन्हें भी किसी की जबान का इतबार नहीं था। मैं तुम्हारी मदद के लिये कह रहा हूं और तुम ऐसी बात कर रहे हो। तुम लोगों का बीज ही ऐसा है।"

"मैं क्या जानूं, इन से क्या किया जायगा ?" नसरतुल्ला शीशियों को हाथ में लेकर बोला।

चायवाला एक शीशी नसरतुल्ला की नाक के समीप उठा कर बोला—"तुम्हें इस पर इतबार भी है ?"

"क्यों नहीं; मैंने कब इनकार किया ?"

चायवाला नसरतुल्ला की ओर झुक गया—"देखो, एक शीशी रोज़ कंक्रीट बनाने वाली मशीन में डालनी होगी ! ख्याल रखना, कोई देख न पाये ! एक शीशी रोज़ !"

"कंक्रीट में डालने का क्या मतलब ?"

"सुना है, लड़की कंक्रीट का काम करेगी ?"

"हां ।"

"तो फिर पूछ क्या रहे हो ?"

नसरतुल्ला ने चिन्ता से अपनी बढ़ी हुई दाढ़ी में खुजाते हुये पूछ लिया, "कंक्रीट को तो कोई नुकसान नहीं होगा ?"

चायवाले ने विरक्ति से मुस्कराकर पीठ सीमेन्ट की बोरी से टिका ली और हंस पड़ा । नसरतुल्ला को उसकी हंसी बहुत बुरी लगी ।

चाय वाले ने नसरतुल्ला की पीठ थपथपाई—"बच्चे ही रहे ! तुम्हें रोटी लाकर दें तो कौर बना कर मुंह में भी देना होगा ! तुम्हारे दिमाग में भूसा भरा है ? इस एक बूंद का कंक्रीट में कहां पता चलेगा ?"

चाय वाले ने कुछ सोच कर फिर कहा—"खैर, जैसे कह दिया करो ! हां, परसों तुम्हारे दफ्तर में क्या हो रहा था ?"

"कुछ भी नहीं ।"

"पार्टी की मीटिंग नहीं हुई ?"

"हां, हुई थी ।"

"मैंने तुम्हें कहा था कि जो बातचीत हो बहुत ध्यान से खबर देना ।"

नसरतुल्ला मौन रह गया ।

"मीटिंग में क्या हुआ ?" चाय वाले ने घुड़क कर पूछा ।

"अरगाश कह रहा था मखसूम अस्पताल से लौटेगा तो उस पर मुकद्दमा चलाया जायगा ।"

"बकने दो ! क्या मुकद्दमा चलायेंगे ? बरसात से सड़क टूट गयी थी, इसके लिये मखसूम पर मुकद्दमा चलायेंगे ! और क्या बात हुई ?"

नसरतुल्ला को मौन देख—"उल्लू कहीं का…तू कहना नहीं मानता ! तुझे सीधा करना पड़ेगा ! तुझे नहीं मालूम तो मैं बता दूं बेवफा कुत्ते, तेरे ऊपर और इंजीनियर पर भी इल्ज़ाम लगाया गया है । खैर, इस बार माफ कर रहा हूं । शीशियों को संभाल कर रखना । मैं जा रहा हूं ।"

नसरतुल्ला ने आशंका की सिहरन अनुभव की परन्तु शीशियों को अपने चोगे में छिपा लिया ।

"एक बात और कहे देता हूं ।" चाय वाले ने चलते-चलते कहा, "इंजीनियर से

बना कर रखना। उसे चाय-वाय के लिये बुला लेना। उसी से मदद मिलेगी। अरगाश और याफिम बिगड़ भी जायेंगे तो भी उससे मदद मिल सकेगी। बिलकुल जनाना सा रहमदिल आदमी है। तुम दोनों को एक दूसरे का सहारा रहेगा।"

नसरतुल्ला के चेहरे पर प्रसन्नता झलक आयी। आदर से सीने पर हाथ रख कर बोला—"किब्ला, बिलकुल ठीक कह रहे हैं। मैं भी यही सोच रहा था।"

"ठीक ही सोच रहे थे। आखिर बिलकुल उल्लू थोड़े ही हो। अब तक क्यों उसे कभी अपने यहां नहीं बुलाया?"

"बुलाऊंगा, यकीन रखिये! जल्दी ही बुलाऊंगा।"

"खुदा हाफिज़।" चाय वाला ठेले से कूद गया।

टट्टू ने धचके के विरोध में सिर हिला कर जोत को झटका दिया। नसरतुल्ला ने रास खींच कर उसे कसा। घोड़े ने अपनी पूंछ से उसके मुंह पर थप्पड़ दे दिया।

"मर जाय तू!"

घोड़े की टाप की गूंज से नसरतुल्ला समझ गया कि ठेला नये पुल पर पहुंच गया था। आगे रास्ता अच्छा था। ठेले की चाल तेज़ हो गयी।

"सलाम मुंशी माशा!"

नसरतुल्ला को भारी सी आवाज़ में अभिवादन सुनायी दिया। सड़क की बाढ़ लांघ कर एक कद्दावर मर्द उसकी ओर चला आ रहा था।

नसरतुल्ला ने अंधेरे में पहचाना तो उसका कलेजा धक से रह गया—याफिम था।

"आइये कामरेड! याफिम भाई आइये!" नसरतुल्ला ने सरक कर जगह बना दी, "आ जाइये!"

"ना-ना, तुम चलते जाओ, रुको मत!" याफिम ने उत्तर दिया, "ऐसी सवारी से पैदल भले। अभी कितना सीमेन्ट बाकी है?"

"बस दिन भर का काम है। कामरेड, पांच-छ: छकड़े हों तो कल सब उठ जायेगा।"

याफिम ठेले की धुरी पर पांव रख कर उचका और नसरतुल्ला के बराबर बैठ गया।

"तुम्हारे साथ कौन आदमी था?" याफिम ने पूछ लिया।

नसरतुल्ला का हाथ चोगे में छिपाई शीशियों पर चला गया। जबड़े में ऐंठन और पीठ पर फुरफुरी सी अनुभव हुई। उत्तर नहीं दे पाया।

"बोलते क्यों नहीं, कौन था तुम्हारे साथ?"

"कोई भी नहीं।"

"झूठ बोलते हो! तुम्हारे किसी से बात करने की आवाज़ आ रही थी।"

नसरतुल्ला को पसीना आ गया—"अजी वह जो; कोई बीमार था, यों ही कोई बिलकुल गधा था।"

"तुम गधों को सवारी देते फिरते हो?"

"मैं क्या जानूं? वह खुद ही चढ़ आया था।"

"कहां गया वह?"

"क्या मालूम; उतर कर उधर चला गया।"

"क्या मतलब, नगर से आ रहा था और नगर को लौट गया?"

"नहीं-नहीं नगर को नहीं पीछे वाली बस्ती में गया है।" नसरतुल्ला गहरा सांस लेकर सम्भला, "बस्ती में आ रहा था, पीछे वाली बस्ती में। बहुत बूढ़ा सा था, सफेद दाढ़ी। आपने कहा था न कि बस्ती के लोगों से अच्छी तरह बोलना-चालना चाहिये।"

याफिम ने मुस्कराकर देखा—"तो फिर तुम बस्ती के बेचारे बूढ़े को गाली क्यों दे रहे हो?"

"मैंने सोचा, आप बिगड़ेंगे कि इतनी देर क्यों कर दी।"

"बूढ़े से क्या बात हुई?"

"ऐसे ही कुछ खास नहीं।"

"तब भी क्या बात हुई?"

नसरतुल्ला ने मस्तिष्क पर बहुत जोर डाल कर कह दिया—"यही लड़कियों की बातें।"

"यह बात? बीमार, दढ़ियल बूढ़े को लड़कियों का शौक है?"

"नहीं साहब, शौक क्या, ऐसे ही बात कर रहा था। हंस रहा था। लड़कियों ने बुरके उतार दिये हैं न!"

"गधा है, शौकीन है, हंस रहा था, बात कर रहा था, अजीब बात है।"

"हां, हां कह रहा था, क्या अजीब बात है। देखो, लड़कियों ने बुरके उतार दिये। पूछ रहा था कि बेनकाब लड़कियां कैसे बात करती हैं?"

"तुम्हारे यहां किस लड़की ने बुरका छोड़ दिया है? बशारत ने?"

नसरतुल्ला को जैसे बिजली का तार छू गया। याफिम अंधेरे में उस की घबराहट नहीं देख पाया। नसरतुल्ला ने पूछ लिया।

"किस ने, मैंने नहीं सुना?"

"बशारत ने" याफिम ने उस की ओर देखा, "क्यों, क्या बात है? चौंक क्यों रहे हो?"

"मैं, नहीं तो…कोई बात नहीं है।"

याफिम नसरतुल्ला के समीप सरक आया। उस के चेहरे पर आंखें गढ़ा कर

बोला—"मुंशी होश में हो, क्या अल्लम-बल्लम बक रहे हो ? झूठ क्यों बोल रहे हो ? सच-सच कहो !"

नसरतुल्ला कांप उठा। गर्दन झुक गयी। होंठ दांत से काट लिये। आंखों में आंसू आ गये। गनीमत थी कि अंधेरा था कि शीशियों को निकाल कर फेंक दे। चायवाला उसे मुसीबत में डाल गया था।

"चुप क्यों हो गये, बताओगे नहीं ?" याफिम ने गम्भीर स्वर में पूछा।

"मैंने तो सब कह दिया।" नसरतुल्ला ने फुसफुसा कर उत्तर दिया।

"अच्छी बात है; फिर पूछ लेंगे।" याफिम ने चेतावनी दी, "ऊटपटांग तिकड़म में फंसना ठीक नहीं है !"

"कामरेड, मैं बिलकुल सच कह रहा हूं अपनी कसम !" नसरतुल्ला का स्वर घिघिया गया।

नसरतुल्ला सच कैसे कह देता परन्तु मन ही मन सोच रहा था—शीशी इंजीनियर को दिखा कर पूछ लूंगा. सीमेन्ट को कोई नुकसान तो नहीं करेगी।

"अच्छी बात है, तुम से फिर बात करेंगे।"

"जी बहुत अच्छा !"

कब्रिस्तान के पास सड़क पर लगी रोशनी समीप आ गयी थी। सामने रास्ता साफ दिखाई दे रहा था। टट्टू स्वयं ही सीमेन्ट के गोदाम के रास्ते पर हो गया।

'अच्छा, यहां तक सवारी के लिये शुक्रिया" याफिम ठेले से कूद गया।

नसरतुल्ला गोदाम में सीमेन्ट उतार कर इंजीनियर के दफ्तर की ओर चला गया। इंजीनियर दफ्तर में मौजूद था। सरगी मेज पर रखे मिट्टी के तेल के लैम्प पर कागज की छांव लगा देता था और आधी-आधी रात तक काम करता रहता था। सुबह भी पौ फटते-फटते मजदूरों के आने से पहले ही काम पर पहुंच कर और सब चीजों पर नजर डाल लेता था। पिछले दिन के काम की नाप-जोख करके नोट कर लेता। मजदूरों और मेटों पर उस की नोट बुक का बहुत आतंक था। कोई भी गलत बात कही जाने पर वह अपनी नोट-बुक निकाल लेता और सही हिसाब दिखाकर झूठ बोलने वाले को लज्जित कर देता था।

मजदूर उसका बहुत आदर करते थे। मज़ाक में उसे 'निशाचर' चाचा कहते थे। कुछ लोगों को सरगी के रात-रात भर जाग कर काम करने से, उस की विनय और दृढ़ता से, हर समय हर बात लिख लेने से उस के प्रति संदेह भी होता था।

न जाने कैसे अफवाह फैल गयी थी कि इंजीनियर का बाप कोई रूसी 'राव-राजा, जमींदार या रईस था। उस की लगन और अथक परिश्रम के बावजूद उस के विरुद्ध कानाफूसी चलती रहती थी—रईस के बेटे को सोवियत से और मजदूरों से इतनी

सहानुभूति क्यों···? दुर्घटना में मखसूम ने बड़ी मशीन नाले में गिरा दी थी। उस के बाद से इंजीनियर बहुत सहमा-सहमा रहता था, चेहरा पीला पड़ता जा रहा था। क्या यह भी दुर्घटना ही थी ?

नसरतुल्ला इंजीनियर के दफ्तर में पहुंचा तो देखा कि सरगी कुर्सी पर बैठा मेज़ पर फैले हुये नक्शे के ऊपर बांह पर सिर रखे सोया हुआ था। लैम्प की बत्ती बढ़ कर धुआं छोड़ रही थी।

नसरतुल्ला ने बत्ती जरा नीची कर दी। पहले वह कुछ समझ नहीं पाया। इंजीनियर बड़बड़ा रहा था। नसरतुल्ला ने अनुमान किया, गहरी नींद में है, स्वप्न देख रहा है। नसरतुल्ला ने उस का कंधा झकोर कर जगाने का यत्न किया। सरगी उछल कर खड़ा हो गया और पुकार लिया :

"कहां ? जल्दी करो।"

नसरतुल्ला को पहचान कर सरगी ने तुरन्त जेब से नोट बुक निकाल ली और कुछ झुंझलाहट से बोल उठा—"नसरतुल्ला यह तुम कर क्या रहे हो ? तुम्ही बताओ, खुदाई में तुम कितना अच्छा काम कर रहे थे। मैं सब लोगों से तुम्हारी प्रशंसा करता रहता था। जब से मुंशी बने हो, तुम्हें क्या हो गया है ? तुम में दम ही नहीं रहा। तुम्हें तो विशेष रूप से सावधान रहना चाहिये। हम लोगों को बहुत ही सतर्क रहना चाहिये। कितनी देर हुई, तुम दसवां फेरा ले गये थे, आखिर क्या हुआ ?"

नसरतुल्ला आंखे झुकाये रहा। कुछ सोच कर बोला—इंजीनियर भाई, आप इतनी रात तक काम कर रहे हैं। चलिये, थोड़ी चाय ले लीजिये मैं साथ में ही रहता हूं। कहिये तो यहां ही ले आऊं।"

सरगी पर अभी नींद का खुमार बाकी था। सोचा, नसरतुल्ला उसे खुशामद से रिझा रहा है। उसने नोट बुक धप्प से बन्द कर दी। माथे पर तेवर पड़ गये—"धन्यवाद, यह चाय का वक्त नहीं है।"

"मैं···मैं" नसरतुल्ला का स्वर बहुत धीमा हो गया, "मैं आप से बात करना चाहता हूं···।"

"बेशक कहो। जो कहना है, कहो। चाय के बिना ही बात हो सकती है।

"नहीं, खास बात है। मैं आप से अकेले में बात करना चाहता हूं।"

सरगी सहमा। उसी समय बाहर से अरगाश का स्वर सुनाई दे गया। वह आंगन के दूसरी ओर किसी को कुछ कह रहा था।

"तुम्हें जो कहना है कहो।" सरगी ने अपनी आशंका छिपा कर कहा, "यहां बातें करने में क्या हर्ज है ?" नसरतुल्ला मौन खड़ा रहा। सरगी ने उसकी ओर देख कर पूछा, "क्यों, कुछ खास बात है ? मैनेजर से मिलना चाहते हो ? मैं साथ चलूं ?"

"नहीं-नहीं", नसरतुल्ला ने इंकार किया, "मेरी कसम, आप से ही बात करना चाहता था।"

"तो कहो, सुन रहा हूं।"

"मेरे यहां चलिये। चाय भी बन जायगी।"

सरगी ने माथा खुजलाते हुये सोचा, क्या बात है? गर्म चाय की प्यास भी जाग उठी थी पर ख्याल आया—नसरतुल्ला राव का बेटा है। स्वयं उस के विरुद्ध रूसी रईस की हरामी औलाद होने की अफवाह ही काफी नहीं थी! और चाय पर बुलाने का तरीका भी विचित्र था...मेरी कसम, आप से खास बात करनी है...।

सरगी ने कुछ सोच कर उत्तर दिया—"नसरतुल्ला यह चाय का वक्त नहीं है। बुरा न मानना, आधी रात बीत चुकी है। तुम फिर कभी दिन में या सन्ध्या समय आना।" इंजीनियर की बात से नसरतुल्ला को भी आतंक अनुभव हुआ। अपने क्रोध को दबा कर बोला, "बहुत अच्छा, मैं कल आऊंगा, चलियेगा?"

सरगी ने स्वीकार कर लिया।

नसरतुल्ला बिना कुछ कहे लौट गया। दोनों को ही एक-दूसरे से आशंका थी।

नसरतुल्ला अपने आंगन में पहुंचा तो उस का कुत्ता उस की ओर दौड़ आया। नसरतुल्ला ने कुत्ते को बहुत जोर की लात मार दी। कुत्ते के चिल्लाकर रोने की आवाज़ बहुत देर तक आती रही। नसरतुल्ला को कुत्ते के रोने की आवाज से भी सिहरन अनुभव हो रही थी।

सत्ताइसवां परिच्छेद

लोगों के देखते-देखते बाघ के टीले का रूप-रंग बदलता जा रहा था। मिल के लिये डाली गयी नींव के चारों ओर लोहे के गर्डर, शहतीरों और बहुत ऊंची-ऊंची बल्लियों का जंगल खड़ा हो गया था। उस के समीप ही, विशाल लट्टू की तरह घूमती कंक्रीट की मशीन की गरज गूंजती रहती थी और मशीन कंक्रीट उगलती रहती थी। कराहते हुये क्रेन कंक्रीट से भरी बड़ी-बड़ी बाल्टियां उठा कर दीवारों पर पहुंचाते जाते थे। जहां-तहां उजली, लाल ईंटों की दीवार ऊंची उठती जा रही थी।

"खुदाई तो हो गयी, अब उसारी का काम है...।" राज-मजदूर आपस में बातें करते रहते थे।

मिल की 'आधार शिला' के समीप ही शहतूत का छोटा सा परन्तु बहुत पुराना पेड़ था। पेड़ के पत्ते कुम्हला कर पीले पड़ गये थे। उसके तने पर एक तख्ता जड़ दिया गया था। इस तख्ते पर इश्तहार और नोटिस लगे रहते थे। मजदूरों का हाथ से लिखा अखबार भी वहीं चिपका दिया जाता था। उस जगह का नाम लाल चौक पड़ गया था।

निमांचा का चायखानेवाला बहुत तेज़ था। बाघ के टीले पर काम लगते ही उसने दो समावार लेकर अपनी दुकान यहां जमा ली थी। सुबह से रात पड़े तक उसके समावारों में खौलता पानी तैयार रहता था परन्तु राज-मिस्त्री और मजदूर प्राय: ड्रम के दवाई मिले जल से ही संतोष कर लेते थे। चायखानेवाला जल के उस ड्रम की ओर देखता तो उसकी आंखों से घृणा और क्रोध की चिनगारियां छूट जातीं। टीन का एक मग्गा डोरी से ड्रम में बंधा था। मग्गा प्यासों के हाथ के स्पर्श से दिन भर खनखनाता और ड्रम के साथ झूलता रहता था। सनसनाते समावारों के समीप सजे प्याले दिन भर खाली औंधे पड़े रहते। चायखानेवाले की पुकारों का भी कोई प्रभाव न होता फिर भी वह पुकारता रहता :

"मालिक, एक प्याला पीकर तो देखो! जो पिये बहुत दिन जिये! आओ प्यारे, पीकर तो देखो, दाम मत देना।"

"कौन होंठ फूंके!"

"ला तेरे प्याले में कंक्रीट भर दें।" चायखानेवाले की पुकारों का उत्तर मिलता।

चायखानेवाले ने निराश होकर जगह नहीं छोड़ दी थी। शहतूत के पेड़ के नीचे लगे तख्ते के सामने बांहें तोंद पर लपेटे घंटों खड़ा रहता और अक्षर जोड़-जोड़ कर पढ़ने का अभ्यास करता रहता। पढ़ते-पढ़ते चटकारे लेता जाता। नोटिसों और मजदूरों के समाचार-पत्र को कई-कई बार पढ़ डालता।

"खूब है भई, खूब! अखबार का क्या नाम रखा है! 'चाबुक' ठीक ही नाम रखा है। यों तो कागज ही है परन्तु पढ़ो तो ऐसी चाबुक लगती है कि तिलमिला जाये।" वह कहकहा लगा कर हंस पड़ता, "जिओ, बेटा जिओ! अपने बाप-दादा का नाम कर जाओगे।"

राज-मजदूर आवाज़ लगाते—"अरे चायखानेवाले क्या हुआ? चाबुक लग गयी?" चायखाने वाला अक्षरों पर उंगली रख-रख कर, याद हो चुकी बात, पढ़ने लगता :

"मूर्ख पति की करतूत···सब लोग जानते हैं कि सोवियत सरकार में स्त्रियों को पुरुषों के समान ही अधिकार हैं। हां-हां···परन्तु कुर्बान के बेटे संगतराश मिस्त्री नरमत," चायखाने वाला बीच में टिप्पणी जोड़ देता, "अरे वही छैला नरमत, कुर्बान का बेटा! हां तो···स्वयं मजदूरों की उन्नति में रोड़े अटकाता है। नरमत अपनी पत्नी

नज़ाकत को—अरे वही नज़ाकत, जानते हो न ! हां तो इसमें लिखा है नजाकत को औद्योगिक स्कूल में नहीं जाने देना। और सुनो, लिखा है यह काम जिम्मेवार मजदूरों को शोभा नहीं देता ।"

चायखानेवाले ने पढ़ कर सुना देने की शेखी से नाक ठोंक किया—"इस प्रकार की ओछी बातें नहीं होनी चाहिये ! क्या चाबुक लगायी है ! या अल्लाह, हंस-हंस के मर गये…।" चायखाने वाला हंसी से आंख में आ गया पानी पोंछने लगा।

"अबे, तुझे हंसी किस बात पर आ रही है ?" एक मजदूर ने प्रश्न किया।

"वाह, तुम्हें नहीं मालूम ?" चायखानेवाले ने उत्तर दिया, "लिखा है, कुर्बान का बेटा नरमत, अरे वही छैला नरमत ! वाह-वाह रे खूब छीछालेदर हुई। कैसा चाबुक लगा !"

आधी छुट्टी के समय लाल चौक में बहुत से मजदूर शहतूत के नीचे इकट्ठे हो जाते थे। चायखाने में अच्छी बिक्री हो जाती थी।

बशारत मिल मजदूरों के किशोर-कम्युनिस्ट-संघ की मंत्री थी। तख्ते पर नोटिस और अखबार लगाने की ड्यूटी उसी की थी। बशारत एक खूब बड़ी दफ्ती लिये चली आ रही थी। दफ्ती पर सफेद कागज लगा कर चित्र चिपकाये हुये। शहतूत के नीचे भीड़ ने बशारत को आते देखा तो प्रसन्न हो गये, उसे रास्ता दे दिया। चायखानेवाला पढ़कर सुनाने के लिये तैयार हो गया।

"कामरेड साबिरा, इसे कहां लगाओगी ?" चायखानेवाला आगे बढ़ कर बोला, "अखबार की जगह यह लायी हो ? वाह-वाह, चाबुक का क्या हुआ ? लाओ, इसे अखबार के ऊपर वहां लगा दें। वहीं ठीक रहेगा। लोग इसे भी देख लेंगे और अखबार भी पढ़ लेंगे। हां-हां ठीक कह रही हो ! लाओ मैं लगाये देता हूं। मेरे पास कीलें हैं।"

चायखानेवाले ने दफ्ती कीलों से पेड़ के तने पर गाड़ दी। सामने खड़े कारीगर और मजदूर मुंह खोले, आंखे फाड़े विस्मय से देख रहे थे।

कुछ अजीब से चित्र थे। सब से ऊपर नीले आकाश में एक हवाई जहाज था, उस के नीचे चिमनी से धुआं छोड़ता रेल का काला इंजन। उस के नीचे उड़नघोड़े का चित्र था। घोड़ा, काठ का घोड़ा जान पड़ता था। पंख भी थे ! नथुनों से आग की लपटें और धुआं निकल रहा था—जैसे परियों की कहानी के घोड़े होते हैं। उस के नीचे एक मरियल सा अड़ियल गधा था। गधे के कान झुके हुये थे। जाने क्यों चित्र बनाने वाले ने गधे को हरा रंग दिया था। उस के भी नीचे कालिख की पर्तें चढ़ी उल्टी कढ़ाई जैसा खूब बड़ा कछुआ बना था। काठ के घोड़े, गधे और कछुए पर सवार भी थे। सवारों के चेहरे खूब बड़े-बड़े और शरीर बहुत छोटे बने थे। कारटून

जैसे बने चेहरों को पहचानने के लिये ध्यान से देखना पड़ता था ।

चायखानेवाला सब से आगे हो गया । गधा सवार के चेहरे पर झाड़ू जैसी दाढ़ी थी । चायखानेवाले ने चित्र के समीप हो पंजों पर उचक कर देखा और उछल पड़ा । हंसी के मारे उस के पेट में बल पड़ रहा था । हाथ से पेट दबा कर बोला—"यह तो मामजान है, हमारे निमांचा का पल्लेदार मामजान ! बाबा रे बाबा, मर गये ! क्या सवार बनाया है !"

मामजान भीड़ के बीच से निकल कर आगे हो गया । उस ने चायखानेवाले को डांटा—"चुप रह बे लाल बुझक्कड़ ! जबान संभाल ! पल्लेदार तू होगा, हम कंक्रीट के कारीगर हैं !"

चायखानेवाले ने मामजान की फटकार की परवाह नहीं की, बोला—"मुबारक हो शाही सवारी ! मुबारिक हो दल के मेट साहब, कितनी दूर का सफर है ? खुदा हाफिज !" उस ने गधे की ओर इशारा किया, "लगाओ, साले को एड़ लगाओ ! साले की पूंछ के नीचे लकड़ी दो तो चलेगा ! किब्ला गधे का यह पंजर कहां से ले आये ?"

बहुत से लोगों ने गधा सवार के कारटून में मामजान को पहचान लिया । हंसी फैल गई ।

मामजान ने कंक्रीट से भरे हाथ में अपनी दाढ़ी थाम कर खीझ से बशारत की ओर देखा—"बिटिया, किसी की खिल्ली उड़ाने का क्या मतलब !"

"मामजान चाचा, इस में खिल्ली क्या ? सच ही तो है !" बशारत हाजिरजवाबी से बोली, "यही तो दिखाया है कि कौन कैसे काम करता है ! देख लो, इंजन और हवाई जहाज तो खाली है । वहां तो कोई नहीं बैठा ।"

"अच्छा-अच्छा, यह बात है" मामजान ने पूछा, "हां तो कछुए पर कौन है ?"

"खुदाई करने वाले नौजवानों का मेट ।"

"वाह, मुहम्मद सिद्दीक !"

"हां-हां लगता तो है ।"

"अरे बिलकुल वही है ।"

मामजान का क्रोध मिट गया । उसने मुहम्मद सिद्दीक की ओर देखा—"कहो बेटा, कछुआ मिला !"

मुहम्मद सिद्दीक का बहुत मज़ाक बना । लोग उस के लम्बे-चौड़े देह के कारण उसे 'देव' कहते थे । वह आस-पास खड़े लोगों से बालिश्त भर ऊंचा सर निकाले था । बेचारा किस की पीठ के पीछे मुंह छिपाता ।

"क्या कहने ! पहलवान ने क्या करामात दिखाई है !"

"मुहम्मद सिद्दीक, खपड़ी को पकड़े रहना, फिसल न जाना।"

"अरे दरी-तकिया ले आ, इसी पर सो भी रहना।"

मामजान ने बशारत से पूछ लिया—"बिटिया, घोड़े पर कौन है ?"

"उसारी वाले दल का मेट।"

"वाह साहब, इस का क्या मतलब ! हमें गधा मिला तो उसे घोड़ा क्यों ? वह कौन शाहसवार है !"

"चाचा, तुम खुद देख लो। उन्हें सप्ताह के लिये जितना काम मिला था उन्होंने उस का सैकड़ा में से पचासी तो कर दिया है। अपना भी देख लो !"

"हूं", मामजान ने फिर अपनी दाढ़ी पकड़ ली, "तो यह बात सदा के लिये हो गयी ?"

"सदा के लिये क्यों हो गई ? जिस का जैसा काम होगा हर सप्ताह वैसी जगह मिलेगी।"

"इंजन ही क्या अभी तो हवाई जहाज खाली है। जो बढ़ कर नम्बर लेंगे, उन्हें जगह मिलेगी।"

भीड़ में कहकहा लग गया—"अरे सुनो, मामजान चाचा इंजन पर बैठेंगे !"

'हौंसला तो देखो !"

"अरे वह तो हवाई जहाज की तरफ देख रहे हैं !"

"चाचा, उसारी वालों से कहो तुम्हें घोड़े पर पिछाड़ी बैठा लेंगे।"

मामजान बिगड़ उठा,—"हंसने का क्या मतलब है ? किसी को बात नहीं कहने दोगे !" वह बशारत की ओर घूम गया, "बिटिया, जो जैसा खटेगा वैसी जगह मिलेगी न ?"

"जरूर ! यहां हर सप्ताह तस्वीरें लगेंगी।"

मामजान का हाथ फिर दाढ़ी पर चला गया—"तो फिर देख लेंगे, हवाई जहाज पर न बैठे तो मामजान नहीं कुछ और कहना !"

चायखानेवाले ने खुशामद में बशारत की ओर देख कर कहा—"देखना भाई, बहुत जल्दी में बेचारे गधे की कमर न तोड़ देना।"

"चुप रह, क्या भौंक रहा है !" मामजान ने रोब से फटकार दिया, "तू अपनी पत्ती उबाल, तू कंक्रीट क्या जाने !"

"शुक्र अल्लाह का, मेरी चाय तो हर दम तैयार है।" चायखानेवाला दांत निपोर कर हंसा, "कोई चाय मांगे और न दूं तो कहना ! मैं तो सैकड़ा से एक आगे रहता हूं।"

मामजान निरुत्तर रह गया। बशारत नये अखबार का कागज खोलती हुई बोली—

"चाचाजान ! तुम क्यों परेशान हो, तुम्हारा भी किस्सा आ गया है ।"

"मेरा किस्सा ?" चायखानेवाले ने विस्मय प्रकट किया ।

"हां-हां पढ़ लो !"

"मेरा क्या किस्सा हो सकता है ?"

"यह पढ़ लो—दो भभकते समावार और एक ठंडा बेकार !"

मजदूर हो-हो करके हंस पड़े ।

"मज़ा आ गया, मज़ा आ गया यारो !" मामजान चिल्ला उठा । उस ने कंक्रीट बनाने वाले साथियों की ओर देखा, "यारो, गधे की सवारी की ज़लालत तो छोड़नी पड़ेगी ।" उस ने तर्जनी दिखाकर बशारत को चेतावनी दी, "बिटिया, अब तुम जानो, सब ठीक-ठीक बनाना होगा ।"

आधी छुट्टी पूरी हो गयी । सब लोग अपने-अपने काम पर चले गये ।

सब लोगों की आंखें कंक्रीट बनाने वाले दल की ओर लगी थीं । कंक्रीट की वैसी मशीन पहले लोगों ने कहां देखी थी ! निमांचा के पुराने लुहार, मेमार, मोची, जीन-साजवाले, कंकड़-पत्थर चबा कर, रेत और सीमेन्ट फांक कर कंक्रीट उगलने वाली मशीन का तमाशा देखने के लिये गोल बांधे खड़े रहते थे । लोगों को संदेह था कि मशीन से काम हो भी सकेगा ? फोर्डसन ट्रेक्टर की तरह ही पड़ी रह जायेगी परन्तु मशीन अविराम काम कर रही थी । विस्मय से लोगों की आंखें फटी रह जातीं ।

भीड़ के साथ नसरतुल्ला भी रोज मशीन का तमाशा देखने के लिये आ खड़ा होता था :

"मुंशी, तुम जरा दूर ही रहो !" कंक्रीट बनाने वाले मजदूर नसरतुल्ला को मज़ाक में कह देते, "गनीमत है, तुम इस मशीन को स्टेशन से नहीं लाये !"

नसरतुल्ला की गर्दन लटक जाती । आंखें चुरा कर चल देता ।

शहतूत के पेड़ के नीचे नसरतुल्ला का बशारत से सामना हो गया । बशारत नया अखबार तख्ते पर लगा रही थी । अब चायखानेवाला उस की सहायता के लिये वहां नहीं था । बशारत ने घूम कर देखा तो नसरतुल्ला पीछे खड़ा था । दुपहर की छुट्टी समाप्त हो चुकी थी । पेड़ के नीचे तीसरा कोई नहीं था । नसरतुल्ला की बशारत से आंखें चार हो गयीं । उस से पहले उस ने बशारत को इतनी समीप से कभी नहीं देखा था ।

"तस्वीर तो बहुत अच्छी बना लेती हो ।" नसरतुल्ला ने खांस कर भर्राये हुये स्वर में कहा, "बहुत ही अच्छा काम कर रही हो, मैं तो बहुत तारीफ करता हूं !" साहस कर प्रशंसा के दो-चार शब्द और भी कह दिये ।

बशारत को नसरतुल्ला की नज़र अच्छी नहीं लगी—कुछ अजीब सी, डरी हुई

सी, कातर सी। उसे ग्लानि की सिहरन सी अनुभव हुई और मुंह फेर कर च
नसरतुल्ला की आंखें उसी ओर लगी हुई थीं। बशारत के कदम और तेज हो गः अनुभव

बशारत को नसरतुल्ला की नजरें बार-बार याद आ जातीं और मन में बं। ग्लानि अनुभव होती। संध्या समय घर लौटी, तब भी सहमी हुई थी। उस दृष्टि का प्रभाव मिट नहीं गया था।

तुरसाना स्कूल का काम करती हुई गुनगुनाती जा रही थी। खाना खाते समय भी चहकती चिड़िया की तरह पुलक से गाये जा रही थी।

मां काफी रात गये नगर पार्टी कमेटी से लौटी। बहुत थकी हुई थी। मुंह-हाथ धोये और एक प्याली चाय पीने लगी। बशारत की आंखें निरन्तर मां की ओर लगी थीं। सोच रही थी—वह बात कैसे कहे; मां से कहे या न कहे?

रात और बीत गयी। तुरसाना ने मां के पास आकर प्यार किया और बिस्तर पर लेट गयी। उस का गुनगुनाना तब भी बंद नहीं हुआ था। अनाखां ने बेटी की दुविधा समझ ली थी। उसे संकेत से बराम्दे में ले गयी।

"क्या हुआ नन्ही, क्या बात है?"

"कुछ नहीं अम्मा।"

"बताती क्यों नहीं?"

"नहीं अम्मा, कुछ नहीं है। तुम फिक्र क्यों कर रही हो···!"

अनाखां ने बेटी को बाहों में ले लिया—"बेटी, ऐसी क्या बात है, मुझे नहीं बतायेगी?"

"कुछ नहीं अम्मा ··" बशारत की आंखें झुक गयीं।

"किसी ने कुछ कहा?"

"तुझे नहीं मालूम!"

अनाखां बेटी की बात सुनने के लिये मौन रह गयी। बशारत मां के आलिंगन में कांप सी गयी—"अम्मा याद है, तुम ने एक बार कहा था···।"

"घबराती क्यों हो, नन्हीं, मैं तेरे साथ हूं। अब तुम भी बड़ी हो गयी हो।"

"तुम ने कहा था···।" बशारत फिर चुप हो गयी!

"हां-हां।"

"तुम ने कहा था, तुम्हें याद नहीं?"

अनाखां को याद आ गया और उस ने स्वयं आशंका अनुभव की। अपनी घबराहट दबा कर प्यार से पूछा:

"क्या बात हुई·· कोई तुम्हारी तरफ वैसे देख रहा था?"

बशारत ने सिर मां के सीने में छिपा लिया। अनाखां ने लड़की का चेहरा उठा

"आंखें मिलाईं—"कौन था, बताओ तो कौन था ?"

"राव का लड़का, वही आवारा ।"

"वह सियार ?" अनाखां के मुंह से निकल गया, "उस ने कुछ कहा ?"

"नहीं-नहीं…।"

अनाखां को याद आया बात सच ही थी, मेरी लड़की से ब्याह करना चाहता है । हाथ अपनी गर्दन में घाव के चिन्ह पर चला गया—कल ही इंस्पेक्टर से कहूंगी…।

अट्ठाइसवां परिच्छेद

सरगी अपने वचन के अनुसार नसरतुल्ला के यहां गया था । चाय पीते-पीते नोवोगोरद और रूस के बारे में कई बातें बताता रहा । नसरतुल्ला कुछ नहीं बोला । शीशियों के बारे में इंजीनियर से पूछने का साहस नहीं हुआ । सरगी समझ रहा था कि नसरतुल्ला मन में कुछ दबाये है परन्तु उस ने आग्रह नहीं किया । चाय का दूसरा प्याला पीकर वह उठ खड़ा हुआ । आध घन्टा नसरतुल्ला के यहां रहा पर बात कुछ न हो सकी ।

नसरतुल्ला शीशियों का रहस्य समझ गया था । यह भी समझ लिया था कि वह कलमुहें चायवाले के जाल में गहरा फंस गया था । उस से छुटकारे की आशा नहीं थी । आवेश में यह भी सोचा कि याफिम के पास जाकर सच-सच कह डाले परन्तु इतना साहस न हुआ । कौन विश्वास कर लेता कि उस से बेबसी में सब कुछ कराया गया था, उस का कुछ दोष नहीं था । स्वयं जाकर मुसीबत में कूद पड़ता !

इंजीनियर चला गया तो नसरतुल्ला ने अपना छिपाया हुआ खंजर निकाल कर ऊंचे बूट में छिपा लिया । घर से निकला और अंधेरी गलियों में छिपता-छिपता दूर, नगर के दूसरे भाग में चला गया ।

चारबाजार मुहल्ले में नसरतुल्ला को चिथड़ों में लिपटा, गाकर मांगने वाला अंधा दिखाई दे गया । अंधा धरती पर बैठा अपनी दृष्टिहीन, सफेद, फूली हुई आंखें आकाश की ओर उठाये, सिर हिला-हिला कर मिशराब की गज़ल गा रहा था । नसरतुल्ला ने झुक कर भिखारी के कान में अपना नाम बता दिया ।

कुदरतुल्ला बसंत के आरम्भ में नगर से भाग जाने की तैयारी कर रहा था तो उस ने बेटे को कह दिया था—"…यहां न रह पाओ, कोई मुसीबत आ जाय तो उस

अन्धे से कह देना। वह उपाय बता देगा।"

नसरतुल्ला का विचार था कि वह अपने पांव खड़ा होगा। सहायता के लि, ी अनुभव के पास नहीं जायेगा परन्तु उस ने जैसे सोचा था, कुछ भी न हो सका। अब सहायता के लिये किस दूसरे के पास जाता ?

गज़ल पूरी हो गई तो अन्धे ने अपनी झोली धरती से उठा ली। कराहता हुआ घुटनों पर हाथ रख कर उठ कर खड़ा हुआ और अपनी बैसाखी से रास्ता टटोलता चल पड़ा। नसरतुल्ला उस के पीछे-पीछे कुछ दूरी पर चलने लगा।

अंधेरा खूब घना हो गया था। अन्धा बिलकुल सूने में पहुंच गया तो उसकी दृष्टि ठीक हो गयी। वह नसरतुल्ला को साथ लेकर नगर से निकल गया। दोनों तीन दिन और तीन रात बराबर सूने रास्तों पर चलते रहे। वे ओश पहाड़ भी लांघ कर अपने लक्ष्य पर पहुंच गये। फकीर ने नसरतुल्ला को उस के लक्ष्य तक पहुंचा दिया और दुआ देकर बिदा ले ली।

फकीर ने नसरतुल्ला को बस्माकी डाकुओं के डेरे पर पहुंचा दिया था। भय से नसरतुल्ला का रोम-रोम कांप उठा। भाग्य ने उसे गड्ढे में गिरने से बचा कर अतल खाई में डाल दिया था। उस के पिता का कुछ पता न चल सका। बस्माकियों के मुखिया कुलखोजा ने, पुराने परिचय के आधार पर नसरतुल्ला को शरण दे दी। कुछ दिन तक उसे अपने साथ ही रखा। नसरतुल्ला को खाने-पीने का कष्ट न हुआ। मांस और घोड़ी के दूध की कमी नहीं थी। कुछ दिन बाद कुलखोजा ने उसे दूसरे डाकुओं के साथ रहने के लिये पहाड़ी गुफा में भेज दिया।

गुफा में सत्तर बांके डाकू थे। प्राय: महीने भर से उस गुफा में छिपे, अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। दोपहर में सब लोग गुफा से निकल कर बाहर धूप में बैठ जाते और अपने कपड़ों से जुएं बीन-बीन कर मारते रहते। दिन में दो बार मैल से चिकने पतीले में घोड़े का मांस उबाला जाता और सब लोग उस पर भूखे भेड़ियों की तरह टूट पड़ते। छीना-झपटी में बर्तन तुरन्त खाली हो जाता। जिसके हाथ जो टुकड़ा या हड्डी पड़ जाती, ले भागता। उन की उंगलियां जुओं के खून से रंगी रहती थीं। बिना धोये उन्हीं उंगलियों से मांस नोच-नोच खाने लगते। दिन जुएं मारने में कट जाता परन्तु रात में बात-बात पर झगड़ा और मार-पीट होने लगती और चाकू-खंजर चल जाते। कत्ल हो जाता तो फैसला करने के लिये मुखिया आता। मुखिया अपराधी को गोली मार कर फिर अपने खेमे में लौट जाता। मुखिया के लौटते ही फिर झगड़े शुरू हो जाते, जुआ-पांसा चलने लगता। स्त्रियों के बारे में ग्लानिपूर्ण, जी मचला देने वाली बातें होती रहतीं। मुखिया को कत्ल कर डालने की धमकियां दी जातीं।

नसरतुल्ला के गुफा में आते ही अफवाह फैल गयी—कुलखोजा का लौंडा है।

"चाल के द्वार पर एक मोटा थलथल आदमी बैठा था। पीठ और कन्धे फोड़ों से थे। अपने कपड़ों से जुएं चुन-चुन कर बदूक के कुन्दे से पत्थर पर कुचलता जा रहा था। नसरतुल्ला की ओर नजर उठा कर बोल पड़ा—

"अरे मुखिया ने हमारे लिये भी लौंडा भेज दिया। हमारे लिये चेचक के दागों का मारा ही मिला...।"

डाकुओं के झबरी दाढ़ियों से ढके चेहरे उठ गये। आंखों में कुत्सित वासना की तरलता आ गयी। नसरतुल्ला को उन में से किसी से भी सहृदयता और सज्जनता की आशा नहीं हो सकती थी। उस का सिर चकरा गया। सोचा यहां से कैसे त्राण मिलेगा।

एक रात डाकुओं में झगड़ा हो गया। नसरतुल्ला ने मोटे डाकू पर खंजर चला दिया। वह आगा-पीछा सोचे बिना सिर पर पांव रख पहाड़ी पगडंडी पर भाग निकला। जिस रास्ते गुफा में आया था, उसी रास्ते भागा जा रहा था। उसे बच जाने की आशा नहीं थी परन्तु डाकू काफी देर बाद उसे खोजने निकले और उसे पा नहीं सके।

नसरतुल्ला जैसे भी हो निमांचा पहुंच जाने के लिये तड़प रहा था, किसी तरह लोगों की आंख बचा कर बाघ के टीले पर पहुंच जाय। मन व्याकुल था—कंक्रीट की मशीन का क्या हुआ होगा ? लाल चौक में बशारत ने नया अखबार लगाया होगा, नया अखबार देख पाने की बहुत उत्सुकता थी।

नसरतुल्ला दिन भर नगर के आस-पास के आंचल में भटकता रहा और कब्रिस्तान में छिपा रहा। किसी की नजर पड़ने की आशंका होती तो जंगली जानवर की तरह दुबक जाता। प्राण बचा सकने का एक विचार उस के मस्तिष्क में कौंध गया। चायवाले का कत्ल कर डाले ! नसरतुल्ला अपने खंजर को एक पत्थर पर पैनाने लगा, देखते ही उसे खत्म कर डालेगा। मुक्ति का दूसरा कोई उपाय नहीं था—इस से पहले यह ख्याल क्यों नहीं आया !

दूसरे दिन नसरतुल्ला चायवाले की खोज में नगर में घूमता रहा। सभी बाजारों और चायखानों में देख लिया। उस कोठरी में भी देखा जहां चायवाले ने उसे बराण्डी पिलाई थी परन्तु उसे कहीं न पा सका। सोचा—क्या वह भी नैमी की तरह भाग गया ?

नसरतुल्ला के मस्तिष्क में दूसरा विचार कौंध गया—वह धूर्त, हत्यारा भाग गया तो और क्या चाहिये ! मेरा भेद और किस को मालूम है ? अब मुझे क्या भय है ?

भूख से नसरतुल्ला की आंतें बल खा रही थीं। शरीर और कपड़ों पर धूल ऐसे चढ़ी थी कि धरती पर बैठ जाता तो दिखायी न देता। अंधेरा घना हो जाने पर वह हवेली में घुस गया। हवेली के हरम (जनाना) में अपनी मां की कोठरी में गया। उसी कोठरी में नसरतुल्ला का जन्म हुआ था। बचपन में नसरतुल्ला को पिता के क्रोध से बचाने के लिये मां इसी कोठरी में छिपा देती थी। नसरतुल्ला से मिलने के लिये

अट्ठाइसवां परिच्छेद

इंजीनियर सरगी उसी कोठरी में आया था। कोठरी को जैसे नसरतुल्ला ने अनुभव था अब भी सब ज्यों का त्यों था। चौकी पर चायदानी और दो प्याले वैसे ही थे। प्यालों की पेंदी में हरी चाय सूख गयी थी। तरबूज के बीज बिखरे हुये थे। छिलके सूख कर सिकुड़ गये थे। उनके सड़ने की गन्ध कोठरी में भरी थी। चौकी पर रह गया नान का टुकड़ा सूख कर ऐंठ गया था। नसरतुल्ला नान उठा कर चबाने लगा। उसका कुत्ता उसके कदमों में लोट-लोट कर उसके बूट चाटने लगा। नसरतुल्ला ने गहरी सांस ली, अपना घर कभी नहीं छोड़ूंगा।

कुत्ता सहसा चौंक कर गुर्रा उठा। नसरतुल्ला भी तुरन्त घूम गया। भाग्य से कमरे की दहलीज में चायवाला दिखायी दिया। चायवाला गर्दन झुका, सीने पर हाथ रख कर सौजन्य की मुस्कान से बोला :

"मुबारिक हो, मुबारिक हो, सफर से सलामत लौट आये। मियां कुलखोजा का क्या हाल है ?"

उत्तर में नसरतुल्ला फुर्ती से झुका और बूट से खंजर खींच कर चायवाले पर टूट पड़ा।

चायवाले को गिरा देना नसरतुल्ला के बूते का नहीं था। चायवाले ने हाथ के एक झटके से नसरतुल्ला का खंजर फर्श पर गिरा दिया। नसरतुल्ला भी पीड़ा से चीख कर फर्श पर गिर कर छटपटाने लगा। उसका कुत्ता कूं-कूं करता दुम दबा कर भाग गया।

"बरखुरदार, हम पर ही हाथ उठाओगे ! क्या इरादा है ?" चायवाला उपालम्भ से बोला, "पागल हो गये हो ? ऐसा ही इरादा था तो सरकार को मेरी खबर दे दी होती !"

"वह भी करूंगा।" नसरतुल्ला ने दांत पीस कर धमकाया।

"यह बात तुमने अक्ल की कही।" चायवाले ने स्वीकार किया और जेब से तहाया हुआ कागज और पेंसिल निकाल ली। कागज को सीधा कर चौकी पर प्यालों के पास रख दिया, उस पर पेंसिल रख दी। कागज पर अरबी में दो पंक्तियां लिखी हुई थीं।

"इंजीनियर तुम से मिलने आया था।" चायवाले ने बिलकुल साधारण ढंग से पूछ लिया।

"हां।" नसरतुल्ला के मुख से निकल गया और फिर पीड़ा से टूटती अपनी मुड़ी हुई बांह को पकड़ कर क्रोध में बोला—"निकल जा दगाबाज ! तेरा यहां कोई काम नहीं।"

चायवाले ने नसरतुल्ला का खंजर उठा लिया। धार को परखता हुआ बोला—"बरखुरदार, अब तुम्हें हमारी क्या जरूरत है ?" उसने एक गहरी सांस ली, "बहुत

"चा...ओं तक तुम्हारी पहुंच हो गयी है। बरखुरदार, अब तुम्हें हमारी क्या कद्र ?"

...वाला खंजर की धार को अंगूठे से परखते हुये आत्मीयता से बोला, "एक बहुत छोटा सा काम तो हमारा कर दोगे ?"

नसरतुल्ला अपने घुटनों और कोहनी के सहारे दरवाज़े की ओर सरक रहा था। वह खड़ा हो नहीं पाया था कि चाय वाले ने उसे गिरा कर पीछे खींच लिया।

× × ×

नसरतुल्ला के सहसा गायब हो जाने का समाचार पाकर इंजीनियर सरगी के मन पर आशंका का भारी बोझ आ पड़ा था। उसका मन निरन्तर डूबता रहता—जरूर कोई भयंकर संकट आने वाला है। चिन्ता के बोझ से सीने और गले में अवरोध अनुभव होता रहता, सांस में भी कष्ट जान पड़ता! मन में बहुत गहरा पछतावा था—इस अजीब बदकिस्मत नौजवान से बात क्यों नहीं कर ली! तब सरगी ने सोचा था—उतावली ठीक नहीं, उसे स्वयं ही बात करने का अवसर देना उचित होगा परन्तु क्या मालूम था कि अवसर हाथ से निकल ही जावेगा।

...नसरतुल्ला कहना क्या चाहता था? वह चला कहां गया?...अवश्य कोई असाधारण बात थी परन्तु अब सन्देह और अनुमान करते रहने, चिन्ता में मरते रहने के सिवा हो ही क्या सकता था?...जाने क्या बात थी, जाने क्या होने वाला है...?

याफिम और अरगाश ने नसरतुल्ला के भाग जाने के सम्बन्ध में कोई बात नहीं की थी। शायद वे इस मामले को उससे छिपाये थे, अपना सन्देह उसे नहीं बताना चाहते थे; प्रतीक्षा में थे कि इंजीनियर उन्हें स्वयं रहस्य बताये। अपना अपराध स्वीकार कर ले! सरगी के प्रति तो सन्देह सदा ही किया जा सकता था।

डाक्टर विकेन्ती सरगी का मित्र था। उसे डाक्टर पर पूरा विश्वास भी था परन्तु सरगी अपनी चिन्ता डाक्टर से भी छिपाये रहा। यही तो उसके स्वभाव में निर्बलता थी। दृढ़ निश्चय कर ही नहीं पाता था।

सरगी के मन में अपराध की अनुभूति थी परन्तु उसे स्वीकार कर लेने का साहस नहीं था। जानता था—मिल की योजनाओं में कोई दुर्घटना हो गयी तो सबसे पहले आपत्ति उसी पर आयेगी परन्तु यह भी तो सम्भव था कि उसकी आशंका व्यर्थ ही हो। सरगी मन की विकट दुविधा के कारण गुम-सुम बना रहता। किसी से मिलने की भी इच्छा न होती।

सरगी कंक्रीट की मशीन के पास खड़ा था। अरगाश और याफिम उसकी ओर चले आये। याफिम ने उसके कन्धे पर अपनी बांह रख कर पूछ लिया :

"सरगी भाई क्या बात है? क्या परेशानी है तुम्हें? क्या बहुत थकावट है?

ऐसे चुप-चुप, दम घोटे क्यों रहते हो ? दोस्त, यह ढंग ठीक नहीं है। अभी अनुभव॰ ही भरी गयी हैं, छतें डालने का समय आयेगा तो तुम्हारा क्या हाल होगा ?"

सरगी ने समझ लिया याफिम सब लोगों के सामने, खास कर अरगाश के सामने, अपनी मित्रता दिखाने के लिये ही सब कुछ कर रहा था। मिल मैनेजर का व्यवहार इंजीनियर के प्रति रूखा बल्कि कुछ कड़ा ही था। कई दिन से उस के व्यवहार में भी कुछ नम्रता जान पड़ने लगी थी। इंजीनियर को उस कारण भी संदेह हो रहा था। उसे अरगाश का रूखा व्यवहार ही पसंद था। वह स्वाभाविक और स्पष्ट तो था।

"याफिम भाई, आप खुद समझते हैं।" सरगी ने मुस्कराने का यत्न करके कहा, "सर्दी का मौसम सिर पर दौड़ा चला आ रहा है। सुबह-सुबह तो ओस भी जमने लगी है। कंक्रीट का काम तो आधे नवम्बर तक पूरा हो जाना चाहिये।"

"इस में क्या संदेह है।" याफिम ने स्वीकार किया, "नहीं तो हम लोग आधे में लटक जायंगे। सरगी, तुम पर भी अरगाश की छाया पड़ने लगी है। तुम्हें भी किसी बात से संतोष नहीं होता। कंक्रीट का काम दूसरे काम से पिछड़ा हुआ तो है नहीं। मांमजान तो हवाई जहाज की सवारी किये बिना नहीं मानेगा।"

"हां, वह तो बहुत अच्छा काम कर रहा है।" सरगी ने एक नज़र अरगाश की ओर देख कर स्वीकार किया।

अरगाश के माथे पर तेवर आ गये थे। सरगी से नज़र बचाये सामने देखते हुये धीमे से उस ने गुर्रा दिया—"तुम भी कहीं उस बेईमान की तरह भाग जाने की फिक्र में तो नहीं हो ?"

याफिम ने अरगाश के इस मज़ाक पर सरगी की पसली में टोहका दे दिया परन्तु सरगी मौन रहा। उस का मुंह लटक गया। सरगी ने अरगाश के मुंहफट मज़ाक का बुरा मान लिया तो अरगाश को अच्छा नही लगा, उसे यह अपनी हेठी लगी। अरगाश ने नसरतुल्ला का भी तो विश्वास किया था, उस की सहायता भी कर रहा था। सरगी के मन में कुछ वैसी बात नहीं थी तो उस ने मज़ाक का बुरा क्यों मान लिया ?

काम समाप्त होने पर मामजान नित्य ही 'हुजूर' इंजीनियर के यहां जाकर अपना संतोष कर लेता था कि उस के काम में कोई त्रुटि नहीं थी। उस का काम पूरा हो रहा था और ठीक लिखा जा रहा था। बहुत से मजदूर सरगी को 'हुजूर' कहते थे। सरगी तुरन्त अपनी कापी खोल कर बता देता और मामजान को संतोष हो जाता कि उस का काम पूरा ठीक दर्ज हो रहा था।

"हुजूर, पिछले सप्ताह भी बशारत बिटिया ने हमें हवाई जहाज नहीं दिया।" मामजान ने पूछा, 'बताइये, इस सप्ताह उम्मीद करें या नहीं ?"

"जरूर!"

"चाहिए हमारी दाढ़ी की इज्जत बच जाये !"

"जरूर, जरूर !"

"हुजूर, उसारी वाले हम से आगे तो नहीं जा रहे ?"

"ख्याल तो नहीं। तुम्हीं आगे हो।"

"हुजूर, तब तो ठीक है।"

"हां, ठीक है।"

मामजान ने अपनी दाढ़ी पकड़ कर रहस्य के स्वर में पूछ लिया :

"लोग कहते हैं हुजूर के पिता रूस में राव-राजा थे ?"

सरगी क्रोध प्रकट नहीं कर सका, आपत्ति करते भी नहीं बना। चाहता तो था कि धमका दे—झूठ है ! हुजूर कामरेड, यह बिलकुल झूठ है परन्तु मुस्करा दिया और अपनी कापी बन्द करके चल दिया।

मामजान ने दौड़ कर सरगी के कोट की आस्तीन पकड़ ली—"हुजूर, नाराज हो गये ! आप के पिता जी को बहुत नुकसान पहुंचा था क्या ? हुजूर, मुझे तो कुछ मालूम नहीं है।" वह गिड़गिड़ाने लगा, "हुजूर, हम लोगों का हिसाब तो ठीक रहेगा न ?"

"क्यों, हिसाब क्या बिगड़ सकता है ?" सरगी ने कह दिया और चाल तेज कर दी।...यह बेसिर-पैर की अफवाह किस कमीने ने उड़ा दी है ? ऐसे धूर्त आदमियों के साथ कैसे निर्वाह हो सकता है ? क्या मुसीबत है, मामजान जैसे भोले, सीधे-साधे आदमी भी उन के बकवास पर विश्वास करने लगे हैं !

सरगी का मन चाहा, मामजान को समझा देता—मैं भी लाल हवाई जहाज में बैठना चाहता हूं। उस ने घूम कर पीछे देखा—मामजान उस की ओर संदेह और अविश्वास से देख रहा था। इंजीनियर की नाराजगी से मामजान का मन खिन्न हो गया था।

कंक्रीट के मजदूरों का मेट मामजान हफ्ते भर से अपने पुराने चोगे पर तीन-तीन कमर-पट्टे बांधने लगा था। वह अपने आप को किस से कम समझता था ! क्यों न अकड़ता ? उस के बाप-दादा में से तो किसी ने इतना आराम और इज्जत पाई नहीं थी। उन्होंने कभी कंक्रीट और मिल बनाने का काम नहीं किया था। वे गधे को छोड़ कर हवाई जहाज की सवारी का स्वप्न भी नहीं देख सकते थे। यह किसे कल्पना थी कि पल्लेदार मामजान—पल्लेदार के बेटे, पल्लेदार के पोते मामजान को भी लोग ईर्ष्या के लायक समझने लगेंगे। इंजीनियर सरगी मामजान की भावना समझता था। सरगी को मामजान की भावना और महत्वाकांक्षा में सहायक और साझी होने के विचार से संतोष मिलता था। वह मामजान भी उस पर संदेह कर रहा था। इस से अधिक निराशा और कलंक की बात और क्या हो सकती थी ?

सरगी दो सप्ताह से अपनी खोपड़ी पर विकट संकट की चट्टान लटकती अनुभव कर रहा था। आखिर वह चट्टान उस के सिर पर आ पड़ी। सरगी उस के नीचे दब गया।

मिल की दीवारें आदमी के सिर से ऊंची उठ चुकी थीं। एक दिन सभी दीवारें जगह-जगह से फट गयीं और कई जगह से भरभरा कर बिखर गयीं मानों दीवारें सीमेन्ट और कंक्रीट की नींव पर नहीं, रेत के ढेलों पर खड़ी थीं।

सरगी सुबह बाँध के टीले पर पहुंचा तो मजदूरों की भीड़ गिरी हुयी दीवारों को घेरे खड़ी थी। भीड़ बदहवासी में चीख-चिल्ला रही थी। मामजान गिरी हुई दीवार की नींव में उतर गया था। उस ने ईंटों के बीच से सीमेन्ट की परतों के टुकड़े उठा कर हथेली पर मला तो सीमेन्ट चूरा-चूरा हो गया जैसे शकर की डली को मल दिया हो।

दूसरे मजदूर चिल्ला रहे थे—"बुड्ढे ऊपर आ जाओ! जल्दी बाहर आ जाओ। मलबा गिर रहा है। अरे मर जाओगे!"

मामजान को जैसे कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। वह नींव से कंक्रीट के टुकड़े उठा-उठा कर हाथों में मलता जा रहा था। टुकड़े महीन धूल बन कर उस की उंगलियों में से झरते जा रहे थे।

सरगी की नजर मामजान के हाथों की ओर थी। उस के घुटने कांप रहे थे—यह क्या हो गया! ···ऐसी संभावना जानता तो यहां मुंह दिखाने से पहले फांसी लगा ली होती! ···नसरतुल्ला यही बात छिपाये था! ···सत्यानाश! ···नसरतुल्ला कत्ल कर गया! ··· खत्म कर गया।

मामजान नींव से निकल कर सीधा इंजीनियर की ओर आ गया। कंक्रीट भरी मुट्ठी का धक्का सरगी के सीने पर मार कर चिल्लाया—"यह क्या हो गया? यह क्या तमाशा है? हमने इसी के लिये जान मार-मार कर मेहनत की थी? हम यही धूल थोप रहे थे?"

सब मजदूर चिल्लाने लगे:

"धोखा! धोखा!

"हमारे साथ धोखा!

"तुम अंधे थे?

"सब सत्यानाश कर दिया!

"हम जान लड़ाकर खून-पसीना बहा कर मर गये!

"इन बातों से क्या फायदा?"

दूसरे मजदूर भी अपने-अपने काम पर से गिरी हुई कंक्रीट इंजीनियर के सामने उंगलियों में पीस-पीस कर दिखाने लगे।

सरगी स्तब्ध खड़ा था। माथे पर पसीने की बूंदें छलक आयीं थीं परन्तु उस की नसों में खून सर्द होकर जमता जा रहा था। समझ गया उस का अन्त आ गया था, बोलने से लाभ नहीं था। जो होना था, हो गया!"

मखुनिया मखसूम दोनों बाहें उठाये क्रोध से चीखता भीड़ में से आगे बढ़ आया:

"हम ने जनम भर गुलामी झेल कर समझा था हमारे अच्छे दिन आ गये!… हम ने इसी के लिये सब जोखिमें झेली थीं? मैं हस्पताल में मरते-मरते बचा! हम ने अपना खून इसी के लिये बहाया? लानत है ऐसे काम पर! हजार लानत ऐसे काम पर?"

मामआन शांत हो गया था, उसने मखसूम को भी रोका—"चुप रह, मखुनिया, पता लगाना होगा क्या बात है? क्या धोखा है?"

"खबरदार मुझे छुआ तो!" मखुनिया और भी जोर से चेंचिया उठा, "तू क्यों बोलता है इंजीनियर के खुशामदी! हम सब जानते हैं। दुम हिला-हिला कर अपना काम बढ़ती लिखाने वाला तू क्या बोलेगा? हम ने तो अपना खून बहाया है। हम क्यों नहीं बोलेंगे? तू किस बात का रोब डाल रहा है?"

"मैं तो कह रहा हूं कि अच्छी तरह देखने, तहकीकात करने की जरूरत है।" मामजान ने सफाई दी, "चिल्ला-चिल्ला कर दिमाग गरम करने से गया होगा?"

"तहकीकात की क्या बात है! हम क्या अंधे हैं? हम ने सब देख लिया है। मखसूम फिर चिल्लाया, "यह सब इंजीनियर की दगाबाजी है। मैंने खुद अपनी आखों इसे राव के बच्चे के यहां चाय पीते देखा है, चाहे जिसकी कसम दिला लो! वह तो जान बचा कर भाग गया लेकिन यह हाथ आया! रूसी रईस का बेटा, गरीबों का खून पीने वाला और क्या करेगा? अब देखो कैसे पत्थर बना खड़ा है?"

"अबे इंजीनियर, जवाब क्यों नहीं देता? गूंगा बनने से काम नहीं चलेगा।" एक और मजदूर ने धमकाया।

"सरगी मौन रहा। निराशा में आत्म-समर्पण के भाव से उस ने चारों ओर देख लिया और निश्चल रहा। कोई उसे धक्का दे रहा था। मखुनिया ने उस की पीठ पर कई घूंसे लगा दिये:

"लाओ-लाओ यह कंक्रीट इसी दगाबाज को खिलायें:" मखुनिया ने ललकारा, "लाओ मैं इस हरामी के मुंह में देता हूं। इसे जीता नहीं छोड़ूंगा, चाहे फांसी चढ़ जाऊं।"

"खबरदार!" बहुत जोर की गरज सुनायी दी।

मखुनिया और चीखते-चिल्लाते मजदूर स्तब्ध हो गये। अरगाश लम्बे-लम्बे कदम बढ़ाता चला आ रहा था। उस ने मखसूम की ओर बढ़कर जोर से डांटा—"चुप रह

हरामखोर, बेईमान कहीं का !" वह बिल्कुल मखमूम पर चढ़ आया और कमर पर हाथ रख कर गरजा, "तू खून करके फांसी चढ़ेगा ? फिर तो कह ! दफा हो यहां से राव के कुत्ते…"

मखमून तुरन्त भीड़ में छिप गया।

"इंजीनियर कहां है ?"

मामजान एक तरफ हो गया। अरगाश को सरगी दिखायी दे गया। उसके कन्धे और गर्दन झुकी हुई थीं। चेहरे पर गहरे आतंक का भाव था।

"इन पर किन लोगों ने हाथ उठाया है ? किसने गाली दी है ? जल्दी जवाब दो !" अरगाश की दहाड़ बहुत दूर तक सुनायी दे रही थी।

कई मजदूर बोल पड़े—"इसने धोखा दिया है।"

"देखते नहीं हो सामने !"

"आप कंक्रीट तो देखिये !"

सरगी का बहुत दबा हुआ स्वर सुनायी दिया :

"यह लोग ठीक कह रहे हैं। कंक्रीट को मैंने ही टेस्ट किया था। मेरी ही गलती है, मेरा ही अपराध है।"

"बस, सुन लो ! खुद मान रहा है, इसी की गलती थी। अब बातें बना रहा है।"

'लेकिन मैं कह रहा हूं…" अरगाश ने बहुत ऊंचे स्वर में कहा। सब लोग स्तब्ध हो गये, "इस आदमी के लिये मैं जिम्मेवार हूं, सब लोग सुन लें ! इस आदमी की जमानत में मैं अपना सिर देने के लिये तैयार हूं ! किसी को कुछ कहना है ?"

मामजान मजदूरों की ओर से बोला :

"मैनेजर साहब की बात ठीक है। एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है। कम्बख्त मखुनिया ने सबको भड़का दिया। हुजूर, इंजीनियर साहब को कोई हाथ नहीं लगा सकता। भले ही उनका बाप रईस होगा; हमें क्या ! हुजूर इंजीनियर साहब, आप परवाह न कीजिये !" मामजान अरगाश की ओर घूम गया, "मैनेजर साहब, क्या बताऊं हम लोगों का दिमाग गरम हो गया। देखिये तो सही, कितना नुकसान हुआ है, कैसी चोट पड़ी है।"

अरगाश ने बांह उठा कर फौजी हुकुम दिया—"सब लोग अपने-अपने काम पर जायें। किसी के घबराने की जरूरत नहीं है। घबराने से क्या मिल जायेगा !"

अरगाश ने सरगी के कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"अच्छा आइये, बताइये तो सही आप से क्या गलती हुई ?"

सरगी ने अरगाश की ओर देखा। उस के होंठ हिले परन्तु शब्द न निकल सका। दो मोटे-मोटे आंसू गालों पर से लुढ़क गये।

नसरतुल्ला का खून से लथ-पथ शरीर उस की अपनी कोठरी ही में फर्श पर पड़ा मिला। उस का गला कटा हुआ था। फर्श पर फैला हुआ खून सूख कर काला पड़ गया था। लाश के पास चौकी पर खून के छींटे पड़ा एक कागज भी था। कागज अरबी में लिखा हुआ था।

अरगाश ने कागज पढ़ कर याफिम को बताया। तीन पंक्तियों का अभिप्राय था :

"तुम सब पर लानत ! मैं ईमानदारी से निर्वाह करना चाहता था परन्तु इंजीनियर ने बहका कर मुझे अपने जाल में फंसा लिया। रूसी सुअर पर लानत ! मिल तो बच नहीं सकेगी वह तो ढह ही जायगी।"

हवेली में मिल के दफ्तर के बाहर मजदूरों की बहुत बड़ी भीड़ लग गयी थी। नसरतुल्ला की कोठरी में मिले कागज की बात सब लोगों को मालूम हो गयी थी। लोगों को चुप रखना असम्भव हो गया था। ऐसी गवाही का क्या जवाब था ? नसरतुल्ला भी दगाबाज बेईमान था परन्तु उस ने आत्महत्या करके अपने खून से अपराध का प्रायश्चित कर लिया था।

मखुनिया मखसूम फिर भीड़ का नेता बन गया था। घूम-घूम कर, सीना पीट-पीट कर कहता फिर रहा था :

"मैंने क्या झूठ कहा था ? मैंने तो कसम खाकर कर कह दिया था कि इंजीनियर को अपनी आंखों उस के यहां चाय पीते देखा था। हम गरीबों की बात कौन मानता है ! गरीबों को खामुखाह दबाया जाता है। गरीब पर तो सदा मार है। हम तो मुसलमान हैं। हमारा चाहे कोई सिर काट ले, हम झूठ नहीं बोल सकते। मुसलमान भूखा मर जायगा, झूठ नहीं बोलेगा।"

अरगाश दांतों से होंठ काटे लाश के पास खड़ा था। चिन्ता में दोनों हाथों से अपनी पेटी पकड़े था। अरबी में लिखा कागज पढ़ लेने के बाद उस के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला था।

याफिम नसरतुल्ला की लाश के समीप मिला कागज हाथ में लिये था। उसने इंजीनियर को दिखलाकर पूछा :

"सरगी भाई, आखिर यह सब क्या रहस्य है ?"

"मैं क्या कह सकता हूं।" सरगी ने क्षीण स्वर में उत्तर दिया, "मैं कुछ भी नहीं कह सकता। मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा।"

"तुम उस का हस्ताक्षर पहचानते हो ? यह उस की लिखावट है ?"

"लिखावट तो उसी की लगती है।"

"लगती नहीं, अच्छी तरह देख कर कहो। हस्ताक्षर तो हैं नहीं।"

"लिखावट तो मुझे उस की ही लगती है।"

"क्या कह रहे हो ? सोच कर बोलो ! मजदूरों को क्या जवाब दोगे ?"

"सरगी के चेहरे पर विवशता की मुस्कान आ गयी :

"मैं क्या जवाब दे सकता हूं । आप जो उचित समझिये, कीजिये ।"

"लिखावट उसी की है ।" दरवाज़े से सुनाई दिया । सबकी नजरें उस ओर उठ गयीं । काला सूट पहने नौजवान इंस्पेक्टर बहुत गम्भीर था । इंस्पेक्टर के पीछे पुलिस का सिपाही भी था ।

"कामरेड आप को क्या मालूम ?" याफिम के माथे पर बल पड़ गये । उसने इंस्पेक्टर से पूछा, "आप ने अभी कागज भी नहीं देखा तो लीजिये !"

चेका (राजनैतिक पुलिस) के इंस्पेक्टर करीमोव ने कागज की ओर एक नज़र डाल ली परन्तु अपना हाथ उधर नहीं बढ़ाया । कमरे की सब चीजों को एक तीखी नज़र से देखता रहा । लाश की फैली हुई हथेली पर पड़े खंजर को खूब ध्यान से देखा ।

करीमोव ने पलकें झुकाये अपनी बात दुहराई—"कामरेड याफिम, लिखावट उसी के हाथ की है, मैं पहचानता हूं ।"

"मैं तो कभी विश्वास नहीं कर सकता, हरगिज नहीं । इस में षड़यंत्र है ।" अरगाश जोर से बोल कर करीमोव की ओर बढ़ आया परन्तु उस की आंख का संकेत पाकर चुप रह गया ।

"घटना और सब तथ्य हमारे सामने हैं ।" करीमोव ने पूर्ण निश्चय के स्वर में कहा, "कामरेड मैनेजर, आप इस में दखल न दीजिये । सब भेद खुल जायेगा । यह कागज़ आप को कहां मिला ?"

"चौकी पर ।"

"इसे वहीं रख दीजिये । आप सब लोग बाहर चले जायें ।" करीमोव ने सिपाही को आदेश दिया, "कामरेड, भीतर किसी को मत आने दो !"

"बहुत अच्छा कामरेड !"

करीमोव ने सरगी को सम्बोधन किया—"इंजीनियर, आप को मैंने गिरफ्तार कर लिया है । आप मेरे साथ आइये ।"

"मेरा कोई अपराध नहीं है । कामरेड, मैं आप से सच कह रहा हूं । मेरा इस घटना से कोई सम्बन्ध नहीं है ।" सरगी ने घबरा कर पुकार लिया, "याफिम भाई, अरगाश ! मैं सच कह रहा हूं । मैं इस बारे में कुछ भी नहीं जानता ।"

"घबराओ मत, अभी चले जाओ !" याफिम ने बहुत धीमे से कह दिया, "अभी चुप रहो !"

करीमोव ने याफिम को भी डांट दिया—"यह क्या हो रहा है ? परे हटिये !"

करीमोव सरगी को गिरफ्तार करके ले गया तो मखसूम भी मजदूरों की भीड़

से निकल कर हवेली से चल दिया था। वह धूल भरी सड़क पर उत्साह से नाचता पुराने नगर की ओर भागा जा रहा था। इतनी उतावली में था कि बस चलता तो उड़ जाता।

चायवाले ने मखसूम को अपने यहां आने के लिये सख्त मनाही कर दी थी—तुम खुद मेरे यहां आए तो देखते ही गोली मार दूंगा परन्तु उस समाचार को पेट में दबाये रखना सम्भव नहीं था। अब भय भी क्या था ? चेका (राजनैतिक पुलिस) चक्कर में पड़ गयी थी। उल्टी राह चल रही थी।

मखसूम अपने पीछे चली आती बुरकापोश स्त्री की ओर क्या ध्यान देता ? बुरकापोश स्त्री उस से काफी पीछे, बीस-तीस कदम पर थी। धूल से भरे, चिथड़े बुरके में लिपटी स्त्री की ओर कोई क्या ध्यान देता ? वैसी गरीब सैकड़ों स्त्रियां सब जगह फिरती रहती थीं। कोई उस स्त्री की ओर ध्यान से देखता तो एक बात जरूर खटकती—स्त्री का कद तो अच्छा-खासा लम्बा और गठीला लगता था परन्तु कदम उस के बहुत छोटे-छोटे, रुके-रुके पड़ रहे थे।

बुरकापोश कद्दावर, गठीली स्त्री मखसूम के पीछे चली जा रही थी।

उनतीसवां परिच्छेद

खोजिया और दूसरी स्त्रियां मास्को से सन्ध्या की ट्रेन में आ रही थीं। मुहल्ले, नगर और आस-पास की बस्तियों की स्त्रियां भी उन के स्वागत के लिये स्टेशन पर आ गयी थीं। खूब फूल थे, खूब मालायें थीं परन्तु स्वागत के लिए जिस धूम-धाम की आशा थी, बाघ के टीले की दुर्घटना के कारण वैसा स्वागत नहीं हो सका। उतने झंडे नहीं बन सके, न अब्दुस्समद के साथियों ने बैंड ही बजाया।

केवल अरगाश के उत्साह में कोई कमी नहीं थी, जैसे बाघ के टीले की दुर्घटना की उसे याद नहीं रही थी। ट्रेन के एक डिब्बे के दरवाजे में खोजिया को खड़ी देख कर वह गाड़ी की चाल के साथ प्लेटफार्म पर दौड़ पड़ा। उसे आलिंगन में ले लिया और जल्दी से सब के सामने दोनों गाल चूम लिए। खोजिया बेचारी बचने का प्रयत्न भी न कर सकी। फिर अरगाश मां की ओर गया और उसे भी ज़रा धीमे से आलिंगन में ले कर मिला।

याफिम रज़िया मौसी का सामान उठा कर टांगे की ओर ले चला। अरगाश ने

खोजिया की चीज-वस्त संभाल ली। कोई सहायता के लिये आगे बढ़ा तो अरगाश ने उसे परे हटा दिया। किताबों से भरा सन्दूक बहुत भारी लगा तो विस्मय से बोला—"मास्को में रह कर इतनी शौकीन हो गई हो! जान पड़ता है, पक्के अमीरों की तरह बजाजी की पूरी दुकान उठा लाई हो!"

अनाखां अरगाश का ढंग समझ नहीं पा रही थी। उसे वह सब अच्छा नहीं लग रहा था। साधारणतः अरगाश का बेलाग ढंग और मुंहफट बोल देना अनाखां को अच्छा ही लगता था परन्तु इस समय उस की बेपरवाही खल रही थी। याफिम का व्यवहार भी अनाखां कुछ समझ नहीं पा रही थी। मन की विरक्ति छिपाने के लिये बोली—"खोजिया और यह लोग लम्बी यात्रा से आयी हैं। इन्हें सामान खोलना-सहेजना है। जरा आराम करेंगी। मैं चलती हूं।"

अनाखां यह कह अपने घर लौट आयी। मन सरगी के लिये बहुत चिन्तित था। उसी के विषय में सोच रही थी, घबराहट बढ़ती जाती थी।

क्या यह सम्भव है! अनाखां माथा पकड़ कर सोच रही थी—क्या मैं ऐसे धोखे में थी? कितना भला आदमी लगता था? मुझे तो उस से बहुत सहानुभूति थी। उस के संतोष से सान्त्वना पाती थी और उस की चिन्ता के लिए सहानुभूति होती थी। कितना सहृदय, नम्र और समझदार! इतना विनयी और शिष्ट आदमी तो दूसरा नहीं देखा। बिलकुल लड़कियों की तरह चुप-चुप और शर्मीला। कितना अच्छा दिमाग। थकता तो कभी था ही नहीं। ऐसा आदमी भी विश्वासघात कर सकता है? सरगी साबोताज में रंगे हाथ पकड़ा गया। उस की निस्वार्थ सहृदयता, बुद्धिमता और लगन, असीम उत्साह सब धोखा ही था? क्या वह धोखे का ही अवतार है? क्या आदमी इतना आडम्बर कर सकता है? क्या इतने दिन में भी उसे कोई देख और समझ नहीं पाया?

अनाखां ने बहुत गहरी सांस ली—क्या मैं इतनी मूर्ख और अंधी हूं!

गनीमत थी कि लड़कियां घर पर नहीं थीं वरना तो मां की अवस्था देख कर घबरा जातीं।

अनाखां ने स्टेशन पर याफिम से बात करने का यत्न किया था परन्तु उस ने स्पष्ट कुछ नहीं कहा, उड़ते-उड़ते इशारे से कर दिये—"अन्ना, हमारी ही शिथिलता थी।...विश्वासघाती को अवसर क्यों मिलता?...हमारी सतर्कता में कमी थी।" अनाखां को याफिम की मुस्कान और आंखों से कुछ और ही आभास हो रहा था—मतलब क्या था? इस में मुस्कराने की क्या बात थी?

...लज्जित तो बहुत था।

...कोई अवसर मिलता तो मैं उस से बात करती।...हम लोगों ने धोखा

खाया, यह हमारी ही भूल थी। हम लोग उस का कितना विश्वास और आदर करते थे! अरगाश ने तो उस का कभी भी विश्वास नहीं किया इसीलिये आज उसे कोई खेद भी नहीं है। इंजीनियर के प्रति उस का संदेह ठीक ही प्रमाणित हुआ। अनाखां का सिर चकरा गया—अरगाश का संदेह ठीक निकलना कितना बड़ा दुर्भाग्य था।

अनाखां अपने मन मे उठते विरोध और पीड़ा को समझ नहीं पा रही थी···यह सब हो क्या गया! वह इंजीनियर के प्रति अपनी सहानुभूति से विवश थी···इस सहानुभूति का अर्थ क्या था? उसे अरगाश पर—यौवन के उच्छ्वास से उमगे, प्रेम के निस्संकोच आवेग से भरे अरगाश पर खीझ आ रही थी और नीच, विश्वासघाती अपराधी के प्रति सहानुभूति थी? स्वयं उस का तर्क इंजीनियर के विरुद्ध था परन्तु हृदय से वह इंजीनियर से घृणा क्यों नहीं कर पाती थी? क्या कम्युनिस्ट के लिये यही उचित था? मजदूर श्रेणी के प्रति क्या उस का यही कर्तव्य और नैतिकता थी··· ।

······क्या यह नारी के स्वभाव की कोमलता जन्य निर्बलता ही नहीं थी? सदा से ही लोग कहते आये हैं—नारी अपने शत्रु, स्वयं उस पर आक्रमण करने वाले के प्रति, उसके स्नेह को ठुकराकर उस का निरादर करने वाले और उसका सर्वस्व नष्ट कर देने वाले के प्रति भी दया से पसीज जाती है परन्तु यह क्या उचित है? यह तो अपमानजनक है। अनाखां आवेश से उठ कर कोठरी में चक्कर लगाने लगी।

अनाखां को अपने चेहरे पर गर्मी में जलन अनुभव हो रही थी। सोचा, ठंडे जल से आराम मिलेगा। वह तौलिया लेकर मुंह-हाथ धोने चली गयी। मुंह-हाथ धोकर लौटी तो बराम्दे में खोजिया दिखाई दे गयी। लड़की आंखें झुकाये कुछ सकपकाई सी लगी:

खोजिया आओ न! हाय बाहर क्यों खड़ी हो? आजाओ न!"

"खोजिया गर्दन झुकाये रही:

"अनाखां दीदी, मैं क्या करूं! वह ऐसी बातें करता है। हमारी नहीं निभ सकती। मैं उस से कभी नहीं बोलूंगी। जाने मेरे दिल को क्या हो रहा है! तुम्हारे पास चली आई हूं।"

अनाखां को अरगाश के दुख का अनुमान कर ईर्ष्या के सन्तोष की सिहरन हुई—वह भी हृदय की वेदना पा रहा है।

"अरी किस से लड़ पड़ी? यहां आ मेरे पास बैठ! बता तो सही!"

"और किस से?"

"अरगाश से!" अनाखां के चेहरे पर मुस्कान आ गयी, "लड़ पड़े!"

"अनाखां दीदी तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूं?" खोजिया ने गहरी सांस ली, "यहां निमांचा में अजीब हाल है?"

अनाखां खोजिया को बांह से पकड़ भीतर ले आई—"किस बात पर झगड़ा हो गया ?"

"मैं क्या बताऊं, मैं खुद नहीं जानती। हमारे ख्याल नहीं मिलते और क्या ? मैंने कहा था, मैंने अपना वचन पूरा कर दिया। हम लोग काम सीख आयी हैं। कोई भी करघा, लूम हो, हम चला कर दिखा दें। तुम्हारी मिल कहां है तो बोला—कई दुर्घटनायें हो गईं। जिस रोज हम यहां पहुंची, उस रोज एक दुर्घटना हो गयी थी इसलिये काम पिछड़ गया। मैंने कह दिया, दुर्घटना तुम ने होने क्यों दी ? तुम कैसे मैनेजर हो, कभी तुम्हारी मशीनें नाले में गिर जाती हैं, कभी तुम्हारी दीवारें गिर जाती हैं, कंक्रीट खराब हो रही थी तो तुम कहां थे ? जुलैखां दीदी का कत्ल हो गया, तब भी तुम्हारी आंखें नहीं खुल सकीं ?"

" बहिन, तुम्हारी बात तो ठीक है।" अनाखां ने स्वीकार किया।

"चिढ़ा तो बैठा ही था, मेरी बात से आग-बगोला हो गया। पर दीदी, मेरा क्या कसूर है ? हम तो ट्रेन में यही सोचती आ रही थीं कि मिल खड़ी देखेंगी। यहां इन की दीवार ही गिर गयी। दीदी, तुम्ही बताओ, उस की जिम्मेवारी थी तो क्या मुझे शर्म नहीं आयेगी, मुझे दु.ख नही होगा ?"

अनाखां मुस्करा दी—"तुमने यह सब बातें मीटिंग में कह दीं ?"

खोजिया अनाखां का अभिप्राय नहीं समझी पर आंखें झुकाए बोली :

"नहीं दीदी, मीटिंग में तो नहीं, हम दोनों घूमने गये थे। वहां बाग में अलूचे का पेड़ है न, उसी के नीचे खड़े बात कर रहे थे। बस वह नाराज़ हो गया।"

अनाखां को अच्छा लगा—प्रणयिनी नवयुवती की अपने प्रणयी से लड़ाई की कहानी—दोनों प्यार से सैर के लिये गये थे और बाग में अलूचे के पेड़ के नीचे किसी बात पर झगड़ पड़े।

अनाखां ने खोजिया को बाहों में ले लिया। उस के क्रोध और उस की निराशा के लिये प्यार से उस की दोनों आंखों की पलकों पर चूम लिया।

अनाखां की नज़र दीवाल पर लटकी घड़ी की ओर गयी। अभी समय अधिक नहीं हुआ था। उसने सोचा—रात पड़ गयी है तो भी क्या, कोई परवाह नही। मैंने अभी तक बात क्यों नहीं की ? मुझे भी बोलना चाहिये था।

अनाखां की सहसा गंभीरता से खोजिया को कुछ विस्मय हुआ।

अनाखां बोली—"बुरा न मानना। एक बहुत जरूरी काम है। मैं जा रही हूं।"

"दीदी, मुझे तो आपने कुछ भी नहीं बताया। मैं क्या करूं ?"

"बात करूंगी, तुम चिंता न करो" अनाखां ने आश्वासन दिया, "तुम मेरे साथ क्यों नहीं चलती ? आओ, साथ चलो !"

अनाखां ने लैम्प की बत्ती बहुत नीची कर दी। खोजिया के साथ बाहिर निकल गई। शुक्ल पक्ष के पहले सप्ताह की चांदनी थी। चांदनी में दोनों चुपचाप चली जा रही थीं। खोजिया अनाख़ां की गम्भीरता का ख्याल कर मौन थीं।

अनाखां सोचती जा रही थी—वे लोग सो भी गये होंगे तो भी जगा देगी। ऐसी अवस्था में नींद आ कैसे जायगी। सोफिया से भी बात करूंगी। उसे मालूम नही याफिम भाई क्या कर रहे हैं! देखूंगी, यह मालूम होगा तो अपने पति को क्या कहेगी!

अनाखां ने दृढ़ निश्चय कर लिया था, क्या करना है। सोच लिया था—सरगी को करीमोव ने गिरफ्तार कर लिया था परन्तु याफिम ने क्या किया? वे क्यों नहीं बोले? चुप क्यों रहे? उन के मुंह में जुबान नहीं थी? यह कैसी चौकसी और सतर्कता है? याफिम क्या उन्हें नही जानते? उन का इतना आदर और विश्वास करते थे तो फिर उन की सहायता के लिये बोले क्यों नहीं?

...सन्देह तो किसी पर भी कर लिया जा सकता है। किसी को भी बदनाम कर दिया जा सकता है। यदि सोफिया या मुझ पर ही ऐसा कलंक लगा दिया जाता तो भी याफिम चुप रह जाते? तब भी क्या अपने साथियों से सही कह देते—हम विश्वाघाती को पहिचान नहीं सके, यह हमारी शिथिलता थी।

...अरगाश को क्या हो गया? वह तो इतना मजबूत आदमी है। उस की सहृयता और साहस कहां चला गया? लोग तो कहते हैं कि दीवार गिरने की खबर अरगाश को मिली थी तो उस ने कहा था कि सरगी की जमानत में वह अपना सिर देने को तैयार है! योजना के मैनेजर से, कम्युनिस्ट साथी से ऐसी ही आशा उचित थी। अब वह लोगों को क्या मुंह दिखायेगा? नसरतुल्ला का कागज़ देखा तो होश उड़ गये! इतना ही साहस था? इतना है तो खोजिया को क्या मुंह दिखाने गया था?

नसरतुल्ला की मृत्यु के लिये अनाखां को बहुत दुःख था परन्तु मरने से पहले वह जो कुछ लिख गया था, उस के लिये घृणा और क्रोध भी था। मामजान ने अनाख़ां को बताया था कि सरगी को गिरफ्तार करके ले जा रहे थे तो उस ने कातर होकर कहा था—विश्वास रखिये, मेरा अपराध नहीं है। उस ने लोगों से सहायता के लिये अनुरोध किया तो करीमोव ने उसे बहुत ओर से डांट दिया। उस के पास एक सिपाही को खड़ा कर दिया। किसी को कुछ बोलने का साहस न हुआ। यह तो बहुत अत्याचार है, कैसी हृयदहीनता है! अनाखां ऐसी क्रूरता का विरोध किये बिना न रहती थी। सहृदय, ईमानदार साथी पर अत्याचार नहीं होने देगी।

अनाखां ने गली में से ही देखा, याफिम के घर में अभी प्रकाश था। वे लोग अभी जाग रहे थे। ऊपर जाकर देखा, सोफिया और याफिम चाय पी रहे थे। सोफिया की

बच्ची उस की गोद में थी। लड़की खूब स्वस्थ लग रही थी। मां की गोद में बैठने लग गई थी। घर में सुख-संतोष दिखाई दे रहा था। अनाखां को उन की शांति खल गई।

अनाखां कमरे में कदम रखते ही बोल पड़ी—"याफिम भाई, मैं तो आप को ऐसा नहीं समझती थी। आप 'साबिर' के गुरू थे। आप मेरे भी गुरू हैं इसीलिये आप के पास आई हूं। आप यह सब क्या देख रहे हैं और चुप हैं? यह करीमोव कौन है? चेका का इंस्पेक्टर है तो उस का काम ईमानदार लोगों की रक्षा करना होना चाहिये…।"

"ठीक कह रही हैं आप, वह बहुत होशियारी से काम कर रहा है। मैं। खूब जानता हूं।" अनाखां को आत्मीयता और आश्वासन भरा स्वर पीठ पीछे से सुनाई दिया।

अनाखां सांस रोक कर घूम गई। आखों पर विश्वास न हुआ। सरगी उस के पीछे कोने की कुर्सी से उठ आया था। अनाखां को अपनी आंखों पर विश्वास करना ही पड़ा। सरगी ने लजाते हुये हाथ आगे बढ़ा दिया था। वही पीला, दुबला सरगी परन्तु उसके चेहरे पर मुस्कान की चमक थी।

विस्मय में अनाखां जैसे अपने आप में न रही थी, मुंह से अकस्मात निकल गया—"सुनिये, यहां आप क्या कर रहे थे?"

"मैं इन्हें बता रहा था," सरगी ने उत्तर दिया, "चेका के इन्सपेक्टर ने कितनी जल्दी असल अपराधी को पकड़ लिया। बहुत ही धूर्त और खतरनाक आदमी है। मैं तो सुनकर हैरान रह गया।"

याफिम ने कनखी से अनाखां की ओर देख कर अपनी मुस्कान दबा ली—"जल्दी तो नहीं कह सकते, कुछ तो जरूर भटके।"

अनाखां कुछ समझ ही न पा रही थी। उसने खोजिया की ओर देखा। लड़की भी भौंचक्क थी। अनाखां ने सोचा—यह मन में क्या सोचती होगी? मैं याफिम से कैसे बोल गयी? याफिम भी क्या सोचते होंगे?

सरगी ने अनाखां का हाथों अपने हाथ में लेकर दबा लिया। अनाखां को लगा—सरगी उसकी भावना को खूब समझ रहा है। कैसे न समझता? दोनों बच्चे तो थे नहीं।

सरगी हाथ सीने पर रख कर बोला—"मैं बहुत आभारी हूं। अपने कष्ट और चिन्ता में, अपनी असफलता और अपमान में, जब लोग मुझे किसी रूसी रईस की अवैध सन्तान बता रहे थे, आपकी सहानुभूति से मुझे बहुत बल मिला है। क्षमा कीजिये, रूस में हम लोग किसी महिला के प्रति आदर प्रकट करना चाहते हैं तो उस का हाथ चूम कर उसका अभिवादन करते हैं परन्तु मैं आपको परेशान नहीं करूंगा। उस कल्पना से ही सन्तोष कर लूंगा। कामरेड अनाखां, मेरे मन में आपके प्रति बहुत आदर है क्योंकि…"

"क्योंकि क्या; सभी लोग जानते हैं कि वह बहुत भली है, आदर के योग्य है।" याफिम ने सरगी की दुविधा में सहायता के लिये कह दिया।

"हां बिलकुल, मैं यही कहना चाहता था।"

"अच्छा आओ, चाय तो लो। खोजिया तुम भी लो।" याफिम बोला, "तुम लोग लोगे तो शायद सरगी भी मान जाये। यह तो तकुल्लफ किये जा रहा है कि हमारे घर में शक्कर खत्म हो जायेगी। ऐसी ही चिन्ता-तकुल्लुफ में यह अपने घर में भी कुछ नहीं खाता। तभी तो सूख कर कांटा हो रहा है।"

अनाखां की आंखें झुकी रहीं। उस ने कुर्सी मेज के समीप खींच ली और बैठ गई। खोजिया को भी अपने साथ बैठ लिया। सरगी अल्हड़ लड़के की तरह झेंपता हुआ मेज पर उस के सामने कुर्सी लेकर बैठ गया।

अनाखां ने अपना संकोच छिपाने के लिये सोफिया से बात की—"बहिन ! तुम भी क्या करती हो, बच्ची को इस समय तक लिये बैठी हो ? सुलाया क्यों नहीं !" अनाखां अपने स्वर का कम्पन छिपा न सकी।

"कोई बात नहीं बहिन ! ऐसे सौभाग्य का अवसर सदा थोड़े ही आता है।" उस ने चाय का प्याला अनाखां के सामने कर दिया।

सरगी चाय के दो घूंट लेकर अनाखां को सुनाने लगा—"करीमोव, सरगी को चेका में ले गया। उसे एक कमरे में ले जाकर दरवाजा बन्द कर लिया। उस से तहकीकात करने के बजाय उसे बाहों में ले लिया और बोला—मुझे अफसोस है आप को परेशानी हुई लेकिन अभी थोड़ी देर में रहस्य प्रकट हो जायगा और आप अपनी परेशानी भूल जायेंगे। करीमोव ने सिगरेट का पैकेट जेब से निकाल कर मेज पर रख दिया। काफी देर तक दोनों प्रतीक्षा में मौन सिगरेट फूंकते रहे। कमरे के बाहर बहुत से कदमों की आहट पाकर करीमोव ने उठ कर दरवाजा खोला। एक बहुत गहरे काले आदमी को हिरासत में भीतर लाया गया। उसे देख कर विश्वास कर लेना कठिन था कि वह वास्तव में यूरोपियन था। सिपाहियों के पीछे-पीछे बुरका ओढ़े एक रूसी जवान था।

करीमोव ने काले आदमी को सम्बोधन किया—"आइये, यूरोपियन मिस्टर ! आखिर आप से भेंट हो ही गई।"

आगंतुक काले आदमी ने गर्दन झुका कर आदाब से उत्तर दिया—"मिस्टर चेका, आप मुझे कोई और समझ रहे हैं। मैं अफगान हूं। मेरा नाम मुहम्मद सय्यद है। मैं चाय का व्यापार करता हूं।"

रूसी नौजवान ने अपना बुरका एक तरफ रख दिया और करीमोव के हाथ में किसी चोगे से फाड़ी हुई रेशमी मगजी थमा दी।

करीमोव ने देखा, अफगान के चोगे पर से मगजी गायब थी। मगजी खींच कर

फाड़ने के कारण धागे खिंच कर लटक आये थे।

रूसी जवान ने अफगान की ओर संकेत कर करीमोव को बताया—"यह मगज़ी को चबा लेना चाहता था पर मैंने इस से छीन ली।"

करीमोव ने मगज़ी को टटोल कर—"इस में तो छोटी-छोटी शीशियाँ हैं, शायद प्रूसिक तेजाब है। चाय के व्यापार में रस की क्या जरूरत पड़ती है ?"

"मैंने तो यह चोगा मशद में एक फकीर से खरीदा था। मुझे कुछ मालूम नहीं इस में क्या था, क्यों रखा था और किस काम आता है।

"सम्भव है, हो सकता है।" करीमोव ने स्वीकार कर लिया।

उस के बाद सिपाही कमरे में मखसूम और मास्टर नैमी को ले आये। मखसूम भय से कांप रहा था। करीमोव ने सरगीं को बताया कि चायवाले ने नैमी को देखा तो उस पर चीते की तरह झपट पड़ा। एक सिपाही ने बीच में हो कर उसे बचाया...।

अनाखां मौन सुन रही थी। इंजीनियर उसे ही सम्बोधन कर के सुना रहा था जैसे कमरे में दूसरों की उपस्थिति भूल गया हो। अनाखां भी अनुभव कर रही थी। उसे एक बहुत सूक्ष्म सी गड़न हृदय में अनुभव हो रही थी। खोजिया बार-बार अनाखां की ओर देख लेती थी। उसे अनाखां की झेंप में कुछ ऐसा लगा कि लड़की ने आंखें अपने चाय के प्याले पर झुका लीं। उसे भी अनुभव होने लगा।

सरगी कहता गया—"करीमोव तो मेरे प्रति इस प्रकार आदर से बात कर रहा था जैसे अपराधियों को पकड़वा देने का श्रेय मुझे ही है; जैसे मेरी कायरता और निराशा बहुत आदर के योग्य हो। जैसे मेरी इस अवस्था उसे सहायता मिली हो।"

याफिम बोल पड़ा—"करीमोव के व्यवहार के लिये कुछ कारण होगा ही परन्तु मैं तो अनुभव कर रहा हूं कि इन सब दुर्घटनाओं के लिये अन्ततः उत्तरदायित्व मेरा है। जुलैखां मुझे योजना का उत्तरदायित्व दे गई है परन्तु मैं उसे निबाह नहीं सका हूं। मैं इस सम्मान के योग्य नहीं था। इस का कारण है कि हमने मजदूरों की राजनैतिक शिक्षा को उचित महत्व नहीं दिया। ऐसे महत्वपूर्ण काम को हम ने बेचारे 'किशोर कम्युनिस्ट संघ' के लोगों—बशारत और अब्दुस्समद पर, हाथ से लिखे अखबार पर छोड़ दिया है।

"बेचारे जितना कर सकते हैं कर तो रहे हैं परन्तु हमारी ओर से बहुत शिथिलता रही है। हम लोग बिलकुल निश्चिंत हो कर बैठ गये थे। हम लोगों का कार्य संगठित नहीं था। आप लोग सोचिये, किसी ईमानदार साथी के रूसी राव-राजा का बेटा होने की अफवाह उड़ा कर बदनाम कर दिया जा सकता है तो स्पष्ट है धूर्तों के लिये लोगों को बहकाने का खूब अवसर है। हो सकता है, ऐसी अफवाह मजदूरों में इंजीनियर को अच्छा या बड़ा आदमी समझ लेने के कारण कल्पना से फैल ही गयी हो

या इसके पीछे कोई षड़यन्त्र भी हो ! परन्तु यह मजदूरों में अशिक्षा के कारण ही हो सका है। इस अशिक्षा का उत्तरदायित्व किस पर है ? यह हमारी सतर्कता की कमी के कारण ही सम्भव हुआ। जहां ऐसी बातें हो सकती है वहां और भी बहुत कुछ हो सकता है…।"

अनाखां ने गहरा सांस लेकर अपने हाथों की मुट्ठियां कस लीं और बोल पड़ी—"याफिम भाई, सच कहती हूं, बिलकुल-बिलकुल यही बात मैं कहना चाहती थी…।"

"इस समय अरगाश भी आ जाता तो कितना अच्छा लगता।" सरगी बोल पड़ा।

"अरगाश बेचारा कैसे आ जाता!" सोफिया ने याफिम की ओर संकेत किया, "यह उस बेचारे पर सदा बिगड़ते ही रहते हैं, बहुत सख्ती से बात करते हैं; सदा टोकते रहते हैं। मुझे नहीं अच्छा लगता।"

खोजिया, सोफिया की बात से ज़रा चौंक गयी। उसकी असुविधा केवल अनाखां ही भांप सकी। अनाखां के मन में आया, लड़की को बांहों में लेकर समझाये—जा उस बेचारे से अच्छी तरह बात कर। लोग उस पर बिगड़ते ही रहते हैं।

अनाखां ने मन की बात दबा ली, सोचा—लड़की स्वयं ही समझ लेगी क्या उचित है।…ऐसी बातें कहीं सलाह और परामर्श से होती हैं !

तीसवां परिच्छेद

जाड़ा आ रहा था। वृक्षों के पत्ते कभी के झड़ चुके थे। हवा का स्पर्श शरीर को बेधने लगा था। आकाश में मटियाये बादल घुमड़ते रहते थे। ठंड से जमी वर्षा या बरफ किसी भी समय आरम्भ हो सकती थी। सूर्य के दर्शन कठिनाई से ही होते थे। बाघ के टीले पर मज़दूर कीचड़ को रौंदते काम में लगे रहते थे। आशंका बनी रहती थी, नलों में पानी जम कर नलके बन्द न हो जायें। मिल की इमारत का काम चौबीसों घण्टे चल रहा था। रात में भी दिन की तरह मज़दूरों की पूरी पाली काम करती थी।

मामजान ने अपने साथी कंक्रीट के मज़दूरों को समझाया—"पार्टी ने फैसला किया है कि जितना नुकसान हुआ है, उसे पूरा करके दम लेंगे।" उसने मुस्कराकर दाढ़ी पर हाथ फेरा, "भैया, रात की पाली में तो वही लोग लिये जायेंगे जो खुद अपना नाम देंगे, और उन्हें खास काम करके दिखाना होगा।"

मामजान ने अपनी बात पूरी करके हवाई जहाज पर सवारी करके दिखा दी थी परन्तु बाघ के टीले पर मदद में लगे मज़दूरों में दीवारें गिरने की दुर्घटना से फैल गयी निराशा और हतोत्साह का प्रभाव बिलकुल नहीं मिट गया था। मिल का काम शुरू करने के दिन लोगों ने पंचायती काम में जैसा उत्साह दिखाया था, वह बात नहीं आ पायी थी। नगर के अधिकारी भी अब पहले की तरह उदार सहयोग नहीं दे रहे थे। पहले अरगाश टेलीफोन पर बात करके जो करा लेता था, अब उसके लिये उसे तीन-तीन चक्कर लगाने पड़ते थे।

अरगाश बहुत थका-थका सा रहता था इस कारण बात-बात पर चिढ़ भी जाता था। रात-रात भर दफ्तर में काम करता रहता। उसके कमरे में सिगरेट का धुआं बादलों की तरह उमड़ता रहता था। जाड़े के कारण चेहरे पर खुश्की आ गयी थी। हजामत नहीं बना पाता था। चेहरे पर दाढ़ी बढ़ी रहती थी। शक्ल बंजारों जैसी लगती थी। स्वभाव पहले से अधिक चिड़चिड़ा हो गया था। न उसे स्वयं चैन था न किसी दूसरे को चैन लेने देता था।

बार-बार टेलीफोन करने पर उसे उत्तर मिलता :

"कामरेड, आखिर किसी बात की हद होती है। आपने तीसरी बार मेरी नींद खराब की है। मैंने टेलीफोन एक्सचेंज को कह दिया था कि मेरा टेलीफोन आप से न मिलायें। जान पड़ता है, उन लोगों से आप का कुछ खास सम्बन्ध है। आप किसी को सोने ही न दें यह ज़ुल्म की हद है। यह शरारत नहीं तो क्या है ? मैं आपको बीस बार कह चुका हूं कि मेरे पास और मज़दूर नहीं हैं। पाला केवल आपके यहां ही नहीं, हमारे यहां भी जम रहा है। मैं क्या कर सकता हूं ? अगर आप मुझे इस तरह परेशान करेंगे तो मुझे नगर पार्टी कमेटी में आपकी शिकायत करनी पड़ेगी !"

अरगाश उत्तर देता—"पार्टी कमेटी में क्यों शिकायत करोगे, यहां आकर मेरा ही गला न काट दो !"

"अपना गला तुम खुद काट रहे हो। इसमें किसी दूसरे का दोष नहीं है।"

"मैं तो कुछ नहीं कर रहा हूं लेकिन काम के लिये जरूरत होगी तो मैं रात में भी फोन करूंगा। यह बताइये, आदमियों का क्या होगा ? मुझे पांच आदमी जरूर चाहिये !"

"तुम्हारा दिमाग खराब है। मैं इस समय बात नहीं कर सकता।"

"सुनो, फोन रख दोगे तो मैं फिर फोन करूंगा। तुम इतने समझदार हो कर कैसी बात कर रहे हो ! तुम्हें जो शिकायत करनी है, कर लो। मैं पार्टी कमेटी को जवाब दे लूंगा।"

अरगाश स्वयं चैन से नहीं बैठता था तो अपने मातहत लोगों को कैसे आराम लेने

देता ! उसे जहां से भी, जैसे भी आदमी मिलते, पकड़ लाता था परन्तु इंजीनियर को दूसरा ही उत्तर देता ।

"और कारीगर कहां से मिलेंगे ? मैं आदमी पैदा थोड़े ही कर सकता हूं । जो आदमी हैं, उन्हीं से काम लीजिये ।"

सरगी ने कहा—"आदमी थक गये हैं । मज़दूरों में वह उत्साह भी नहीं है; उन के मन में ख्याल बैठ गया है कि उन के साथ धोखा हुआ है । बात भी ठीक है, उन की छः सप्ताह की मेहनत मिट्टी हो गई । रात की पाली में काम ऐसा-वैसा ही होता है……।"

"मतलब क्या ? क्या तुम भी थक गये हो ? यह थकने का समय नहीं है । हम मोर्चे पर खड़े हैं । मोर्चे पर ऊंघना और कराहना नहीं होता ।"

एक दिन सरगी ने अरगाश से बात की ।

"नरमत को जानते हो ? उसे जाने क्या हो गया है ? रोज़ ही आधा दिन बरबाद करता है…।"

"नरमत को ? नरमत को मैं नही जानता ?" अरगाश झुंझलाया, "आप कह क्या रहे हैं ? आप को क्या हो गया है ? आप साबोताजी लोगों को इतना सिर क्यों चढ़ा रहे हैं ? मुझे आप के विरुद्ध भी कुछ करना पड़ेगा । आइये मेरे साथ !" अरगाश सरगी को साथ लेकर चल दिया ।

दरवाज़े में ही अरगाश और सरगी का रास्ता याफिम ने रोक लिया और बोल पड़ा—"क्यों, वहां भागे जा रहे हो ? कौन दगा दे रहा है ? साबोताजियों को तो ठीक करना ही पड़ेगा !"

याफिम को देख कर अरगाश खिल उठा । याफिम केन्द्रीय कमेटी की मीटिंग के लिये समरकन्द गया था । वहां उसे काफी समय लग गया था । सब काम का बोझ अकेले अरगाश पर ही पड़ गया था ।

"आप कहां से टपक पड़े ? किस गाड़ी से आये ?" अरगाश ने पूछा ।

"दोपहर की गाड़ी से ।"

"गाड़ी क्या लेट थी ?"

"नहीं तो । बिलकुल ठीक टाइम पर पहुंची ।"

"तो आप थे कहां ? मीटिंग में क्या हुआ ? वे लोग बहुत नाराज़ तो नहीं थे ।"

"जरूर थे । जवाब देना मुश्किल हो गया था परन्तु अब काफी सहायता देने के लिये तैयार हो गये हैं । कमेटी ने कहा है कि हमारा नुकसान पूरा कर देंगे लेकिन फिर कोई गलती नहीं होनी चाहिये । खूब अच्छे तीस मेमार और फिटर मिस्त्री भेजने का आश्वासन दिया है ।"

"तीस ?" अरगाश और सरगी दोनों एक साथ विस्मय से बोल पड़े।

"हां तीस।" याफिम ने बताया, "लेनिनग्राद की स्तेपान खालतूरिन मिल से हमें पूरी सहायता और परमर्श मिलता रहेगा। मिल हमें दो ट्रक और एक क्रेन भेज रही है।" याफिम जेब से एक कागज निकाल कर खोलते हुये बोला, "यह पूरी लिस्ट है। तुम पढ़ कर देख लो…।"

अरगाश ने याफिम के हाथ से कागज झपट लिया। सरगी कागज उस के हाथ से लेकर पढ़ने लगा। अरगाश ने याफिम को ललकारा।

"यह सब खबरें अब तक छिपाये हुये थे ! मेरी राइफल के कुन्दे की कसम, आप पर मुकद्दमा चलाया जाना चाहिये। आप अब तक कर क्या रहे थे ?"

"कुछ नहीं, चाय पी रहा था।" याफिम मुस्कराया।

"क्या ?"

"चाय पी रहा था।"

"चाय पी-पीकर थकावट उतार रहे थे ?"

"तुम भी अजीब आदमी हो। मैं लाल चौक में मजदूरों को इस खबर की चाय पिला-पिला कर उन की शिथिलता दूर कर रहा था। मजदूरों ने यह सब सुना तो उत्साह से उछल पड़े। तुम ने सुना नहीं कैसे नारे लगा रहे थे ? हमें-तुम्हें साहस और उत्साह चाहिये तो क्या मजदूरों को उस की आवश्यकता नहीं है ?"

"हूं, अच्छी बात, देखूंगा !"

"देखूंगा, तुम क्या देखोगे ?" याफिम ने अरगाश को टोक दिया, "तुम सदा स्वयं ही सब कुछ कर सकने की बात सोचते हो। मैनेजर के लिये यह ढंग उचित नहीं है। तुम सामूहिक ढंग से, लोगों में मिल कर, लोगो को साथ लेकर क्यों नहीं सोचते !" मामजान और नरमत को अपने से अलग क्यों समझते हो ? तुम उन्हें अपने साथ नहीं मिला सकते इसीलिये उन से साबोताज की आशंका हो सकती है। उन को साथ मिला कर ही हमारा बल बढ़ सकता है।"

नरमत का नाम सुन कर अरगाश को क्रोध आ गया—"जी हां, मैं नरमत का भरोसा करूं ? उस कट्टर मुल्ला का ? ऐसे लोगों को ही आप जनता समझते हैं ? जनता ऐसे लोग हैं या हम हैं ? मैं मजदूरों में से ही उठा हूं।"

"उठा हूं ?" याफिम ने तर्जनी उठा कर टोका, "अरगाश, अपने आप को मजदूरों से ऊपर उठ गया मत समझो। मजदूर बने रहने में ही हमारा बल है।"

अरगाश अपनी झेंप छिपाने के लिये हंस कर बोला—"भैया, आप से बहस करना मुश्किल है।"

सरगी ने कह दिया—"बहस करने की आवश्यकता क्या है, जो सीधी बात है करो !"

"मैं तो सीधी ही बात कहता हूं।" अरगाश ने आग्रह से कहा।

"सत्य को समझने के लिये सब से पहले अपनी भूल मानना आवश्यक होता है।" याफिम ने कहा, "अपनी भूल को सब के सामने स्वीकार कर लेना आवश्यक है। अपनी भूलों को जनता से छिपाना अपने आप को धोखा देना है। अपनी भूल स्वीकार कर लेना निर्बलता नहीं है, उस से बल मिलता है। मैं स्वयं अपनी भूलों को सब के सामने मान लेना चाहता हूं।"

"वह तो मैं मानता हूं" अरगाश ने कहा, "परन्तु चतुराई निबाह सकना मेरे बस का नहीं है। मैं किसी की खुशामद करने के लिये तैयार नहीं हूं। यह विद्या मैं अब तक कहीं सीख सका और सीखना भी नहीं चाहता। नरमत छैले को मैं ठीक कर लूंगा। इस मामले में आप न बोलिये! मैं उसे सीधा कर के छोड़ूंगा। वह मुझे बेवकूफ बनाना चाहता है। उस ने मुझे समझ क्या रखा है! वह समझता क्या है कि मैं उस की अज़ां पर दिन में पांच बार काम रुक जाने दूं? उसे यह सब करना है तो किसी मुल्ला के यहां काम ढूंढ़ ले!"

याफिम ने विरोध में सिर हिलाया—"नमाज़ पढ़ने के अपराध में तो किसी को काम पर से नहीं हटा दिया जा सकता!"

"लोगों को मजहबी बनाने की जिम्मेदारी मुझ पर नहीं है। काम में अड़ंगा लगाने वालों को मैं नहीं रखूंगा!"

तुम्हारा क्या मतलब है?" याफिम ने विस्मय से पूछा, "तुम शिकायत करते हो कि और मजदूर चाहिये। एक-एक मजदूर के लिये तुम झगड़ा करते हो और जो काम कर रहे हैं उन्हें निकाल देना चाहते हो?"

"यह तो वास्तव में समस्या है।" सरगी ने विचार प्रकट किया।

अरगाश की अनिद्रा से सूजी हुई आंखें सरगी की ओर उठ गयीं। याफिम ने अरगाश को कोहनी से पकड़ कर अपनी ओर खींच लिया—"सुनो, तुम्हें हो क्या रहा है? सूखते चले जा रहे हो, चेहरा कैसा पीला पड़ गया है? तुम शेव क्यों नहीं करते? खोजिया से तुम कब मिले थे?"

याफिम का अनुमान ठीक ही था। अरगाश को कई दिन से जूड़ी का ज्वर हो रहा था। युद्ध के समय अरगाश को महीनों जंगलों और दलदलों में रहना पड़ा था। मच्छरों के काटने से उस के रक्त में मलेरिया के कीटाणु हो गये थे, उस का चेहरा बहुत पीला और सूजा हुआ सा लगता था। याफिम समरकन्द में था तो अरगाश पर ज्वर में दोहरा काम आ गया था। शेव करने की फुर्सत नहीं मिलती थीं।

"अरगाश, तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है। तुम्हें आराम करना चाहिये।" याफिम ने कहा।

"नहीं, मुझे कुछ नहीं है।" अरगाश ने सिर हिला दिया।

"नहीं-नहीं, इस की तबियत ठीक नहीं है। खामुखाह् ज़िद् कर रहा है।" सरगी ने कहा।

याफिम ने अरगाश के कन्धे पर हाथ रख कर आदेश दिया—"तुम अभी जाओ, लेट कर आराम करो। हम लोग सब काम देख लेंगे।"

सरगी ने भी अरगाश को समझाया—"याफिम भाई आ गये हैं। अब तुम्हें फिकर क्या है? यह सब देख लेंगे।"

अरगाश दो कदम दरवाजे की ओर बढ़ा और रुक गया। उस का मन जाने को नहीं था।

याफिम ने अपने हाथ के कागज मेज़ पर रख दिये। रूमाल से माथे पर आया हल्का-हल्का पसीना पोंछ लिया। कुर्सी उस के बोझ से चर्रा उठी।

बरामदे से किसी के उत्तेजना में बोलते चले आने की आहट सुनाई दी। किवाड़ धक्के से खुले। मामजान दिखाई दिया।

मामजान सिर से एड़ी तक कीचड़ में सना था। बूटों पर खूब कीचड़ जमा हुआ था। मामजान किवाड़ पकड़े भीतर झुक गया। उस के मुंह से केवल एक ही शब्द निकला :

"पानी…।"

सरगी चौंक पड़ा—"जम गया?"

मामजान कुछ बोल न सका। उस का कीचड़ से सना किरमिच का दस्ताना पहने हाथ निराशा के संकेत में फैल गया।

"आज तो ऐसा पाला नहीं पड़ा।"

"बात क्या है?"

"कामरेड, पानी आ ही नहीं रहा। कंक्रीट की मशीन बन्द है। आधे घंटे से कोशिश कर रहे हैं, पानी नहीं मिल रहा।"

"नल ठीक है?"

"नल तो ठीक है।"

"कंक्रीट की मशीन ठीक है?"

"मशीन तो चल रही है।"

अरगाश ने याफिम की ओर देखा—"जलकल को फोन कीजिये न!" वह सरगी की ओर घूम गया। देखा—इंजीनियर कंक्रीट की मशीन की ओर चला जा रहा था। अरगाश भी उस ओर चल दिया।

मामजान कीचड़ से लथपथ बूटों से लम्बे-लम्बे डग भरता अरगाश के साथ-साथ

चलता कहता जा रहा था—"कामरेड, हम तो बेमौत के मारे गये । लोग कह रहे थे कि रात की पाली बेकार है । मैं उन लोगों को समझाता रहा पर बात वही हुई । आधे घंटे से बीस आदमी हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं । बताइये, मैं किस को क्या मुंह दिखाऊंगा···।"

हवा खूब तेज थी । हवा के साथ टीले की ओर से लोगों की बौखलाहट की आवाजें आ रही थी । रात में काम चालू रखने के लिये जगह-जगह बल्लियों पर बांधे हुये गैसों की रोशनी कभी हवा के झोंके से दब कर टिमटिमाने लगती और कभी तेज हो जाती । प्रकाश के मध्यम हो जाने पर परछाइयां सिकुड़ जातीं और तेज हो जाने पर खूब फैल जातीं ।

हाथों में बेलचे-फावड़े लिये मजदूर कंक्रीट की मशीन को घेरे खड़े थे । टिमटिमाते और तेज हो जाते प्रकाश में मजदूरों के नंगे कन्धे और क्रुद्ध चेहरों की झलक मिल जाती थी । सभी झुंझलाये हुये जान पड़ रहे । कुछ बहुत ऊंचा बोल रहे थे, कुछ दांत पीस कर गालियां दे रहे थे । अरगाश को देख कर मजदूरों ने रास्ता दे दिया । मोटर चलाने वाले नौजवान ने मशीन चालू कर दी । मशीन सूखी रेत, सीमेंट और रोड़ी उगलने लगी ।

अरगाश ने एक कदम आगे बढ़ कर पानी देने वाले नल की घड़ी और टैंक में झांक कर पुकारा—"इंजीनियर कहां है ?"

"नलों को चेक कर रहे हैं ।"

कमर तक भीगा हुआ एक आदमी लालटेन हाथ में लिये दौड़ता हुआ आया ।

"नल वाला कहां है ? इंजीनियर साहब नल वाले को बुला रहे हैं ।"

अरगाश नल वाले को बुलाने के लिये आये आदमी के साथ चल दिया । दूसरे मजदूर भी उस के पीछे हो लिये ।

सब लोग शहर को जाती पक्की सड़क पर आकर रुक गये । सड़क के साथ अच्छा बड़ा तालाब बन गया था । तालाब के बीचों-बीच इंजीनियर घुटनों तक पानी में खड़ा था । उस के घुटने के पास ही लोहे के नल का सिरा दिखाई दे रहा था ।

"नल वाला कहां है ? शायद बड़े नल का वाल्व ढीला पड़ गया है ।" इंजीनियर ने कहा ।

"याफिम भाई जलकल में फोन तो कर रहे हैं परन्तु इस समय वे लोग आयेंगे भी?"

"वे लोग सुबह से पहले नहीं आने के ।" मामजान निराशा से बोला ।

कंक्रीट की मशीन की मोटर चलाने वाला नौजवान आगे बढ़ आया । उस ने अपनी रुई की बंडी और जूते उतार दिये—"बताइये, मैं देखता हूं ।"

नौजवान तालाब में उतर कर, पांव से टटोल-टटोल कर बड़े नल का मुंह ढूंढ़ने

लगा—"यही है, यही है।" नल का मुंह मिल गया और जवान सीने तक पानी में उतर गया। अरगाश और इंजीनियर उस की बांहों के नीचे सहारा दिये हुये थे।

"यहां पानी फूट रहा है। ओफ़ ! बिल्कुल बर्फ़ है।" नौजवान बोला।

"कामरेड सुल्तान !" बहुत जोर की पुकार सुनाई दी, "पानी से बाहर निकलो !" याफिम दफ्तर से आ गया था।

अरगाश पानी से बाहर हो गया।

याफिम के चेहरे पर बहुत क्रोध था—"तुम मर जाना चाहते हो ? मर जाओ और तुम पर कोई जिम्मेदारी न रहे !" याफिम ने जोर से डांटा।

"वाल्व फट गया है। नल वाले की जरूरत है। जलकल से जवाब मिला ?" अरगाश के दांत सर्दी से बज रहे थे।

"नल ठीक करने वाला आ रहा है। तुम अभी यहां से चलो !"

अरगाश को कुछ याद नहीं था कि वह घर कैसे पहुंचा, किस ने उसे बिस्तर पर लिटाया। वह अर्द्ध-चेतन अवस्था में था। लग रहा था कि स्वप्न देख रहा था—खोजिया उस की खाट की खाट की पटिया पर बैठी थी। पीड़ा और गर्मी से फटते उस के माथे पर निचोड़ा हुआ भीगा कपड़ा रख रही थी। यह स्वप्न अरगाश को बहुत अच्छा लग रहा था।

अरगाश को याद आ रहा था—खोजिया आंखों में गहरी चिन्ता और ममता लिये उस की ओर देख रही थी। खोजिया ने उस के कान के समीप झुक कर कहा था—मेरे प्यारे, तुम नहीं जानते मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूं ? तुम से मजबूत, ईमानदार और सुन्दर कौन है !...अरगाश को याद आया कि खोजिया ने उसे चूम लिया तो उस के मस्तिष्क में सहसा बहुत सी तोपें दगने की गूंज भर गयी थी।

अरगाश की नींद खुली तो उस ने खाट पर मां को बैठे देखा। मां ने उस के सिर पर हाथ रख कर पूछा :

"बेटा, तबियत कैसी है ? बहुत सोये; पूरे दो दिन और दो रात सोये हो। बहुत भूख लगी होगी ? अभी कुछ लाती हूं।"

दो दिन दो रात सोया ? अरगाश कुछ समझ नहीं पा रहा था, मां क्या कह रही है !...मां को क्या मालूम होगा; मशीन में पानी आया कि नहीं। मशीन चल रही है या नहीं ?

अरगाश की नज़र सिरहाने की ओर गयी तो देखा एक तिपाई पर कई पुड़ियां और बोतलें पड़ी हुई थीं। ओह, इन लोगों ने मुझे लिटा कर बीमार बना ही दिया। होश में नहीं था क्या करता !

अरगाश ने शरीर पर से कम्बल हटा दिया और उठने का यत्न किया परन्तु सिर

चकरा जाने के कारण तकिये पर गिर पड़ा। उसे लग रहा था कि उस के सिर के भीतर कंक्रीट की मशीन चल रही है। आंखों के आगे अंधेरा छा गया था। शरीर में दर्द हो रही थी जैसे चोटें लगी हों।

मां ने एक प्याला लाकर उस के होठों से लगा दिया। अरगाश पहचान न पाया दूध था या शोरवा परन्तु उस ने घूंट भर लिया। गरम-गरम तरल गले में जाने से अच्छा लगा, आराम अनुभव हुआ।

"शाबास, पी लो-पी लो!" मां ने प्याला अरगाश के ओठों से लगा दिया, "सात दिन से तू ने कुछ खाया ही नहीं। यह खोजिया बना कर लाई है।"

सप्ताह भर से नहीं खाया—अरगाश को विस्मय हुआ और ख्याल आ गया—स्वयं खोजिया ने बनाया है! नलवाला पहुंचा कि नहीं, वाल्व फट गया था…।

"मैं उन लोगों को बता दूं, तुम जाग गये हो।" मां खाली प्याला लिये उठ गयी। अरगाश की आंखें फिर बन्द हो गयीं।

अरगाश आंखें मूंदे कुछ देर सोचता रहा। फिर जबड़े दबा कर खाट पर हाथों का सहारा लेकर बैठ गया। पलकें झपकीं, पटिया का सहारा ले धीरे-धीरे खड़ा हो गया। धीरे-धीरे कदम उठा कर देखा, सर में चक्कर नहीं मालूम हुआ। माथे पर हल्की-हल्की हवा की सनसनाहट सी लग रही थी। पीठ पर पसीना भी मालूम हुआ। अरगाश बाहर जाने के लिये कपड़े पहनने लगा।

घर से बाहर अरगाश को हवा ठंडी मालूम हुई। दिन काफी चढ़ चुका था। सूर्य मकानों की छतों के ऊपर से झांक रहा था। अरगाश को ठंडक सुहावनी लगी। कदम संभाले सोचता जा रहा था—इन लोगों ने मुझे पकड़ कर खाट पर डाल ही दिया। ज़रा चल के देखूं तो…!

अरगाश कुछ ही दूर गया था। मामजान के घर के समीप पहुंचा तो कुल्हाड़ी की खट-खट सुनाई दी।

अरगाश मामजान की ड्योढ़ी के किवाड़ खोल कर आंगन में हो गया और पुकार लिया—"मामजान चाचा, क्या हो रहा है?"

मामजान के कपड़ों पर चूना छिटा हुआ था। कमर पर रस्सी लिपटी थी। वह कुल्हाड़ी लिये कोठरी के सामने सीढ़ी को ठीक कर रहा था। अरगाश को देख कर उस ने कुल्हाड़ी एक तरफ डाल दी:

"सलाम, सलाम मैनेजर साहब, अब तबियत कैसी है? चेहरा तो बहुत उतर गया है।"

"तुम काम पर नहीं गये? क्या बात है?"

"रात की पाली में हूं। अभी तो काम पर से आया हूं।"

"अच्छा, घर में चूना पोत रहे हो, वहां और काम नहीं था ? रात की पाली छूटते ही तुम दौड़ पड़े ! मैनेजर के बीमार हो जाने का यह मतलब हो गया ? तुम तो अपनी टुकड़ी के मेट हो !"

मामजान झेंप गया—"मैनेजर साहब, जरूरी काम था । बस घंटे भर के लिये आया हूं । मोटरवाला तो वहीं है । थोड़ी सी, बहुत जरूरी मरम्मत थी इसलिये आ गया । काम का हर्ज नहीं होगा । मैं अभी जाकर देख लूंगा ।"

क्रोध की गरमी में अरगाश को बीमारी की निर्बलता भूल गयी—"तुम्हारी कोठरी का काम मिल के काम से ज्यादा जरूरी हो गया ! मिल का काम हो या न हो !"

"मैनेजर साहब, अभी जा रहा हूं ।" मामजान कमर पर लिपटी रस्सी खोलते हुए बोला, "पर आप ही बताइये कि मेरे साथ क्या सलूक हो रहा है ? सच कहूंगा तो सब को बुरा लगेगा । हम से तो नरमन छैला और चायखाने वाले ही अच्छे हैं । क्यों साहब, महमान आते है तो उन्हें नरमत और चायखानेवाले के यहां टिकाया जाता है । हम किस से बुरे हैं ! लेनिनग्राद से साथी आये तो उन्हें उन लोगों के यहां टिकाया गया । याफिम साहब कहते हैं, मेरे यहां जगह कम है, बाल-बच्चे हैं । क्यों साहब, हमारे यहां अल्लाह की देन आल-औलाद है तो क्या बुरा है ! देखिये, मेरे यहां यह छप्पर है । बाल-बच्चे छप्पर में आ जाते । आप ही देख लीजिये, घर को पोत कर कैसा बना दिया है । यह घर किस से बुरा है । घर छोटा है तो क्या, जगह तो कम नहीं है । और जगह तो साहब, दिल में चाहिये ।"

अरगाश कोठरी की ओर बढ़ गया । घुटने ज़रा कांपे पर वह संभल गया । कोठरी के भीतर झांक कर बोला—"अच्छा, लेनिनग्राद से लोग आ भी पहुंचे ?"

"यही तो मैं कह रहा हूं ।" मामजान ने उत्तर दिया, "तै हुआ है कि वह लोग निमांचा में रहेंगे । सो तो ठीक है पर हम भी तो निमांचा में रहते हैं । मेरा घर क्या बुरा है ! हम से तो किसी ने बात भी नहीं की ।"

अरगाश चुप रह गया । मामजान ने समझा, मैनेजर उस की बात से चिढ़ गया है । क्षमा सी मांगता हुआ बोला—"साहब मैं जा रहा हूं, यह चल दिया…।"

अरगाश ने उसे ठहरने का संकेत किया और खम्भे की टेक लेकर झेंपता हुआ बोला :

"मामजान चाचा, तुम यों ही बुरा मान गये । मैं यह थोड़े ही कह रहा हूं कि घर न संभालो ! तुम कह रहे हो कि वहां काम चल रहा है ।"

मामजान ने आगे बढ़ कर अरगाश की पीठ पर हाथ रख दिया—"भैया, तुम्हारी तबियत तो ठीक नहीं लग रही ।"

"नहीं चाचा, तुम लोगों के रहते सब ठीक है ।"

"नहीं भैया, तुम अभी लेटो । तुम्हें अभी आराम करना चाहिये ।"

"नहीं-नहीं चाचा, कोई परवाह नहीं । तुम लोगों के रहते सब टीक है।" अरगाश को लग रहा था कि उस के पांव लड़खड़ा जायेंगे ।

मामजान अरगाश को बांह का सहारा दिये उस के घर की ओर ले चला । अरगाश का सिर चकरा रहा था—"मैं बुड्ढे से कैसे बोल गया; इसे सलाम भी किया था या नहीं ? कुछ याद न आ सका—"चाचा, तुम्हारा बड़ा लड़का स्कूल जाता है न ?"

मामजान ने विस्मय से अरगाश की ओर देखा—किसने बता दिया होगा कि लड़का नौ बरस का हो गया ?

"लड़का तो तुम्हारा गोद लिया हुआ है न ! उसे स्कूल क्यों नहीं भेज रहे ?"

"हां"नहीं साहब !" मामजान ने संभल कर उत्तर दिया, "स्कूल तो जाता है । जाड़े के बाद से स्कूल जा रहा है । किसी से पूछ लीजिये ।"

"पूछने की क्या जरूरत है । बहुत अच्छी बात है ।"

अरगाश ने घर की ड्योढ़ी में कदम रखा ही था कि मां आंगन से उस की ओर दौड़ पड़ी । मां के पीछे-पीछे लम्बी सी जवान लड़की थी । धूप में उस की दो काली-काली लम्बी चोटियां चमक रही थीं ।

"खोजिया, मेरी खोजिया…!" अरगाश का मन उमड़ आया । मामजान की बाहों में उस के कदम खड़खड़ा गये ।

इकत्तीसवां परिच्छेद

घर को अब अनाखां की छोटी बेटी तुरसाना ही सम्भाले थी ।

बशारत ने अपनी कमाई से कारीगरों के पहनने का, नीले कपड़े का एक लम्बा कोट खरीद लिया था । सुबह-सुबह काम पर जाती तो अपने कपड़ों पर लम्बा कोट पहन लेती थी कि कपड़े धूल और कीचड़ से खराब न हों । दोपहर खाने के लिये घर आती तो छोटी बहिन को गणित में सहायता भी देती थी । तुरसाना बहिन को इतनी सरलता से गणित के प्रश्न कर लेते देख कर विस्मित हो जाती थी—दीदी तो ऐसे उत्तर निकाल लेती है जैसे उंगलियों में मूंगफली चटक ले ! औद्योगिक स्कूल के मास्टर भी अनाखां के सम्मुख सराहना करते थे—है तो लड़की, पर दिमाग मर्दों का

पाया है। मशीनों को खूब समझती है । अनाखां की दोनों लड़कियां होनहार थीं।

बशारत अब बच्ची नहीं रही थी। अल्हड़पन की धमा-चौकड़ी छूट गयी थी। अपने कपड़ों और बनाव-सिंगार का ख्याल होने लगा था। आस-पास की बातों में भी पहिले की सी उपेक्षा नहीं रही थी।

खोजिया बशारत को छोटी समझ कर अपनी कोई बात उस से नहीं करती थी परन्तु उस दिन बोली—"अरगाश कई दिन से बीमार है। तुम मिल के 'किशोर कम्युनिस्ट संघ' की मंत्री हो। तुम्हें उनका हाल-चाल पूछने जाना चाहिये।"

बशारत रहस्य समझ गयी—अरगाश बीमार था। खोजिया उस की सुश्रूषा के लिये जाती थी, उस में तो कोई संकोच की बात नहीं थी परन्तु बेचारी बार-बार अकेली तो अरगाश के यहां नहीं जा सकती थी। अरगाश को दूसरे लोग भी कहने लगते कि खोजिया अपना तन-मन दे बैठी है। अरगाश का दिमाग आसमान पर चढ़ जाता। बशारत सहानुभूति में खोजिया के साथ, किशोर संघ की मंत्री होने के नाते अरगाश के यहां जाने लगी।

तुरसाना की निरन्तर चहक से अनाखां का मन गदगद हो जाता था। लड़की का गुनगुनाना कभी बन्द नहीं होता था। अपनी पढ़ाई के काम पर झुकी गाती रहती। खाने के समय मुंह में कौर भरा रहने पर भी उस का गुनगुनाना बन्द न होता। अनाखां और बशारत को लड़की की अवस्था देख कर हंसी आ जाती। तुरसाना बेचारी क्या करती, वह बिना गाये रह नहीं सकती थी। उसे इतने गीत याद थे कि सब गा लेने के लिये समय ही नहीं था।

निमांचा के सभी परिवारों में वैसी चहक और उत्साह नहीं थी। मुहल्ले में अफवाह थी कि नरमत छैले की बहू नज़ाकत फिर बुरका ओढ़ने लगी थी। नज़ाकत में यह परिवर्तन मिल की दीवारें गिरने की दुर्घटना के बाद आ गया था। अनाखां नज़ाकत से बात नहीं कर पाई थी। उसे याफिम की बात तो याद आती रहती कि हमें सर्व-साधारण से दूर नहीं हो जाना चाहिये परन्तु सहकारी में वह इतनी व्यस्त रहती थी कि नज़ाकत से बात करने का अवसर ही न मिलता था और नज़ाकत ऐसे मुंह चुराये रहती कि बिलकुल अपरिचित हो।

अनाखां ने निश्चय कर लिया कि नज़ाकत के घर जाकर ही वह उस से बात करेगी।

सूर्यास्त हो चुका था। ठंडी तेज हवा, नरमत छैले के आंगन के पोपलार के पत्ते झड़ी शाखाओं के जाल में उलझ कर, लम्बी-लम्बी आहें भर रही थी। अनाखां को गली से दिखाई दिया—नरमत की छत के ऊपर रहने वाले बगुले अपना घोंसले छोड़ गये थे और उन के घोसलों में पहाड़ी कौओं का बसेरा हो गया था। संध्या समय बसेरे

के लिये आये कौओं में बहुत ज़ोर की तकरार चल रही थी।

नरमत की ड्योढ़ी के बाहर अनाखां को एक कुबड़ा खड़ा दिखाई दिया। कुबड़े ने थकी क्षीण आवाज़ में पुकारा—"नरमतउल्ला···ए मुल्ला नरमत!"

अनाखां को विस्मय हुआ, नरमत को इतने आदर से कौन पुकार रहा था? अनाखां ने ध्यान से देख कर पहचाना—नीली मस्जिद का इमाम था। ख्याल आया—छत पर पेड़ में पहाड़ी कौये बस गये हैं तो दरवाज़े पर भी कौआ आ पहुंचा है। फिर सोचा, इमाम नरमत के द्वार पर आकर ऐसे गिड़गिड़ा रहा है तो बेचारे की क्या अवस्था होगी?

इमाम को आंगन से कोई उत्तर नहीं मिला तो काली लकुटी टेकता दीवार के साथ-साथ लड़खड़ाता हुआ चल दिया। इमाम के सिर पर उस के कूबड़ जैसी ही बड़ी सफेद पगड़ी थी। इमाम बुढ़ापे से बहुत असहाय लग रहा था। अनाखां जानती थी, यह सब फरेब था। इमाम अच्छा-भला तगड़ा आदमी था, बहुत खाऊ मशहूर था। एक बार में पूरा बकरा खा जाये, मशक भर बीयर पी ले और डकार न ले।

अनाखां दरवाज़ा खटखटाये बिना ही भीतर चली गयी। नज़ाकत गाय के लिये भूसी सान रही थी। उस ने अनाखां को देखा तो सलवार में खोंसा हुआ कुर्ते का दामन नीचे खींच लिया और आस्तीनें भी गिरा लीं। धीमे से कहा—"आओ" परन्तु गर्दन झुकाये रही। आंखें नहीं मिलाईं।

अनाखां ने समझ लिया—सोचती होगी मैं क्यों आ गयी! याद आ गया नज़ाकत जब पति से पिटी थी तब भी उस के आने पर वैसे ही बोली थी।

नज़ाकत पिछले दो-तीन मास में कितनी बदल गयी थी! जुलैखां की अर्थी उठाये जाने के समय और बाद में भी, सहकारी में उस का व्यवहार बिलकुल दूसरा ही था। अनाखां को नज़ाकत के व्यवहार से बहुत अपमान अनुभव हुआ फिर भी ताने से बोली:

"कहो क्या बात है? हमारे मुअज्जिज़ (आदरणीय) आलिम इमाम, अल्लाह उन्हें सलामत रखे, तुम्हारे यहां कैसे तशरीफ लाये थे?"

"इन्हें शाम की नमाज़ के लिये बुलाने आये होंगे।"

"यह बात है! इमाम क्या घर-घर आकर लोगों को नमाज़ के लिये बुला ले जाते हैं? नरमत भाई को उंगली पकड़ कर मस्जिद तो नहीं ले जाते!"

नज़ाकत ने अनाखां की ओर घूर कर देखा—"घर-घर जाकर क्यों बुलायेंगे? यह उन का रास्ता है तो पुकार लेते हैं।"

"हूं! क्या मतलब, इमाम और नरमत का रास्ता एक ही हो गया?" अनाख़ां ने पूछ लिया।

नज़ाकत मौन रह गयी।

गाय ने खर-खर भूसी चबाते सिर उठा कर मालकिन की ओर देख लिया। नज़ाकत चौंतरे की ओर गयी और अनिच्छा से चौंतरे पर बिछे गद्दे को सिधाते हुये कह दिया—"आओ बैठो !"

अनाखां चौंतरे पर बैठ गयी। बराम्दे में छींके पर सुखाने के लिये लाल मिर्चें और दूसरे पर दही की हांडी टंगी हुई थी। आंगन खूब साफ-सुथरा था। बराम्दे में खूंटी से एक नया लाल बुरका टंगा था।

बुरका अच्छे लाल कपड़े का था। आखिर तों नज़ाकत जवान थी, शौकीन भी थी। अंधेरे में लाल बुरका काला लग रहा था।

"आओ, तुम भी बैठो न !" अनाखां ने कहा, "हम से बात भी नही करोगी ? ऐसी क्या नाराज़गी है ?"

नज़ाकत मौन रही। उस ने मिट्टी के तेल की डिबिया जला दी और फिर आकर चौंतरे के किनारे पर सिकुड़ कर ऐसे बैठी कि चौंतरे पर अधिक बोझ पड़ने से टूट जाने की आशंका हो।

आंगन में डिबिया का टिमटिमाता प्रकाश नाच रहा था। आंगन डोलता सा लगता था। ऊपर शरत के निर्मल आकाश में तारे खूब उजले, बड़े-बड़े, नीचे झुक आये लग रहे थे।

अनाखां ने नज़ाकत का हाथ अपने हाथों में ले लिया और बोली—"बहिना, बात क्या है ? तुम ऐसे मुंह क्यों चुराने लगी हो ! मन की बात सगी सहेलियों से भी नहीं कहोगी ? मैं तुम्हारी बहिन ही तो हूं। याद नहीं, ज़ुलैखां बहिन के ताबूत के सामने क्या कसम ली थी—हम सब सहेलियां आपस में विश्वास-भरोसा करेंगी, एक दूसरी का साथ देंगी ! क्या वही बात ठीक है कि औरत की बात का इतबार नहीं ! आखिर तुम्हें हो क्या गया ? ऐसी क्या बात हो गई ?"

नज़ाकत ने गहरी आह छोड़ कर मुंह फेर लिया और अपना हाथ खींच लेना चाहा पर अनाखां ने उस का हाथ नहीं छोड़ा और बोली :

"तुम ने तो बुरका फेंक दिया था। उसे पांव से कुचल दिया था। बुरका छोड़ देने के लिये तुम से किस ने कहा था ?"

"किसी ने नहीं।"

"तुम पर किसी ने ज़ोर डाला था ?"

"नहीं तो" नजाकत का गला भर आया।

"अपनी इच्छा से बुरका फेंक दिया था तो फिर अब कोई जबरदस्ती पहना रहा है ?"

नज़ाकत मौन रही।

"तुम्हारी क्या राय है? दूसरी स्त्रियां भी ऐसा ही करें! जुलैखां बहिन के नाम से जो कसम खाई थी, उस की हंसी करायें। उन्हों ने तो हमारे लिये ही जान दी थी।"

नज़ाकत ने बहुत कातर दृष्टि से अनाखां की ओर देखा—"यह क्या कह रही हो!" वह तुरन्त संभली। आंखें झुका कर अस्पष्ट स्वर में बोली, "मुझे किसी ने कुछ नहीं कहा। अपने मन से कर रही हूं।"

अनाखां ने नज़ाकत को अपनी ओर खींच लिया और बोली—"क्या कह रही हो? बहिना, क्या मेरे आंखें नहीं हैं? मां और सगी-सहेली से कोई बात छिपती है? मुझ से आंख मिला कर बात करो!"

नज़ाकत ने अनाखां की ओर देखा तो उस की पलकों में अटके आंसू गिर पड़े। अपना सिर अनाखां के कन्धे पर रख दिया और फिर सिहर कर अलग हो गई:

"तुमने नूरिया की बाबत नहीं सुना?" नूरिया की बात सब लोगों की जबान पर थी। लोग सुन कर कांप उठते थे।

"नूरिया -नमागां की लड़की थी। उस का भाई हुस्नुद्दीन बहुत कट्टर मुसलमान था। नूरिया पढ़ने के लिये समरकन्द के स्कूल में जाने के लिये जिद् कर रही थी। बड़े भाई के समझाने पर भी उस ने अपनी जिद् नहीं छोड़ी। भाई ने अपनी गोहरन में एक खूब गहरा गढ़ा खोदा और बहिन को अधार्मिक जिद् का दण्ड देने के लिये उस के हाथ-पांव बांध कर कमर तक मिट्टी में दबा दिया कि लड़की गुनाह की इच्छा से तौबा कर ले।

"नूरिया ने स्कूल में पढ़ने जाने की जिद् नहीं छोड़ी तो भाई ने दूसरे दिन उसे सीने तक मिट्टी में दाबा। नूरिया ने फिर भी अपना आग्रह नहीं छोड़ा। तीसरे दिन भाई ने गढ़े में नूरिया के गले तक मिट्टी भर दी। नूरिया ने फिर भी तौबा नहीं की। पढ़ने के लिये स्कूल जाने की रट लगाये रही। भाई ने नूरिया के सिर के ऊपर तक मिट्टी डाल कर गढ़े को भर दिया।

हुस्नुद्दीन को विश्वास था कि उस ने अपना धर्म और नैतिक कर्त्तव्य पूरा किया था। चार दिन तक जब मिट्टी में दबी नूरिया कराह-कराह कर विलाप कर रही थी हुस्नुद्दीन, दिन की पांचों और रात की भी दो नमाज़ें पढ़ कर अल्लाह को याद करता रहा था। उसे पूरा विश्वास था कि खुदावन्द सब देख रहे थे और उस की नमाज़ों और प्रार्थनाओं को स्वीकार कर रहे थे। वह निर्मलचित्त व्यक्ति की तरह निश्शंक सोता था। फरिश्तों ने उसे कभी नींद मे नहीं चौंकाया। हुस्नुद्दीन चार दिन तक अपनी गाय को घर से दूर बांधता रहा कि पापिन लड़की के कराहने और विलाप से गाय का दूध अपवित्र न हो जाये। उस का यह काम इस्लाम के अनुसार पवित्र कर्त्तव्य

था। पक्के दीनदारों को विश्वास था कि हुस्नुद्दीन को कर्त्तव्य-पूर्ति के परिणाम में बहिश्त का सुखमय जीवन और जन्नत की हूरें मिलेंगी।"

अनाखां जानती थी कि नरमत के यहां नज़ाकत सुखी थी परन्तु सोचा—नज़ाकत सोचती होगी, नरमत भी किसी दिन हुस्नुद्दीन की तरह धर्म-परायण बन जा सकता है।

नज़ाकत ने शायद अनाखां की आशंका भांप ली। उछल कर उठ खड़ी हुई और बोल पड़ी :

"क्या सोच रही हो, ऐसा कभी नहीं हो सकता! मेरा मर्द ऐसा कभी नहीं कर सकता!"

अनाखां ने सोचा—बेचारी कितनी डरी हुई है...पर इस के डरने और गिड़गिड़ाने से क्या होगा?

नज़ाकत बहुत क्षोभ से अपना विश्वास प्रकट कर, गर्दन झुकाये शिथिल बैठ गयी थी। फिर धीमे से बोली :

"बहिना जानती हो, अपनी सगी बहिन के साथ कोई ऐसा जुल्म कर सकता है! लेकिन ऐसे मामलों में आदमी का दिमाग अपने बस में थोड़े ही रहता है। नूरिया के भाई को होश आया तो सुनते हैं कि सिर धुन-धुन कर रोया, पागल हो गया। सुनते हैं, अदालत ने भी उसे छोड़ दिया।"

"तुम से किस ने कहा?"

अनाखां ने पूछा और फिर अनुमान कर लिया—ऐसी बात नीली मस्जिद के इमाम ने ही कही होगी।

"ख्वाजा अब्दुलमजीद ने 'इसे' बताया है। इमाम खुद नमागां गये थे। उन्होंने सब कुछ अपनी आंखों देखा है। नूरिया का भाई पागलों की तरह गलियों में फिरता रहता है। बहुत बुरी हालत है।" नज़ाकत ने गहरी सांस लेकर अपने चारों ओर देख लिया और फिर बहुत धीमे से बोली, "तुम्हें क्या बताऊं, सच कहती हूं ये कई दिन से बहुत डरा-डरा, सहमा सा रहता है। मैंने बुरका छोड़ दिया था तो इस ने कुछ कहा नहीं परन्तु देखती थी कि मन ही मन बहुत घुट-घुट रहता था। तुम जानती हो, कोई खुदा की नज़र में गुनाहगार होता है तो अल्लाह सौ तरीकों से उसे सजा दे देता है।" नज़ाकत ने गले में उमड़ आये आंसू गटक लिये और आह भर कर बोली, "अल्लाह की कुदरत है। वह सजा देना चाहे तो जैसे हुस्नुद्दीन का दिमाग बदल दिया, इस का भी दिमाग पलट दे। समझे भी नहीं क्या कर रहा है, मुझे और खुद अपने आप को तबाह कर दे। मैं तो इस की हरकतों पर नज़र रखे रहती हूं। इस के मन पर बड़ा बोझ है। मैं ही तसल्ली नहीं दूंगी तो और कौन देगा? देखा नहीं कितना दुबला हो रहा है! दिन-दिन भर खुदा को याद करता रहता है। इस से पहले तो

इसे दुआ और नमाज़ याद भी नहीं थी…।"

अनाखां नज़ाकत की ओर देख सोच रही थी—गरीब औरत, बेचारी अपने मर्द के अत्याचार और अपराध की आशंका से कांप रही है और सहानुभूति में उसे निर्दोष भी मानना चाहती है। औरत क्या करे, वह तो मर्द पर जान देती है।

अनाखां ने पूछा—"इमाम तुम्हारे यहां कब से आ रहे हैं?"

"जिस दिन जुलैखां का कत्ल हुआ था तभी से आने लगे हैं।"

"तुम मेरे यहां तो कभी नहीं आयी! मुझे अपनी परेशानी कभी नहीं बताई! हम दोनों बात करतीं, कुछ सोचतीं, यहां अकेली बैठे-बैठे तुम्हें घबराहट नहीं लगती? अपनी परेशानी बताने को तुम्हारा मन नहीं हुआ?"

"क्यों नहीं हुआ!"

"तो डर गयी हो? इमाम ने कुछ कहा?"

"मैं क्या जानूं…।"

"कुछ तो बताओ, नहीं बताओगी तो यहां ही बैठी हूं।"

नज़ाकत ने अनाखां को बताया:

पहले तो इमाम ख्वाजा अब्दुलमजीद की नरमत से कोई जान-पहचान नहीं थी। नरमत रिवाज़न केवल जुम्मे की नमाज़ के लिये मस्जिद चला जाता था। सैकड़ों आदमी जाते थे। नरमत भी चला जाता था। इमाम नरमत जैसे मामूली आदमी को क्या पहचानता!

इमाम जाने क्यों नरमत की गली के रास्ते ही मस्जिद जाने लगा। रास्ते में नरमत को पुकार कर सलाम-दुआ कर लेता, उस का हाल-चाल पूछ लेता। नरमत जैसा मामूली आदमी ऐसे आदर की क्या आशा कर सकता था? वह बहुत दीनदार मुसलमान भी नहीं था परन्तु इमाम ने नरमत छैले को मुल्ला नरमतउल्ला की पदवी दे दी।

एक दिन संध्या नरमत घर लौटा तो इमाम उस की प्रतीक्षा में उस के द्वार पर ही बैठा था। नरमत को देख कर बोला—"मुल्ला नरमत, अब तो हमारा बुढ़ापा आ गया। अकेले मन ऊबने लगता है। लोग कहते हैं न सफर साथ से कटता है। दीनदार मुसलमान के लिये बुढ़ापे में क्या है? यही की किसी शरीफ दीनदार से हाल-चाल पूछ कर नेक ज़िक्र में वक्त गुजार दे!"

इमाम प्राय: नरमत के आंगन में बैठा उस के साथ बातचीत करता रहता। चाय के दो-तीन प्याले पी लेता। नरमत को बहुत गौरव अनुभव होता। इमाम स्वभाव का अच्छा और सीधा-साधा लगता था। नरमत नज़ाकत से उस की प्रशंसा में कहता—इमाम साहब शरियत की बातें सुनाने लगते हैं तो क्या बोलते हैं; सुनते-सुनते आदमी अपने आप को भूल जाये। वल्लाह, कितना याद है! जरा आंखें दाढ़ी पर झुकाईं और

बोलते चले जाते हैं जैसे सब कुछ दाढ़ी पर लिखा हो।

एक शुक्रवार इमाम दोपहर की नमाज़ के के बाद नरमत के घर आ गया। दो दिन पहले बाघ के टीले पर नरमत की ड्यूटी नये काम पर लग गयी थी। नये काम में उस का मन खूब लग गया था। वह जुम्मे की नमाज़ के लिगे मस्जिद नहीं गया था।

इमाम के चेहरे पर चिन्ता थी। बायां हाथ चोगे के भीतर था और दायें हाथ से दाढ़ी को पकड़े था। ड्योढ़ी के भीतर आते ही बोला :

"मुल्ला नरमत सुनो, कल फज़िर (सुबह) की नमाज़ के बाद मुझे कुछ अजीब सा लगा। तब से दिल घबरा रहा है। आज भी दिल की परेशानी दूर नहीं हुई। तुम्हीं लोगों का ख्याल आता रहा।"

नरमत ने आदर से सीने पर हाथ रख इमाम का अभिवादन किया और उसे आंगन में चौतरे पर बैठा दिया। इमाम चौतरे पर घुटने मोड़ कर बैठ गया। मुंह ही मुंह में बहुत लम्बी दुआ पढ़ी और बोला :

"मुल्ला जानते हो, बगुला बहिश्त की चिड़िया है। शरियत में लिखा है कि बगुला पाक-परिन्दा है। वह इबादत के ख्याल में चुप रहता है। तुम जानते हो, तुम्हारी छत के ऊपर पोपलार में बगुला का घौंसला है। जानते हो, बगुला यहां क्यों रहता है? तुम्हें नहीं मालूम? यह पोपलार हमारे पीर खिज्र शेख के हाथ का लगाया हुआ है।

नरमत की आंखें विस्मय से फैल गयीं। उस ने पुराने पोपलार के काले-काले, जगह-जगह घुन लगे तने की ओर आदर से देख लिया। उसे इस चमत्कार के विषय में क्या मालूम था! बचपन से उसी मकान में था लेकिन उसे कतई मालूम नहीं था कि उस की छत पर खड़ा पेड़ इतना मुतबर्रिक था। सोचा, इस दुनिया के अचरज का अन्त नही। अल्लाह की कुदरत को कौन जान सकता है!

इमाम सहसा सिहर उठा। पेड़ की चोटी की ओर उंगली उठा कर इशारा किया :

तौबा! इसीलिये मेरा दिल घबरा रहा था। बगुला पेड़ को छोड़ गया। मुल्ला नरमत, बहिश्त का पाक-परिन्दा तुम्हें छोड़ गया। यह बुरा शगुन है। समझ लो, कोई आफत आने वाली है। बगुला गुनाहगारों से परहेज़ करता है। वह जानता है कि गुनाहगारों पर अल्लाह का कहर नाज़िल होता है। नरमतउल्ला, मेरा फर्ज़ है, तुम्हें आगाह कर दूं इसलिये कहे देता हूं।"

नरमत के माथे पर तेवर आ गये। ऐसी आशंका की बात कहने वाले के लिये मस्तिष्क में गुस्से की लपट कौंध गयी। इमाम ने नरमतउल्ला की भावना भांप ली। बहुत आश्वासन से बात करता रहा। नरमत की आशंका को बढ़ाचढ़ा कर सहानुभूति प्रकट करता रहा।

इमाम जान गया था कि नरमत और नज़ाकत नमागां के थे। लोगों पर अपने

जन्म-स्थान में घटी घटना सदा ही गहरा प्रभाव डालती है। इमाम ने नरमत और नज़ाकत को नमागां का एक क़िस्सा सुना दिया कि वहां बगुले किसी का आंगन छोड़ कर चले गये थे तो वह घर और परिवार तबाह हो गया था—नरमत और नज़ाकत के अपने ही घर, नमागां की ही बात थी। सुन-सुन कर उन्हें पसीना आ रहा था।

नमागां की चर्चा से नज़ाकत के हृदय में अपनी मां के घर की याद उठ आयी। ससुराल आने के बाद उसे मायके जाने का अवसर कभी नहीं मिला था। नरमत स्तब्ध पोपलार की चोटी की ओर आंख उठाये था। पेड़ के नीचे बीटें, झड़े हुये पर, सूखे पत्ते और सूखी टहनियां बिछी हुई थीं। उसी पेड़ से उस पर मुसीबत आने वाली थी। नरमत के मन में आया—लानत!...तोबा-तोबा! या अल्लाह, रहम कर! यह तो मुताबर्रिक पेड़ है।

इमाम ने दाढ़ी खुजाते-खुजाते बताया—वह भी नमागां का ही था। सहसा उस ने नरमत और नज़ाकत से आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित कर लिया। वह आदरणीय बूढ़ा इमाम उन्हीं का वतनी था। इमाम नरमत और नज़ाकत के सम्बन्धियों और रिश्तेदारों के सम्बन्ध में पूछ-ताछ करता रहा। नरमत और नज़ाकत ने अपने चाचा-मामा के घरों, बाप-दादा के सम्बन्ध में चार पीढ़ी तक, जो कुछ उन्हें मालूम था, इमाम को सब कुछ बता दिया। उन लोगों के विस्मय का अन्त नहीं रहा। दुनिया में कैसे-कैसे आश्चर्य छिपे रहते हैं, कोई अनुमान नहीं कर सकता। आदमी अपने रिश्तेदारों को भूल कर कैसे गुनाह और अजाब में फंस जाता है। इमाम ने अगर चर्चा न चलाई होती तो नज़ाकत को क्या मालूम था कि उस की ताऊ-परदादी और इमाम की नानी एक ही घर की थीं। इमाम के साले का गोद लिया बेटा, नरमत के बड़े भाई के पोते के मामा का लड़का था। और भी जांच-पड़ताल के बाद नरमत और इमाम में खून के सम्बन्ध तक का सूत्र पता चल गया। नरमत और नज़ाकत के लिये यह मामूली गौरव की बात नहीं थी।

उस शुक्रवार के बाद इमाम प्रायः ही काफी देर तक नरमत के यहां आकर बैठने लगा। नरमत और नज़ाकत पर अपने गुनाहों के लिये खुदा के क्रोध का आतंक बढ़ने लगा। नरमत ने अपनी खाट पोपलार से दूर करने के लिये घर के दूसरे कोने में खींच ली थी। वह प्रायः नींद में चौंक पड़ता। स्वप्न आते रहते कि पोपलार का पेड़ उस के गुनाहों की सजा देने के लिये क्रोध में उस पर गिर रहा है। उस की नींद टूट जाती तो फिर आंख न लगती। अंधकार में खूब काले दानव जैसे पोपलार की ओर आंखें लगाये बैठा रहता। उसे अपने पुराने पाप, नज़ाकत के गुनाह, अपने पिता और भाइयों के गुनाह याद आने लगते। यदि कभी भय से घबराकर वह पुरानी आदत से खसखास के दाने भर अफीम खा लेता तो जागते रहते भी भयंकर स्वप्न उसे परेशान करने लगते

पोपलार की पुरानी दैत्याकार शाखायें बल खाती हुई उस की ओर बढ़ रही हैं। नरमत को जकड़ कर उस की हड्डी-पसली चूर-चूर कर रही हैं। धरती फोड़ कर उस के शरीर को लिये नरक में धंसी चली जा रही हैं। शरीर पर भालू जैसे रोयें वाले दैत्य उस की ओर झपट रहे हैं। उन की आंखों से चिनगारियां फूट रही हैं।

नज़ाकत की मौसी करताग में रहती थी। एक दिन मौसी का पत्र आया। नरमत चिन्ता में था पत्र को किस से पढ़वाकर सुने। तभी भाग्य से ड्योढ़ी से पुकार सुनाई दे गयी—"मुल्लाह नरमतउल्ला।"

इमाम बहुत अच्छे समय पर आ गया था।

इमाम एक हाथ से लाठी टेकता और दूसरे हाथ में अपने जूते लिये बराम्दे में आ घुटने मोड़ कर बैठ गया। ढीली आस्तीनें कुहनी पर चढ़ा लीं। नाक साफ की और चश्मा निकाल कर नाक पर रख लिया।

नरमत और नज़ाकत के लिये चश्मा असीम विद्वता और अगाध ज्ञान का प्रतीक था। दोनों इमाम के सामने हाथ बांधे स्तब्ध खड़े हो गये।

पत्र लाल हाशिया वाले सफेद कागज पर था। शुरू में अनेक आशीर्वाद थे।

इमाम ने पहले पत्र को स्वयं पढ़ा। नरमत और नज़ाकत, इमाम के चेहरे पर आ गयी प्रसन्नता की झलक नहीं देख पाये। फिर इमाम का चेहरा सहसा बहुत गम्भीर हो गया। लम्बी दाढ़ी कांप गयी। इमाम बैठे ही बैठे मक्का की दिशा में घूम गया और दोनों बाहें आकाश की ओर उठा कर बोल पड़ा:

"या पाक-परवरदिगार! खुदावन्द करीम! अपने गरीब गुलामों पर रहम कर! ऐ इन्सानों, उस वाहिदुल शरीक (एकमेव अद्वितीय) खुदा के सामने जमीन पर सीना रख कर सिजदा करो! उस के रहम के बिना इन्सान कुछ नहीं। उसी के रहम का भरोसा है। उस के रहम की इन्तहा नहीं है।"

नरमत और नज़ाकत की आंखें मिलीं। वे कुछ समझ नही सके। उन के मन आशंका से कांप उठे। करताग में उनके प्यारे सम्बन्धियों पर जाने क्या संकट आ पड़ा था? करताग की बस्ती पहाड़ी नदी के किनारे थी। चारों ओर बर्फ से ढंकी चोटियां थीं। नरमत चाहता था वह भी इमाम की तरह आकाश की ओर हाथ उठा कर दुआ मांग ले परन्तु आतंक में उस की बाहें उठ न सकीं।

इमाम करुणा से बोला—"ऐ खुदा के बन्दो, मैंने तुम्हें पहले ही नहीं कह दिया था? जब अभी कुछ भी नहीं बिगड़ा था तभी मैंने कह दिया था कि तुम्हारे गुनाहों के लिए तुम पर खुदा का कहर नाजिल होने वाला है। उस के गुस्से से कोई नहीं बच सकेगा।"

"किब्ला, खत में क्या लिखा है? किब्ला बताइये तो क्या लिखा है?" नरमत

और नज़ाकत ने गिड़गिड़ा कर पूछा ।

इमाम के चेहरे पर मुस्कान आ गयी—"करताग में भूचाल आ गया है । बस्ती तबाह हो गयी है । अल्लाहताला ने उस का नामोनिशान मिटा दिया है ।"

खत नज़ाकत के नाम लिखा था कि उस की मौसी का मकान गिर गया था । मौसी छत के नीचे दब कर मर गयी थी । संदेश था कि नज़ाकत आ कर जमीन-जायदाद ले ले ।

नरमत और नज़ाकत को क्या मालूम था कि करताग में मौसी का मकान कैसे गिर गया था । सचमुच भूचाल आया था या पुराने मकान की दीवारें यों ही गिर गयी थीं । नज़ाकत ने छाती पीट ली । बरामदे के खम्बे पर सिर मार-मार कर विलाप करने लगी । नरमत आतंक से मुंह खोले स्तब्ध रह गया । इमाम अपना कर्त्तव्य निबाहने के लिये निस्वार्थ भाव से उन्हें समझाने लगा :

"मुल्ला नरमतउल्ला, मौसी की जायदाद पर तुम लोगों का हक जरूर है । जायदाद पर सात पुश्त तक हक जाता है लेकिन गुनाह और उन की सज़ा भी सात पुश्त तक जाते हैं । खुदावन्द ने तुम्हारी मौसी के पांव तले की जमीन फोड़ कर उसे गारत करके सजा दी है क्योंकि तुम्हारी मौसी की एक रिश्तेदार ने बुरका और नकाब छोड़ कर गुनाह किया है । वह बेदीन हो गयी है, मनकिर हो गयी है । वह औरत गुनाह करके खुद जहन्नुम में बेगैरत जायगी और उस ने अपने रिश्तेदारों पर भी खुदा का कहर नाज़िल किया है ।"

नज़ाकत पश्चाताप से धरती पर सिर पटक-पटक कर रोने लगी—"हाय मौसी, मैं हाय गुनाहगार हूं मेरी मौसी ! हाय मैं मर जाऊं..."

इमाम चुपचाप नज़ाकत का विलाप देखता रहा, वह नरमत से भी कुछ नहीं बोला । नज़ाकत कुछ देर में संभल पाई तो इमाम बोला :

"मैंने तो तुम्हें पहले ही कह दिया था, बता दिया था कि बगुला तुम्हारा आंगन छोड़ कर चला गया है यह अच्छा शगुन नहीं है । वही बात अब सामने आ रही है । पीर खिज्र शेख ने इस पेड़ के नीचे खड़े हो कर यह भविष्यवाणी की थी—इन्सानो, अपने फर्ज़ को मत भूलो । बहुत जल्दी इज़राइल अपना नरसिंघा बजा कर इंसाफ के लिये आने वाला है । उस दिन कयामत होगी और हर एक इंसान के गुनाह और सबाब उस के ईमान के तराजू पर तौले जायेंगे । करताग में तो भूचाल आ गया । इस गुमान में मत रहो कि करताग यहां से दूर है । खुदावन्दताला के लिये करताग यहां से एक कदम भी नहीं है ।"

इमाम ने अपनी लम्बी नाजुक तर्जनी उठा कर चेतावनी दी—"हो सकता है कल ही यहां तुम्हारे पांव के नीचे से भी धरती फट जाय और तुम अपने गुनाहों की सज़ा

में ग़रक हो जाओ।"

इमाम ने जिस दिन नरमत और नज़ाकत के सामने निर्मांचा की धरती फट जाने की भविष्यवाणी की थी उस के कुछ दिन बाद ही बाघ के टीले पर मिल की दीवारें धड़धड़ा कर गिर पड़ीं। नरमत और नज़ाकत को विश्वास हो गया—नीली मस्जिद के इमाम साहब को सब लोग यों ही आलिम और औलिया नहीं कहते। खुद शेख खिज्र उन की ज़बान से बोलते हैं।

नरमत और नज़ाकत के हृदय खुदा के क्रोध के आतंक से बैठ गये थे। वे गरीब नादान, इमाम ख्वाजा अब्दुलमजीद जैसे पहुंचे हुये आलिम की बातों पर कैसे अविश्वास करते?

नज़ाकत ने फिर बुरका ओढ़ना शुरू कर दिया और नरमत नियम से दिन में पांच बार नमाज़ पढ़ने लगा था।

× × ×

अनाखां ने मिल की दीवारें गिरने के सम्बन्ध में इमाम की भविष्यवाणी की बात सुनी तो उसे तेशीकोप्कोक की सियानी की भविष्यवाणियां भी याद आ गयीं। सियानी भी शेख खिज्र की मुरीद थी। उस सब षड़यंत्र का सूत्रधार चायवाला ही था। नरमत के सौभाग्य से चायवाला समाप्त हो चुका था परन्तु उस का फैलाया हुआ जाल अब भी खूब मजबूत बना था। नरमत का अन्त भी नसरतुल्ला की तरह हो जाना असम्भव नहीं था। इमाम बहुत धूर्त था। नरमत उस के हाथों किसी भी समय बरबाद हो जाता।

अनाखां ने नज़ाकत की ओर झुक कर पूछ लिया—"नरमत कभी इमाम के घर भी जाता है या और कहीं उस के साथ जाता है?"

नज़ाकत ने अनाखां के कान में सांस के स्वर में कहा—"नहीं-नहीं कहीं नहीं जाता। मैं कहीं नहीं जाने देती। मेरी बात जरूर मानता है परन्तु दीदी, मैंने देखा है; इमाम को रात गली के अंधेरे में एक आदमी से बात करते देखा है। दीदी सचमुच, वह बहुत बुरा आदमी है। 'यह' भी यही कहता है। कुदरतुल्ला ने जब मुझे पीटने के लिये सिखाया था तब भी वह आदमी कुदरतुल्ला के ही यहां बैठा था। दीदी, तुम उसे नहीं जानती। अल्लाह न करे उसे जानो। इमाम हमारे दरवाज़े पर ही उससे बात कर रहा था। मैंने सुना है। उस ज़ालिम पर हज़ार लानत! इमाम से बात करके न जाने वह कहां भाग गया।" अनाखां नज़ाकत की बात सुन कर सुन्न रह गयी। कुछ सोच नज़ाकत के कन्धे पर हाथ रख उस ने पूछ लिया, "चायवाला था?"

नज़ाकत उत्तर न दे सकी।

"तुम ने देखा था तो बताया क्यों नहीं ?" अनाखां ने क्षोभ से कहा, "तुम ने उसे देखा था तो मुझे बताना चाहिये था ।"

नज़ाकत कुछ बोली नहीं । अनाखां उस का भय समझ गयी । सहसा चौंतरे से उठ खड़ी हुई—जरा भी विलम्ब उचित नहीं था ।

"मेरे साथ आओ !" अनाखां ने नज़ाकत से कहा ।

नज़ाकत अनाखां से चिपक कर धीमे से बोली—"दीदी, यह लोग बहुत बुरे हैं ।"

"हां-हां, मैं जानती हूं इसीलिये कह रही हूं, आओ !"

"दीदी रात पड़ गयी है । इस समय कहां जाओगी !"

"तुम एक दम चली आओ !"

बत्तीसवां परिच्छेद

नज़ाकत ने नया लाल बुरका ओढ़ लिया तो तेल की डिबिया को तुरन्त बुरके के दामन के झोंके से बुझा दिया मानो बुरका पहन कर शर्मा गयी हो ।

नज़ाकत चेहरे पर नकाब के कारण रास्ता देख नहीं पा रही थी । वह अनाखां की बांह से चिपकी चली जा रही थी । खूब घना अंधेरा था । ऐसा अंधेरा कि रास्ता देख कर चलने की अपेक्षा आंखें मूंद कर चलते जाना ही आसान था । शरद की तीखी ठंडी हवा भर कर नज़ाकत का बुरका गुब्बारे की तरह फूल-फूल जाता था परन्तु वह उत्तेजना में पसीना-पसीना हो रही थी ।

अनाखां नज़ाकत को साथ लिये रेल स्टेशन के पास चेका के इन्सपेक्टर करीमोव के दफ्तर की ओर चली जा रही थी । जल्दी के लिये वह गलियों को काटती, घरों के आंगनों और टूटी हुई दीवालें लांघती चली जा रही थी । नज़ाकत पांव के नीचे धूल, कंकड़-पत्थर और घास-फूस के स्पर्श से स्थान और रास्ते का अनुमान करती जा रही थी । कहीं पशुओं के जुगाली करने के शब्द और उनके गोबर और मूत्र की गन्ध से गोहरनों के बीच से गुजरने का अनुमान हो जाता । दिखायी कुछ नहीं दे रहा था । एक उलार खड़ी बैलगाड़ी के झूलते जुये के नीचे से निकलते समय उसका सर टूटते-टूटते बचा ।

अनाखां निमांचा की बित्ता-बित्ता धरती को अपनी हथेली की तरह जानती थी । उसे अंधेरे में भटक जाने की कोई आशंका नहीं थी । अंधेरे में निधड़क दौड़ती चली

जा रही थी। गांव से स्टेशन की ओर सबसे नज़दीक रास्ता कब्रिस्तान के बीच की पगडण्डी था। अनाखां बिना झिझके उसी रास्ते चल दी।

नज़ाकत हांफती हुई पसीना-पसीना हुई, बिना रास्ता देखे अनाखां के साथ-साथ भागती चली जा रही थी। वह पीछे नहीं रह जाना चाहती थी। कांटे उसके बुरके के दामन का किनारा पकड़ कर और उसके पांव को खरोंच-खरोंच कर उसे रोकने का यत्न कर रहे थे परन्तु वह अनाखां से पीछे कैसे रह जाती! कंकड़-पत्थर भरी पगडंडी नाले में से जा रही थी। कुछ न दिखायी देने से नज़ाकत का सिर चकरा रहा था। सहसा उन दोनों को बायीं ओर एक चमकारा दिखायी दिया। प्रकाश बाघ के टीले की ओर से आया था।

नज़ाकत का पांव लड़खड़ा गया। वह एक कब्र पर गिरते-गिरते बची। उसका गला आतंक से रुंध गया था नहीं तो भय से चीख पड़ती। देख न सकने के कारण उसका पांव कब्र से ठुकरा गया था!

नज़ाकत का दिल दहल रहा था—अनाखां पागल हो गयी है। ऐसी अंधेरी रात में कहां चली जा रही है। इस जगह तो कोई दिन में भी कदम नहीं रखता। नज़ाकत थर-थर कांप रही थी। उसने अनांखा की आस्तीन खींच कर कहा—"सुनो, सुनो तो!" अनाखां ने कुछ नहीं सुना। नज़ाकत को खींचे लिये चलती गयी। पांव के नीचे घिसते पगडंडी के रोड़े और कंकड़ों की आहट उन्हें बार-बार आगे न जाने के लिये बरज रही थी। नज़ाकत कदम बहुत ऊंचे-ऊंचे उठा कर चल रही थी जैसे किसी भी क्षण कूद पड़ने के लिये तैयार हो। नीचे से तीखी हवा उसके बुरके में भरी जा रही थी।

अनाखां और नज़ाकत ऊबड़-खाबड़ नाले को लांघ कर समतल पगडंडी पर आ गयी थीं। सामने एक विराट आकार काली सी छाया खड़ी दिखायी दी। हवा में सील और सड़ांध अनुभव हुई। अंधेरे में पहचानना तो कठिन था परन्तु अनुमान कर लिया वे शेख खिज्र की कब्र के पास से जा रही थीं। गन्ध बांसों पर लटके चीथड़ों और घोड़े की पूंछों के चंवर सड़ने की थी।

नज़ाकत ने आतंक से सहमी बच्ची की तरह आंखें मूंद लीं और कब्र के प्रति आदर से चेहरे पर नकाब खींच लिया।

"क्या कर रही हो? तुम तो मुझे भी डरा दोगी।" अनाखां ने नज़ाकत की बांह झकोर कर कहा।

अनाखां भी हांफ गयी थी। उसके कदम धीमे हो गये। पगडंडी पर उन के सामने से रोड़े और कंकड़ों के हिलने-सरकने की आहट सुनायी दी। अनाखां ने अनुमान किया कोई गिरगिट या नेवला होगा परन्तु आहट काफी दबाव की थी। नज़ाकत भय से कांप गयी। अनाखां ने भी सिहरन अनुभव की। शेख खिज्र की कब्र के कोने

से एक आदमी का आकार पगडंडी की ओर बढ़ता दिखायी दिया। फिर दूसरा, तीसरा, चौथा ।

आदमी कब्र से निकल कर पगडंडी के साथ-साथ उकड़ू बैठ गये जैसे आने वाले की टोह में हों।

अनाखां के कदम रुक गये। उसने नज़ाकत की बांह पकड़ ली और आहट सुनने लगी। कब्र की ओर से आते आदमी भी खड़े हो गये। अनाखां ने जानना चाहा— उसे केवल कल्पना में ही भय दिखायी दे रहा था या सामने सचमुच कोई लोग थे!

दिन के समय कई फकीर हाथ में भिखारियों की तोमड़ियां लिये शेख खिज्र की कब्र पर बैठे रहते थे और कब्रिस्तान में अपने सम्बन्धियों की कब्रों पर फातिहा के लिये आने वालों से भीख मांगते रहते थे। पिछले बरस नमागां के एक इमाम ने कब्र पर एक बहुत बड़ा देग रखवा दिया था। देग में बहुत सा दलिया रांध कर फकीरों और भिखारियों को बांट दिया जाता था। अनाखां ने सोचा शायद कोई अभागे भिखारी रात भी यहीं काट देते हों।

अनाखां सामने दिखायी देते लोगों की तरफ एक कदम बढ़ी। पगडंडी के साथ बैठे लोग भी धरती से निकल आये खम्भों की तरह उठ खड़े हुये। अनाखां ने समझ लिया—यह गरीब फकीर नहीं हैं। मस्तिष्क में कौंध गया—सम्भव है, उसकी और नज़ाकत की बातें किसी ने सुन ली हैं और उनका पीछा किया है।

अनाखां के भय का स्थान क्रोध ने ले लिया।

"कौन है ?" अनाखां ने ऊंचे स्वर में धमकाया, "यहां क्यों आये हो ?"

शेख खिज्र की कब्र की ओर से एक गहरी गूंज सुनाई दी जैसे कोई गुफा में से बोल रहा हो :

"ऐ काफिर ! तू फौरन इस मुतार्बरिक दरगाह के सामने सिजदा करके अपने गुनाहों के लिये तौबा कर। तुझे अभी नूरिया की राह पर, जो तेरी ही तरह गुनाहगार थी—दफा किया जायगा।"

नज़ाकत भय से चीख उठी। उस की बांह अनाखां के हाथ से फिसल गयी। वह अनाखां के कदमों के पास गिर पड़ी।

अनाखां ने अपनी मखमली कुर्ती के गले का बटन खींच कर खोल लिया। भीतर हाथ डाल कुछ खींच कर दांत पीस लिये—अभी तौबा करती हूं। उस ने झुक कर नज़ाकत की बांह खींची :—

"उठो ! क्या करती हो !"

नज़ाकत का बोल नहीं निकला। वह अनाखां के घुटने से ऐसे चिपट गयी कि अनाखां गिरते-गिरते बची।

अनाखां के सामने पगडंडी पर खड़े आदमियों की परछाइयां उस की ओर बढ़ने लगीं।

फिर गूंज सुनाई दी—"ओ चुड़ैल! अपनी मौत से पहले तौबा कर ले वर्ना अभी तेरी आंखों में मिट्टी भर जायेगी। कीड़े तेरे नापाक जिस्म को खा जायंगे। तू अभी जहन्नुम की सातवीं तह में पहुंच जायेगी—आमीन!"

"आमीन!" कई आवाजें एक साथ सुनाई दीं।

नज़ाकत फिर चीखी और रोती हुई गिरगिट की तरह हाथ-पांव पर रेंग कर सामने खड़े लोगों की ओर दौड़ पड़ी। अनाखां उसे रोक नहीं सकी।

"दीन और शरियत के नाम पर!" गूंज फिर सुनाई दी।

अनाखां की गर्दन उठ गई। कांपते हुये परन्तु ऊंचे स्वर में उस ने उत्तर दिया—"खबरदार! सोवियत शक्ति के नाम पर कहती हूं, सामने से हट जाओ बदमाशो, सामने से हट जाओ!"

एक पत्थर सनसनाता हुआ अनाखां की कनपटी के पास से निकल गया। फिर दूसरा, तीसरा, चौथा…।

नज़ाकत का चेहरा, हाथ और घुटने रगड़ से छिल गये थे। वह घुटने के सहारे उठी तो उसे पीठ पीछे से धमाका सुनाई दिया।

नज़ाकत ने समझा मार दिया। अनाखां को गोली मार दी! नज़ाकत भय से एक बार और चीखी और फिर धरती पर गिर कर बेसुधी में हाथ-पांव चला कर छटपटाने लगी।

नज़ाकत कुछ देर हतचेतन सी हो गयी; समझ न सकी कि क्या हो गया था। होश आया तो उठ कर रेंगने लगी। और फिर उठ कर भाग चली। कई बार गिरी और फिर उठ कर फिर भागी। उस का नया बुरका पत्थरों पर घिसिट-घिसिट कर, कपड़े झाड़ियों में उलझ-उलझ कर बुरी तरह फट गये थे। वह गिर पड़ी।

नज़ाकत को होश आया तो बहुत सी लालटेनें उस की ओर चली आ रहीं थीं। लोगों के हाथ में बेलचे, फावड़े और गधेले थे। लोग बाघ के टीले की ओर से चले आ रहे थे परन्तु कदमों की आहट से लगा कि बहुत से लोग उस के समीप से दूसरी ओर अंधेरे में भाग गये। नज़ाकत के मस्तिष्क में कौंध गया—अनाखां मारी गयी! भागते-भागते उस का सिर चकरा गया। वह गिर पड़ी।

"मर गई! बचाओ!" नज़ाकत तीसरी बार होश आने पर चीख उठी और हाथों से चारों ओर टटोलने लगी। उसे लगा कि उस के हाथ किसी दीवाल पर थे। वह फिर उठी और सहायता के लिये चिल्ला कर दौड़ने लगी पर मुख से शब्द नहीं निकल रहा था। घिग्घी बंध गयी थी। वह एक दीवार से टकरा गयी।

नज़ाकत को चौथी बार होश आया तो वह एक दीवार के साथ धरती पर बिछे सूखे पत्तों पर पड़ी थी। पास ही मजनू के पेड़ की सूखी, टेढ़ी-मेढ़ी शाखायें दिखाई दीं। पोखर की गंध अनुभव हुई। नज़ाकत ने पहचाना, वह अपने पड़ोसी गवैये मस्तान के आंगन की दीवार के साथ पड़ी थी।

"मरियम बुआ! अल्लाह के लिये मस्तान भाई!..." नज़ाकत ने रो कर पुकारा।

नज़ाकत को कोई उत्तर नहीं मिला। चारों ओर घुप्प अंधेरा, सन्नाटा था।

नज़ाकत को मजनू के पेड़ के पीछे से फिर एक छाया अपनी ओर बढ़ती दिखाई दी। वह भय से सुन्न हो गई और पसीना आ गया। एक आदमी दबे पांव उस की ओर चला आ रहा था।

नज़ाकत फिर प्राण हाथों में लेकर दौड़ पड़ी परन्तु पीछे आते आदमी का हाथ उस के कन्धे पर आ पड़ा। उस ने नज़ाकत का बुरका पकड़ लिया। नज़ाकत ने अपना बुरका उस के हाथ में छोड़ दिया और फिर दौड़ती हुई चिल्लायी "मार दिया। बचाओ!"

नज़ाकत का पीछा करने वाले ने उसे फिर पकड़ लिया और धरती पर गिरा देना चाहा। नज़ाकत गिरी नहीं। आदमी नज़ाकत का मुंह दबा कर उस की चोटी उस के गले में लपेटने लगा और दांत पीस कर गुर्राया :

"चुप! खबरदार, आवाज निकली! अभी खत्म कर दूंगा!"

नज़ाकत ने आवाज पहचान ली। क्रोध से हाथों में शक्ति आ गयी। लगा, उस के गले को दबोचते हाथ इतने मजबूत नहीं थे। आवाज़ बूढ़े इमाम अब्दुलमजीद की थी—इस बूढ़े के हाथों में कितनी शक्ति होगी...।

नज़ाकत ने आक्रमण करने वाले को पहचान लिया था। मनुष्य भय का कारण पहचान ले तो सामना साहस से कर सकता है। समझ गयी—इमाम कब्रिस्तान में था। वहीं से दौड़ कर पहले ही—उसे मारने के लिये उस के मकान पर आ पहुंचा है—कि उस का भेद न खोल दे! खूनी!... यही तेरी इबादत और तेरा मजहब है!

नज़ाकत ने पूरी शक्ति लगा, बल खाकर इमाम के हाथों से गला छुड़ाया और उस ने इमाम की दाढ़ी पकड़ कर पूरे जोर से खींच ली। इमाम कराह उठा। बाल खींचने और नोचने में मर्द स्त्री की बराबरी कैसे कर सकता है? इमाम ने विकट पीड़ा सह कर भी नज़ाकत का मुंह नहीं छोड़ा। उस ने नज़ाकत को पेट में घुटना मार कर धरती पर गिरा दिया और बुरका उस के मुंह पर रख कर दोनों हाथों से दबाया।

नज़ाकत छटपटा कर, बल खा-खा कर अपने प्राणों के लिये लड़ रही थी।

× × ×

नरमत बाघ के टीले से लौटते समय याफिम को अपने घर लिवा लाया था। नज़ाकत घर पर नहीं थी। नरमत ने अनुमान कर लिया—गप-शप के लिये पड़ोस की औरतों के यहां चली गयी होगी। खुद चाय बनाने लगा। सोचता भी जा रहा था—अंधेरा हो रहा है, अभी तक क्यों नहीं लौटी।

नरमत ने याफिम को बहुत सुन्दर हलका प्याला निकाल कर चाय दी। याफिम नरमत की तरह ही पालथी मारे चौंतरे पर उस के साथ बैठा था। चाय की चुस्की लेते-लेते बोला—"भैया नरमत, लोग कहते हैं कि काजल की कोठरी में जाओ तो कालिख जरूर लगेगी परन्तु ऐबी आदमी की संगत करे तो आदमी खुद ऐबी बने बिना भी नहीं रहेगा।"

नरमत ने गर्दन झुका कर हामी भरी और बोला :

"हां, पर इमाम को किसी से क्या लेना-देना है! बेलौस, आलिम आदमी हैं। कोई बुरी बात थोड़े ही सिखा सकते हैं? नेकी ही सिखाते हैं। गुनाह से बचने को कहते हैं। हम मुसलमानों को गुनाह से दूर रहना ही चाहिये।"

याफिम ने कहा—"मैं धर्म और विश्वास की बात नहीं कह रहा हूं। तुम मेरी बात सुनो! भैया, मैं तो अपने लोगों के काम की बात कह रहा हूं। हम मेहनत करते हैं तो सुख-संतोष की भी आशा करते हैं। हमारे परिवारों में भी शान्ति रहनी चाहिये। तुम बताओ ठीक नहीं कह रहा हूं।"

"हां-हां ठीक तो है।"

"तुम्हीं बताओ वह मुल्ला तुम्हें ईमानदारी से मेहनत से काम करने से क्यों रोकता है? यह तो तुम्हारा अपना ही काम है?"

नरमत मौन रहा :

"तुम्ही बताओ, अपनी भलाई के लिये और दूसरों की भलाई के लिये मेहनत करना क्या गुनाह है?" याफिम ने पूछ लिया, "तुम्हीं बताओ, मिल बन जायेगी तो इस से कितने आदमियों का भला होगा? इमाम इस बारे में क्या कहता है? एक बात बताओ, जिस आदमी ने जिन्दगी में कभी हाथ-पांव हिला कर मेहनत नहीं की वह मेहनत के बारे में क्या कह सकता है?"

"हम तो बड़े बूढ़ों से सदा यही सुनते आये है कि मुल्ला, मौलवी, आलिम लोग दीन-ईमान की, शरियत की बातें सिखाते हैं उन्हें बड़ा मानना चाहिये।

"तो फिर तुम्हारी बात गलत हुई न?"

"इमाम किसी को उल्टी बात क्यों सिखायेंगे?" नरमत ने पूछा, "वह हमें अल्लाह और शरियत की बात बताते हैं तो हम से छीन क्या लेते हैं?"

"क्या छीन लेते हैं? बहुत, बहुत कुछ!" याफिम ने उत्तर दिया, "इमाम ने तुम

से बहुत बड़ी-बड़ी चीजें छीन ली हैं। उस ने तुम्हारा शौक से मेहनत करने का हौंसला छीन लिया है। उस ने तुम्हारी बहू की आज़ादी छीन ली है।"

नरमत ने विरोध किया—'यह बिलकुल गलत है। उसे किसी ने कुछ नहीं कहा। इमाम ने कुछ नहीं कहा, मैंने भी कुछ नहीं कहा। उस ने जो काम किया, अपनी मर्ज़ी से किया है।"

याफिम मुस्कराया और प्याला नीचे रख कर बोला :

"नरमत भैया जरा सोचो, तुम्हीं बताओ इमाम ने तुम्हें नफे की बात सिखाई या नुकसान की? मैं तो देख रहा हूं कि तुम उलट-पलट बातों में उलझ गये हो। मैं तो यही चाहता हूं कि तुम्हें परेशानी और नुकसान न हो।"

"इमाम आलिम बुजुर्ग है। मैं उन्हें अपने यहां आने से कैसे रोक दूं!" नरमत धीमे से बोला, "मैं ऐसा करूं तो दूसरे मुसलमान भाई मुझे क्या कहेंगे? यही तो कहेंगे कि मैं बेगैरत, बेदीन हो गया हूं।"

याफिम ने पूछ लिया—"और तुम्हारे साथी लोग क्या कहेंगे?"

ड्योढ़ी के किवाड़ जोर से खुल गये, नरमत बोल नहीं पाया।

वह चौंक कर उठा तो गरम चाय उसके हाथों पर गिर पड़ी।

मिट्टी के तेल की डिबिया के मद्धिम कांपते प्रकाश में नज़ाकत भीतर आयी। चुटिया खुली थी बाल फैले हुये थे, कपड़े फटे थे। चेहरे की गुलाबी रंगत उड़ कर मुर्दनी छायी हुई थी। आंखें पागलों की तरह फटी हुई थीं। नज़ाकत के होंठ हिले पर शब्द न निकल सका।

नरमत बहू की ओर देखता स्तब्ध रह गया जैसे नज़ाकत को पहचानता न हो। फिर बांहें फैलाये नज़ाकत की ओर दौड़ पड़ा। नज़ाकत उसकी बांहों में गिर पड़ी।

नरमत को ड्योढ़ी में इमाम अब्दुलमजीद दिखायी दे गया। इमाम की दाढ़ी उलझी और खिची हुई थी। आंखें पथराई सीं। उसके हाथ में लटका लाल बुरका धरती पर घसिट रहा था। इमाम भौंचक, सहमा हुआ था। नरमत की ओर टकटकी लगाये आंगन में आ गया। उसकी नज़र याफिम की ओर नहीं गयी। इमाम ने नरमत और नज़ाकत के सामने घुटने टेक दिये।

नज़ाकत अपने पति से चिपट कर चीख उठी :

"मुझे मार रहा है, जान से मार देगा!"

इमाम ने हाथ उठा कर नज़ाकत को चुप रहने का संकेत किया और बोला :

"तुम जानते हो मैं खुदा का बन्दा हूं, तुम्हारा खादिम हूं। नरमतउल्ला, मैं तुम्हारे कदमों में पड़ा हूं, रहम करो! अगर मैं झूठ बोलूं, अल्लाह मुझे इसी दम गारत कर दे! तुम्हारे लिये मेरी जबान से हमेशा दुआ और नेक बात ही निकली है…।"

"मुझे मार देगा, जान से मार देगा !" नज़ाकत फिर चीख उठी ।

इमाम ने एक हाथ नज़ाकत के पांव पर और दूसरा नरमत के बूट पर रख दिया और गिड़गिड़ा कर बोला :

"ख़ुदा के वास्ते चुप रहो । अल्लाह के नाम पर तरस करो । मैं मुसलमान हूं; तुम मुसलमान हो । नरमतउल्ला तुम मेरे पिता के बराबर हो । नज़ाकत मेरी मां के बराबर है ।..."

"क्यों ? क्या हुआ ?" याफिम ने पूछ लिया । वह बरामदे से आंगन में उतर आया था ।

"याफिम भैया !' नज़ाकत रक्षा के लिये बांहें फैला कर चीख उठी, "अनाखां कब्रिस्तान में...इसने उन लोगों ने उसे मार दिया...।"

इमाम कदमों पर उछला और ख़रगोश की तरह कुलांच मार कर दरवाज़े की ओर भागा परन्तु नरमत ने कूद कर उसे धर लिया और उसकी गर्दन दीवार के साथ दबा कर चीख उठा ।

"अरे मुल्ला, ये ही पाकदामनी है ? यह है तेरी हरकत !"

याफिम ने नज़ाकत को बांह से थाम कर सहारा दिया—"कब्रिस्तान में कहां...? जल्दी बताओ ?"

"खिज्र शेख की कब्र के पास ।"

"साथी, इसे छोड़ना नहीं ।" याफिम ने कहा, "धरे रहना, छोड़ना नही !" वह आंगन से दौड़ पढ़ा ।

तेतीसवां परिच्छेद

अभी नगर पार्टी कमेटी के दफ्तर का समय नहीं हुआ था । दफ्तर के कमरे और बरामदे सूने थे । झाड़ू-बुहारी करने वाली भीतर से कूड़ा समेट कर ड्योढ़ी के बाहिर रखे कनस्तर में डाल रही थी ।

स्त्रियों के विभाग में अनाखां अपने कमरे में, मेज की परिक्रमा में चक्कर लगाये जा रही थी । उस के सिर पर पट्टी बंधी थी । चेहरा रक्तहीन, पीला था । होंठ गम्भीरता से दबे हुये थे, वैसे ही मुट्ठियां भी बंधी हुयी थीं ।

अनाखां अपनी कुर्सी के पास आकर खड़ी हो गयी । मेज पर तहाया हुआ समाचार

पत्र पड़ा था। पत्र के पहले ही पृष्ठ पर, दो कालमों में चारों ओर लाल पेंसिल का निशान बना था। शीर्षक था—'देशद्रोहियों का मुकद्दमा।'

चायवाला मुहम्मद सैयद, लड़कियों के स्कूल का पुराना अध्यापक मुहम्मद खोजा नैमी, मखसूम पचजानवों उर्फ मखुनिया मखसूम, नीली मस्जिद का इमाम ख्वाजा अब्दुलमजीद, मशहूर जुआरी कल्लू कुलमत, कई मुल्लाओं, फकीरों और अन्धों का बहुत बड़ा दल गिरफ्तार कर लिया गया था। उन पर मुकद्दमा चल रहा था।

मुकद्दमे की पैरवी के लिये सरकार की ओर से अनाखां को वकील नियुक्त किया गया था। अनाखां बहुत एकाग्रता से मुकद्दमे के लिये प्रमाणों और युक्तियों पर विचार कर रही थी। सोच रही थी : किन हृदयस्पर्शी शब्दों से वह इन जनद्रोही, विश्वास-घातियों, मनुष्य के अन्ध-विश्वासों पर निर्वाह करने वालों, मनुष्य के अज्ञान का लाभ उठाने वालों, सट्टेबाजों, धर्म के नाम पर जनता को धोखा देने वाले डाकुओं और जुलैखां के हत्यारों के अभियोग पेश करेगी।

···यदि आज जुलैखां बहिन जिन्दा होती तो वह इन दगाबाज, धर्मध्वजी पाखंडियो का पर्दाफाश कितनी योग्यता से करती ! जुलैखां के शब्द वातावरण में फैल कर समुद्र पार बैठे लोगों के कान भी खोल देते जो चाय वाले जैसे ठगों को भेजते हैं···।

अब वह उत्तरदायित्व अनाखां पर आ पड़ा था।

बरामदे में किसी के बोलने की आहट ने अनाखां का ध्यान बटा लिया। स्वर स्त्रियों का था। अनाखां दरवाज़े की ओर मुड़ गयी—इतनी जल्दी कौन आया होगा।

झिझकते हाथ के दबाव से एक किवाड़ भीतर की ओर दबा। सफेद शाल ओढ़े स्त्री के सिर ने भीतर झांका। कुमरी थी।

"अनाखां बहिन, तुम आ गयी ? मैं तो जानती थी, तुम आ गयी होगी।" कुमरी ने अपनी बरफ से भरी जूती बरामदे में ही उतार दी। नंगे पांव कमरे में आ गयी। कुमरी के पीछे कुबड़ी बुढ़िया, शुक्र अल्लाह दादी थी। बुढ़िया बुर्का नहीं ओढ़े थी।

"जूती बरामदे में उतार देती तो क्या था।" कुमरी बुढ़िया की ओर घूम कर झुंझलायी, "जाने तुम्हें कब अक्ल आयेगी ! देखती नहीं हो, बरफ से फर्श पर पानी ही पानी हो जायेगा।" कुमरी उसी सांस में कहती चली गयी।

"अनाखां बहिन, क्या हाल-चाल है ? अब तुम्हारी तबियत कैसी है ? हाय अल्लाह, देखो तो, सब फर्श गन्दा हो गया।"

"आओ, आओ !" अनाखां बोली। कुमरी और शुक्र अल्लाह दादी को देख कर उस का चेहरा खिल उठा। उस ने शुक्र अल्लाह दादी को हाथ से पकड़ कर दीवार के साथ रखी बेंच पर बैठा दिया—"मुबारक, मुबारक हो, दुनिया तुम्हारा चेहरा भी देख पायी ! आज सूरज किधर से उगा है कि तुम भी यहां पधारीं ?"

कुमरी बोल पड़ी—"दादी को मैं ही ले आयी हूं। तुम ने कहा था न, बुढ़िया का ख्याल रखा करो। देख-भाल किया करो। मैं यहां आ रही थी, इन्हें भी लेती आयी।"

"चल मुंहजली!" अंजीरत दादी की गर्दन क्रोध से कांप गयी, "बड़ी आयी तू मुझे लाने वाली। मुझे नहीं आता यह रास्ता? मैं क्या तेरी उंगली पकड़ कर चलती हूं? मैं तो खुद ही आई हूं। अनाखां बिटिया, तू भी किस पागल लड़की की बात सुनती है। इस की तो हाथ भर की जबान है, क्या नाम, इमाम की दाढ़ी से भी लम्बी पर इसे अक्ल जरा नहीं है। इतना नहीं जानती कि मेरी कमर में दरद है, जूती खोलने के लिये कैसे झुकूं।"

अनाखां ने दादी को बांहों में ले लिया—"दादी, तुम परवाह मत करो। तुम्हें जूती उतारने की कोई जरूरत नहीं। तुम मेरे सिर-आंखों पर आओ। मैं हजार बार फर्श धो लूंगी, कोई परवाह नहीं। बुरा हो तुम्हारी कमर-दर्द का। अभी तो कमर सीधी करके, उघाड़े मुंह चलने का तुम्हारा वक्त आया है। मुबारक हो दादी, मुबारक हो! शुक्रिया!"

"दादी को कैसा शुक्रिया?" कुमरी हंस पड़ी, "शुक्रिया तो मेरा करो। मैंने इस से कह दिया था—बुर्का नहीं छोड़ोगी तो मैं तुम्हारे यहां नहीं आऊंगी। तुम्हारा दफ्तर नहीं दिखाऊंगी। कह रही थी—अनाखां का घर तो मेरा देखा है। उस का दफ्तर, पार्टी का दफ्तर देखना चाहती हूं। देखो दादी की हिम्मत?"

"रज़िया चुड़ैल तो मुझ से भी दो बरस बड़ी है।" अंजीरत दादी ने विरोध किया, "वह तो यहां रोज़ चली आती है। मैं क्या उस चुड़ैल से बूढ़ी हूं -"

"हाय दादी, तुम्हें कौन बूढ़ी कहता है! तुम आयी, बड़ा अच्छा किया। तुम्हारे आने से मुझे बहुत खुशी हुयी।" अनाखां बोली, "दादी, तुम तो बड़ी अच्छी लग रही हो। सच कहूं, मैं तो तुम्हें पहचान ही नहीं सकी?"

"शुक्र अल्लाह का बिटिया, शुक्र अल्लाह का!"

कुमरी की नाक चढ़ गयी।

"दादी फिर वही ऊटपटांग! तुम ने अभी रास्ते में कहा था—अब शुक्र अल्लाह, शुक्र अल्लाह नहीं करूंगी।"

"हां-हां" बुढ़िया ने स्वीकार किया, "शुक्र अल्लाह का, मैंने यह आदत छोड़ दी।"

अनाखां और कुमरी कहकहा लगा कर हंस पड़ीं।

अंजीरत दादी गम्भीर हो गयी। हथेली की पीठ से मुंह पोंछ कर बोली:

"हां-हां हंस लो! हंसने की तो बात ही है पर मैं तो दूसरी बात के लिये आयी हुई हूं। वह हंसी की बात नहीं है। सच बताओ, बिटिया!" बुढ़िया ने अपनी सिकुड़ी

हुई टेढ़ी तर्जनी उठा कर पूछा, "लोग कह रहे हैं, इन्हीं लोगों ने हमारी मां का, हमारी बहिन जुलैखां का कत्ल किया था। क्या सच है ?"

"हां दादी, सच है।"

"और क्या इन्होंने तुम को भी गोली मारी थी ?"

"नहीं दादी, यह बात नहीं। यह लोग मुझे पत्थरों से मार देना चाहते थे। गोली मैंने चलाई। मैंने गोली चलाई तो यह लोग गीदड़ों की तरह भाग गये !"

"तु तु·· बिटिया, तुम ने गोली चलाई ?" बुढ़िया की झड़ी हुई भौंहें तनी हुई कमानों की तरह ऊपर उठ गयीं।

"हां दादी।"

"तू बन्दूक चला लेती है ?"

"हां दादी !"

"शुक्र अल्लाह का, शुक्र अल्लाह का !" बुढ़िया ने होंठों में दुआ पढ़ कर अनाखां को आशीर्वाद दिया। छः महीने पहिले दादी ने यह बात सुनी होती तो उन के मुंह से सौ बार लानत और तौबा निकली होती। अब दादी बहुत उत्साहित थी, "भाग गये, गीदड़ों की तरह, भाग गये।"

"हां दादी !"

"अच्छा, बन्दूक की गोली किसी को लगी ?"

"नहीं दादी। मैंने उन्हें डराने के लिये हवा में गोली चला दी थी। वे डर कर भागे। बाघ के टीले से मज़दूर भी दौड़ कर आ गये थे।"

"हूं" बुढ़िया ने संतोष प्रकट किया और अनाखां का पट्टी में लिपटा सिर झुर्रियों से सिकुड़े हाथों में लेकर पट्टी पर चूम लिया।

"क्या कर रही हो, धीरे से !" कुमरी ने टोक दिया, "दर्द होता है !"

"कोई बात नहीं, होने दो।" बुढ़िया ने गर्व से गर्दन सीधी करके कहा, 'मेरे भी दर्द होता है।" बुढ़िया ने सीने पर हाथ रख कर बताया, "अल्लाह की कसम, मुझे क्या मालूम था कि मैं बुरका पहनती थी तो किसी का नुकसान करती थी। मैं तो कहती थी कि नज़ाकत ने बुरका छोड़ दिया था तो वह जाने, फिर वह पहनने लगी तो मैंने कहा वह जाने। मैं तो यही समझती थी। बिटिया अनाखां, सच कहती हूं अगर तुमने मुझ से पहले कहा होता कि इमाम ने नज़ाकत की चुटिया का फन्दा लगा कर उस का गला घोंटा तो मैं तुम्हें झूठा कहती। समझती हो न तुम ?"

"हां दादी !"

"तभी तो कहती हूं, मेरे दिल में दर्द है इसीलिये तो आज मैंने नकाब फेंक दी। इस छोकरी की तो बड़ी लम्बी ज़बान है। यह तो यों ही बक रही है कि इस ने कहा

कि मुझे तुम्हारे यहां, पार्टी का दफ्तर दिखाने के लिये नहीं लायेगी।"

कुमरी को हंसी आ गई। अपने टूटे हुये दांत छिपाये रखने के लिये होठों पर हाथ रख कर बोली :

"हाय दादी, तुम भी बड़ी वैसी हो। मैंने तो घण्टे भर बक-बक कर तुम्हें समझाया, कसमें दिलायीं, अब सब भूल गयीं ! यह भी न भूल जाना कि आयी किस मतलब से हो ?"

"मैं क्यों भूल जाऊंगी ? क्या तेरी तरह पागल हूं।" बुढ़िया ने गर्व से कहा, "वही कहने तो आयी हूं।"

बुढ़िया ने अखबार की ओर संकेत किया—"मालूम है, अखबार में क्या लिखा है ?" बुढ़िया विज्ञ की तरह बोली, "इस मुंहजोर छोकरी ने पढ़ कर सब बता दिया है। हां-हां इस ने खुद पढ़ कर बताया। हां-हां पढ़ लेती है। या अल्लाह, जाने कैसे पढ़ना सीख गयी; किस ने इसे सिखा दिया ? तुम्हारी कसम, मेरी आंखों के सामने पढ़ के सुना दिया। हां तो बिटिया, मैं कहती हूं, कोई लिखने-पढ़ने वाला आदमी हो तो मैं कहती हूं लिख ले—इमाम अब्दुलमजीद जहन्नुम में जायेगा और इस दुनिया में भी उस को गुनाहों की पूरी सजा मिलनी चाहिये। जिस जालिम ने जुलैखां बहन का कत्ल किया है, उसे मिट्टी भी जगह नहीं देगी, यह अखबार में लिखना चाहिये और यह भी लिख दो कि यह अंजीरत शुक्र अल्लाह दादी ने कहा है, जिस ने कभी जिन्दगी में एक मच्छर तक नहीं मारा। क्यों बिटिया, अखबार वाले इतना लिख देंगे ?"

अनाखां बुढ़िया को कुछ उत्तर न दे टेलीफोन की ओर चली गयी। उस ने अखबार के सम्पादक को टेलीफोन कर दिया। दस मिनट में एक लड़की बुढ़िया को अखबार के दफ्तर में ले जाने के लिये आ गयी।

अनाखां ने बुढ़िया के लिये दरवाजा खोला तो बोली :

"दादी, अब मैं खूब समझ गयी, पैरवी में क्या कहना है। यह भी समझ गयी कि तुम ने सचमुच आंखों पर से पर्दा हटा दिया है।"

बुढ़िया ने दुविधा में हाथ होठों पर रख कर पूछ लिया—"बिटिया, अखबार में तो मर्द लोग होंगे ! बताओ, मैं चली जाऊं ?"

"दादी वहां तुम्हारी तस्वीर बनेगी। तस्वीर अखबार में छपेगी।"

अंजीरत ने बुलाने आयी लड़की की ओर संदेह से देखा—"यह लिख लेगी ? कोई मर्द बताओ जो अच्छी तरह लिख ले।"

अनाखां हंस पड़ी—"दादी, अखबार के दफ्तर में बहुत से मर्द होंगे।"

"बिटिया, मेरा दिल डर रहा है" बुढ़िया ने गहरा सांस लिया, "इस में गुनाह तो नहीं होगा ?"

"चल-चल," कुमरी ने बुढ़िया की कमर पर टोहका दिया, "तुम चलो गुनाह मेरे सिर रहा।"

अनाखां, अंजीरत दादी और कुमरी के लिये दरवाजा खोल उन्हें रास्ता देकर बाहर आयी तो विस्मित रह गयी। बरामदे में सरगी झेंपा सा खड़ा था। अनाखां का हृदय धड़कने लगा।

कुमरी जूती पहन रही थी तो सरगी भी झुक कर सावधानी से अपने जूते साफ करने लगा।

"क्षमा कीजिये, मैं सुबह-सुबह ही आ गया।" सरगी ने दरवाजे में होकर संकोच से कहा, "इधर से जा रहा था। सोचा, आप का हाल-चाल पूछता चलूं।"

"मैं-मैं बिलकुल ठीक हूं, धन्यवाद!" अनाखां ने अपने आप को सम्भाल कर कहा और लड़खड़ा जाने की आशंका से कुर्सी पर बैठ गयी। मेज़ पर से अखबार उठा कर हाथों से मोड़ने लगी।

सरगी झिझकते हुये कमरे में आ गया। एक नज़र कमरे की दीवालों पर डाली और फिर मेज़ के समीप चुप खड़ा हो गया जैसे प्रार्थना के लिये आया हो।

"मैं एक बार, इस कमरे में जुलैखां बहिन से मिला था।" सरगी ने कहा, "उन की बातें जन्म भर नहीं भूल सकूंगा। आप सोचेंगी, मैं क्या कहे जा रहा हूं पर इस कमरे में आकर मुझे लगता है, अपने घर पहुंच गया हूं, जैसे इस कमरे से मेरा अतीत का गहरा सम्बन्ध हो। वास्तव में मुझे ऐसा ही लगता है।…सच कह रहा हूं, कैसे-कैसे अनुभव हुये हैं! जो देख रहा हूं उस से अवाक रह जाता हूं। लगता है, मुझे यहां रहते वर्षों बीत गये हों।"

"हां-हां ठीक कह रहे हैं।" अनाखां ने कुर्सी पर संभल कर कहा। चाहती थी सरगी से हाथ मिलाकर उस का स्वागत करे, उसे बैठने के लिये कहे पर बन न पड़ा।

सरगी ने स्वयं ही एक कुर्सी अनाखां के समीप खींच ली और बैठ गया। कुछ क्षण वह अनाखां की ओर घूमे बिना उसे आंख के कोने से देखता रहा। फिर अखबार पर रखे अनाखां के हाथ की कलाई पकड़ ली। अनाखां ने अपना हाथ पीछे नहीं हटाया परन्तु उस के रोम-रोम में बिजली दौड़ गयी। चेहरा लाल हो गया।

"मैं…बात यह है" सरगी ने कोमल परन्तु गम्भीर स्वर में कहा, "रात दो बार मेरी नींद खुल गयी। दोनों बार सुपने से नींद टूटी। सुपने में देख रहा था—कि कब्रिस्तान में आप पर पत्थर पड़ रहे हैं। मेरी नीद खुल गयी। माफ कीजिये, आप को परेशानी हुई। मेरा मन नहीं माना, स्वयं देख लेना चाहता था कि आप को कोई चोट तो नहीं लगी है। मेरा मन बहुत उद्विग्न या, मैं अभी जा रहा हूं। बहुत बेबस हो गया था इसलिये चला आया। आप को असुविधा हुई, क्षमा कीजियेगा!"

अनाखां निश्चल मौन रही। आंख के कोने से सरगी को देख रही थी—सरगी के होंठ थिरक रहे थे। वह होठों को दांत से दबाये था। अनाखां की आंखों में आंसू उमड़े आ रहे थे। मन चाहा था, सिर सरगी के हाथ पर रख दे।

"बस मैं जा रहा हूं" सरगी ने फिर कहा, "पर एक अनुरोध है। आशा है आप मान लेंगी। यदि कोई भी बात हो, घटना हो तो मुझे ज़रूर खबर दे दीजियेगा। बस यही अनुरोध है।"

"ऐसी क्या बात हो सकती है ?" अनाखां ने कहा। वह अब तक संभल गयी थी।

"मेरा अनुरोध मानेंगी न ?" सरगी ने अपना आग्रह दोहराया।

"जी अवश्य।"

"अच्छा तो मैं जा रहा हूं, नमस्ते !"

"बहुत धन्यवाद, इंजीनियर···सरगी साहब, नमस्ते।"

सरगी तुरन्त उठ खड़ा हुआ। दरवाजे से बाहिर निकल गया। उस ने पीछे घूम कर भी नहीं देखा।

दरवाजा बन्द कर देना भी याद नहीं रहा।

अनाखां बहुत देर तक कुर्सी पर निश्चल बैठी रही। नज़र अपनी कलाई पर थी—जहां से सरगी ने पकड़ लिया था। अपने हृदय की धड़कन सुनाई दे रही थी। उल्लास और अस्पष्ट सूक्ष्म आशंका से रक्त का वेग बढ़ गया था।

चौंतीसवां परिच्छेद

अरगाश अपने पिता की पुरानी छोटी सी कोठरी में रहता था। दीवारों का पलस्तर जगह-जगह से गिर चुका था। चूने की पुताई भी बहुत पुरानी हो कर भूरी-भूरी हो गयी थी। अरगाश को अपना घर संभालने का समय नहीं था। दूसरे लोग हंसी करते थे।

बाप जुलाहा था पर उसे कमर ढंकने को अंगोछा भी नसीब न हुआ। बेटा राज मिस्त्रियों का मैनेजर है परन्तु बाप-दादा के घर का छप्पर मुरम्मत नहीं करवा सका।"

अरगाश बीमार था तो खाट पर पड़ा-पड़ा समीप स्टूल पर रक्खी पुड़ियों और शीशियों की ओर उदास, टकटकी लगाये सोचता रहता था—जी जान से काम में लगा रहता हूं। अपने घर और मां की चिन्ता के लिये भी समय नहीं है। न कभी दिन

देखा है न रात ! खोजिया तक से दो बातें करने का समय नहीं...।

परन्तु लोग अरगाश से संतुष्ट नहीं थे। अरगाश का क्या दोष था ? लोगों को उस से क्या शिकायत थी ?

अरगाश जानता था—याफिम कह देता :

"...अनाखां को नहीं देखते ? निरक्षर, अन्ध-विश्वासी स्त्रियों और नरमत छैले जैसे अड़बंग लोगों को साथ लेकर काम करना तो और भी कठिन है परन्तु अनाखां खूब काम कर रही है। वह लोगों की नब्ज पहचानती है। लोगों को उस पर विश्वास है इसीलिये लोग उस का कहा मानते हैं। अनाखां जिस आदमी से एक बार मिल लेती है, बात कर लेती है, वह उस से प्रभावित हो जाता है, मनुष्य बन जाता है।"

अरगाश भी अनाखां का आदर करता था। उस के प्रभाव को स्वीकार करता था। अनाखां सहृदय थी और साहसी भी थी। वह अनाखां के अनुकरण के लिये तैयार था परन्तु क्या वह स्वयं भी कम्युनिस्ट नहीं था ? वह क्या नौकरशाह था या निष्ठुर व्यापारी था या केवल स्वार्थ-साधक था ? उस पर वैसा लांछन कौन लगा सकता था ?

...सरगी पर मिथ्या आरोप और संकट के समय उस ने निर्भयता से, तन-मन से सरगी की सहायता नहीं की ? अपने शत्रु के बेटे नसरतुल्ला को भी भला आदमी समझ कर अरगाश ने उस के लिये क्या नहीं किया था ? जनता के कल्याण के लिये उस ने क्या उठा रखा था ?

अरगाश के माथे पर गहरे तेवर थे। वह करवटें ले-लेकर सोचता जा रहा था। एक गहरा निःश्वास उस के हृदय से निकल गया। हतभागे नसहतुल्ला को वह बचा नहीं सका परन्तु क्या बचा लेना सम्भव नहीं था ? दूसरा उपाय नहीं हो सकता था ? यदि वह ठीक उपाय करता तो नसरतुल्ला बच जाता और चायवाले का पर्दाफाश भी हो जाता।

अरगाश को सरगी का ख्याल आ गया। उसे पहले इंजीनियर पर विश्वास नहीं था। इंजीनियर के प्रति उस का व्यवहार भी अच्छा नहीं था परन्तु अब उस ने मान लिया था कि सरगी ने चमत्कार, योग्यता और अथक लगन से बहुत बड़ा काम कर दिखाया था।

...मैं अपने संदेह और बेरुखी से उस के मार्ग में रोड़े ही अटकाता रहा। ठीक है, उस पर मिथ्या आरोप के समय उस की सहायता भी की परन्तु यह तो मेरा कर्तव्य ही था। उस से मित्रता और सहृदयता का व्यवहार तो मैं कभी नहीं कर सका। अनाखां उस के प्रति कितनी सहृदय है !

अरगाश का ज्वर उतर गया था। अब मस्तिष्क भी साफ था। वह अपने अतीत जीवन और काम के बारे में गहरी उधेड़बुन में डूबा हुआ था। अरगाश के जीवन के

अरगाश विचार में मौन रह गया। खोजिया ने ऐसी बात कह दी थी। क्या जवाब देता? मन तो खोजिया को जाने देना नहीं चाहता था, खोजिया नहीं जानती होगी?

अरगाश ने खोजिया की ठोड़ी पकड़ उस का मुख उठा लिया। इस की आंखों में उस के मन का प्रश्न भरा था।

"क्यों, क्या मुझे पढ़ने की जरूरत नहीं है? तुम ने यह क्यों नहीं सोच लिया?" अरगाश ने पूछा।

"क्यों नहीं प्यारे परन्तु मुझे अधिक आवश्यकता है। मेरे लिये तो अच्छी तरह पढ़ना बहुत ही आवश्यक है। मेरी बात तुम से ज्यादा और कौन समझेगा?"

"मैं समझूंगा?" अरगाश हंसा, "मैं तो तुम्हें कभी भी नहीं समझ पाऊंगा।"

"मुझे नहीं जाने दोगे?" खोजिया का स्वर कातर हो गया।

अरगाश ने खोजिया की पलकें चूम लीं और अधीर स्वर से स्वीकार कर लिया, "अच्छा चली जाना। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा। जब तुम लौट कर आओगी तो मैं पढ़ने के लिये चल दूंगा। तुम्हें भी मज़ा आयेगा!"

खोजिया ने अपनी बाहें बहुत ज़ोर से अरगाश की गर्दन पर जकड़ लीं।

"हैं-हैं! गला घोंट दोगी?" अरगाश ने धीमे से कहा, "मैं अभी बीमार हूं...।"

"बीमार होंगे तुम्हारे दुश्मन! तुम तो मेरे प्यारे हो!"

× × ×

जाड़ा खूब जोर पर था। हवा के झोंकों से सूखी बर्फ धूल की तरह उड़ती रहती थी। घने कोहरे के कारण सूर्य निस्तेज, धुंधला-धुंधला सा बना रहता था। दिसम्बर के प्रातः का सूर्य बड़ी अनिच्छा से, शिथिलता से धीरे-धीरे उठ रहा था।

अरगाश शहतूत के पुराने पेड़ के नीचे खड़ा था। रुई भरी बंडी के सब बटन बन्द थे। गले पर गुलूबन्द भी लिपटा था। रोयेंदार टोपी, कानों पर और भौंवों तक खिंची हुयी थी। इस पर भी शरीर में सर्दी की सिहरन दौड़ जाती थी परन्तु उस के मन में उत्साह था। शहतूत की शाखाओं में चारों कोनों से तना हुआ बड़ा लाल कपड़ा फरफरा रहा था। कपड़ा, हवा भर कर नाव के पाल की तरह फूला हुआ था। कपड़े पर बड़े-बड़े सफेद अक्षरों में लिखा था—'भूलो मत! मिल का उदघाटन ८ मार्च को होगा!'

बाग के टीले पर अरगाश अकेला ही आया था। उस के साथ खोजिया औद्योगिक स्कूल के दरवाज़े तक आयी थी। घर पर खोजिया ने उसे अपने हाथों अच्छी तरह से ओढ़-लपेट कर कपड़े पहना दिये थे जैसे वह बच्चा हो परन्तु स्कूल के दरवाज़े पर

आकर उस ने जरूरी काम का बहाना कर लिया। अरगाश समझता था—कारण लड़की की लज्जा और उस के प्रति आदर का भाव ही था। अरगाश सोच रहा था—अच्छा ही हुआ रास्ते में याकिम और सरगी नहीं मिले। वह सब ओर एक नज़र डाल कर स्थिति समझ लेना चाहता था।

अरगाश मिल की नीवों की ओर बढ़ गया। अब नीवें कहां दिखायी देती थीं? दीवालें छत की ऊंचाई तक उठ गयी थीं। सब ओर पैड़ें बंधी हुयीं थीं और सब ओर आदमी थे। अरगाश ने इतने सलीके और फुर्ती से काम होते नहीं देखा था। उसे सन्तोष हुआ—यह है काम की गति! जाड़ा हमें रोक नहीं सका। चारों ओर उत्साह और उमंगभरी पुकारें सुनायी दे रही थीं।

अरगाश को सभी ओर नया-नया दिखायी दे रहा था। मलबे के ढेर उठ गये थे। सीधी, समतल सड़कें बन गयीं थीं। क्या जाड़े ने धरती को समतल कर सड़कें बना दीं? सब कुछ मजदूरों ने ही किया था, सुव्यवस्था का परिणाम था। सड़कों पर बहुत बड़े-बड़े ट्रकों के पहियों के निशान छपे हुये थे। बैलगाड़ियों के पहियों की लीकें उतनी गहरी नहीं थीं। अब काम मशीनों से हो रहा था। उसे याद आ गया, जाड़े के आरम्भ में केवल एक ही ट्रक था। स्टेशन से सामान उठाने में कितनी परेशानी हुयी थी। अब कई ट्रक, ट्रैक्टर और कैटरपिल्लर भी थे। सधे हुये ड्राइवर थे। विराट शक्ति थी और उस का समुचित प्रयोग हो रहा था। एक बहुत बड़ा ट्रक अपने पीछे ठेला बांधे चला आ रहा था। ट्रक और ठेले पर तख्ते लदे हुये थे। ट्रक अरगाश के सामने आकर रुक गया। नौजवान ड्राइवर कूद पड़ा। उस के माथे पर घुंघराले केश उलझे थे। ड्राइवर ने पुकार लिया :

"साथी कोई सिगरेट है?"

"घर का तम्बाकू है।" अरगाश ने ट्रक की ओर बढ़ कर जेब से तम्बाकू की डिबिया खींच ली।

"वाह-वाह, इस से बढ़िया और क्या होगा!" ड्राइवर ने डिबिया से तम्बाकू लेकर पूछ लिया, "क्यों बहुत जाड़ा लग रहा है?"

"तुम्हें नहीं लग रहा?"

"तो फिर जेब में हाथ डाले क्यों खड़े हो, काम में लग जाओ! हाथ-पांव हिलाओ तो बदन गरमा जायेगा। काम की तो कमी नहीं है।"

अरगाश ने गर्दन झुका कर हामी भरी और बोला—"गाड़ी का इंजन क्यों बन्द कर दिया? सर्दी से जाम हो गया तो?"

"मेरी गाड़ी का इंजन जाम हो सकता है?" ड्राइवर ने हाथ से बनाया सिगरेट दांतों में दबा कर चुनौती दी, "जहां मेरा हाथ थमा, इंजन बिल्लौटे की तरह घुरघुराने

लगेगा। यह भी कोई सर्दी है। ऐसी सर्दी में तो नदी नहाने का मज़ा है।"

अरगाश ने माचिस जला कर बढ़ाई। दोनों ने सिगरेट सुलगा लिये। अरगाश एक कश लेकर धुंआं छोड़ते हुये बोला—"तो चलो लगाओ डुबकी। कूल जम थोड़े ही गयी है। कल-कल पानी बह रहा है। चलो लगाओ गोता।"

"गोता क्यों लगायें!" ड्राइवर, "फू-फू" मुख में आ गया तम्बाकू थूक कर बोला, 'तुम्हारे यहां हमाम तो है ही नहीं। हमाम होता तो बर्फ में गोता लगा कर गरम पानी से नहाने का मज़ा आता।" ड्राइवर कहकहा लगा कर हंस पड़ा, "कूल में गोता तो तुम्हारे यहां के मैनेजर को देना चाहिये!"

'मैनेजर को?"

"किसे गोता देना चाहिये?" अरगाश ने विस्मय और कौतूहल से पूछ लिया।

"हां-हां मैनेजर को!" ड्राइवर ने उत्तर देकर सिगरेट के सिरे पर आ गयी राख फूंक से उड़ा दी, "जाने क्या नाम है उस का; रिगाश-रिगाश कहते हैं न?"

अरगाश ने हंस कर धीमे से पूछा—"क्यों, उस ने क्या बिगाड़ा है? उस बेचारे को क्यों गोता देना चाहते हो?"

"बड़ा खब्ती है! न ढंग से काम करता है, न किसी को करने देता है। उसे हमेशा जल्दी रहती है। कोई तरीका कोई शऊर नहीं। हमेशा भब्बड़ मचाये रहता है। ऐसे काम हो सकता है? मजदूर भी तो चाहता है कि उस का खयाल किया जाये। उस के काम की इज्ज़त की जाये। मजदूर की इज्ज़त करो तो वह तुम्हारी इज्ज़त करता है और हौंसले से दूना काम करता है लेकिन यहां का मैनेजर हरदम लाठी लिये सब के पीछे पड़ा रहता है। कमबख्त खुद ही बीमार पड़ गया, दूसरों से क्या काम करायेगा?"

"क्या भब्बड़ मचाया उस ने?..."

"मैं तो यहां अभी आया हूं पर सुना है, मजदूर छः सप्ताह बेमतलब सिर मारते रहे। रेत पर दीवालें बनाते रहे।" ड्राइवर ने माथे पर लटक आये केशों को पीछे करके कहा, "वैसे कहते हैं, दिमाग का अच्छा है। लोग उस का आदर भी करते हैं। काम में न दिन देखता है न रात। उसी में बेचारा बीमार पड़ गया है।"

अरगाश मौन रह गया। गर्दन लटक गयी।

नौजवान ड्राइवर लेनिनग्राद से आया लगता था। उस के ट्रक पर खलतूरिन मिल का नाम था। गाड़ी का इंजन बहुत अच्छा था। बहुत अच्छा काम करता था परन्तु ड्राइवर भी खूब चुस्त था। बातचीत से साइबेरिया का लगता था परन्तु व्यवहार ठेठ मजदूरों का, जाग्रित मजदूर का।

"गलती तो सभी से होती है। बच्चा गिर-गिर कर ही चलना सीखता है।"

अरगाश ने कहा, "तुम्हीं तो कह रहे हो अभी मैनेजर की उम्र ही क्या है ! अनुभव कम है। सब सीख जायेगा।"

"सीख जायेगा !" ड्राइवर हंस दिया, "हां सीखना चाहेगा तो जरूर सीख जायेगा।" ड्राइवर मुस्कराया, "सुनो यार, तुम्हीं हो न मैनेजर ?"

"हां।"

ड्राइवर ने अरगाश की पीठ पर थापी दी—"खूब बन गये ?"

"बनने की क्या बात है, मेरा नाम अरगाश सुल्तान है।"

"सच ?" ड्राइवर ने सिगरेट का ठूंठ फेंक कर अरगाश से हाथ मिलाया, "अच्छा हुआ, आप से मुलाकात हो गयी। मैनेजर साहब, मेरी बात का बुरा न मानियेगा ! लोग यों ही उड़ा देते हैं, लोगों का क्या है !"

"नहीं, ठीक कह रहे हैं। मुझ से गलती हो सकती है। सभी लोग तो गलत नहीं हो जायेंगे। धन्ययाद है, तुम ने ठीक बात बता दी।"

"बुरा तो आप को जरूर लगा होगा।" ड्राइवर ने कटाक्ष किया, "कड़वी बात किसे अच्छी लगती है ?"

"हां, मानता हूं मुझ में यह ऐब है। अरगाश ने स्वीकार किया, "मुंह से कड़वी बात निकल जाती है।"

ड्राइवर और अरगाश की आंखें फिर मिलीं। अब उन की नजरें दूसरी थीं। दोनों ने खूब जोर से हाथ मिलाये और कहकहे से हंस पड़े।

मजदूरों की एक टुकड़ी आ गयी थी। कुछ हो-हल्ला नहीं हुआ। मजदूर चुपचाप फुर्ती से तख्ते उतारने लगे। अरगाश ने देखा सभी मजदूरों के हाथों में नये दस्ताने थे और सभी रुई भरी बंडियां पहने हुये थे। मजदूर तख्तों के चट्टे लगाते जा रहे थे। अरगाश कुछ पल देखता रहा। उस ने हाथों पर फूंक मारी, मलकर गरम किया और ट्रक की ओर लपक गया।

"जरा हाथ तो लगाना। मुझे भी एक तख्ता उठवा दो। बदन की सर्दी दूर हो।" अरगाश ने ड्राइवर को सम्बोधन किया।

ड्राइवर कूद कर ट्रक के समीप हो गया—"यह लो, एक-दो…।"

ड्राइवर और अरगाश एक लम्बा तख्ता उठाये चट्टे की ओर दौड़ पड़े।

अरगाश फिर ट्रक की ओर जा रहा था। एक मजदूर ने सामने होकर रास्ता रोक लिया। अरगाश ने पहचाना—नरमत छैला था।

"क्या कर रहे हैं, मैनेजर साहब ?" नरमत ने अधिकार भरे स्वर में टोका, "यह आप का काम नहीं है।"

अरगाश ने नरमत के सीने पर आत्मीयता से मुक्का देकर कहा—"तुम कौन हो

जी, अपना काम देखो !"

"यह मेरा काम है। आप अपना काम देखिये :" नरमत बोला, "यहां मैं मेट हूं। आप को दखल देने की जरूरत नहीं है।"

"ठीक तो है मैनेजर साहब ! आप अपना काम कीजिये, अपना बोझा ढोइये...।" दूसरे मज़दूरों ने भी इस का समर्थन किया।

अरगाश ने विस्मय से नरमत की ओर देखा—"नरमत भाई, यहां तुम मेट हो यह मालूम नही था, माफ करना। सचमुच बड़े सलीके से काम करवा रहे हो।"

"इस में मज़ाक की क्या बात है ? क्या गलती है ?" नरमत की भौवें उठ ।"

"नहीं-नहीं, मैं सचमुच तारीफ कर रहा हूं। देख कर मुझे बहुत अच्छा लगा।" अरगाश ने विश्वास दिला कर पूछा, "नज़ाकत बहिन का क्या हालचाल है ? अब तबियत ठीक है न ?"

"मैं क्या जानूं, आप खुद आकर नहीं देख सकते ?"

"क्यों नहीं ? आऊंगा, आज ही शाम को आऊंगा।"

"जरूर आइयेगा। हम राह देखेंगे।"

कई मजदूर आकर समीप खड़े हो गये थे। वे अरगाश से उस की तबियत का और मां का हाल-चाल पूछने लगे।

कंकड़ों पर भारी-भारी जूतों की ढप-ढप सुनायी दी। कंक्रीट की मशीन की ओर से मामजान दौड़ा आ रहा था।

मामजान ने समीप आकर पुकार लिया—"बेटा ! बेटा !"

मामजान के पीछे-पीछे याफिम और सरगी भी अरगाश से मिलने के लिये चले आ रहे थे।

"ठीक कह रहा है बुड्ढा !" याफिम ने सरगी से कहा, "अरगाश सचमुच निर्माता का बेटा है ! होनहार बेटा !"

× × ×

परिशिष्ट

बसंत की धूप लगते ही बरफ पिघल गयी थी। निमांचा की गलियां सदा की तरह दलदल के नाले बन गयी थीं। गलियों में जूते पहने चल पाना सम्भव नहीं था। गलियों में दोनों ओर दीवारों तक लबालब भरा कीचड़, जूते तो क्या घुटनों तक ऊंचे बूट भी पांव से खींच लेता था। लढ़ियों और गाढ़ियों के पहिये कीचड़ में धंस जाते। हांकने वालों की क्षोभ भरी धमकियां और ललकारें सुबह से सांझ तक सुनायी देती रहतीं। पास-पड़ोस की बस्तियों और मुहल्लों के पैदल लोग और गाड़ियां निमांचा के कीचड़ से डर कर बाहर की सड़कों और रास्तों से लम्बे चक्कर लगा कर निकल जाना ही बेहतर समझते थे।

उस वर्ष निमांचा में, बुनकरों के मुहल्ले में पक्की सड़क बन चुकी थी। सड़क अधिक चौड़ी नहीं थी। सड़क की चौड़ाई, अच्छे कद्दावर आदमी के दो कदम से अधिक न थी। सड़क वर्षा से धुल कर धूप में चमक रही थी। सड़क कुदरतुल्ला के पुराने कारखाने से होकर, कब्रिस्तान की ओर चली गयी थी। अभी कल ही की तो बात थी कि यह इलाका कुदरतुल्ला की जागीर था परन्तु अब लोग उस का नाम भी भूल गये थे। पिछड़े जाड़ों में इस सड़क का नाम 'मिल रोड' पड़ गया था। निमांचा में यह नाम कुछ अजीब सा लगता था।

उस वर्ष बर्फ कुछ जल्दी ही पिघल गयी थी। आकाश बिलकुल स्वच्छ था परन्तु ८ मार्च की सुबह फिर बादल आ गये थे और खूब सर्दी हो गयी थी। सुबह फिर जगह-जगह दीवारों, छतों और सूखी टहनियों पर कुहरे की पपड़ी दिखायी दे रही थीं। ऊपर से महीन फुहार भी पड़ जाती थी। कूलें भी सिहरा देने वाली सर्द सांसें छोड़ रही थीं परन्तु बस्ती में उमंग और उत्साह था। दोपहर होते-होते मिल रोड पर बाघ के टीले की ओर जन-प्रवाह चलने लगा।

भीड़ मेले की उमंग और उत्साह से खूब सजी-धजी थी। लाल फीते के फुन्दने कपड़ों पर टंके हुये थे! लड़कियों की चोटियों में ताजे टटके फूल गुंथे थे। टोलियां गीत गाती जा रही थीं। सभी ओर हंसी और कहकहे थे। लोगों को विश्वास था, जल्दी ही निमांचा की सभी गलियां पक्की हो जायेंगी। निमांचा नगर का प्रमुख स्थान बन जायेगा।

भीड़ मिल की इमारत के सामने जमा होती जा रही थी। लाल ईंटों की नयी

इमारत वर्षा से धुल कर पक्के अनार की तरह उजली कत्थई लग रही थी। केवल बड़ा फाटक सीमेण्ट से बना था। फाटक पर नीली झलक थी जैसे नीले कपड़े के थानों से सजा दिया गया हो। फाटक का रंग बुनकर स्त्रियों की रुचि के अनुसार दिया गया था। फाटक के बीचोंबीच भड़कीला लाल फीता रास्ता रोके तना हुआ था फाटक बन्द था।

ताशकन्द और कई दूसरे नगरों से भी अतिथि आये थे। कई व्याख्यान हुये निमांचावासियों को बधाइयां दी गयीं। अनाखां धीरे-धीरे फाटक की ओर बढ़ी। वह बिलकुल मौन थी। अरगाश के चेहरे पर कभी मुस्कान, कभी माथे पर त्योरियां आ-जा रही थीं। हाथ में चमचमाती कैंची लिये था। अरगाश ने कैंची अनाखां की ओर बढ़ा दी।

अनाखां ने सिर झुका कर मिल को नमस्कार किया। फिर मिल बनाने वाली जनता की ओर झुक कर नमस्कार किया और कैंची से लाल फीता काट कर मिल का उद्‌घाटन कर दिया।

याफिम और सरगी ने आगे बढ़ कर लोहे के फाटक की भारी चिटकनी हटायी और लोहे के भारी पल्लों को ढकेल कर खोल दिया।

बहुत बड़े हाल में बिजली का उज्ज्वल प्रकाश था। प्रकाश में बहुत बड़ी-बड़ी मशीनों के उजली और काली धातु के शरीर चमक रहे थे जैसे रेल के कारखाने में बड़े-बड़े इंजन पांत में खड़े हों।

अनाखां ने कैंची से फाटक पर बंधा लाल फीता काटा ही था कि मिल के उद्‌घाटन का अनुष्ठान देखने के लिये सूर्य बादल के पर्दे हटा कर झांकने लगा। धूप की किरणों में नीला फाटक रेशम की तरह चमक उठा। फाटक के ऊपर आकाश में इन्द्रधनुष की रंगीन माला की मेहराब बन गयी। हवा चल पड़ी और बादल उड़ गये।

मिल के फाटक के सामने चौक के बीचोंबीच कतरी हुयी घनी हरी घास से ढका, आयताकार चौतरा घुटने तक ऊंचे लोहे के जंगले से घिरा है। चौतरे के बीचोंबीच काले संगमरमर की पटिया लगी है। पटिया पर केवल एक नाम लिखा है—"ज़ुलैखां"। जन्म और मृत्यु की तिथियां भी नहीं हैं।

वसंत, ग्रीष्म, शरद और हेमन्त में प्रतिदिन प्रातः ही लोग इस चौतरे पर फूल चढ़ा जाते हैं। इस चौतरे पर सदा ही ताज़े फूल बने रहते हैं।